॥ श्रीः ॥

हरिदास-संस्कृत-ग्रन्थमाला
१७१

॥ श्रीः ॥

बृहज्जातकम्

'विमला' टीकोपेतम्

S
294.167
V421V

प्रकाशकः—
संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

ज्यौतिषग्रन्थाः—

१	**ग्रहलाघवम्** । विश्वनाथी संस्कृत टीका तथा 'माधुरी' हिन्दी टीका	३-५०
२	**पञ्चाङ्गविज्ञानम्** । हिन्दी टीका सहित	०-५०
३	**प्रश्नभूषणम्** । 'विमला' संस्कृत-हिन्दी टीका	०-७५
४	**मानसागरी** । 'सुबोधिनी' हिन्दी व्याख्या सहित	८-००
५	**जन्मपत्रदीपकः** । सोदाहरण सटिप्पण हिन्दी टीका	१-२५
६	**जातकपारिजातः** । सुधाशालिनी-विमला संस्कृत-हिन्दी टीका	१२-००
७	**जातकाभरणम्** । सपरिशिष्ट 'विमला' हिन्दी टीका सहित	४-००
८	**जातकालङ्कारः**—हरभानुदत्तकृत संस्कृत तथा भावबोधिनी हिन्दी टीका	१-००
९	**जैमिनीयसूत्रम्** । सोदाहरण 'विमला' संस्कृत हिन्दी टीकाद्वयोपेत	२-००
१०	**ताजिकनीलकण्ठी** । गंगाधरमिश्रकृत 'जलदगर्जना' सं. हि. टीका	४-५०
११	**दैवज्ञकामधेनुः** । म० म० [illegible] सङ्घराजवर सङ्कलित	६-००
१२	**बीजगणितम्** । ज्ञाननाथी संस्कृत तथा 'विमला' हिन्दी टीकायुत	८-००
१३	**बृहज्ज्योतिषसारः** । हिन्दी भाष्य, विवरण व्याख्या सहित	४-५०
१४	**बृहज्जातकम्** । सोदाहरणोपपत्ति 'विमला' हिन्दी टीका सहित	३-५०
१५	**बृहत्संहिता** । सोदाहरण 'विमला' हिन्दी टीका सहित	९-००
१६	**मुहूर्त्तमार्तण्डः** । 'मार्तण्डप्रकाशिका' संस्कृत हिन्दी टीका सहित	३-००
१७	**मुहूर्तचिन्तामणिः** । सटिप्पण 'पीयूषधारा' व्याख्या सहित	५-००
१८	**मुहूर्तचिन्तामणि** । पीयूषधारानुसारी हिन्दी व्याख्या सहित	३-००
१९	**रमलनवरत्नम्** । 'विमला' हिन्दी टीका सहित	२-००
२०	**लघुपाराशरी-मध्यपाराशरी** । सोदाहरण-'सुबोधिनी' सं० हि० टीका	१-२५
२१	**लीलावती** । सोदाहरण 'तत्त्वप्रकाशिका' सं[illegible]	
२२	**शिशुबोधः** । विमला भा. टी. ०-६५ २३ **योगि**[illegible]	
२४	**शीघ्रबोधः** । अनूपमिश्रकृत 'सरला' हिन्दी [illegible]	
२५	**षट्पंचाशिका** । विभा संस्कृत-हिन्दी टीका [illegible]	
२६	**वास्तुरत्नावली** । सोदाहरण 'सुबोधिनी' सं[illegible]	
२७	**वास्तुरत्नाकर** । अहिबलचक्रसहित	३-००
२८	**ज्यौतिषप्रश्नफलगणना** । 'विमला' हिन्दी व्याख्या (अतिप्राचीन ग्रन्थ)	१-००

प्राप्तिस्थानम्—चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१

Library IIAS, Shiml
S 294.167 V 421 V
00006574

S
294.167
V 421 V

॥ श्रीः ॥

हरिदास-संस्कृत-ग्रन्थमाला

१७१

श्रीवराहमिहिराचार्यविरचितं

बृहज्जातकम्

उदाहरणोपपत्तिसहित 'विमला' हिन्दीटीकोपेतम्

टीकाकारः—

ज्यौतिषाचार्य-पोष्टाचार्य-साहित्याचार्य-प्राप्त'रीपन'स्वर्णपदक-

श्रीमदच्युतानन्दझा

खुर्जास्थ श्रीराधाकृष्णसंस्कृतमहाविद्यालय-त्रिस्कन्धज्यौतिषप्रधानाध्यापकः ।

चौखम्बा संस्कृत सीरिज, आफिस, बनारस-१

३] मूल्यं ३॥) [ई० १९५७

प्रकाशकः—

जयकृष्णदास हरिदासगुप्तः,

चौखम्बा–संस्कृत–सीरिज आफिस,

पो॰ बाक्स नं॰ ८, बनारस

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 6574
Date 16/11/65
SIMLA

23/1

पुनर्मुद्रणादिकाः सर्वेऽधिकाराः प्रकाशकाधीनाः ।

Chowkhamba Sanskrit Series Office,

P. O. Box 8, Banaras.

1957.

(द्वितीयं संस्करणम्)

S
294.167
V421 V

Library IIAS, Shimla
S 294.167 V 421 V

00006574

मुद्रक—

विद्याविलास प्रेस,

बनारस–१

भूमिका

वन्दामहे सुकमलासनवर्तमानां वाग्देवताममलवाग्दिभवप्रदात्रीम् ।
वृन्दारकादिपरिवन्द्यपदारविन्दां श्रीशारदामविरतं भुवनैकसाराम् ॥
अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तत्र केवलम् ।
प्रत्यक्षं ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ ॥

आज कल के संसार में भी सर्वमान्य ज्यौतिषशास्त्र देश और विदेशों के कोने कोने में प्रचलित है। यद्यपि इसके अन्दर बहुत भेद है, तथापि फलित, गणित, सिद्धान्त ये तीन प्रधान स्कन्ध हैं। कहा भी है:—

ज्योतिः शास्त्रमनेकभेदविततं स्कन्धत्रयाधिष्ठितं
तत्कात्स्न्योंपनयस्य नाम मुनिभिः संकीर्त्यते संहिता ।
स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधानस्त्वसौ
होराऽन्योन्यविनिश्चयश्च कथितः स्कन्धस्तृतीयोऽपरः ॥

इन तीनों स्कन्धों में फलित स्कन्ध पद पद में लोगों का अतिशय उपकारी होने के कारण प्रधान गिना जाता है। इस स्कन्ध के ग्रन्थकर्ताओं में स्कन्धत्रयज्ञाता वराहमिहिराचार्य प्रधान गिने जाते हैं। इनका जन्म समय ४०९शक के लगभग सिद्ध होता है। ये महाराज विक्रम की सभा के नवरत्नों में से एक थे। जैसेः—

धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशङ्कुवेतालभट्टघटकर्परकालिदासाः ।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य ॥

इनके बृहज्जातक, लघुजातक, बृहत्संहिता, समाससंहिता, योगयात्रा, पञ्चसिद्धान्तिका, विवाहपटल ये सात ग्रन्थ प्रकाशित सर्वत्र मिलते हैं। इन ग्रन्थों में फलादेश के लिए "बृहज्जातक" एक अपूर्व ग्रन्थ है। इसके गुण से प्रायः फलादेश करनेवाले ज्यौतिषी वञ्चित नहीं होंगे। इस ग्रन्थ में गर्भाधान से लेकर मरण पर्यन्त सम्पूर्ण फलों का वर्णन आ गया है। अतः केवल एक इस ग्रन्थ को पढ़ने से फलादेश करने में कहीं भी त्रुटि ·। न तो अन्य किसी ग्रन्थ की आवश्यकता ही पड़ती है। इस तरह का अत्यन्त

सुन्दर ग्रन्थ होने पर भी आज तक इसका ऐसा कोई संस्करण नहीं निकला जिसमें वास्तविक अर्थ और उदाहरण हों, जिससे सबों का उपकार हो।

कितने टीकाकारों ने साधारण लोगों को भ्रम में डालने के लिये ग्रन्थ का अभिप्राय न समझकर उलटे परमादरणीय ग्रन्थकार ही के ऊपर आक्षेप किया है। विना विचारे अपनी अल्पज्ञता को दोष न देकर आचार्यवर्य के ऊपर दोष देना घोर पाप का निदान है। कुछ कहा नहीं जाता, न तो विना कहे बनता है। खेद की बात है कि काशी से प्रकाशित बृहज्जातक की **"तत्त्वार्थदीपिका भाषाटीका"** में टीकाकार ने बहुत जगह असङ्गत मन-माना अर्थ करके ग्रन्थ को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला है। दृष्टान्त के लिये नाभसयोगों के अन्तर्गत वज्रयोग में देखिये।

बृहत्पाराशर में वज्रयोग का लक्षण—

लग्नस्मरस्थानगतैः शुभाख्यैः पापैश्च मेषूरणबन्धुयातैः।
वज्राभिधस्तैर्विपरीतसंस्थैर्यवश्च मिश्रैः कमलाभिधानः॥

सारावली में—

लग्नास्तगतैः सौम्यैः पापैः सुखकर्मगैर्भवति वज्रम्।
विपरीतैर्यवयोगो मिश्रैः पद्मं बहिः स्थितैर्वापी॥

इत्यादि प्रमाणों से स्पष्ट है कि यदि सब शुभ ग्रह लग्न, सप्तम में और सब पापग्रह दशम, चतुर्थ में हों तो वज्रयोग होता है।

अतः वराहमिहिर वज्रयोग का लक्षण—

शकटाण्डजवच्छुभाशुभैर्वज्रं तद्विपरीतगैर्यवः।
कमलं तु विमिश्रसंस्थितैर्वापी तद्यदि केन्द्रबाह्यतः॥

ऐसा लिखा है।

यहाँ उक्त टीकाकार ने लग्न, सप्तम में सब शुभग्रह अथवा दशम, चतुर्थ में सब पापग्रह हों तो वज्रयोग होता है, इस तरह अर्थ करके अपनी बुद्धि का परिचय दिया है।

इस तरह अर्थ करने से दो प्रकार के वज्रयोग सिद्ध होंगे। अगर दो तरह के वज्रयोग पूर्वाचार्य का अभिप्रेत रहता तो जैसे **"केन्द्रैः सदसद्युतैर्दलाख्यौ"** इस द्विवचन के प्रयोग से जैसे दो प्रकार के दलयोग कहे उसी तरह—

लग्नस्मरस्थानगतैः शुभाख्यैः पापैश्च मेषूरणबन्धुयातैः।
वज्राभिधौ तैर्विपरीतसंस्थैर्यवौ च मिश्रैः कमलाभिधानौ

इस तरह द्विवचन का प्रयोग ही करते, लेकिन इस तरह का प्रमाण कहीं नहीं मिलता है। दूसरी बात यह है कि आकृतियोगान्तर्गत सब योग सूर्य आदि सातो ग्रहों के स्थिति-वश कहे गये हैं। फिर बीच में वज्रयोग के लिये ऐसी स्थिति कहां से आई। अतः ऐसा कहना बिलकुल अयथार्थ है।

वराहमिहिर ने लग्न, सप्तम में शुभग्रह (बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र) और दशम, चतुर्थ में पापग्रह (सूर्य, मंगल, शनि) को रहने से वज्रयोग की स्थिति देखा तो उन के मन में स्वभावतः ऐसी आशङ्का उत्पन्न हुई कि इस तरह सूर्य से चतुर्थ स्थान में बुध, शुक्र के होने की संभावना होती है, पर सिद्धान्त युक्ति से सूर्य से चतुर्थ में बुध, शुक्र नहीं हो सकते—दो राशि के भीतर में ही ये ग्रह रहते हैं। वराहमिहिर ने उस की चर्चा करना आवश्यक समझ कर **"शास्त्रानुसारेण"** इत्यादि कहा है।

प्राचीनाचार्यों के स्पष्ट वचनों के आधार पर उन्होंने जो युक्ति प्रकाशित की है उस की प्रशंसा न कर उलटे उन्हीं पर कीचड़ डालना 'कि उन्होंने पूर्वाचार्यों का अभिप्राय न समझा और मनमाना अर्थ कर के पूर्वाचार्यों में दोष दिया' ऐसा प्रतिपादन करना अपनी अल्पज्ञता को दिखाना मात्र है।

और भी देखिये—

जो भट्टोत्पल अनेक ग्रन्थों के ऊपर अपनी टीका द्वारा ग्रन्थाशय को प्रकाशित किये उन के ऊपर भी उक्त टीकाकार ने आक्षेप किया है।

अगर बृहज्जातक के ऊपर भट्टोत्पल की टीका न होती तो किसी आधुनिक पण्डित को आचार्य का आशय अनेक स्थलों पर मालुम होना कठिन होता।

वे भट्टोत्पल धन्य हैं जिन्होंने दर्पण की तरह वराहमिहिर के भावों को हम लोगों के सामने रखा है। जिसको देखकर आज कल हम लोग ग्रन्थज्ञ और ग्रन्थकार बनते हैं। ऐसे भट्टोत्पल को भी वराहमिहिर की भूल नहीं मालुम हुई और हम लोगों के ऐसे खद्योतप्राय ईषद्विद्य लोगों को उनकी अवास्तव भूल मालुम होती है, यह काल का धर्म है इसलिए "कालाय तस्मै नमः" यही कहकर इस विषय पर और लिखना नहीं चाहता।

पूर्वोक्त अनेक त्रुटि के संशोधनार्थ मैंने सोदाहरणोपपत्तिभाषाटीका लिखकर काशी के विख्यात चौखम्भा संस्कृत सीरीज पुस्तकालयाध्यक्ष श्रीमान् बाबू जयकृष्णदास गुप्त महोदय को साधिकार प्रकाशन के लिये दिया। जिन्होंने आज कल की ऐसी परिस्थिति

में भी लोकोपकारार्थ अपने द्रव्य से प्रकाशन किया है। आशा है पाठकगण इसको आद्यन्त देखकर हमारे परिश्रम को सफल करेंगे।

अन्त में सज्जनों से प्रार्थना यही है कि प्रमादवश इसमें कहीं त्रुटि रह गई हो तो उसे सुधारकर मुझे भी सूचित करें, जिसको अगले संस्करण में सुधारकर पाठकों के सामने प्रस्तुत करूँगा। कहा भी है—

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥

संवत् २००२
माघशुक्ल पञ्चमी

प्रार्थी—
पं० श्री अच्युतानन्द झा

सटीकबृहज्जातकस्य विषयानुक्रमणिका।

विषय	पृष्ठाङ्क
अथ राशिप्रभेदाध्यायः प्रथमः	
ग्रन्थकार का मङ्गलाचरण	"
टीकाकार का मङ्गलाचरण	१
ग्रन्थ करने का प्रयोजन	२
होरा शब्द का अर्थ	"
काल रूप पुरुष के अङ्ग	"
अश्विन्यादि नक्षत्रों में राशि के विभाग	३
स्पष्ट के लिये राशि चक्र	"
राशियों के स्वरूप	४
मेषादि राशियों तथा नवांशों के स्वामी	५
स्पष्ट के लिए राशि चक्र	"
मेषादि राशियों के नवांश चक्र	६
मेषादि राशियों के द्वादशांश चक्र	७
त्रिंशांश के पति	८
स्पष्ट के लिए त्रिंशांश चक्र	९
प्रसङ्गवश तिथि गण्ड	१०
नक्षत्र गण्ड	"
लग्न गण्ड	"
गण्ड के फल	"
विशेषरूप से गण्डफल	"
प्रसङ्गवश मूलादि नक्षत्रों में उत्पन्न का फल	११
मेषादि राशियों के नाम	११
स्पष्ट के लिये मेषादि राशियों के संज्ञाचक्र	१३
ग्रहों के षड्वर्ग की संज्ञा	"
राशियों की रात्रि, दिन और पृष्ठोदयादि संज्ञा	१४
उदय और बली के समय का चक्र	१४
मेषादि राशियों की क्रूर, सौम्य आदि संज्ञा	"
क्रूर, सौम्य आदि जानने के लिए चक्र	१५
दिशाओं के स्वामी जानने के लिए चक्र	"
होरा जानने के लिये चक्र	१६
द्रेष्काणचक्र	"
मतान्तर से होरा के स्वामी	"
मतान्तर से होरा चक्र	१७
मतान्तर से द्रेष्काण चक्र	"
ग्रहों के उच्च और नीच	"
ग्रहों के उच्च नीच चक्र	१८
वर्गोत्तमनवांश और सूर्यादि ग्रहों के त्रिकोण	"
वर्गोत्तम नवांश चक्र	१९
सूर्यादि ग्रहों के त्रिकोण चक्र	"
लग्नादि द्वादश भावों की और उपचय, अपचय की संज्ञा	"
भावों की संज्ञा जानने के चक्र	२०

विषय	पृष्ठाङ्क
उपचयापचय जानने के चक्र	२०
द्वादश भावों के संज्ञान्तर	"
भावों के नामान्तर चक्र	"
चतुरस्र आदि संज्ञा चक्र	२१
कण्टक आदि संज्ञा	"
पणफर आदि संज्ञा	"
कण्टक आदि संज्ञा चक्र	"
राशियों के बलबोधक चक्र	२२
लग्नादि राशियों के बल	"
केन्द्रादिकों में बल जानने के लिए चक्र	२३
लग्नों के बल जानने के लिये चक्र	"
राशियों के नाम जानने के लिये चक्र	२४
मेषादि द्वादश राशियों का वर्ण	"
राशियों के वर्ण जानने के लिये चक्र	२५
राशियों के प्लव आदि दिशा जानने के लिये चक्र	"

अथ ग्रहभेदाध्यायो द्वितीयः

विषय	पृष्ठाङ्क
काल पुरुष के आत्मादि विभाग	२५
ग्रहों के पर्याय	२६
प्रसंगवश अन्यजातकोक्त ग्रहों के पर्याय	"
ग्रहों के अङ्गरेजी आदि भाषाओं में नाम	२७
ग्रहों के वर्ण	"
ग्रहों के वर्ण चक्र	"
वर्णस्वामी आदि का ज्ञान	२८
वर्णादिकों के स्वामी चक्र	२९
ग्रहों का नपुंसक आदि संज्ञा	"
ग्रहों के पुरुषादि जानने के लिये चक्र	३०
ब्राह्मण आदि वर्णों के स्वामी	"
वर्णेशादि चक्र	"
सूर्य और चन्द्र के स्वरूप	३१
मंगल और बुध का स्वरूप	"
बृहस्पति और शुक्र का स्वरूप	"
शनि के स्वरूप और ग्रहों के धातु	"
ग्रहों के धातुसार चक्र	३२
ग्रहों के स्थान और वस्त्रादि	"
ग्रहों के स्थानादि ज्ञान के लिये चक्र	३३
ऋतु ज्ञान के लिये चक्र	"
ग्रहों का दृष्टिस्थान	"
दृष्टि के विषय में किसी का मत	३४
राहु, केतु की दृष्टि में किसी का मत	"
ग्रहों के काल और रसका निर्देश	"
काल और रस जानने के लिये चक्र	३५
सूर्यादि ग्रहों के नैसर्गिक मित्र शत्रु कथन	"
अन्योक्त मित्रामित्र चक्र	३६
सत्याचार्योक्त मित्रादि चक्र	"
वाराहमिहिरोक्त ग्रहों के नैसर्गिक मित्रादि	३७
वराहमिहिर के मतानुसार मित्रादि चक्र	३८
तात्कालिक मित्रादि कथन	३९
तात्कालिक मित्रादि जानने के लिये चक्र	"
उदाहरण कुण्डली	"
संस्कृत मित्रादि चक्र	४०
स्थानबल और दिग्बल	४१
स्थानबलबोधक चक्र	४२
चेष्टाबल	"
ग्रहों के कालबल	४३

अथ वियोनिजन्माध्यायस्तृतीयः

विषय	पृष्ठाङ्क
जन्म अथवा प्रश्नकाल से वियोनि जन्म का ज्ञान	४५

विषय	पृष्ठाङ्क
त्रियोनिजन्म ज्ञान के लिए योगान्तर	४६
चतुष्पदों के राशिवश अङ्गविभाग	"
त्रियोनि वर्णज्ञान	"
पत्ति-जन्म ज्ञान	४७
वृत्त-जन्म ज्ञान	"
जल निर्जल वृत्तविशेष ज्ञान	४८
शुभाशुभवृत्त और उत्पन्नस्थान का ज्ञान तथा वृत्त संख्या ज्ञान	४९

अथ निषेकाध्यायश्चतुर्थः

गर्भधारण करने के योग्य ऋतु समय का ज्ञान	४९
गर्भाधानकालिकलग्नसे मैथुनका ज्ञान	५१
गर्भ-सम्भवासम्भव ज्ञान	५२
गर्भाधानकाल से प्रसूति काल तक शुभाशुभ ज्ञान	"
पिता, माता, पितृव्य, मातृष्वसाओं का शुभाशुभ ज्ञान	५४
गर्भिणी-मरण के योग	५५
गर्भिणी के मरण में योगान्तर	"
फिर गर्भिणी के मरण में योगान्तर	५६
गर्भिणी की शस्त्र से मृत्यु और गर्भ-स्राव योग	"
गर्भपुष्टि ज्ञान	"
गर्भाधान काल अथवा प्रश्न काल से पुरुष-स्त्री विभाग ज्ञान	५७
पुत्र जन्म का दूसरा योग	५८
नपुंसक के योग	५९
एक साथ दो और तीन सन्तति का योग	"
तीन से अधिक सन्तति का ज्ञान	६०

विषय	पृष्ठाङ्क
गर्भ के मासाधिप और उनका फल	६१
सदन्तादि योग	६३
वामन और अङ्गहीन योग	"
अन्ध और काण योग	६५
प्रसंगवश गर्भाधान के मुहूर्त	"
आधानलग्न से प्रसव काल ज्ञान	६६
उदाहरण	६७
तीन वर्ष अथवा बारह वर्ष गर्भ-धारण योग	७०

अथ सूतिकाध्यायः पञ्चमः

पिता के परोक्ष में जन्म का ज्ञान	७०
पिता के परोक्ष में जन्म का योगान्तर	७१
सर्प स्वरूप और सर्पवेष्टित जातक का ज्ञान	"
कोश से वेष्टित यमल योग	७२
नाल से वेष्टित जातक के जन्म का ज्ञान	"
जार से उत्पन्न का ज्ञान	७३
जातक के पितृबन्धन योग	७५
नौकास्थ जन्म का योग	"
जल में जन्म का योग	"
बन्धनागार और गर्त में जन्म का योग	"
क्रीडाभवनादि में जन्म का योग	"
श्मशानादि में जन्म का योग	"
प्रसव देश का ज्ञान	७७
माता से त्यक्त सन्तान का ज्ञान	"
माता से त्यक्त सन्तान का मृत्यु योग	"
प्रसव के घर का ज्ञान	७८
दीपसम्भवासम्भव और भू-प्रदेश का ज्ञान	७९
दीप और गृहद्वार का ज्ञान	८०

विषय	पृष्ठाङ्क
सूतिका-गृह का स्वरूप	८२
समस्त भूमि में किस तरफ सूतिका-गृह है इसका ज्ञान	८३
सूतिका शयन ज्ञान	८४
स्फुटार्थ के लिये शयन चक्र	,,
उपसूतिका का संख्याज्ञान	८५
बालक के स्वरूपादि का ज्ञान	८७
द्रेष्काण के वश अङ्ग विभाग	८८
द्रेष्काण के वश अङ्ग विभाग चक्र	९०
जातक के अङ्ग में चिह्न का ज्ञान	,,
व्रण का ज्ञान	९१

अथारिष्टाध्यायः षष्ठः

विषय	पृष्ठाङ्क
अरिष्टयोगद्वय	९२
संहिता में सन्ध्या लक्षण	,,
अन्य अरिष्ट योग	,,
अनुक्तमृत्युसमय का निरूपण	९७
अन्यजातकोक्त अरिष्ट योग	,,

अथायुर्दायाध्यायः सप्तमः

विषय	पृष्ठाङ्क
मयासुर-यवनाचार्य-आदि के मत से ग्रहों की परमायु	११२
परमनीचस्थित ग्रहों का आयुर्दाय	,,
उच्चवर्षादिज्ञान चक्र	११४
उदाहरण	,,
अन्यप्रकार से आयु का आनयन	११५
आयुर्दाय के विशेष संस्कार	१२५
मनुष्य आदि का परमायुर्दाय	१२९
परम आयुर्दाय योग	१३०
अन्यमत से आयुर्दाय में दोष	१३२
पूर्णायु योग में चक्रवर्त्तित्व मानने वाले के मत में प्रत्यक्ष दोष	१३४
सत्याचार्य के मत से आयुःसाधन प्रकार	१३९
सत्याचार्य के मत से आनीत आयुर्दाय का संस्कार	१४०
लग्नायुर्दाय में विशेषता	,,
सत्याचार्य का मत सर्वश्रेष्ठ और उस में अनुचित क्रिया करनेवालों के ऊपर आक्षेप	१४५
अमित आयु का योग	१४६

अथ दशान्तर्दशाध्यायोऽष्टमः

विषय	पृष्ठाङ्क
लग्नसहित ग्रहों का दशाक्रम	१४६
दशावर्ष प्रमाण	१४९
अन्तर्दशा प्रकार	१५०
अन्तर्दशावर्ष लाने का प्रकार	१५१
स्थानादिबलक्रम से दशा की संज्ञा और फल	१५३
दशान्तर्दशा के संज्ञान्तर	,,
दशाओं के नामान्तर और फल	१५४
लग्न की शुभाशुभदशा	,,
स्वाभाविक ग्रहदशा समय	१५५
दशारम्भकालिक लग्न और ग्रह के वश शुभाशुभफल	१५६
दशा के आरम्भ काल में चन्द्रवश शुभाशुभ	१५७
सूर्य के शुभाशुभ दशाफल	१५८
चन्द्रमा के शुभाशुभ दशाफल	,,
मङ्गल की दशा में शुभाशुभ फल	,,
बुध की दशा में शुभाशुभ फल	१५९
गुरु की दशा में शुभाशुभ फल	,,
शुक्र की दशा में शुभाशुभ फल	१६०
शनि की दशा में शुभाशुभ फल	,,

विषय	पृष्ठाङ्क
शुभाशुभ फल के समय विभाग	१६१
सामान्य रूप से दशाओं का फल	१६१
अज्ञात जन्म-समयवालों की ग्रह-दशा जानने का प्रकार	"
दशा जानने का विशेष प्रकार	१६३
एक या भिन्न २ ग्रह के फल विरोध में फल का नियम	"
अथाष्टकवर्गाध्यायो नवमः	
सूर्य के अष्टक वर्गाङ्क	१६४
चन्द्र के अष्टक वर्गाङ्क	१६६
मङ्गल के अष्टक वर्गाङ्क	१६७
बुध के अष्टक वर्गाङ्क	१६९
बृहस्पति के अष्टक वर्गाङ्क	१७०
शुक्र के अष्टक वर्गाङ्क	१७१
शनि के अष्टक वर्गाङ्क	१७२
ग्रन्थान्तर से एकादि विन्दु का फल	१७४
संयोगाष्टकवर्ग का फल	१७७
शुभसंयोगाष्टकवर्गाङ्क चक्र	"
रवि के अष्टवर्ग का फल	१७८
चन्द्र का फल	"
मङ्गल का फल	१७९
बुध का फल	"
गुरु का फल	१८०
शुक्र का फल	"
शनि का फल	१८१
अथ कर्माजीवाध्यायो दशमः	
जातक को किस से धन की प्राप्ति होगी	१८१
नवांशपति की वृत्ति	१८२
धनागम के ज्ञान	१८३
अथ राजयोगाध्याय एकादशः	
बत्तीस प्रकार के राजयोग	१८४

विषय	पृष्ठाङ्क
चवालिस राजयोग	१८६
पांच प्रकार के राजयोग	१८७
तीन प्रकार के राजयोग	"
पुनः तीन प्रकार के राजयोग	१८९
पुनः एक प्रकार का राजयोग	"
पुनः एक प्रकार का राजयोग	"
पुनः राजयोग	१९०
पूर्वोक्त और वक्ष्यमाण राजयोगों में विशेष विचार	"
राजयोग	"
पुनः राजयोग	"
राज्यप्राप्ति का समय	१९२
भोगी और भिन्न चोरों के स्वामी का योग	"
ग्रन्थान्तर का राजयोग	१९३
अथ नाभसयोगाध्यायो द्वादशः	
इस अध्याय में योगों की संख्या	२०६
आश्रययोग ३ और दलयोग २	२०७
योगों की समता और कुछ फल-विचार	२०९
गदा आदि आकृति योग	२१०
वज्र आदि योग	२११
विशेष विचार	२१२
यूप आदि योगों का कथन	२१३
नौका, कूट, छत्र, चाप और अर्धचन्द्र योग	२१४
समुद्र और चक्रयोग	२१५
संख्या योग	२१६
आश्रय और दलयोग का फल	"
विशेष फल विचार	२१८
गदा आदि योगों का फल	
वज्र आदि योगों का फल	"

विषय	पृष्ठाङ्क
यूप आदि योगों का फल	२१८
नौका आदि योगों का फल	"
अर्धचन्द्र आदि योगों का फल	२१९
दामिनी आदि योगों का फल	"
युग आदि योगों का फल	"
अथ चन्द्रयोगाध्यायस्त्रयोदशः	
उत्तम-मध्यमादि-विनयादि का ज्ञान	२२०
अधियोग नाम का योग	२२१
सुनफा, अनफा, दुरधुरा और केमद्रुम योग	२२२
पूर्वोक्त सुनफा आदि योगों का भेद	२२३
सुनफा और अनफा योगों का फल	२२९
दुरधुरा और केमद्रुम योगों का फल	२३०
सुनफा आदि योगकारक भौमादि ग्रहों का फल	"
योगकारक शनि का फल	"
लग्न और चन्द्रमा से उपचय स्थानों में स्थित शुभग्रहों का फल	२३१
अथ द्विग्रहयोगाध्यायश्चतुर्दशः	
सूर्य सहित चन्द्रादि ग्रहों का फल	२३१
कुजादि ग्रहों से युत चन्द्र का फल	२३२
बुधादि ग्रहों से युत मङ्गल का फल	"
जीवादि ग्रहों से युत बुध का फल	२३३
शुक्र, शनि का योग फल और त्रिग्रहयोग फल	"
अथ प्रव्रज्यायोगाध्यायः पञ्चदशः	
प्रव्रज्या योग	२३४
अदीक्षितादि योग	२३५
अन्यप्रकार से प्रव्रज्या योग	२३६
शास्त्र बनाने का और तीर्थ करने का योग	२३७

विषय	पृष्ठाङ्क
अथ ऋक्षशीलाध्यायः षोडशः	
अश्विनी और भरणी नक्षत्र में जन्म का फल	२३७
कृत्तिका और रोहिणी नक्षत्र में जन्म का फल	२३८
मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र में जन्म का फल	"
पुनर्वसु नक्षत्र में जन्म का फल	२३८
पुष्य और अश्लेषा नक्षत्र में जन्म का फल	"
मघा और पूर्वफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म का फल	२३९
उत्तराफाल्गुनी और हस्त में जन्म का फल	"
चित्रा और स्वाती नक्षत्र में जन्म का फल	"
विशाखा और अनुराधा नक्षत्र में जन्म का फल	"
ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में जन्म का फल	"
पूर्वाषाढ और उत्तराषाढ नक्षत्र में उत्पन्न का फल	२४०
श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र में जन्म का फल	"
शतभिषा और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में जन्म का फल	"
उत्तराभाद्रपदा और रेवती नक्षत्र में जन्म का फल	"
ग्रन्थान्तर में नक्षत्रों का फल	२४१
अथ राशिशीलाध्यायः सप्तदशः	
मेषादि राशि में स्थित चन्द्र फल	२४४

विषय	पृष्ठाङ्क
अन्य ग्रन्थोक्त मेषादि राशियों का फल	२४८
अथ ग्रहराशिशीलाध्यायोऽष्टादशः	
मेष और वृष राशि में स्थित सूर्य का फल	२४९
मिथुन, कर्क, सिंह और कन्या राशि में स्थित सूर्य का फल	"
तुला, वृश्चिक, धन और मकर राशि में स्थित सूर्य का फल	२५०
कुम्भ और मीन राशि में स्थित सूर्य का फल है	"
मेष, वृश्चिक, वृष और तुला राशि में स्थित मङ्गल का फल	२५१
मिथुन, कन्या और कर्क राशि में स्थित मङ्गल का फल	"
सिंह, धन, मीन, मकर और कुम्भ में स्थित मङ्गल का फल	"
मेष, वृश्चिक, वृष और तुला में स्थित बुध का फल	२५२
सिंह और कन्या राशि में स्थित बुध का फल	२५३
मकर, कुम्भ, धन और मीन राशि में स्थित बुध का फल	"
मेष, वृश्चिक, वृष, तुला, मिथुन, और कन्या में स्थित गुरु का फल	"
कर्क, सिंह, धन, मीन, कुम्भ और मकर राशि में स्थित गुरु का फल	२५४
मेष, वृश्चिक, वृष और तुला में स्थित शुक्र का फल	"
मिथुन, कन्या, मकर और कुम्भ राशियों में स्थित शुक्र का फल	२५५
सिंह, धन और मीन राशि में स्थित शुक्र का फल	२५५
मेष, वृश्चिक, मिथुन और कन्या राशि में स्थित शनि का फल	"
वृष, तुला, कर्क और सिंह राशि में स्थित शनि का फल	२५६
धन, मीन, मकर और कुम्भ राशियों में स्थित शनि का फल	"
मेषादि लग्न फल का निर्णय	२५७
अथ दृष्टिफलाध्याय एकोनविंशः	
मेषादि चार राशियों में स्थित चन्द्रमा पर भौमादिग्रहों का दृष्टि फल	२५८
सिंहादि चार राशियों में स्थित चन्द्रमा पर बुधादि के दृष्टिफल	२५९
धन आदि चार राशियों में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुधादि के दृष्टिफल	२६०
होरा, द्रेष्काण, और नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर ग्रह-दृष्टिफल	"
पूर्वोक्त नवांश का दृष्टि फल में विशेष	२६२
अथ भावफलाध्यायो विंशः	
सूर्य भाव फल	२६३
चन्द्र भाव फल	२६५
कुज भाव फल	२६६
बुध भाव फल	"
गुरु भाव फल	२६७
शुक्र भाव फल	"
शनि भाव फल	"
लग्नादि द्वादश भावों में स्थित सब ग्रहों का विशेष फल	२६८
कुण्डली में ग्रहों का विशेष शुभाशुभ फल	२६९

विषय	पृष्ठाङ्क
अथाश्रययोगाध्याय एकविंशः	
स्वगृह और मित्रगृह में स्थित ग्रहों का फल	२६९
अन्यजातकोक्त स्वगृहस्थग्रहोंका फल	२७०
अन्यजातकोक्त मित्रक्षेत्रस्थ ग्रहों का फल	”
उच्चस्थ-मित्रयुतदृष्ट-शत्रुक्षेत्रस्थ ग्रहों का फल	२७१
उच्चगत पापग्रहों का विशेष फल	”
उच्चाभिलाषी ग्रहों का फल	”
शत्रुराशि में स्थित ग्रहों का फल	”
अन्यजातकोक्त उच्चस्थ ग्रहोंका फल	२७२
नीचस्थ ग्रहों का फल	२७३
कुम्भ लग्न में जन्म का फल	”
होरा में स्थित ग्रहों का फल	२७४
पूर्वोक्त स्थिति के विरुद्ध में फल	”
द्रेष्काण में स्थित चन्द्र का फल	”
नवांश का फल	२७५
मंगल और शनि का त्रिंशांश फल	२७६
बृहस्पति और बुध का त्रिंशांशफल	”
शुक्र का त्रिंशांश फल	”
अथ प्रकीर्णाध्यायो द्वाविंशः	
कारकसंज्ञक ग्रह के लिए उदाहरण	२७७
ग्रहों की परस्पर कारक संज्ञा	”
कारकान्तर कथन	२७८
कारक संज्ञा करने का प्रयोजन	”
युवा अवस्था में सुख का योग	२७९
अष्टकवर्ग फल-कालज्ञान	”
अथानिष्टाध्यायस्त्रयोविंशः	
पुत्र और स्त्री का भावाभाव योग	२८०
स्त्रीमरण योगत्रय	”
स्त्री, पुरुष का काणत्व और अङ्गहीनत्व योग	२८०
अपुत्रकलत्रवन्ध्यापति योग	२८१
परस्त्रीगमन आदि योग	”
वंशच्छेद आदि योग	२८२
वातरोग आदि अनिष्ट योग	”
श्वास, क्षय आदि रोग योग	२८३
कुष्ठी योग	”
नेत्रहीन योग	२८४
बधिर आदि योग	”
पिशाच और अन्ध योग	”
वातरोग और उन्माद योग	”
दास योग	२८५
विकृत-दशन, खल्वाट आदि योग	”
अनेक प्रकार के बन्धन योग	२८६
परुष वचन आदि योग	”
अथ स्त्रीजातकाध्यायश्चतुर्विंशः	
स्त्री जन्म में फल कथन की व्यवस्था	२८७
स्त्रियों के आकार और स्वभाव का ज्ञान	”
भौमक्षेत्रगत लग्न और चन्द्रमा का त्रिंशांश फल	२८८
शुक्र राशिगत लग्न और चन्द्रमा का त्रिंशांश फल	”
कर्क में स्थित लग्न और चन्द्रमा का त्रिंशांश फल	”
पूर्वोक्त फलों का निर्णय	२८९
स्त्री के साथ स्त्री को मैथुन करने का दो योग	२८९
पति का कापुरुषादि योग	२९०
वैधव्य आदि योग	

विषय	पृष्ठाङ्क
अपनी माता के साथ व्यभिचारिणी आदि योग	२९१
वृद्ध आदि स्वामी का योग	"
अन्य विशेष योग	२९२
लग्न में स्थित ग्रहों का फल	"
पुनः वैधव्य आदि योग	२९३
बहुपुरुषगामिनी और ब्रह्मवादिनी योग	"
प्रव्रज्या योग	"

अथ नैर्याणिकाध्यायः पञ्चविंशः

विषय	पृष्ठाङ्क
अष्टम स्थान के वश मृत्यु का विचार	२९४
अन्य मरण योग	२९५
पूर्वोक्त योग के अभाव में मरण योग	२९८
किस तरह की भूमि में मरेगा इसका ज्ञान	"
मृतक की देह के परिणाम का ज्ञान	३००
पूर्वजन्म परिज्ञान	३०१
भविष्य में गम्य लोक का ज्ञान	"

अथ नष्टजातकाध्यायः षड्विंशः

विषय	पृष्ठाङ्क
उसमें पहले अयन का ज्ञान	३०२
वर्ष और ऋतु का ज्ञान	"
अयन और ऋतु के विपरीत होने पर ऋतु, मास और तिथि का ज्ञान	३०४
चान्द्रतिथि, दिवा, रात्रि और जन्म काल का ज्ञान	३०५
अन्य के मत से मास और जन्म-राशि का ज्ञान	३०५
प्रकारान्तर से जन्मराशि का ज्ञान	३०७
जन्म लग्न का ज्ञान	"
प्रकारान्तर से लग्न का ज्ञान	"
प्रकारान्तर से नष्टजातक का ज्ञान	३०८
नक्षत्र का ज्ञान	३०९
प्रकारान्तर से वर्षादि का ज्ञान	"
पूर्वोक्त वर्ष आदि का स्पष्ट ज्ञान	३१०
दिन रात्रि आदि ज्ञान के प्रकार	"
इष्टकाल जानने का प्रकार	"
प्रकारान्तर से पुनः जन्म नक्षत्र का ज्ञान	३११
पुनः प्रकारान्तर से जन्म नक्षत्र का ज्ञान	"
नष्ट जातक का उपसंहार	"

अथ द्रेष्काणाध्यायः सप्तविंशः

विषय	पृष्ठाङ्क
मेषादि राशियों में प्रत्येक द्रेष्काण का स्वरूप	३१२

अथोपसंहाराध्यायोऽष्टाविंशः

विषय	पृष्ठाङ्क
उपसंहार	३२०
समाहितम्	३२३

प्राप्तिस्थानम्—

चौखम्बा संस्कृत पुस्तकालय,

के. ३७/१०८, गोपाल मन्दिर लेन

पो० बाक्स नं० ८, बनारस

श्रीगुरुभ्यो नमः

बृहज्जातकम्

सोदाहरण 'विमला' हिन्दीटीकोपेतम्

अथ राशिप्रभेदाध्यायः

मङ्गलाचरण—

मूर्तित्वे परिकल्पितश्शशभृतो वर्त्मा पुनर्जन्मना-
मात्मेत्यात्मविदां क्रतुश्च यजतां भर्तामरज्योतिषाम् ।
लोकानां प्रलयोद्भवस्थितिविभुश्चानेकधा यः श्रुतौ
वाचं नस्स ददात्वनेककिरणस्त्रैलोक्यदीपो रविः ॥ १ ॥

टीकाकर्तृमङ्गलाचरण—

श्रीकालीं मधुकैटभासुरमुखप्रध्वंसशाचिस्मितां
नित्यात्यन्तसुखप्रसन्नहृदयां सौन्दर्यसारश्रियाम् ।
भक्तानामभयङ्करीमति महाकालेन संसेवितां
श्यामां नूतनमेघवर्णरुचिरां वन्दामहे मातरम् ॥
वन्दे श्रीगुरुपादपद्मयुगलं मोहान्धकारान्तकं
नानाज्ञानसुधाप्रदानरुचिरं प्रज्ञानिधानं भृशम् ।
ख्यातं जातकपुस्तकेषु निपुणं नाम्ना बृहज्जातकं
टीका हिन्दीभाषयाऽत्र 'विमला' कान्ता मया क्रियते ॥
मैथिलब्राह्मणेन श्री 'अच्युतानन्द' शर्मणा ।
दैवज्ञेन विदां तुष्ट्यै 'जरिसो' ग्रामसद्मना ॥

ग्रन्थकर्ता वाराहमिहिराचार्य निर्विघ्न पूर्वक ग्रन्थ समाप्ति के लिये अपने इष्ट देवता श्री सूर्यनारायण से अपनी वाणी की सिद्धि के लिये प्रार्थना करते हैं।

अनेक किरणों वाला, चन्द्रमा की मूर्ति को प्रकाशित करनेवाला, अपुनर्जन्मा (मुमुक्षु) लोगों के जाने का मार्ग, आत्मज्ञानियों की आत्मा स्वरूप, यज्ञ करने वालों के यज्ञस्वरूप, देवता और ग्रह नक्षत्रादिकों का स्वामी क्यों कि सब देवता

सूर्य को नमस्कार करते हैं, और ग्रह नक्षत्रादिकों का उन्हीं के वश से उदय और अस्त होता है। तीनों लोकों को नाश, उत्पन्न और पालन करने में समर्थ, वेद में अनेक प्रकार से वर्णित ऐसे श्रीसूर्यनारायण मुझको वाणी प्रदान करें ॥ १ ॥

ग्रन्थ का प्रयोजन—

भूयोभिः पटुबुद्धिभिः पटुधियां होराफलज्ञप्तये
शब्दन्यायसमन्वितेषु बहुशः शास्त्रेषु दृष्टेष्वपि ।
होरातन्त्रमहार्णवप्रतरणे भग्नोद्यमानामहं
स्वल्पं वृत्तविचित्रमर्थबहुलं शास्त्रप्लवं प्रारभे ॥ २ ॥

अनेक चतुर बुद्धि वालों के द्वारा प्रतिपादित, व्याकरण और न्याय से सहित अनेक शास्त्रों को अनेक बार देख कर भी होरा शास्त्र (ज्यौतिष फलित शास्त्र) रूप महा समुद्र के तैरने में भग्न हो गया है उद्यम जिन का ऐसे लोगों को उक्त महा समुद्र में तैरने के लिये और बुद्धिमानों की जन्मपत्री का फल बताने के लिये शास्त्र रूप (होराशास्त्र रूप) नौका (बृहज्जातक) बनाना प्रारम्भ करता हूँ ॥ २ ॥

होरा शब्द के अर्थ—

होरेत्यहोराविकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात् ।
कर्मार्जितं पूर्वभवे सदादि यत्तस्य पक्तिं समभिव्यनक्ति ॥ ३ ॥

कितने आचार्य अहोरात्र का विकल्प होरा कहते हैं। अर्थात् अहोरात्र इस पद के पूर्व का अक्षर (अ) और अन्त का अक्षर (त्र) इन दोनों अक्षरों को लोप करने से बीच में शेष 'होरा' ये दो अक्षर रह जाते हैं। दिन और रात्रि में होने के कारण होरा लग्न का नाम है। वह होरा (लग्न) पूर्व जन्म में अर्जित शुभ और अशुभ कर्मों के फल को प्रकाशित करता है ॥ ३ ॥

कालरूप पुरुष के अङ्ग—

कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरो हृत्क्रोडवासोभृतो
वस्तिर्व्यञ्जनमूरुजानुयुगले जङ्घे ततोऽङ्घ्रिद्वयम् ।
मेषाश्विप्रथमा नवर्क्षचरणाश्चक्रस्थिता राशयो
राशिक्षेत्रगृहर्क्षभानि भवनं चैकार्थसम्प्रत्ययाः ॥ ४ ॥

जन्म समय में नराकृति काल चक्र बना कर उस के मस्तक में मेष, मुख में वृष, छाती में मिथुन, हृदय में कर्क, पेट में सिंह, कटि में कन्या, नाभि के नीचे तुला, लिङ्ग में वृश्चिक, ऊरु में धनु, जंघा में मकर, ठेहुनी के नीचे भाग में कुम्भ और

पैर में मीन इस प्रकार जन्म काल में मनुष्यों के भी अङ्ग विभाग समझना चाहिए।

प्रयोजन यह है कि जन्मकाल में जिन राशियों में शुभ ग्रह हों वे अङ्ग पुष्ट और जिन में पाप हों वे अङ्ग क्षीण निर्बल होते हैं।

मेषादि राशियाँ अश्विनी आदि नक्षत्रों के नव नव चरण की होती हैं।

राशि, क्षेत्र, गृह, ऋक्ष, भ, भवन ये सब राशि के पर्याय हैं ॥ ४ ॥

प्रसङ्ग वश अश्विन्यादि नक्षत्रों में मेषादि राशियों के विभाग—

अश्विनी भरणी मेषः कृत्तिकापाद एव च। तत्पादत्रितयं ब्राह्मं वृषः सौम्यदलं तथा॥
सौम्यार्धमार्द्रा मिथुनं त्वदित्याश्चरणत्रयम्। तत्पादःपुष्यमाश्लेषा राशिः कर्कटकः स्मृतः॥
पित्र्यं भाग्यमथार्यम्णः पादः सिंहः प्रकीर्तितः। तत्पादत्रितयं कन्या हस्तश्चित्रार्धमेव च॥
तुला चित्रादलं स्वातिर्विशाखाचरणत्रयम्। तत्पादं मित्रदैवत्यं ज्येष्ठा वृश्चिक उच्यते॥
मूलमाप्यं तथा धन्वी पादो विश्वेश्वरस्य च। तत्पादत्रितयं श्रोत्रं मकरो वासवं दलम्॥
तद्दलं वारुणं कुम्भस्तथाजाचरणत्रयम्। तत्पाद एको मीनः स्यादहिर्बुध्न्यं च रेवती॥

स्पष्टार्थ के लिये राशि चक्र पूर्वार्ध—

वर्ण	चू, चे, चो, ला,	ली, लू, ले, लो,	अ, ई, उ, ए,	ओ, वा, वी, वू,	वे, वो, का, की,	कु, घ, ङ, छ,	के, को, हा, ही,
नक्षत्र	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु
राशि	मेष	मेष	मेष १, वृष ३,	वृष	वृष २, मिथुन २,	मिथुन	मिथुन ३, कर्क १,
वर्ण	हू, हे, हो, डा,	डी, डू, डे, डो,	मा, मी, मू, मे,	मो, टा, टी, टू,	टे, टो, पा, पी,	पू, ष, ण, ठ,	पे, पो, रा, री,
नक्षत्र	पुष्य	अश्लेषा	मघा	पूर्वफा-लगुनी	उत्तर-फाल्गुनी	हस्त	चित्रा
राशि	कर्क	कर्क	सिंह	सिंह	सिंह १, कन्या ३,	कन्या	कन्या २, तुला २,

स्पष्टार्थ के लिये राशि चक्र उत्तरार्ध—

वर्ण	रू, रे, रो, ता,	ती, तू, ते, तो,	ना, नी, नू, ने,	नो, या, यी, यू,	ये, यो, भा, भी,	भू, ध, फ, ढ,	भे, भो, जा, जी,
नक्षत्र	स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पूर्वाषाढ	उत्तराषाढ
राशि	तुला	तुला ३, वृश्चिक १,	वृश्चिक	वृश्चिक	धनु	धनु	ध. १, मकर ३,
वर्ण	जू, जे, जो, खा,	खी, खू, खे, खो,	गा, गी, गू, गे,	गो, सा, सी, सू,	से, सो, दा, दी,	दू, थ, झ, ञ,	दे, दो, चा, ची,
नक्षत्र	अभिजित्	श्रवण	धनिष्ठा	शत-भिषा	पूर्वभाद्र	उत्तरभाद्र	रेवती
राशि	०	मकर	मकर २, कु. २,	कुम्भ	कु. ३, मीन १,	मीन	मीन

राशियों के स्वरूप—

मत्स्यौ घटी नृमिथुनं सगदं सवीणं
चापी नरोऽश्वजघनो मकरो मृगास्यः ।
तौली सशस्यदहना प्लवगा च कन्या
शेषाः स्वनामसदृशाः खचराश्च सर्वे ॥ ५ ॥

परस्पर दो मछलियों में एक के मुख में दूसरे की पूँछ मिला कर जो स्वरूप हो वही मीन का स्वरूप है । कुम्भ राशि का स्वरूप एक ऐसे पुरुष के सदृश है जिसके कन्धे पर एक घड़ा रखा हो । मिथुन राशि स्त्री पुरुष का जोड़ा है, पुरुष के हाथ में गदा तथा स्त्री के हाथ में वीणा है । धनु राशि कमर से ऊपर हाथ में धनुष धारण किये हुए पुरुष के समान, कमर से नीचे घोड़े के समान जघन वाली है । हरिण के सदृश मुख वाला मकर राशि का स्वरूप है । तुला राशि हाथ में तराजू लिये हुए पुरुष के समान है । कन्या राशि एक हाथ में अग्नि और दूसरे हाथ में अन्न लेकर नाव पर बैठी हुई कन्या के समान है ।

शेष राशियों का अपने नाम के सदृश स्वरूप होता है । जैसे मेष राशि बकरी के

समान, वृष राशि बैल के समान, कर्क राशि केंकड़े के समान, सिंह राशि शेर के समान, वृश्चिक राशि बिच्छू के समान होती है ॥ ५ ॥

मेषादि राशियों तथा नवांशों के स्वामी—

क्षितिजसितज्ञचन्द्ररविसौम्यसितावनिजाः
सुरगुरुमन्दसौरिगुरवश्च गृहांशकपाः ।
अजमृगतौलिचन्द्रभवनादिनवांशविधि-
र्भवनसमांशकाधिपतयः स्वगृहात्क्रमशः ॥ ६ ॥

मङ्गल, शुक्र, बुध, चन्द्र, रवि, बुध, शुक्र, मङ्गल, बृहस्पति, शनि, शनि और गुरु मेषादि राशियों के स्वामी हैं। जैसे मेष के स्वामी मङ्गल, वृष के शुक्र, मिथुन के बुध, कर्क के चन्द्रमा, सिंह के रवि, कन्या के बुध, तुला के शुक्र, वृश्चिक के मङ्गल, धनु के बृहस्पति, मकर के शनैश्चर, कुम्भ के शनैश्चर और मीन के बृहस्पति स्वामी हैं। मेष, मकर, तुला और कर्क इन चार राशियों से आरम्भ करके नव नव राशियों के नवांश होते हैं। अर्थात् मेष राशि में पहला नवांश मेष का, दूसरा वृष का, तीसरा मिथुन का, चौथा कर्क का, पाँचवाँ सिंह का, छठा कन्या का, आठवाँ तुला का और नवाँ वृश्चिक का नवांश होता है। वृष राशि में पहला नवांश मकर का, दूसरा कुम्भ का, तीसरा मीन का, चौथा मेष का, पाँचवाँ वृष का, छठा मिथुन का, सातवाँ कर्क का, आठवाँ सिंह का और नवाँ कन्या का नवांश होता है। मिथुन राशि में पहला तुला का, दूसरा वृश्चिक का, तीसरा धन का इत्यादि, कर्क राशि में पहला कर्क का, दूसरा सिंह का इत्यादि, इसी प्रकार सिंह राशि में मेषादि, कन्या में मकरादि, तुला में तुलादि, वृश्चिक में कर्कादि, धनु में मेषादि, मकर में मकरादि, कुम्भ में तुलादि और मीन में कर्कादि नव राशियों के नवांश होते हैं।

एक राशि में तीस अंश होते हैं, उसमें नव का भाग देने से एक भाग का मान ३ अंश २० कला होता है।

मेषादि द्वादश राशियों में अपने से ही आरम्भ करके द्वादशांश होते हैं। जैसे मेष राशि में पहला मेष का, दूसरा वृष का इत्यादि, वृष में पहला वृष का, दूसरा मिथुन का इत्यादि, इसी तरह सब राशियों में सबों के द्वादशांश होते हैं। राशि के अंश में बारह का भाग देने से एक भाग का मान दो अंश तीस कला होता है ॥६॥

स्फुटार्थ के लिये राशीश चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
स्वामी	मङ्गल	शुक्र	बुध	चन्द्र	रवि	बुध
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
स्वामी	शुक्र	मङ्गल	बृहस्पति	शनैश्चर	शनैश्चर	बृहस्पति

मेषादि राशियों के नवांश चक्र—

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
३।२०	मेष	मकर	तुला	कर्क	मेष	मकर
६।४०	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह	वृष	कुम्भ
१०।००	मिथुन	मीन	धनु	कन्या	मिथुन	मीन
१३।२०	कर्क	मेष	मकर	तुला	कर्क	मेष
१६।४०	सिंह	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह	वृष
२०।००	कन्या	मिथुन	मीन	धनु	कन्या	मिथुन
२३।२०	तुला	कर्क	मेष	मकर	तुला	कर्क
२६।४०	वृश्चिक	सिंह	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह
३०।००	धनु	कन्या	मिथुन	मीन	धनु	कन्या

तुलादि राशियों के नवांश चक्र—

अंश	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
३।२०	तुला	कर्क	मेष	मकर	तुला	कर्क
६।४०	वृश्चिक	सिंह	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह
१०।००	धनु	कन्या	मिथुन	मीन	धनु	कन्या
१३।२०	मकर	तुला	कर्क	मेष	मकर	तुला
१६।४०	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह	वृष	कुम्भ	वृश्चिक
२०।००	मीन	धनु	कन्या	मिथुन	मीन	धनु
२३।२०	मेष	मकर	तुला	कर्क	मेष	मकर
२६।४०	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह	वृष	कुम्भ
३०।००	मिथुन	मीन	धनु	कन्या	मिथुन	मीन

मेषादि छे राशियों के द्वादशांश चक्र—

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
२।३०	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
५।००	वृष	मिथुन	क	सिंह	कन्या	तुला
७।३०	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
१०।००	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु
१२।३०	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर
१५।००	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ
१७।३०	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
२०।००	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	मेष
२२।३०	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	मेष	वृष
२५।००	मकर	कुम्भ	मीन	मेष	वृष	मिथुन
२७।३०	कुम्भ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क
३०।००	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह

तुलादि छे राशियों के द्वादशांश चक्र—

अंश	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
२।३०	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
५।००	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	मेष
७।३०	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	मेष	वृष
१०।००	मकर	कुम्भ	मीन	मेष	वृष	मिथुन
१२।३०	कुम्भ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क
१५।००	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह
१७।३०	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
२०।००	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला
२२।३०	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
२५।००	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु
२७।३०	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर
३०।००	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ

त्रिंशांश के पति—

कुजरविजगुरुज्ञशुक्रभागाः पवनसमीरणकौर्प्यजूकलेयाः।
अयुजि युजि तु भे विपर्ययस्थाः शशिभवनालिझषान्तमृक्षसन्धिः ॥७॥

विषम राशियों (मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ) में पाँच, पाँच, आठ, सात और पाँच इन अंशोंके क्रमसे मङ्गल, शनैश्चर, बृहस्पति, बुध और शुक्र त्रिंशांश पति होते हैं।

तथा सम राशियों (वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन) में विपरीत क्रम से त्रिंशांश पति होते हैं। अर्थात् पाँच, सात, आठ, पाँच और पाँच इन अंशों के क्रम से शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर और मङ्गल त्रिंशांश पति होते हैं।

यथा विषम राशि में पाँच अंश तक मङ्गल, छठे अंश से दश अंश पर्यन्त शनै-

श्वर, ग्यारहवें अंश से लेकर अठारह अंश तक बृहस्पति, उन्नीसवें अंश से लेकर पच्चीसवें अंश तक बुध और छब्बीसवें अंश से लेकर तीस अंश तक शुक्र त्रिशांश पति होता है। तथा सम राशि में आरम्भ से पाँच अंश पर्यन्त शुक्र, छठे अंश से लेकर बारह अंश पर्यन्त बुध, तेरहवें अंश से लेकर बीसवें अंश पर्यन्त बृहस्पति, इक्कीसवें अंश से लेकर पच्चीसवें अंश पर्यन्त शनैश्चर और छब्बीसवें अंश से लेकर तीस अंश पर्यन्त मङ्गल त्रिशांश पति होता है।

कर्क, वृश्चिक और मीन इन राशियों के नववें नवमांश जहाँ पर नक्षत्र राशियों का एक काल में अन्त है उसी का नाम ऋक्ष सन्धि है। इसको गण्डान्त भी कहते हैं। इसीलिए श्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती इन तीनों नक्षत्रों के अन्तिम भाग गण्डान्त करके लोक में प्रख्यात हैं। श्लेषा के अन्त में कर्क का अन्त, ज्येष्ठा के अन्त में वृश्चिक का अन्त और रेवती के अन्त में मीन का अन्त होता है।

विषम राशियों में त्रिशांश चक्र—

अंश	मेष	मिथुन	सिंह	तुला	धनु	कुम्भ
५	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल
१०	शनि	शनि	शनि	शनि	शनि	शनि
१८	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति
२५	बुध	बुध	बुध	बुध	बुध	बुध
३०	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र

सम राशियों में त्रिशांश चक्र—

अंश	वृष	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन
५	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र
१२	बुध	बुध	बुध	बुध	बुध	बुध
२०	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति
२५	शनि	शनि	शनि	शनि	शनि	शनि
३०	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल	मङ्गल

प्रसङ्ग वश अन्य जातकोक्त तिथि गण्ड को कहते हैं—

नन्दातिथिनामादौ पूर्णानाञ्च तथान्तिमे।
घटिकैका शुभे त्याज्या तिथिगण्डं घटीद्वयम् ॥

नन्दा (१, ६, ११) तिथियों के आदि की एक घड़ी और पूर्णा (५, १०, १५) तिथियों के अन्त की एक घड़ी गण्डान्त होती है, वह शुभ कार्यों में वर्जित है, इस तरह तिथि गण्ड दो घड़ी हैं।

नक्षत्र गण्डान्त—

ज्येष्ठाश्लेषारेवतीनामन्ते च घटिकाद्वयम्।
आदौ मूलमघाश्विन्या भगण्डं च चतुर्घटी ॥

ज्येष्ठा, अश्लेषा और रेवती के अन्त की दो घड़ियाँ मूल, मघा और अश्विनी के आदि की दो घड़ियाँ इस तरह चार घड़ियाँ नक्षत्र गण्डान्त कहलाती हैं।

लग्न गण्डान्त—

मीनवृश्चिककर्कान्ते घटिकार्धं परित्यजेत्।
आदौ मेषस्य चापस्य सिंहस्य घटिकार्धकम् ॥

मीन, वृश्चिक और कर्क लग्नों के अन्त की आधी घड़ी, मेष, धन और सिंह के आदि की आधी घड़ी वर्जित करनी चाहिए।

गण्ड के फल—

तिथिगण्डे भगण्डे च लग्नगण्डे च जातकः।
न जीवति यदा जातो जीविते न धनी भवेत् ॥

तिथिगण्ड, नक्षत्र गण्ड और लग्नगण्ड में उत्पन्न बालक नहीं बचता है, अगर बच जावे तो धनी नहीं होता है।

गण्डान्त फल और उसका परिहार—

नाक्षत्रं मातरं हन्ति तिथिजं पितरं तथा।
लग्नोत्थं जातकं हन्ति तस्माद्गण्डान्तमुत्सृजेत् ॥
दिवाजं पितरं हन्ति रात्रिजं मातरं तथा।
सन्ध्ययोर्जातमात्मानं गण्डान्तं नो निरामयम् ॥
दिवा जाता तु या कन्या निशि जातश्च यः पुमान्।
नोभयोर्गण्डदोषः स्यान्नाचलो हन्ति पर्वतम् ॥
तिथ्यादीनां सन्धिदोषं तथा गण्डान्तसंज्ञकम्।
हन्ति लाभगतश्चन्द्रः केन्द्रगा वा शुभग्रहाः ॥
तथैव तिथिगण्डानां नास्तीन्दौ बलशालिनि।
तथैव लग्नगण्डानां नास्ति जीवे बलान्विते ॥
तिथिगण्डे ह्यनड्वाहं नाक्षत्रे धेनुरुच्यते।

काञ्चनं लग्नगण्डे तु गण्डदोषो विनश्यति ॥
जातस्य द्वादशाहे तु जन्मर्क्षे वा शुभे दिने ।
हयमघानिर्ऋति प्रथमं घटीत्रयमहर्निशि सन्धिषु सम्भवे ।
पितृवपुर्जननीमृतिदः क्रमात् परिणये मृतिकृच्च गमेऽर्थहृत् ॥
पूषाश्विनौ गुरुः सार्पं मघा चित्रेन्दुमूलके ।
ऋक्षेष्वेतेषु जातस्य कुर्याद्गोजननं सदा ॥
पौष्णादि गण्डान्तभवो हि मर्त्यः क्रमेण पित्रोरशुभोऽग्रजस्य ।
तथा तु सत्यं त्रिविधे प्रजातः सर्वाभिघातं कुरुते मनुष्यः ॥

नक्षत्र का गण्डान्त माता का, तिथि गण्डान्त पिता का और लग्न का गण्डान्त बालक का नाश करता है।

दिन का गण्डान्त पिता का, रात का गण्डान्त माता का और दोनों सन्ध्याओं का गण्डान्त जातक का नाश करता है ॥

अगर दिन के समय में कन्या का जन्म हो और रात में बालक का जन्म हो तो उन दोनों को गण्ड दोष नहीं लगता है, जैसे पर्वत पर्वत को नहीं नाश करता उसी तरह गण्ड दोष में बालक और बालिकाओं को गण्ड दोष नाश नहीं करता है।

अगर एकादश में चन्द्रमा अथवा केन्द्र में शुभग्रह हो तो गण्डान्तदोष नहीं लगता है।

अगर चन्द्रमा बली हो तो तिथि गण्डान्त का दोष नहीं लगता है, एवं यदि बृहस्पति बलवान् हो तो लग्न गण्डान्त का दोष नहीं लगता है।

अब गण्डान्त दोष नाश के लिए शान्ति कहते हैं कि तिथि गण्डान्त हो तो बैलदान, नक्षत्र गण्डान्त हो तो गोदान, लग्न गण्डान्त हो तो सुवर्ण दान करना चाहिए। ऐसा करने से गण्डान्त दोष नष्ट हो जाता है।

अब शान्ति करने के लिये दिन कहते हैं। जातक के जन्म से बारहवें दिन, जन्म नक्षत्र के दिन या अन्य शुभ दिनों में शान्ति करनी चाहिए।

अश्विनी, मघा और मूल की पहिली तीन घड़ियों में दिन या रात जिस किसी समय जन्म हो तो क्रम से पिता का, अपने शरीर का और माता का नाश करता है।

रेवती, अश्विनी, पुष्य, अश्लेषा, मघा, चित्रा, मृगशिरा और मूल नक्षत्रों में उत्पन्न जातक का गोप्रसव करना चाहिए।

रेवती आदि गण्डान्त में उत्पन्न बालक के माता, पिता और बड़े भाई को अशुभ होता है। तीनों तरह के गण्डान्त में उत्पन्न बालक सर्वनाश करता है।

मूलादि नक्षत्रों में उत्पन्न का फल—

मूलजा श्वसुरं हन्ति व्यालजा च तदङ्गनाम् ।
विशाखजा देवरघ्नी ज्येष्ठाजा ज्येष्ठनाशका ॥
आद्ये पिता नाशमुपैति मूलपादे द्वितीये जननी तृतीये ।

धनं चतुर्थस्य शुभोऽथ शान्त्या सर्वत्र सत्स्यादहिभे विलोमम् ॥

न कन्या हन्ति मूलर्क्षे पितरं मातरं तथा ।
ज्येष्ठान्ते घटिका चैव मूलादौ घटिकाद्वयम् ॥
अभुक्तमूलमथवा सन्धिनाडीचतुष्टयम् ।
नवमासं सार्पदोषः स्यान्मूलदोषोऽष्टवर्षकम् ॥
ज्येष्ठो मासान्पञ्चदश तावद्दर्शनवर्जनम् ।
ज्येष्ठान्त्यपादजातस्तु पितुः स्वस्य च नाशकः ॥
अश्लेषा प्रथमः पादः पादो मूलान्तिमस्तथा ।
विशाखाज्येष्ठयोराद्यास्त्रयः पादाः शुभावहाः ॥
पत्न्यग्रजामग्रजं हन्ति ज्येष्ठर्क्षजः पुमान् ।
तथा भार्यास्वसारं वा श्यालकं वा द्विदैवजः ॥
गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिधव्याघातगण्डावमे ।
संक्रान्तिव्यतिपातवैधृतिसिनीवालीकुहूदर्शके ॥
वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोगे मृतौ ।
विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शान्तितः ॥

जिस कन्या का जन्म मूल नक्षत्र में हो वह श्वसुर को मारती है। जिस कन्या का अश्लेषा नक्षत्र में जन्म हो वह सास का नाश करती है। जिस कन्या का विशाखा नक्षत्र में जन्म हो वह देवर का नाश करती है। जिसका ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म हो वह अपने पति के बड़े भाई का नाश करती है।

अगर मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में लड़के का जन्म हो तो पिता का नाश करता है। मूल के दूसरे चरण में जन्म हो तो माता का नाश करता है। मूल के तीसरे चरण में जन्म हो तो धन का नाश करता है और मूल के चौथे चरण में जन्म हो तो शुभ होता है।

अश्लेषा नक्षत्र में इसका उलटा फल होता है जैसे प्रथम चरण में शुभ, द्वितीय चरण में धननाश, तृतीय चरण में माता का नाश, चतुर्थ चरण में पिता का नाश होता है। मूल नक्षत्र में कन्या का जन्म हो तो माता-पिता का नाश नहीं करती है, किन्तु सास-ससुर का नाश करती है।

ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त की एक घड़ी, मूल नक्षत्र के आदि की दो घड़ियाँ अथवा सन्धि की चार घड़ियाँ अभुक्त मूल कहलाती हैं।

अब किसका दोष कितने दिन रहता है वह बतलाते हैं।

अश्लेषा के दोष नव महीने पर्यन्त, मूल के दोष आठ वर्ष पर्यन्त, ज्येष्ठा का दोष पन्द्रह महीने पर्यन्त रहता है, तब तक जातक का मुख नहीं देखना चाहिए।

ज्येष्ठा के अन्तिम चरण में उत्पन्न पुत्र पिता का नाश करता है, और स्वयं भी नष्ट होता है। अश्लेषा का प्रथम चरण, मूल का अन्तिम चरण और ज्येष्ठा का प्रथम, ये तीन चरण शुभ होते हैं।

ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न पुरुष अपनी स्त्री के बड़े भाई या बहिन का नाश करता है। विशाखा में उत्पन्न जातक साली या साले का नाश करता है।

गण्डान्त, ज्येष्ठा, शूल, परिघ, व्याघात, गण्ड, अवमतिथि, संक्रान्ति, व्यतीपात, वैधृति, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, अमावस्या, वज्र, यमघण्ट, दग्ध और मृत्यु योग, भद्रा, सोदर भाई बहिन के नक्षत्र में अथवा पिता के नक्षत्र में जन्म हो तो शुभ नहीं होता है, शान्ति करने से शुभ होता है।

मेषादि राशियों के नाम—

क्रियातावुरिजितुमकुलीरलेयपाथोनजूककौर्प्याख्याः ।
तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चान्त्यभश्चेत्थम् ॥ ८ ॥

क्रिय, तावुरि, जितुम, कुलीर, लेय, पाथोन, जूक, कौर्प्य, तौक्षिक, आकोकेर, हृद्रोग, अन्त्यभ ये मेषादि बारह राशियों के क्रम से नाम हैं, जैसे मेष का क्रिय, वृष का तावुरि मिथुन का जितुम, कर्क का कुलीर, सिंह का लेय, कन्या का पाथोन, तुला का जूक, वृश्चिक का कौर्प्य, धनु का तौक्षिक, मकर का आकोकेर, कुम्भ का हृद्रोग, मीन का अन्त्यभ नाम है ॥ ८ ॥

यहां स्पष्टार्थ के लिये चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
नाम	क्रिय	तावुरि	जितुम	कुलीर	लेय	पाथोन
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
नाम	जूक	कौर्प्य	तौक्षिक	आकोकेर	हृद्रोग	अन्त्यभ

ग्रहों के षड्वर्ग की संज्ञा—

द्रेष्काणहोरानवभागसंज्ञास्त्रिंशांशकद्वादशसंज्ञिताश्च ।
क्षेत्रं च यद्यस्य स तस्य वर्गो होरेति लग्नं भवनस्य चार्द्धम् ॥ ९ ॥

द्रेष्काण, होरा, नवमांश, त्रिंशांश, द्वादशांश और गृह ये ग्रहों के छे वर्ग होते हैं। इनमें द्रेष्काण और होरा आगे कहेंगे। जिस ग्रह के जो द्रेष्काणादि कहे गये हैं वे उसके वर्ग हैं। यह द्रेष्काणादि षड्वर्ग कहलाता है, परञ्च सूर्य, चन्द्रमा इन दोनों का त्रिंशांश नहीं होता है। तथा कुजादि पञ्च ग्रहों की होरा नहीं होती हैं, अतः प्रत्येक ग्रह के अपने वर्ग पाँच ही होते हैं। होरा राशि के आधे भाग को कहते हैं तथा लग्न की भी संज्ञा होरा कही गयी है। अतः प्रकरण वश होरा शब्द से कहीं पर लग्न कहीं पर राश्यर्ध का ग्रहण किया जायगा ॥ ९ ॥

राशियों के रात्रि और दिन तथा पृष्ठोदयादिसंज्ञा—

गोजाश्विकर्किमिथुनास्समृगा निशाख्याः
पृष्ठोदया विमिथुनाः कथितास्त एव।
शीर्षोदया दिनवलाश्च भवन्ति शेषा
लग्नं समेत्युभयतः पृथुरोमयुग्मम् ॥ १० ॥

वृष, मेष, धन, कर्क, मिथुन, मकर ये राशियाँ रात्रि में वली होती हैं। इनमें मिथुन को छोड़ कर शेष राशियाँ (वृष, मेष, धन, कर्क, मकर) पृष्ठोदय हैं। शेष राशियाँ (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ) ये दिन में वली और शीर्षोदय भी हैं। केवल एक मीन राशि उभयोदय (मुख पुच्छोदय) तथा दिन और रात दोनों में वली है ॥ १० ॥

उदय और वली के समय का चक्र—

रात्रिवली, पृष्ठोदय	मेष	वृष	कर्क	धनु	मकर
दिनवली, शीर्षोदय	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	कुम्भ
रात्रिवली, शीर्षोदय	×	×	मिथुन	×	×
दिनरात्रिवली, उभयोदय	×	×	मीन	×	×

मेषादि राशियों की क्रूर, सौम्य आदि संज्ञा—

क्रूरस्सौम्यः पुरुषवनिते ते चरागद्विदेहाः
प्रागादीशाः क्रियवृषनृयुक्कर्कटास्सत्रिकोणाः।
मार्तण्डेन्दोरयुजि समभे चन्द्रभान्वोश्च होरे
द्रेष्काणाः स्युः स्वभवनसुतत्रित्रिकोणाधिपानाम् ॥ ११ ॥

मेषादि राशियों की क्रम से क्रूर, सौम्य, पुरुष, स्त्री, चर, स्थिर, द्विस्वभाव संज्ञा होती हैं। जैसे मेष क्रूर, वृष सौम्य, मिथुन क्रूर, कर्क सौम्य, सिंह क्रूर, कन्या सौम्य, तुला क्रूर, वृश्चिक सौम्य, धनु क्रूर, मकर सौम्य, कुम्भ क्रूर, मीन सौम्य है। एवं मेष पुरुष, वृष स्त्री, मिथुन पुरुष, कर्क स्त्री, सिंह पुरुष, कन्या स्त्री, तुला पुरुष, वृश्चिक स्त्री, धनु पुरुष, मकर स्त्री, कुम्भ पुरुष, मीन स्त्री है। तथा मेष चर, वृष स्थिर मिथुन द्विस्वभाव, कर्क चर, सिंह स्थिर, कन्या द्विस्वभाव, तुला चर, वृश्चिक स्थिर, धनु द्विस्वभाव, मकर चर, कुम्भ स्थिर, मीन द्विस्वभाव है।

मेष, वृष, मिथुन, कर्क ये अपने से पञ्चम और नवम से युत पूर्वादि दिशाओं के स्वामी होते हैं, जैसे मेष, सिंह और धनु पूर्व दिशा के; वृष, कन्या और मकर दक्षिण दिशा के; मिथुन, तुला और कुम्भ पश्चिम दिशा के; कर्क, वृश्चिक और मीन उत्तर दिशा के स्वामी होते हैं।

विषम राशि में पहले पन्द्रह अंश पर्यन्त सूर्य की और पंद्रह अंश के बाद तीस अंश पर्यन्त चन्द्रमा की होरा होती है।

सम राशि में पन्द्रह अंश पर्यन्त पहले चन्द्रमा की और पन्द्रह के बाद तीस अंश पर्यन्त सूर्य की होरा होती है।

राशि का तृतीय भाग द्रेष्काण का मान होता है। अर्थात् एक राशि में दश-दश अंशों के तीन भाग होते हैं। अतः प्रत्येक राशि में तीन-तीन द्रेष्काण होते हैं। उनमें दश अंश पर्यन्त पहला, दश से बीस अंश पर्यन्त दूसरा, बीस से तीस अंश पर्यन्त तीसरा द्रेष्काण होता है। पहले द्रेष्काण में उसी राशि का स्वामी, दूसरे में उससे पञ्चम राशि का स्वामी, तीसरे में उससे नवम राशि का स्वामी द्रेष्काण पति होता है। जैसे मेष राशि में १० अंश पर्यन्त पहला द्रेष्काण मेष के स्वामी मङ्गल का, १० अंश से २० अंश पर्यन्त दूसरा द्रेष्काण मेष से पञ्चम सिंह के स्वामी सूर्य का, २० अंश से तीस अंश पर्यन्त तीसरा द्रेष्काण मेष से नवम धन के स्वामी बृहस्पति का होता है। इसी प्रकार सब राशियों में जानना चाहिए।

क्रूर सौम्य आदि जानने के लिये चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
संज्ञा	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य
संज्ञा	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
संज्ञा	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
संज्ञा	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य
संज्ञा	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
संज्ञा	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव

दिशाओं के स्वामी जानने के लिये चक्र—

पूर्व दिशा के स्वामी	मेष	सिंह	धनु
दक्षिण दिशा के स्वामी	वृष	कन्या	मकर
पश्चिम दिशा के स्वामी	मिथुन	तुला	कुम्भ
उत्तर दिशा के स्वामी	कर्क	वृश्चिक	मीन

होरा जानने के लिये चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
ग्रह अंश	सूर्य १५	चन्द्रमा १५	सूर्य १५	चन्द्रमा १५	सूर्य १५	चन्द्रमा १५
ग्रह अंश	चन्द्रमा ३०	सूर्य ३०	चन्द्रमा ३०	सूर्य ३०	चन्द्रमा ३०	सूर्य ३०
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
ग्रह अंश	सूर्य १५	चन्द्रमा १५	सूर्य १५	चन्द्रमा १५	सूर्य १५	चन्द्रमा १५
ग्रह अंश	चन्द्रमा ३०	सूर्य ३०	चन्द्रमा ३०	सूर्य ३०	चन्द्रमा ३०	सूर्य ३०

द्रेष्काण चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
१० अंश	१	२	३	४	५	६
२० अंश	५	६	७	८	९	१०
३० अंश	९	१०	११	१२	१	२
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
१० अंश	७	८	९	१०	११	१२
२० अंश	११	१२	१	२	३	४
३० अंश	३	४	५	६	७	८

मतान्तर से होरा के स्वामी—

केचित्तु होरां प्रथमां भपस्य वाञ्छन्ति लाभाधिपतेर्द्वितीयाम् ।
द्रेष्काणसंज्ञामपि वर्णयन्ति स्वद्वादशैकादशराशिपानाम् ॥१२॥

किसी आचार्य का मत है कि प्रथम होरेश उस राशि के स्वामी और द्वितीय होरेश उस राशि से ग्यारहवीं राशि के स्वामी होते हैं। जैसे मेष राशि में पहला होरा मेष के स्वामी मङ्गल की और द्वितीय होरा मेष से ग्यारहवीं राशि कुम्भ के स्वामी शनि की होती है। इसी प्रकार वृषादि राशियों में जानना ॥

तथा पहला द्रेष्काण का स्वामी उस राशि के स्वामी, दूसरा द्रेष्काण का स्वामी उससे बारहवीं राशि के स्वामी और तीसरा द्रेष्काण का स्वामी उससे ग्यारहवीं राशि के स्वामी होते हैं। जैसे मेष राशि में प्रथम द्रेष्काणेश मेष के स्वामी मङ्गल, द्वितीय द्रेष्काणेश मेष से बारहवीं राशि मीन के स्वामी गुरु, तृतीय द्रेष्काणेश मेष से ग्यारहवीं राशि कुम्भ के स्वामी शनि होते हैं। एवं वृषादि राशियों में जानना।

मतान्तर से होरा चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
१५ अंश	१	२	३	४	५	६
३० अंश	११	१२	१	२	३	४
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
१५ अंश	७	८	९	१०	११	१२
३० अंश	५	६	७	८	९	१०

मतान्तर से द्रेष्काण चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
१० अंश	१	२	३	४	५	६
२० अंश	१२	१	२	३	४	५
३० अंश	११	१२	१	२	३	४
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
१० अंश	७	८	९	१०	११	१२
२० अंश	६	७	८	९	१०	११
३० अंश	५	६	७	८	९	१०

ग्रहों के उच्च और नीच—

अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः॥१३॥

मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, तुला इन राशियों में क्रम से दश, तीन

अट्ठाइस, पन्द्रह, पाँच, सत्ताइस, बीस अंश पर्यन्त सूर्यादि ग्रहों के उच्च स्थान हैं। तथा इन राशियों से सप्तम राशियों में उक्त अंश पर्यन्त नीच स्थान हैं। जैसे रवि के मेष में दश अंश पर्यन्त उच्च, मेष से सप्तम (तुला) में दश अंश पर्यन्त नीच है। चन्द्रमा के वृष में तीन अंश पर्यन्त उच्च, वृष से सप्तम (वृश्चिक) में तीन अंश पर्यन्त नीच है, मङ्गल के मकर में अट्ठाइस अंश पर्यन्त उच्च, मकर से सप्तम (कर्क) में अट्ठाइस अंश पर्यन्त नीच है, बुध के कन्या में पन्द्रह अंश पर्यन्त उच्च, कन्या से सप्तम (मीन) में पन्द्रह अंश पर्यन्त नीच है।

बृहस्पति के कर्क में पाँच अंश पर्यन्त उच्च और कर्क से सप्तम (मकर) में पाँच अंश पर्यन्त नीच है, शुक्र के मीन में सत्ताइस अंश पर्यन्त उच्च और मीन से सप्तम (कन्या) में सत्ताइस अंश पर्यन्त नीच है, शनि के तुला में बीस अंश पर्यन्त उच्च और तुला से सप्तम (मेष) में बीस अंश पर्यन्त नीच है ॥ १३ ॥

ग्रहों के उच्च और नीच चक्र—

	ग्रह	रवि	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
उच्च	राशि	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला
	अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०
नीच	राशि	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष
	अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०

वर्गोत्तम नवमांश और सूर्यादि ग्रहों के त्रिकोण—

वर्गोत्तमाश्चरगृहादिषु पूर्वमध्य-
पर्यन्तगाः शुभफला नवभागसंज्ञाः।
सिंहो वृषः प्रथमषष्ठहयाङ्गतौलि-
कुम्भास्त्रिकोणभवनानि भवन्ति सूर्यात् ॥ १४ ॥

चरादि राशियोंमें पूर्व, मध्य और अन्त्यके नवमांश वर्गोत्तम संज्ञकहैं। अर्थात् मेष, कर्क,तुला मकर इन राशियोंके पहला नवमांश, वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ इन राशिमों के पाँचवां नवांश तथा मिथुन, कन्या, धन और मीन इन राशियों के नववां नवांश वर्गोत्तम संज्ञक है। इनमें स्थित ग्रह जातक को शुभ फल देता है।

सूर्यादि ग्रहों के क्रम से सिंह, वृष, मेष, कन्या, धन, तुला और कुम्भ मूल-त्रिकोण है। जैसे सूर्य का सिंह, चन्द्रमा का वृष, मङ्गल का मेष, बुध का कन्या, बृहस्पति का धन, शुक्र का तुला और शनि का कुम्भ मूलत्रिकोण है ॥ १४ ॥

वर्गोत्तम-नवांश-चक्र—

राशि	मेष	कर्क	तुला	मकर
वर्गोत्तम नवांश	१	१	१	१
राशि	वृष	सिंह	वृश्चिक	कुम्भ
वर्गोत्तम नवांश	५	५	५	५
राशि	मिथुन	कन्या	धनु	मीन
वर्गोत्तम नवांश	९	९	९	९

सूर्यादिग्रहों के त्रिकोण चक्र—

ग्रह	रवि	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
मूल त्रिकोण	सिंह	वृष	मेष	कन्या	धनु	तुला	कुम्भ

लग्नादि द्वादशभावों की और उपचय, अपचय की संज्ञा—

होरादयस्तनुकुटुम्बसहोत्थबन्धुपुत्रारिपत्निमरणानि शुभास्पदायाः ।
रिष्फाख्यमित्युपचयान्यरिकर्मलाभदुश्चिक्यसञ्ज्ञितगृहाणि न नित्यमेके॥

लग्नादि द्वादश भावों के क्रम से तनु, कुटुम्ब, सहोत्थ, बन्धु, पुत्र, अरि, पत्नि, मरण, शुभ, आस्पद, आय और रिष्फ संज्ञा हैं। जैसे लग्न की तनु, द्वितीय भाव की कुटुम्ब, तृतीय भाव की सहोत्थ, चतुर्थ भाव की बन्धु, पञ्चम भाव की पुत्र, षष्ठ भाव की अरि, सप्तम भाव की पत्नी, अष्टम भाव की मरण, नवम भाव की शुभ, दशम भाव की आस्पद, एकादश भावों की आय और द्वादश भाव की रिष्फ संज्ञाएँ हैं।

षष्ठ, दशम, एकादश और तृतीय भावों की उपचय संज्ञा है, यह उपचय संज्ञा नित्य नहीं है, अर्थात् अनित्य है उनका यह अभिप्राय है कि अगर उक्त भाव पापग्रह या अपने स्वामी के शत्रु से युत दृष्ट हों तो उनकी उपचय संज्ञा नहीं रहती है और उपचय के अतिरिक्त भाव (प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पञ्चम, सप्तम, अष्टम, नवम, द्वादश) की अपचय संज्ञा है ॥ १५ ॥

उपचय के ग्रहण में गर्गादि का वाक्य—

अथोपचयसंज्ञा स्यात्त्रिलाभरिपुकर्मणाम् । न चेद्भवन्ति दृष्टास्ते पापस्वस्वामिशत्रुभिः॥

उपचयापचय के विषय में यवनेश्वर—

षष्ठं तृतीयं दशमञ्च राशिमेकादशं चोपचयर्क्षमाहुः ।
होरागृहस्थानशशाङ्कभेभ्यः शेषाणि चैभ्योऽपचयात्मकानि ॥

इसका प्रयोजन कहते हैं—

उपचयगृहमित्रस्वोच्चगैः पुष्टमिष्टं त्वपचयगृहनीचारातिगैर्नेष्टसंपत् ।

भावों की संज्ञा जानने के चक्र—

भाव	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पञ्चम	षष्ठ
संज्ञा	तनु	कुटुम्ब	सहोत्थ	बन्धु	पुत्र	अरि
भाव	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
संज्ञा	पत्नी	मरण	शुभ	आस्पद	आय	रिष्फ

उपचयापचय जानने के चक्र—

उपचय गृह	३	६	१०	११	×	×	×	×
अपचय गृह	१	२	४	५	७	८	९	१२

द्वादश भावों के संज्ञान्तर—

कल्पस्वविक्रमगृहप्रतिभाक्षतानि चित्तोत्थरन्ध्रगुरुमानभवव्ययानि ।
लग्नाच्चतुर्थनिधने चतुरस्रसंज्ञं द्यूनं च सप्तमगृहं दशमं खमाज्ञा ॥१६॥

लग्नादि द्वादश भावोंकी क्रम से कल्प, स्व, विक्रम, गृह, प्रतिभा, क्षत, चित्तोत्थ, रन्ध्र, गुरु, मान, भव और व्यय संज्ञाएँ हैं। जैसे लग्न की कल्प, द्वितीय की स्व, तृतीय की विक्रम, चतुर्थ की गृह, पञ्चम की प्रतिभा, षष्ठ की क्षत, सप्तम की चित्तोत्थ, अष्टम की रन्ध्र, नवम की गुरु, दशम की मान, एकादश की भव और द्वादश की व्यय संज्ञाएँ है।

लग्न से चतुर्थ भाव और अष्टम भाव की चतुरस्र संज्ञाएँ है। सप्तम भाव की द्यून संज्ञा है तथा दशम भाव की ख और आज्ञा ये दो नाम हैं ॥ १६ ॥

भावों के नामान्तर चक्र—

भाव	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पञ्चम	षष्ठ
संज्ञा	कल्प	स्व	विक्रम	गृह	प्रतिभा	क्षत
भाव	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
संज्ञा	चित्तोत्थ	रन्ध्र	गुरु	मान	भव	व्यय

चतुरस्रादि संज्ञा चक्र—

भाव	चतुर्थ	अष्टम	सप्तम	दशम	
संज्ञा	चतुरस्र		द्यून	ख	आज्ञा

कण्टकादि संज्ञा—

कण्टककेन्द्रचतुष्टयसंज्ञाः सप्तमलग्नचतुर्थखभानाम् ।
तेषु यथाभिहितेषु बलाढ्याः कीटनराम्बुचराः पशवश्च ॥१७॥

सप्तम, लग्न, चतुर्थ और दशम इन भावों की कण्टक, केन्द्र और चतुष्टय संज्ञाएँ हैं। इनमें क्रम से कीट, मनुष्य, जलचर और पशु राशि बलवान् होती है। जैसे कीट राशि (वृश्चिक, मीन और कर्क) सप्तम में, मनुष्य राशि (मिथुन, कन्या, तुला और धन का पूर्वार्ध) लग्न में बलवान होती हैं। जलचर राशि (कर्क, मीन और मकर का उत्तरार्ध) चतुर्थ में बलवान होती हैं। चतुष्पद राशि (मेष, सिंह, वृष, धन का उत्तरार्ध और मकर का पूर्वार्ध) दशम स्थान में बलवान् होती हैं ॥ १७ ॥

पणफरादि संज्ञा—

केन्द्रात्परं पणफरं परतश्च सर्वमापोक्लिमं हिबुकमम्बु सुखञ्च वेश्म ।
जामित्रमस्तभवनं सुतभं त्रिकोणं मेषूरणं दशममत्र च कर्म विद्यात् ॥

केन्द्र स्थान (१, ४, ७, १०) से ऊपर द्वितीय, पञ्चम, अष्टम और एकादश भावों की पणफर संज्ञा हैं। पणफर से ऊपर तृतीय, षष्ठ, नवम और द्वादश भावों की आपोक्लिम संज्ञा है। चतुर्थ भाव की हिबुक, अम्बु, सुख और वेश्म संज्ञाएँ हैं। जामित्र, अस्त सप्तम भाव की संज्ञाएँ हैं। पञ्चम भाव की त्रिकोण संज्ञा है। मेषूरण और कर्म दशम भाव की संज्ञाएँ हैं ॥ १८ ॥

भाव				संज्ञा		
१	४	७	१०	कण्टक	केन्द्र	चतुष्टय
२	५	८	११	पणफर	×	×
३	६	९	१२	आपोक्लिम	×	×
४	×	×	×	हिबुक	अम्बु	सुख
७	×	×	×	जामित्र	×	×
५	×	×	×	त्रिकोण	×	×
१०	×	×	×	मेषूरण	कर्म	×

राशियों के बलबोधक चक्र—

राशि					बली स्थान
वृश्चिक	×	×	×	×	सप्तम
मिथुन	तुला	कन्या	कुम्भ	धन का पू०	लग्न
कर्क	मीन	मकर का परार्ध	×	×	चतुर्थ
मेष	वृष	सिंह	धन का परार्घ	×	दशम

लग्नादि राशियों के वल—

होरा स्वामिगुरुज्ञवीक्षितयुता नान्यैश्च वीर्य्योत्कटा
केन्द्रस्था द्विपदादयोऽह्नि निशि च प्राप्ते च सन्ध्याद्वये।
पूर्वार्द्धे विषयादयः कृतगुणा मानं प्रतीपं च तद्-
दुश्चिक्यं सहजं तपश्च नवमं त्र्याद्यं त्रिकोणं च तत् ॥१९॥

अगर लग्न अपने स्वामी, बृहस्पति और बुध से दृष्ट, युत हो तथा अन्य ग्रहों से दृष्ट, युत न हो तो वली होता है। अगर लग्न केवल अन्यग्रहों से दृष्ट, युक्त हो तो हीन वली होता है तथा उक्त और अनुक्त दोनों ग्रहों से दृष्ट, युत हो तो मध्यवली होता है।

यहाँ पर वादरायण—

जीवस्वनाथशशिजैर्युतदृष्टा बलवती होरा। शेषैर्वलहीना स्यादेवं भिन्नैस्तु मध्यवला॥
वलहीना यदि सर्वैर्न वीक्षिता नैव युक्ता।

केन्द्र (१, ४, ७, १०) में स्थित सब राशियाँ बलवती होती हैं। पणफर (२, ५, ८, ११) में मध्यबली और आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) में हीनवली होती हैं।

यहाँ पर भी वादरायण—

केन्द्रस्थातिवलाः स्युर्मध्यबला पणफराश्रिता ज्ञेयाः।
आपोक्लिमगाः सर्वे हीनवला राशयः कथिताः॥

द्विपदादि राशियाँ (द्विपद, चतुष्पद, कीट) क्रम से दिन, रात और दोनों सन्ध्याओं में वली होती हैं।

जैसे द्विपद राशियाँ (मिथुन, तुला, कन्या, कुम्भ और धन का पूर्वार्ध) दिन में बली होती हैं। चतुष्पद राशियाँ (मेष, वृष, सिंह, मकर का पूर्वार्ध और धन का परार्ध) रात्रि में बली होती हैं और कीट राशियाँ (वृश्चिक, मीन, कर्क और मकर का परार्ध) दोनों सन्ध्याओं (प्रातः सन्ध्या, सायं सन्ध्या) में बली होती हैं।

यहाँ पर देवकीर्ति का वचन—

मिथुनतुलकुम्भकन्या दिवाबला धन्विनश्च पूर्वार्धम् ।
अजवृषसिंहा रात्रौ मृगहययोः पूर्वपश्चार्द्धे ॥
वृश्चिकमीनकुलीरा मकरान्त्यार्द्धे च सन्ध्यायाम् ।

पाँच आदि अङ्कों (५, ६, ७, ८, ९, १०) को चार से गुणा करने से (२०, २४, २८, ३२, ३६, ४०) क्रम से मेष से कन्या पर्यन्त छै राशियों के मान होते हैं । उनके उलटा (४०, ३६, ३२, २८, २४, २०) तुला से मीन पर्यन्त छै राशियों के मान होते हैं । जैसे मेष का मान २०, वृष का २४, मिथुन का २८, कर्क का ३२, सिंह का ३६ और कन्या का ४०, तुला का ४०, वृश्चिक का ३६, धनु का ३२, मकर का २८, कुम्भ का २४ और मीन का २० मान होता है ।

यहाँ पर सत्याचार्य—

चतुरुत्तरोत्तराः स्युर्विंशतिभागा भवन्ति मेषाद्ये ।
मानमिहार्द्धे पूर्वे मीनाद्ये चोत्क्रमादर्द्धे ।

तीसरे स्थान को दुश्चिक्य कहते हैं । नवम स्थान को तप, त्रित्रिकोण और त्रिकोण भी कहते हैं ।

केन्द्रादिकों में बल जानने के लिये चक्र—

स्थान				बल
१	४	७	१०	पूर्ण बल
२	५	८	११	मध्य बल
३	६	९	१२	निर्बल

लग्नों के बल जानने के लिये चक्र—

मिथुन	कन्या	तुला	कुम्भ	धनु का पू०	दिनबली,
मेष	वृष	सिंह	धनु का प०	मकर का पू०	रात्रिबली,
वृश्चिक	मीन	कर्क	मकर का परार्घ	×	सन्ध्याद्वयबली

राशियों के मान जानने के लिए चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
मान	२०	२४	२८	३२	३६	४०
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
मान	४०	३६	३२	२८	२४	२०

मेषादि द्वादश राशियों के वर्ण

रक्तः श्वेतः शुकतनुनिभः पाटलो धूम्रपाण्डु-
श्चित्रः कृष्णः कनकसदृशः पिङ्गलः कर्बुरश्च ।
बभ्रुः स्वच्छः प्रथमभवनाद्येषु वर्णाः प्लवत्वं
स्वाम्याशाख्यं दिनकरयुताद्भाद् द्वितीयं च वेशिः ॥ २० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके राशिप्रभेदाध्यायः प्रथमः ॥ १ ॥

मेषादि राशियों के क्रम से लाल, श्वेत, हरा, थोड़ा लाल, थोड़ा श्वेत, अनेक वर्ण, काला, सुवर्णसदृश, पीला, चितकवरा, नकुल के सदृश, मछली के सदृश वर्ण हैं। अर्थात् मेष का वर्ण लाल, वृष का श्वेत, मिथुन का हरा, कर्क का थोडा लाल, सिंहका थोड़ा श्वेत, कन्या का अनेक वर्ण, तुला का काला, वृश्चिक का सुवर्ण के सदृश, धनु का पीला, मकर का चितकवरा, कुम्भ का नकुल के सदृश और मीन का मछली के सदृश वर्ण है।

तथा जिस राशि के स्वामी की जो दिशा है वह उस राशि की प्लव (नीची) होती है। जैसे मेष और वृश्चिक के स्वामी मङ्गल है, उस की दिशा दक्षिण है अतः मेष और वृश्चिक का दक्षिण प्लव हुआ, वृष और तुला का स्वामी शुक्र है उसकी दिशा अग्निकोण है, अतः वृष और तुला का अग्निकोण प्लव हुआ। मिथुन और कन्या का स्वामी बुध है उसकी दिशा उत्तर है, अतः मिथुन और कन्या का उत्तर प्लव हुआ। कर्क का स्वामी चन्द्रमा है, उसकी दिशा वायव्य है, अतः कर्क का प्लव वायव्य हुआ। धन और मीन का स्वामी बृहस्पति है, इसकी दिशा ईशान-कोण है, अतः धनु और मीन का ईशान कोण प्लव हुआ। मकर और कुम्भ का स्वामी शनि है, शनि की दिशा पश्चिम है, अतः मकर और कुम्भ का प्लव पश्चिम हुआ। सिंह का स्वामी सूर्य है उसकी दिशा पूरब है अतः सिंह का प्लव पूरब हुआ।

राशियों के वर्ण जानने के लिये चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
वर्ण	लाल	श्वेत	हरा	थोड़ा लाल	थोड़ा श्वेत	अनेक वर्ण
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
वर्ण	काला	सुवर्णसदृश	पीला	चितकबरा	नकुल के सदृश	मछली के सदृश

राशियों के प्लव दिशा जानने के लिये चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	धनु	मकर	सिंह
राशि	वृश्चिक	तुला	कन्या	×	मीन	कुम्भ	×
राशीश	मङ्गल	शुक्र	बुध	चन्द्रमा	बृहस्पति	शनि	सूर्य
प्लवदि०	दक्षिण	अग्निकोण	उत्तर	वायव्य	ईशान	पश्चिम	पूर्व

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां राशिप्रभेदाध्यायः प्रथमः।

अथ ग्रहभेदाध्यायो द्वितीयः।

कालपुरुष के आत्मादि विभाग—

कालात्मा दिनकृन्मनश्च हिमगुः सत्त्वं कुजो ज्ञो वचो
जीवो ज्ञानसुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः।
राजानौ रविशीतगू क्षितिसुतो नेता कुमारो बुधः
सूरिर्दानवपूजितश्च सचिवः प्रेष्यः सहस्रांशुजः॥ १॥

काल स्वरूप पुरुष की सूर्य आत्मा, चन्द्रमा मन, मङ्गल बल, बुध वाणी, बृहस्पति ज्ञान और सुख, शुक्र मदन (कन्दर्प) और शनि दुःख है।

सूर्य और चन्द्रमा राजा, बुध राजकुमार, मङ्गल सेनापति, गुरु और शुक्र मन्त्री और शनि प्रेष्य (भृत्य) है।

इसका प्रयोजन सारावली में—

आत्मादयो गगनगैर्बलिभिर्बलवत्तराः। दुर्बलैर्दुर्बला ज्ञेया विपरीतः शनिः स्मृतः॥

जन्मकाल में सूर्य आदि ग्रहों के बलवान् होने से आत्मा आदि बलवान् होते हैं। अगर सूर्यादि ग्रह दुर्बल हों तो आत्मा आदि दुर्बल समझना। इनमें शनि का फल विपरीत समझना, अर्थात् शनि जितना बली हो उतना ही अशुभ फल देता है।

तथा जितना ही दुर्बल हो उतना ही शुभ फल देता है। तात्पर्य यह है कि पुरुष का शनि दुःख है, अतः उसके वली होने से दुःख भी वली होगा और उसके निर्बल होने से दुःख भी निर्बल होगा यह समझना चाहिए॥ १॥

ग्रहों के पर्याय—

हेलिरसूर्यश्चन्द्रमाश्शीतरश्मिर्हेम्ना विज्ज्ञो बोधनश्चेन्दुपुत्रः।
आरो वक्रः क्रूरदृक् चावनेयः कोणो मन्दः सूर्यपुत्रोऽसितश्च॥२॥
जीवोङ्गिरास्सुरगुरुर्वचसाम्पतीज्यौ शुक्रो भृगुर्भृगुसुतस्सित आस्फुजिच्च
राहुस्तमोगुरसुरश्च शिखी च केतुः पर्यायमन्यमुपलभ्य वदेच्च लोकात्

सूर्य की संज्ञा हेलि, चन्द्रमा की शीतरश्मि, बुध की हेम्ना, वित्, ज्ञ और बोधन, मङ्गल की आर, वक्र, क्रूरदृक्, आवनेय और शनिकी कोण, मन्द और असित ये संज्ञाएँ हैं।

बृहस्पति की जीव, अङ्गिरा, सुरगुरु, वचसांपति और इज्य संज्ञाएँहैं। शुक्र की भृगु, भृगुसुत, सित और आस्फुजित् संज्ञाएँ है, राहुकी तम, अगु और असुर संज्ञाएँ हैं। केतु की शिखी संज्ञा है। तथा दूसरी संज्ञा लोक में प्रसिद्धि और अन्य ग्रन्थों से जानना चाहिए।

प्रसङ्गवश अन्यजातकोक्त सूर्यादि ग्रहोंके पर्याय—

सूर्यो हेलिर्भानुमान् दीप्तरश्मिश्चण्डांशुः स्याद्भास्करोऽहस्करश्च।
अब्जः सोमश्चन्द्रमाः शीतरश्मिः शीतांशुः स्याद् ग्लौर्मृगाङ्कः कलेशः॥
आरो वक्रश्चावनेयः कुजः स्याद्भौमः क्रूरो लोहिताङ्गोऽथ पापी।
विज्ज्ञः सौम्यो बोधनश्चन्द्रपुत्रश्चान्द्रिः शान्तः श्यामगात्रोऽतिदीर्घः॥
जीवोऽङ्गिरा देवगुरुः प्रशान्तो वाचांपतीज्यत्रिदिवेशवन्द्याः।
भृगूशनौ भार्गवसूनवोऽच्छः काणः कविर्दैत्यगुरुः सितश्च॥
छायात्मजः पङ्गुयमार्कपुत्राः कोणोऽसितः सौरिशनी च नीलः।
क्रूरः कृशाङ्गः कपिलाक्षदीर्घौ तमोऽसुरश्चेत्यगुसैंहिकेयौ॥
राहुस्तु स्वर्भानु-विधुन्तुदः स्यात् केतुः शिखी स्याद् ध्वजनामधेयः।

हेलि, भानुमान्, दीप्तरश्मि, चण्डांशु, भास्कर और अहस्कर ये सूर्य के नाम हैं। अब्ज, सोम, शीतरश्मि, शीतांशु, ग्लौ, मृगाङ्क और कलेश ये चन्द्रमा के नाम हैं। आर, वक्र, आवनेय, कुज, भौम, क्रूर, लोहिताङ्ग, पापी और क्रूरदृक् ये मङ्गलके नाम हैं।

वित्, ज्ञ, सौम्य, बोधन, चन्द्रपुत्र, चान्द्रि, शान्त, श्यामगात्र, और अतिदीर्घ ये बुध के नाम हैं।

जीव, अङ्गिरा, देवगुरु, प्रशान्त, वाचस्पति, इज्य और त्रिदिवेशवन्द्य ये बृहस्पति के नाम हैं।

भृगु, उशना, भार्गवसूनु, अच्छ, काण, कवि, दैत्यगुरु, सित और (आस्फुजित्) ये शुक्र के नाम हैं।

छायात्मज, पङ्गु, यम, अर्कपुत्र, कोण, असित, सौरि, नील और (मन्द) ये शनि के नाम हैं।

क्रूर, कृशाङ्ग, कपिलाक्ष, दीर्घ, तम, असुर, अगु, सैंहिकेय; स्वर्भानु, विधुन्तुद, और (ग्रह) ये राहु के नाम हैं।

शिखी और ध्वज ये केतु के नाम हैं।

ग्रहों के अङ्गरेजी आदि भाषाओं में नाम—

हिन्दी	अंगरेजी	फारसी
सूर्य	Sun	शम्स आफताव
चन्द्रमा	Moon	कमर
मङ्गल	Mars	मिरींख
बुध	Mercury	उतारद्
बृहस्पति	Jumpiter	मुस्तदी
शुक्र	Vemus	जुलही
शनि	Santurn	जुहल्
राहू	Dragan's head or the ascending nade	रास
केतू	Dragan's tail or the ascending nade	जनव

ग्रहों के वर्ण—

रक्तश्यामो भास्करो गौर इन्दुर्नात्युच्चाङ्गो रक्तगौरश्च वक्रः ।
दूर्वाश्यामो ज्ञो गुरुर्गौरगात्रश्श्यामश्शुक्रो भास्करिः कृष्णदेवः ॥४॥

सूर्य का रक्तश्माम (पाटली पुष्प के समान), चन्द्रमा का गौर, मङ्गल का छोटा शरीर और रक्त गौर (कमल के सदृश), बुध दूर्वादल के सदृश श्याम, बृहस्पति का गौर, शुक्र का थोड़ा काला और शनि का काला वर्ण है। इसका प्रयोजन यह है कि जन्मकाल में सब ग्रहों से ज्यादा जो ग्रह बलवान् हो उसके समान वर्ण कहना ॥

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
वर्ण	रक्तश्याम	गौर	रक्तगौर	दूर्वादल	गौर	थोड़ा काला	काला

वर्ण स्वामी आदि का ज्ञान—

वर्णास्ताम्रसितातिरक्तहरितव्यापीतचित्रासिता
वह्न्यम्ब्वग्निजकेशवेन्द्रशचिकाः सूर्यादिनाथाः क्रमात् ।
प्रागाद्या रविशुक्रलोहिततमःसौरेन्दुवित्सूरयः
क्षीणेन्द्वर्कमहीसुतार्कतनयाः पापा बुधस्तैर्युतः ॥ ५ ॥

सूर्य लाल वर्ण का, चन्द्रमा श्वेत वर्ण का, मङ्गल अति लाल वर्ण का, बुध हरे वर्ण का, बृहस्पति पीत वर्ण का, शुक्र अनेक मिले हुए वर्णका और शनि कृष्ण वर्ण का स्वामी है ।

सूर्य का स्वामी अग्नि, चन्द्रमा का जल, मङ्गल का कार्तिकेय, बुध का विष्णु, बृहस्पति का इन्द्र, शुक्र की इन्द्राणी और शनि का ब्रह्मा स्वामी है । इसका प्रयोजन यह है कि ग्रहों के पूजा में ग्रहों के स्वामी उक्त देवताओं की पूजा करनी चाहिए ।

यहाँ पर यवनेश्वर—

देवा ग्रहाणां जलवह्निविष्णुप्रजापतिस्कन्दमहेन्द्रदेवी ।
चन्द्रार्कचान्द्रयर्कजभौमजीवशुक्राश्च यज्ञेपु यजेत शश्वत् ॥

इसका प्रयोजन यह है—कि प्रश्नकाल में बलवान् ग्रह के देवता का नाम के पर्याय में चोर का नाम कहना चाहिए । तथा जिस दिशा में यात्रा करना हो उस दिशा का जो ग्रह उसका जो देवता उनकी पूजा करके यात्रा करनी चाहिए ।

सारावली में—

ताम्रसितरक्तहरितक-पीतविचित्रासिता इनादीनाम् ।
पावकजलग्रहकेशव-शक्तशचीवेधसः पतयः ॥
पूर्वादिग्रहदेवांस्तन्मन्त्रैः समभिपूज्य तामाशाम् ।
कनकगजवाहनादीन्प्राप्नोति नृपोऽरितः शीघ्रम् ॥

पूरब आदि दिशाओं के क्रम से रवि, शुक्र, मङ्गल, राहु, शनैश्चर, चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति स्वामी होते हैं । जैसे पूरब का रवि, अग्नि कोण का शुक्र, दक्षिण का मङ्गल, नैर्ऋत्य कोण का राहु, पश्चिम का शनि, वायव्य कोण का चन्द्रमा, उत्तर का बुध और ईशान कोण का बृहस्पति स्वामी है ।

इसका प्रयोजन—जन्मकाल में केन्द्रस्थ ग्रहों में बलवान् ग्रह की जो दिशा हो उसी दिशा में सूतिका के गृह का द्वार कहना चाहिए । जिस वस्तु को कोई चुराकर ले जाय अथवा नष्ट हो जाय उस काल में वा उसके प्रश्न काल में जो ग्रह केन्द्र स्थित ग्रहों में बलवान् हो उसकी दिशा में चोर आदि का गमन कहना चाहिए ।

क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मङ्गल, शनैश्चर और इनसे युत बुध पापग्रह हैं। यवनेश्वर चन्द्रमा को पापग्रह नहीं कहते हैं।

उनका वचन—

मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्तेराद्ये शशी मध्यवलो दशाहे।
श्रेष्ठो द्वितीयेऽल्पवलस्तृतीये सौम्यैस्तु दृष्टो बलवान् सदैव॥
क्रूरग्रहोऽर्कः कुजसूर्यजौ च पापौ शुभाः शुक्रशशांकजीवाः।
सौम्यस्तु सौम्यो व्यतिमिश्रितोऽन्यैर्वर्गैस्तु तुल्यप्रकृतत्वमित्थम्॥

पापग्रह और शुभग्रह कहने का प्रयोजन—

जिसके जन्मकाल में पापग्रह सब ग्रहों में वलवान् हो तो उसका स्वभाव पापात्मक और शुभग्रह सबसे वलवान् हो तो उसका स्वभाव सौम्य होता है॥५॥

वर्णादिकों के स्वामी—

वर्ण	लाल	श्वेत	अतिलाल	हरा	पीत	अनेक वर्ण	काला	×
स्वामी	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	×
ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	×
स्वामी	अग्नि	जल	कार्तिकेय	विष्णु	इन्द्र	इन्द्राणी	ब्रह्मा	×
दिशा	पूर्व	अग्निकोण	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
स्वामी	सूर्य	शुक्र	मङ्गल	राहु	शनि	चन्द्रमा	बुध	बृह०

ग्रहों के नपुंसकादि संज्ञा—

बुधसूर्यसुतौ नपुंसकाख्यौ शशिशुक्रौ युवती नराश्च शेषाः।
शिखिभूखपयोमरुद्गणानां वशिनो भूमिसुतादयः क्रमेण॥ ६॥

बुध, शनि नपुंसक, शुक्र, चन्द्रमा पुरुष, शेष ग्रह (सूर्य, मङ्गल, बृहस्पति) स्त्रीसंज्ञक ग्रह हैं।

मङ्गल आदि पाँच ग्रह अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल और वायु इन पाँच तत्त्वों के स्वामी हैं। जैसे मङ्गल अग्नितत्त्व का, बुध पृथ्वीतत्त्व का, बृहस्पति आकाशतत्त्व का, शुक्र जलतत्त्व का, शनि वायुतत्त्व का स्वामी है।

प्रयोजन—ग्रह अपने २ दशाओं में महाभूत कृत छाया को प्रकाशित करते हैं॥६॥

ग्रहों के पुरुषादि जानने के लिये चक्र—

पुरुष	सूर्य	बृहस्पति	मङ्गल	×	×
स्त्री	शुक्र	चन्द्रमा	×	×	×
नपुंसक	बुध	शनैश्वर	×	×	×
पञ्चतत्व	अग्नि	पृथिवी	आकाश	जल	वायु
स्वामी	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि

ब्राह्मण आदि वर्णों के स्वामी—

विप्रादितः शुक्रगुरू कुजार्कौ शशी बुधश्चेत्यसितोऽन्त्यजानाम् ।
चन्द्रार्कजीवा ज्ञसितौ कुजार्की यथाक्रमं सत्त्वरजस्तमांसि ॥ ७ ॥

शुक्र और गुरु, मङ्गल और रवि, चन्द्रमा और बुध, शनैश्वर, ये क्रम से ब्राह्मण आदि वर्णों के स्वामी होते हैं। जैसे शुक्र और गुरु ब्राह्मण का, मङ्गल और रवि क्षत्रिय का, चन्द्रमा और बुध वैश्य का तथा शनैश्वर शूद्र का स्वामी होता है।

प्रयोजन—जो कोई मनुष्य चीज चुरा ले जाय अथवा नष्ट करदे उस काल में बलवान् ग्रह के वर्ण के समान उसका वर्ण समझना चाहिए।

यहाँ पर सत्याचार्य—

गुरुशुक्रौ रविरक्तौ चन्द्रः सौम्यः शनैश्वरश्चेति ।
विप्रक्षत्रियविट्शूद्रसंकराणां प्रभुत्वकराः ॥
अजये जयेऽथ तुष्टावप्रीतौ वित्तनाशने लाभे ।
तेभ्यः सौम्यः कुर्य्युर्गुणांश्च दोषांश्च पक्षांस्तान् ॥

चन्द्रमा, रवि और बृहस्पति। बुध और शुक्र। मङ्गल और शनि। क्रम से सत्त्व गुण, रजोगुण और तमोगुण हैं। जैसे चन्द्रमा, रवि और बृहस्पति सत्त्वगुण, बुध और शुक्र रजोगुण, मङ्गल और शनि तमोगुण हैं।

प्रयोजन—जन्मकाल में जिस ग्रह के त्रिंशांश में रवि हो उसका जो गुण उस गुण से युक्त जातक होना चाहिए।

वर्णेशादि चक्र—

स्वामी	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
वर्ण	क्षत्रिय	वैश्य	क्षत्रिय	वैश्य	ब्राह्मण	ब्राह्मण	शूद्र
गुण	सत्त्वगुण	सत्त्वगुण	तमोगुण	रजोगुण	सत्त्वगुण	रजोगुण	तमोगुण

सूर्य और चन्द्र के स्वरूप—

मधुपिङ्गलदृक्चतुरस्रतनुः पित्तप्रकृतिस्सवितात्पकचः ।
तनुवृत्ततनुर्बहुवातकफः प्राज्ञश्च शशी मृदुवाक्शुभदृक् ॥ ८ ॥

शहद के समान पीला नेत्र, चतुरस्र (लम्बी और चौड़ी वरावर अर्थात् दोनों हाथ को लम्बा करके जितना हो उतना ही शिर से पैर तक) देह, पित्त प्रकृति और थोड़े बालवाला सूर्य का स्वरूप है ।

दुर्बल और गोल शरीर, बहुत वात और कफ प्रकृति, बुद्धिमान, सुन्दर आँख, कोमल वचन और सुन्दर नेत्र चन्द्रमा का है ॥ ८ ॥

मङ्गल और बुध का स्वरूप—

क्रूरदृक्तरुणमूर्तिरुदारः पैत्तिकस्सुचपलः कृशमध्यः ।
श्लिष्टवाक् सततहास्यरुचिर्ज्ञः पित्तमारुतकफप्रकृतिश्च ॥ ९ ॥

टेढ़ी दृष्टि, जवान, उदार चित्त, पित्त प्रकृति, चञ्चल स्वभाव और पतली कमर मङ्गल का है ।

गद्गद्वाणी, सर्वदा हास्यमें रुचि,कफ,वात और पित्त तीनों प्रकृति बुधका है ॥९॥

बृहस्पति और शुक्र का स्वरूप—

बृहत्तनुः पिङ्गलमूर्द्धजेक्षणो बृहस्पतिः श्रेष्ठमतिः कफात्मकः ।
भृगुस्सुखी कान्तवपुस्सुलोचनः कफानिलात्मासितवक्रमूर्द्धजः ॥१०॥

बहुत लम्बी देह, पीले वाल, पीली आँख, उत्तम बुद्धि, कफ प्रकृति गुरु का है । सुखी, सुन्दर शरीर, सुन्दर आँख, कफ और वात प्रकृति, शिर के बाल काले और कुटिल शुक्र का स्वरूप है ॥ १० ॥

शनि के स्वरूप और ग्रहों के धातु—

मन्दोऽलसः कपिलदृक् कृशदीर्घगात्रः स्थूलद्विजः परुषरोमकचोऽनिलात्मा।
स्नाय्वस्थ्यसृक्त्वगथ शुक्रवसे च मज्जा मन्दार्कचंद्रबुधशुक्रसुरेज्यभौमाः॥

आलसी, पीली आँख, पतला और लम्बा शरीर, मोटे दाँत, रूखे रोम, रूखे बाल और वायु प्रकृति शनि का है ॥

अब ग्रहों के धातु का वर्णन करते हैं—शनैश्चर का स्नायु (नस), सूर्य का हड्डी, चन्द्रमा का रुधिर, बुध का त्वचा (खाल), शुक्र का वीर्य (वीज), बृहस्पति का मेदा (चर्वी) और मज्जा सार है ।

ग्रहों के स्वरूप जानने का प्रयोजन—

'लग्ननवांशपतुल्यतनुः स्यात्' यह आगे कहेंगे, अर्थ यह है कि लग्न में जिसका नवांश हो उसीका स्वामी जो ग्रह हो उसीके स्वरूप के समान जातक का स्वरूप होता है, अतः जातक के स्वरूप जानने के लिये यहाँ पर ग्रहों के स्वरूप कहे हैं ।

चीजों के हरण अथवा नष्ट होने पर प्रश्न काल में लग्न-नवांश पति के समान धातु वाला चौरादि कहना चाहिये।

व्याधि प्रश्न में लग्न नवांश पति के समान धातु से उत्पन्न पीड़ा कहनी चाहिये॥११॥

ग्रहों के धातुसार—

ग्रह	रवि	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
धातुसार	स्नायु	अस्थि	रक्त	चर्म	वीर्य	मेदा	मज्जा

ग्रहों के स्थान और वस्त्रादि—

देवाम्ब्वग्निविहारकोशशयनक्षित्युत्करेशाः क्रमा-
द्वस्त्रं स्थूलमभुक्तमग्निकहतं मध्यं दृढं स्फाटितम् ॥
ताम्रं स्यान्मणिहेमयुक्तिरजतान्यर्कात्तु मुक्तायसी
द्रेष्काणैः शिशिरादयः शशुरुचज्ञग्वादिषूद्यत्सु च ॥ १२ ॥

सूर्यादि ग्रहों के क्रम से देवस्थान, जलस्थान, अग्निस्थान, क्रीड़ास्थान, कोश-स्थान, शयनस्थान, ऊसर स्थान ये स्थान हैं। जैसे सूर्य का देवस्थान, चन्द्रमा का जलस्थान, मङ्गल का अग्निस्थान, बुध का क्रीड़ास्थान, बृहस्पति का कोशस्थान, शुक्र का शयनस्थान और शनि का ऊसर स्थान है।

प्रयोजन—जन्मकाल में जो ग्रह बलवान हो उसके स्थान के समान स्थान में प्रसव कहना चाहिए।

वस्तुओं के हरण अथवा नष्ट होने पर प्रश्न काल में बलवान ग्रह के स्थान सदृश स्थान में चोर और द्रव्य का स्थान कहना चाहिए।

ग्रहों के वस्त्र—सूर्यादि ग्रहों के क्रम से मोटा, नया, अग्निदग्ध, जलसे निचोड़ा, मध्यम (न पुराना न नया), मजबूत और पुराना वस्त्र है। जैसे सूर्य का मोटा चन्द्रमा का नया, मङ्गल का अग्निदग्ध, बुध का जल से निचोड़ा, बृहस्पति का मध्यम, शुक्र का मजबूत और शनि का पुराना वस्त्र है।

प्रयोजन—जन्मकाल में बलवान ग्रह के समान सूतिका का वस्त्र कहना चाहिए। हृतनष्टादि के प्रश्नकाल में बलवान ग्रह के वस्त्र के समान चोर का वस्त्र कहना चाहिए।

ग्रहों का द्रव्य—सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ताम्र, मणि, सुवर्ण, कसकुट, चाँदी, मोती और लोहा ये द्रव्य हैं, जैसे सूर्य का ताम्र, चन्द्रमा का मणि, मङ्गल का सुवर्ण, बुध का कसकुट, बृहस्पति का चांदी, शुक्र का मोती और शनि का लोहा द्रव्य है।

प्रयोजन-सूतिका के गृह में बलवान् ग्रह का द्रव्य कहना चाहिए। हृतनष्टादि-चिन्ता में द्रव्य-नाशादि का ज्ञान-बलवान् ग्रह के शुभ दशा में उस ग्रह के उपचयादि में रहने पर द्रव्य की प्राप्ति अन्यथा हानि कहनी चाहिए।

लग्नगत ग्रह पर से ऋतु का ज्ञान करना चाहिए। बहुत ग्रह लग्न में हों तो उनमें जो ग्रह बलवान् हो उससे ऋतु का ज्ञान करना चाहिए। अगर लग्न में कोई ग्रह न हो तो लग्न में जिस ग्रह का नवांश हो उस पर से ऋतु का ज्ञान करना चाहिए।

यथा लग्न में शनि, शुक्र, मङ्गल, चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति हों तो क्रम से शिशिर आदि छै ऋतु जानना। जैसे लग्न में शनि हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसन्त, मङ्गल हो तो ग्रीष्म, चन्द्रमा हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद् और बृहस्पति हो तो हेमन्त ऋतु जानना चाहिए।

इसी तरह लग्न में शनि का द्रेष्काण हो तो शिशिर, शुक्र का हो तो वसन्त, मङ्गल का हो तो ग्रीष्म, चन्द्रमा का हो तो वर्षा, बुध का हो तो शरद्, बृहस्पति का हो तो हेमन्त ऋतु होता है॥ १२ ॥

ग्रहों के स्थानादि ज्ञान के लिये चक्र—

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
स्थान	देव	जल	अग्नि	क्रीड़ा	कोष	शयन	ऊसर
वस्त्र	मोटा	नवीन	अग्निदग्ध	जल से निचोड़ा	मध्यम	मजबूत	फटा
द्रव्य	ताम्र	मणि	सुवर्ण	कसकूट	चाँदी	मोती	लोहा

ऋतु ज्ञान के लिये चक्र—

ग्रह	शनि	शुक्र	मङ्गल	चन्द्रमा	बुध	बृहस्पति
ऋतु	शिशिर	वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरद्	हेमन्त

ग्रहों के दृष्टि स्थान—

त्रिदशत्रिकोणचतुरस्रसप्तमान्यवलोकयन्ति चरणाभिवृद्धितः।
रविजामरेज्यरुधिराः परे च ये क्रमशो भवन्ति किल वीक्षणेऽधिकाः ॥१३॥

ग्रह जिस स्थान में स्थित रहता है उससे तृतीय और दशम को एक चरण से, नवम और पञ्चम को दो चरणों से, चतुर्थ और अष्टम को तीन चरणों से और सप्तम को चारो चरणों से देखता है। परन्तु उक्त स्थानों को क्रम से शनैश्चर, बृहस्पति, मङ्गल और शेष ग्रह (सूर्य, चन्द्रमा, बुध, शुक्र) पूर्णदृष्टि से देखते हैं। जैसे दशम

और तृतीय को शनि, नवम और पञ्चम को बृहस्पति, चतुर्थ और अष्टम को मङ्गल तथा सूर्य, चन्द्रमा, बुध, शुक्र ये ग्रह केवल सप्तम स्थान को ही पूर्ण दृष्टि से देखते हैं, परन्तु शनि, मङ्गल, बृहस्पति सप्तम को भी पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ॥

दृष्टि के विषय में किसी का मत—

स्वस्थानञ्च द्वितीयञ्च षष्ठमेकादशं तथा। द्वादशञ्च न पश्यन्ति शेषान्पश्यन्ति खेचराः॥

सब ग्रह जहाँ पर बैठे हों उसको तथा उससे द्वितीय, षष्ठ, एकादश और द्वादश स्थानों को नहीं देखते हैं। अन्य स्थानों को देखते हैं।

राहु केतु की दृष्टि में किसी का मत—

सुते सप्तमे पूर्णदृष्टिस्तमस्य तृतीये रिपौ पाददृष्टिर्नितान्तम्।
धने राज्यगेहेऽर्धदृष्टिं वदन्ति स्वगेहे त्रिपादं भवेच्चैव केतोः॥

पञ्चम और सप्तम स्थान में राहु की पूर्ण दृष्टि होती है। तृतीय और षष्ठ स्थान में एक चरण दृष्टि होती है। द्वितीय और दशम स्थान में आधी दृष्टि होती है। अपने घर में त्रिपाद दृष्टि होती है। इसी तरह केतु की भी दृष्टि जाननी चाहिए।

अन्य किसी का मत—

सुतमदननवान्त्ये पूर्णदृष्टिः सुरारेर्युगलदशमराशौ दृष्टिमात्रत्रयार्हः।
सहजरिपुचतुर्थेऽष्टमे चार्धदृष्टिः स्थितिभवनमुपान्त्यं नैव दृश्यं हि राहोः॥

किसी का मत है कि पञ्चम, सप्तम, नवम और द्वादश में राहु की पूर्णदृष्टि होती है। द्वितीय और द्वादश में त्रिपाद दृष्टि होती है। तृतीय, षष्ठ, चतुर्थ और अष्टम में अर्ध दृष्टि होती है।

जिस स्थान में स्थित हो उसमें और एकादश में दृष्टि नहीं होती है। इत्यादि अनेक प्रमाण राहु और केतु के दृष्टि विषय में मिलते हैं॥ १३॥

ग्रहों के काल और रस का निर्देश—

अयनक्षणवासरर्त्तवो मासोऽर्द्धञ्च समाश्च भास्करात्।
कटुकलवणतिक्तमिश्रिता मधुराम्लौ च कषाय इत्यपि॥ १४॥

सूर्यादि ग्रहों से अयन, मुहूर्त, दिन, ऋतु, मास, पक्ष और वर्ष का निर्देश करना, जैसे सूर्य से अयन, चन्द्रमा से मुहूर्त, मङ्गल से दिन, बुध से ऋतु, बृहस्पति से मास, शुक्र से पक्ष और शनि से वर्ष कहना चाहिये।

प्रयोजन—प्रश्नकाल के लग्न में जिस ग्रह का नवांश हो, उस नवांश खण्डा से जितने संख्यक नवांश खण्डा पर वह ग्रह हो उतने अयनादि काल बीतने पर उस कार्य की सिद्धि अथवा असिद्धि कहनी चाहिये।

किसी का मत है कि लग्न में नवांश खण्ड जितनी संख्या पर हो नवांश पति के वश से उतने अयनादि काल पर कार्य की सिद्धि अथवा असिद्धि कहनी चाहिए।

यहाँ पर मणित्थ—

लग्नांशकपतितुल्यः कालो लग्नादितांशसमसंख्यः।

वक्तव्यो रिपुविजये गर्भाधानेऽथ कार्यसंयोगे ॥

सूर्य आदि ग्रहों से कडुआ, लवण, तीता, मिश्रित रस, मीठा, खट्टा और कषाय रस जानना। जैसे सूर्य से कडुआ, चन्द्रमा से लवण, मङ्गल से तीता, बुध से मिश्रित रस, बृहस्पति से मीठा, शुक्र से खट्टा और शनि से कषाय रस जानना चाहिये।

प्रयोजन—गर्भाधान समय में जो ग्रह सब से बलवान् हो उस का जो रस उसी रस पर गर्भवती की विशेष इच्छा होती है।

सारावली में—

मासि तृतीये स्त्रीणां दोहदको जायतेऽवश्यम्।
स रसाधिपस्य भावैर्विलग्नयोगादिभिश्चिन्त्यः ॥

काल और रस जानने के लिये चक्र—

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
काल	अयन	मुहूर्त	दिन	ऋतु	मास	पक्ष	वर्ष
रस	कडुआ	लवण	तीता	मिश्रित	मीठा	खट्टा	कषाय

सूर्यादि ग्रहों के नैसर्गिक मित्र शत्रु कथन—

जीवो जीवबुधौ सितेन्दुतनयौ व्यर्का विभौमाः क्रमा-
द्वीन्द्वर्का विकुजेन्द्विनाश्च सुहृदः केषाञ्चिदेवं मतम्।
सत्योक्ते सुहृदस्त्रिकोणभवनात्स्वात्स्वान्त्यधीधर्मपाः
स्वोच्चायुःसुखपाः स्वलक्षणविधेर्नान्यैर्विरोधादिति ॥ १५ ॥

रवि का बृहस्पति मित्र है। चन्द्रमा के बृहस्पति और बुध दोनों मित्र हैं। मङ्गल के शुक्र और बुध मित्र हैं। बुध के सूर्य को छोड़कर शेष सब ग्रह (चन्द्रमा, मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, शनि) मित्र हैं। बृहस्पति के मङ्गल को छोड़कर शेष सब ग्रह (बुध, शुक्र, शनि, रवि, चन्द्रमा) मित्र हैं। शुक्र के चन्द्रमा और रवि को छोड़कर शेष सब ग्रह (मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शनि) मित्र हैं। शनि के मङ्गल, चन्द्रमा और सूर्य को छोड़कर शेष सब ग्रह (बुध, बृहस्पति, शुक्र) मित्र हैं। सूर्य आदि सब ग्रहों के मित्र से अतिरिक्त (शेष ग्रह) शत्रु हैं। जैसे रवि के चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, शुक्र और शनि शत्रु हैं। चन्द्रमा के रवि, मङ्गल, शुक्र और शनि शत्रु हैं। मङ्गल के रवि, चन्द्रमा, बृहस्पति और शनि शत्रु हैं। बुध का केवल रवि शत्रु है। बृहस्पति का केवल मङ्गल शत्रु है। शुक्र के रवि और चन्द्रमा शत्रु हैं। शनैश्चर के रवि, चन्द्रमा और मङ्गल शत्रु हैं। यह यवनाचार्य का मत है।

अन्योक्त मित्रामित्र चक्र—

ग्रह	रवि	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
मित्र	बृह-स्पति	बृहस्पति बुध	शुक्र बुध	चन्द्रमा मङ्गल बृहस्पति शुक्र शनि	रवि चन्द्रमा बुध शुक्र शनि	मङ्गल बुध बृहस्पति शनि	बुध बृहस्पति शुक्र
शत्रु	चन्द्रमा मङ्गल बुध शुक्र शनि	रवि मङ्गल शुक्र शनि	रवि चन्द्रमा बृहस्पति शनि	रवि	मङ्गल	रवि चन्द्रमा	रवि चन्द्रमा मङ्गल

सत्याचार्य के मत से सूर्यादि सव ग्रहों के अपने २ मूलत्रिकोण भवन से द्वितीय द्वादश, पञ्चम, नवम, अष्टम और चतुर्थ स्थान के स्वामी तथा अपने अपने उच्च स्थान के स्वामी मित्र होते हैं। अन्य स्थानों के स्वामी शत्रु होते हैं।

इस में विशेषता यह है कि जो ग्रह दो राशियों का स्वामी है। उस की दोनों राशियां उक्त होने से वह ग्रह मित्र, एक उक्त और दूसरा अनुक्त होने से वह ग्रह सम और दोनों स्थानों के अनुक्त होने से वह शत्रु होता है। एक राशि का स्वामी जो ग्रह है, उस की राशि उक्त होने से मित्र, अनुक्त होने से वह शत्रु होता है। जैसे सूर्य का मूल त्रिकोण सिंह है, उस से द्वितीय (कन्या) और एकादश (मिथुन) का स्वामी बुध है इन दोनों राशियों में कन्या राशि द्वितीय में होने के कारण उक्त हुआ और मिथुन एकादश में होने के कारण अनुक्त हुआ, अतः रवि का बुध सम हुआ। सिंह से द्वादश (कर्क) का स्वामी चन्द्रमा है, इस को दूसरा घर नहीं है। अतः सूर्य का चन्द्रमा मित्र हुआ। सिंह से पञ्चम स्थान धनु और अष्टम मीन है। इन दोनों राशियों का स्वामी बृहस्पति है। धनु और मीन दोनों पञ्चम, अष्टम में होने के कारण दोनों स्थान उक्त हुए अतः रवि का बृहस्पति मित्र सिद्ध हुआ। सिंह से नवम स्थान मेष और चतुर्थ स्थान वृश्चिक है; ये दोनों उक्त हुए, अतः इन का स्वामी मङ्गल सूर्य का मित्र सिद्ध हुआ। सिंह से षष्ठ स्थान मकर और सप्तम स्थान कुम्भ है, ये दोनों अनुक्त हैं अतः इन का स्वामी शनि सूर्य का शत्रु हुआ। सिंह से दशम स्थान वृष और तृतीय तुला है, ये दोनों स्थान अनुक्त हैं अतः इन का स्वामी शुक्र रवि का शत्रु सिद्ध हुआ।

एवं चन्द्रमा का मूल त्रिकोण वृष है, उस से द्वितीय मिथुन और पञ्चम कन्या है, ये दोनों उक्त हैं अतः इन का स्वामी बुध, चन्द्रमा का मित्र हुआ। वृष से चतुर्थ सिंह है, यह उक्त है अतः इस का स्वामी रवि, चन्द्रमा का मित्र हुआ।

वृष से षष्ठ तुला और प्रथम वृष है, इन दोनों स्थानों में तुला अनुक्त और वृष उक्त है अतः इन का स्वामी शुक्र, चन्द्रमा का सम सिद्ध हुआ। वृष से सप्तम वृश्चिक और द्वादश मेष है, इन में वृश्चिक अनुक्त और मेष उक्त है अतः इन का स्वामी मङ्गल चन्द्रमा का सम सिद्ध हुआ। वृष से अष्टम धनु और एकादश मीन है इन दोनों में धनु उक्त है और मीन अनुक्त है अतः इन का स्वामी बृहस्पति, चन्द्रमा का सम सिद्ध हुआ। वृष से नवम मकर और दशम कुम्भ है इन में मकर उक्त और कुम्भ अनुक्त है, अतः इन दोनों का स्वामी शनि, चन्द्रमा का सम हुआ, इसी प्रकार कुजादि पञ्च ग्रहों के मित्रादि का विचार करना ॥ १५ ॥

सत्याचार्योक्त मित्रादि चक्र—

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
मूलत्रिकोण	सिंह	वृष	मेष	कन्या	धनु	तुला	कुम्भ
स्थानेशमित्र	२	२	२	२	२	२	२
स्थानेशमित्र	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२
स्थानेशमित्र	५	५	५	५	५	५	५
स्थानेशमित्र	९	९	९	९	९	९	९
उच्च	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला
स्थानेशमित्र	८	८	८	८	८	८	८
स्थानेशमित्र	४	४	४	४	४	४	४

वराहमिहिरोक्त ग्रहों के नैसर्गिक-मित्रादि—

शत्रू मन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवे-
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदौ शेषाः समाः शीतगोः ।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्कौ समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥ १६ ॥
सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्कौ सुहृदौ समौ कुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी ।

शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयो
ये प्रोक्ताः सुहृदस्त्रिकोणभवनात्तेऽमी मया कीर्त्तिताः ॥ १७ ॥

रवि के शुक्र और शनैश्चर शत्रु, बुध सम, शेष ग्रह (चन्द्रमा, मङ्गल और गुरु) मित्र हैं।

चन्द्रमा के रवि और बुध मित्र हैं, शेष सब ग्रह (मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र और शनि) सम हैं, इस का शत्रु कोई नहीं है।

मङ्गल के गुरु, चन्द्रमा और रवि मित्र हैं, बुध शत्रु है, शुक्र और शनि सम हैं।

बुध के सूर्य और शुक्र मित्र हैं, चन्द्रमा शत्रु है, शेष ग्रह (मङ्गल, बृहस्पति और शनि) सम हैं।

बृहस्पति के बुध और शुक्र शत्रु हैं, शनि सम है, शेष ग्रह (रवि, चन्द्रमा और मङ्गल) मित्र हैं।

शुक्र के बुध और शनि मित्र हैं, मङ्गल और बृहस्पति सम हैं, शेष ग्रह (रवि और चन्द्रमा) शत्रु हैं।

शनि के शुक्र और बुध मित्र हैं, बृहस्पति सम है, शेष ग्रह (रवि, चन्द्र और मङ्गल) शत्रु हैं।

यह स्वाभाविक मित्रादि है। एक दफे कह कर पुनः मित्रामित्र क्यों कहा इस सन्देह के निवारणार्थ वराहमिहिर कहते हैं कि 'जीवो जीवबुधौ सितेन्दुतनयौ' इत्यादि श्लोक में अपने अपने मूल त्रिकोण स्थान से जो मित्रादि कहे हैं उसी के उदाहरण स्वरूप में पुनः ये दोनों श्लोक हम कहे हैं ॥ १६-१७ ॥

वराहमिहिर के मतानुसार मित्रादि चक्र—

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
मित्र	चन्द्रमा मङ्गल गुरु	सूर्य बुध	सूर्य चन्द्रमा गुरु	सूर्य शुक्र	सूर्य चन्द्रमा मङ्गल	बुध शनि	शुक्र बुध
सम	बुध	मङ्गल शुक्र शनि गुरु	शुक्र शनि	मङ्गल बृहस्पति शनि	शनि	मङ्गल बृहस्पति	बृहस्पति
शत्रु	शनि शुक्र	×	बुध	चन्द्रमा	बुध शुक्र	सूर्य चन्द्रमा	सूर्य चन्द्रमा मङ्गल

तात्कालिक-मित्रादि-कथन—

अन्योऽन्यस्य धनव्ययायसहजव्यापारबन्धुस्थिता-
स्तत्काले सुहृदस्स्वतुङ्गभवनेऽप्येकेऽरयस्त्वन्यथा ।
द्व्येकानुक्तभपान्सुहृत्समरिपून्संचिन्त्यनैसर्गिकां-
स्तत्काले च पुनस्तु तानधिसुहृन्मित्रादिभिः कल्पयेत् ॥ १८ ॥

जिस स्थान में ग्रह हो उससे द्वितीय, द्वादश, एकादश, तृतीय, दशम और चतुर्थ स्थान में स्थित ग्रह परस्पर तात्कालिक मित्र होते हैं।

किसी आचार्य का मत है कि अपने उच्च स्थान में स्थित ग्रह भी तात्कालिक मित्र होते हैं और उक्त स्थानों से भिन्न स्थान (१,५,६,७,८,९,) में स्थित ग्रह तात्कालिक शत्रु होते हैं।

नैसर्गिक मित्र, सम, शत्रु जो पूर्व में कहे गये हैं, वे तात्कालिक मित्र हों तो क्रम से अधिमित्र, मित्र और सम जानना चाहिए।

जैसे नैसर्गिक मित्र जो ग्रह है वह अगर तात्कालिक मित्र भी हो तो वह अधिमित्र होता है तथा एक प्रकार से मित्र और दूसरे प्रकार से सम हो तो वह ग्रह मित्र ही होता है तथा एक प्रकार से मित्र दूसरे प्रकार से शत्रु हो तो वह ग्रह सम होता है। इसी तरह एक प्रकार से सम और दूसरे प्रकार से शत्रु हो तो होता है। अगर दोनों प्रकार से शत्रु ही हो तो अधिशत्रु होता है ॥ १८ ॥

तात्कालिक मित्रादि जानने के लिये चक्र—

मित्र	२	३	४	१०	११	१२	उच्च
शत्रु	५	६	७	८	९	१	×

*** उदाहरण ***

किसी का जन्माङ्ग—

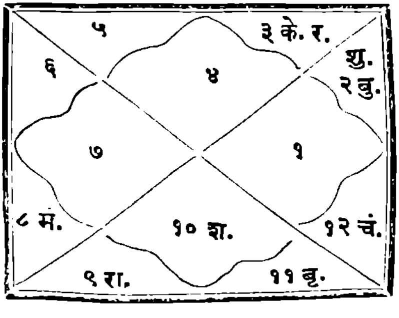

यहाँ पर सूर्य का चन्द्रमा नैसर्गिक मित्र है और जन्म-कुण्डली में सूर्य से दशम स्थान में चन्द्रमा स्थित है, अतः सूर्य का चन्द्रमा तात्कालिक मित्र भी हुआ, अब दोनों जगह मित्र होने के कारण सूर्य का चन्द्रमा अधिमित्र हुआ।

सूर्य का मङ्गल नैसर्गिक मित्र है और जन्मकुण्डली में सूर्य से षष्ठ स्थान में स्थित है, अतः तात्कालिक शत्रु हुआ, अब एक प्रकार से मित्र और दूसरे प्रकार से शत्रु होने के कारण सूर्य का मङ्गल सम सिद्ध हुआ।

सूर्य का बुध नैसर्गिक सम है और जन्मकुण्डली में सूर्य से द्वादश स्थान में स्थित है अतः तात्कालिक मित्र हुआ, अब एक प्रकार से सम दूसरे प्रकार होने के कारण सूर्य का बुध मित्र सिद्ध हुआ।

सूर्य का बृहस्पति नैसर्गिक मित्र है, जन्मकुण्डली में सूर्य से नवम में स्थित होने से तात्कालिक शत्रु हुआ, अतः एक प्रकार से मित्र दूसरे प्रकारसे शत्रु होने से सूर्य का बृहस्पति सम सिद्ध हुआ।

सूर्य का शुक्र नैसर्गिक शत्रु है, जन्मकुण्डली में सूर्य से द्वादश में स्थित होने से तात्कालिक मित्र हुआ, अतः एक प्रकार से मित्र दूसरे प्रकार से शत्रु होने से सूर्य का शुक्र सम सिद्ध हुआ।

सूर्य का शनि नैसर्गिक शत्रु है, जन्मकुण्डली में उससे अष्टम स्थान में होने के कारण तात्कालिक शत्रु हुआ, अतः दोनों जगह शत्रु होने से सूर्य का शनि अधिशत्रु हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के भी तात्कालिक मित्रादि जानना।

संस्कृत-अधिमित्रादि चक्र—

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
अधि-मित्र	चन्द्रमा	बुध	×	सूर्य	मङ्गल चन्द्रमा	×	×
मित्र	बुध	शुक्र बृहस्पति शनि	शनि	बृहस्पति	शनि	बृहस्पति	बृहस्पति
सम	मङ्गल बृहस्पति शुक्र	सूर्य	सूर्य चन्द्रमा बृहस्पति	चन्द्रमा शुक्र	सूर्य	सूर्य चन्द्रमा बुध शनि	चन्द्रमा मङ्गल बुध शुक्र
शत्रु	×	मङ्गल	शुक्र	मङ्गल शनि	×	मङ्गल	×
अधि-शत्रु	शनि	×	बुध	×	शुक्र बुध	×	सूर्य

स्थान बल और दिग्बल—

स्वोच्चसुहृत्स्वत्रिकोणनवांशैः स्थानबलं स्वगृहोपगतैश्च।
दिक्षु बुधाङ्गिरसौ रविभौमौ सूर्य्यसुतः सितशीतकरौ च॥ १९॥

जो ग्रह अपने उच्च में, अपने मित्र के घर में, अपने मूल त्रिकोण में, अपने नवांश में और अपनी राशि में स्थित हो वह स्थानबली कहलाता है।

यहाँ पर सूर्य का सिंह मूल त्रिकोण है और वही स्वगृही भी है। चन्द्रमा का वृष उच्च है और वही मूल त्रिकोण भी है। बुध का कन्या उच्च है तथा वही मूल त्रिकोण और स्वगृही भी है। बृहस्पति का धनु मूल त्रिकोण और अपना घर भी है। शुक्र का तुला मूल त्रिकोण है और वही स्वगृही भी है। शनि का कुम्भ स्वगृही और मूल त्रिकोण भी है। अतः इन ग्रहों के स्थान बल जानने के लिये आचार्य का कुछ विशेष कहना था सो नहीं कहे, अतः—

यहाँ सारावली का प्रमाण—

विंशतिरंशाः सिंहे त्रिकोणमपरे स्वभवनमर्कस्य।
उच्चं भागतृतीयं वृष इन्दोः स्यात्त्रिकोणमपरेंऽशाः॥
द्वादशभागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभं तु भौमस्य।
उच्चफलं कन्यायां बुधस्य तिथ्यंशकैः सदा चिन्त्यम्॥
परतस्त्रिकोणजातं पञ्चभिरंशैः स्वराशिजं परतः।
दशभिर्भागैर्जीवस्य त्रिकोणफलं स्वभं परं चापे॥
शुक्रस्य तु त्रयोंऽशास्त्रिकोणमपरे घटे स्वराशिश्च।
कुम्भे त्रिकोणनिजभे रविजस्य रवेर्यथा सिंहे॥

पूरब आदि चारो दिशाओं में एवं लग्नादि चारों केन्द्र स्थानों में क्रम से बुध बृहस्पति; सूर्य मङ्गल; शनैश्चर; शुक्र और चन्द्रमा बली होते हैं। जैसे लग्न में स्थित बुध और बृहस्पति पूरब में, दशम स्थान में स्थित सूर्य और मङ्गल दक्षिण में, सप्तम स्थान में स्थित शनैश्चर पश्चिम में और चतुर्थ स्थान में स्थित चन्द्रमा और शुक्र उत्तर में बली होते हैं। उक्त स्थान से सप्तम में स्थित ग्रह निर्बल होते हैं। मध्य में अनुपात से बल लाना चाहिए।

यहाँ पर यवनेश्वरः—

गुर्विन्दुजौ पूर्वविलग्नसंस्थौ नभःस्थलस्थौ च दिवाकरारौ।
सौरोऽस्तगः शुक्रनिशाकरौ तु जले स्थितावप्रयबलौ भवेताम्॥

स्थान-बल बोधक चक्र—

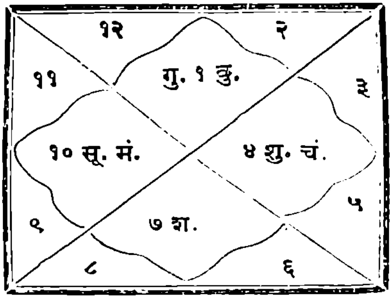

चेष्टा बल—

उदगयने रविशीतमयूखौ वक्रसमागमगाः परिशेषाः।
विपुलकरा युधि चोत्तरसंस्थाश्चेष्टितवीर्ययुताः परिकल्प्याः॥२०॥

सूर्य और चन्द्रमा उत्तरायण में (मकरादि छ राशियों के सूर्य में) बली होते हैं शेष ग्रह (मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि) वक्री या चन्द्रमा से युक्त हों तो बली होते हैं, ग्रहों को सूर्य से संयोग हो तो अस्त और चन्द्रमा से संयोग हो तो समागम कहलाता है।

यहाँ पर आचार्य विष्णुचन्द्र—

दिवाकरेणास्तमयः समागमः शीतरश्मिसहितानाम्।
कुसुतादीनां युद्धं निगद्यतेऽन्योन्ययुक्तानाम्॥

अधिक किरण वाला और युद्ध में उत्तर की ओर स्थित ग्रह बली होते हैं। यहाँ उत्तर तरफ स्थित कहना उपलक्षण मात्र है जो ग्रह जयी (जययुक्त) हो वह बलवान् होता है।

इसलिये जयी लक्षण—

दक्षिणदिक्स्थः पुरुषो वेपथुरप्राप्य सन्निवृत्तोऽणुः।
अधिरूढो विकृतो निष्प्रभो विवर्णश्च यः स जितः॥
उक्तविपरीतलक्षणसम्पन्नो जयगतो विनिर्दिष्टः।
विपुलः स्निग्धो द्युतिमान्दक्षिणदिक्स्थोऽपि जययुक्तः॥

यह लक्षण शुक्र में प्रायः घटित होता है।

इसलिये पुलिशाचार्य—

सर्वे जयिन उदक्स्था दक्षिणदिक्स्थो जयी शुक्रः॥ २०॥

ग्रहों के काल बल—

निशि शशिकुजसौराः, सर्वदा ज्ञोऽह्नि चान्ये
बहुलसितगताः स्युः क्रूरसौम्याः क्रमेण ।
द्व्ययनदिवसहोरामासपैः कालवीर्यं
शकुबुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवन्तः ॥ २१ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके ग्रहभेदाध्यायो द्वितीयः ॥ २ ॥

चन्द्रमा, मङ्गल और शनि रात में बली होते हैं। बुध रात और दिन दोनों में बली होता है। सूर्य, बृहस्पति और शुक्र दिन में बली होते हैं। कृष्ण पक्ष में पापग्रह (क्षीणचन्द्र, सूर्य, शनि, मङ्गल, इससे युत बुध) बली होते हैं तथा सौम्यग्रह (पूर्णचन्द्र, बृहस्पति, शुक्र, पापों से वियुक्त बुध) शुक्र पक्ष में बली होते हैं तथा जिस वर्ष का अधिपति जो ग्रह हो वह उस वर्ष में बली होता है जिस दिन का जो ग्रह अधिपति हो वह उस दिन में बली होता है। जिसका जो होरा हो उसमें वह बली होता है और जिस मास का जो अधिप हो उस मास में वह बली होता है। इसका नाम काल बल है।

अब नैसर्गिक बल को कहते हैं। शनैश्चर, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा और सूर्य क्रम से उत्तरोत्तर बली होते हैं। जैसे शनैश्चर से मङ्गल, मङ्गल से बुध, बुध से बृहस्पति, बृहस्पति से शुक्र, शुक्र से चन्द्रमा और चन्द्रमा से सूर्य बली होते हैं।

यहाँ ग्रहों के चार प्रकार के बल (स्थान बल, चेष्टाबल, काल बल, नैसर्गिक बल) को कहा, परन्तु उसका फल नहीं कहा अतः छात्रों के हित के लिये—

सारावली से उस फल को लिखते हैं—

उच्चबलेन समेतः परां विभूतिं ग्रहः प्रसाधयति ।
स्वत्रिकोणबलः पुंसां साचिव्यं बलपतित्वं च ॥
स्वर्क्षबलेन च सहितः प्रमुदितधनधान्यसम्पदाक्रान्तम् ।
मित्रभबलसंयुक्तो जनयति कीर्त्यान्वितं पुरुषम् ॥
तेजस्विनमतिसुखिनं सुस्थिरविभवं नृपाच्च लब्धधनम् ।
स्वनवांशकबलयुक्तः करोति पुरुषं प्रसिद्धञ्च ॥

शुभ दृष्टि के वश से ग्रहों का फल—

शुभदर्शनबलसहितः पुरुषं कुर्याद्धनान्वितं ख्यातम् ।
शुभगं प्रधानमखिलं सुरूपदेहं च सौम्यञ्च ॥
पुंस्त्रीभवनबलेन च करोति जनपूजितं कलाकुशलम् ।
पुरुषं प्रसन्नचित्तं कल्पं परलोकभीरुञ्च ॥

आशाबलसमवेतो नयति स्वदिशं ग्रहेश्वरः पुरुषम् ।
नीत्वा वस्त्रविभूषणवाहनसौख्यान्वितं कुरुते ॥
क्वचिद्राज्यं क्वचित्पूजा क्वचिद्द्रव्यं क्वचिद्यशः ।
ददाति विहगश्चित्रं चेष्टावीर्यसमन्वितः ॥
वक्रिणस्तु महावीर्याः शुभा राज्यप्रदा ग्रहाः ।
पापा व्यसनदाः पुंसां कुर्वन्ति च वृथाऽटनम् ॥
स्वस्थः शरीरसमागमसुखमाहवजयबलेन विदधाति ।
शुभमतुलं विहगेन्द्रो राज्यं च विनिर्जितारातिम् ॥
रात्रिदिवाबलपूर्णैर्भृगजलाभेन शौर्य्यपरिवृद्धया ।
मलिनयते त्रैपक्षं भुनक्ति सर्वं नरः प्रकटः ॥
द्विगुणं द्विगुणं दद्युर्वर्षाधिपमासदिवसहोरेशाः ।
कुर्युर्वृद्धया सौख्यं स्वदशासु धनञ्च कीर्तिं च ॥
पक्षबलाद्रिपुनाशं रत्नाम्बरहस्तिसम्पदं दद्युः ।
स्त्रीकनकभूमिलाभं कीर्तिञ्च शशाङ्ककरधवलाम् ॥
सकलबलभारभरिता निर्मलकरजालभासुराः सततम् ।
राज्यं ग्रहा विदद्युः सौख्यं च मनोरथातीतम् ॥
आचारसौख्यशुभशौचयुताः सुरूपा-
स्तेजस्विनः कृतविदो द्विजदेवभक्ताः ।
सद्वस्त्रमाल्यजनभूषणसम्प्रियाश्च
सौम्यग्रहैर्बलयुतैः पुरुषा भवन्ति ॥
लुब्धाः कुकर्मनिरता निजकार्यनिष्ठाः
पापान्विताः सकलहाश्च तमोऽभिभूताः ।
क्रूराः शठा वधरता मलिनाः कृतान्धाः
पापग्रहैर्बलयुतैः पुरुषा भवन्ति ॥
पुंराशिपुंग्रहेन्द्रैर्धीराः सङ्ग्रामकांक्षिणो बलिनः ।
निःस्नेहाः सुकठोराः क्रूरा मूर्खाश्च जायन्ते ॥
युवतिभवनस्थितेषु च मृदवः संग्रामभीरवः पुरुषाः ।
जलकुसुमवस्त्रनिरताः सौम्याः कलहासंयुक्ताः ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां ग्रहभेदाध्यायो द्वितीयः ।

अथ वियोनिजन्माध्यायस्तृतीयः

जन्म अथवा प्रश्नकाल से वियोनिजन्म का ज्ञान—

क्रूरग्रहैस्तु बलिभिर्विबलैश्च सौम्यैः क्लीबे चतुष्टयगते तदवेक्षणाद्वा।
चन्द्रोपगद्विरसभागसमानरूपं सत्त्वं वदेद्यदि भवेत्स वियोनिसंज्ञः ॥१॥

जन्म कालिक कुण्डली अथवा प्रश्नकालिक कुण्डली देख कर वियोनि का ज्ञान—उक्त कुण्डली में सब पाप ग्रह (सूर्य, मङ्गल, शनि, क्षीण चन्द्र, पाप ग्रहों से युक्त बुध) बली हों और शुभ ग्रह (बुध, बृहस्पति, शुक्र, पूर्णचन्द्र पापग्रहों से वियुक्त बुध) निर्बल हों तथा नपुंसक ग्रह (शनैश्चर, बुध) केन्द्रस्थान (१, ४, ७, १०) में हों तो वियोनि का जन्म कहना चाहिये (१)।

अथवा चन्द्रमा पापग्रह के द्वादशांश में हो, शुभग्रह बलरहित हों बुध वा शनि लग्न को देखता हो तो वियोनि का जन्म कहना (२)।

किस तरह के वियोनि का जन्म कहना उसको कहते हैं।

अगर पूर्वोक्त दोनों योगों में से कोई एक हो तो चन्द्रमा जिस राशि के द्वादशांश में हो, उसके समान वियोनि का जन्म कहना चाहिए। जैसे मेष राशि के द्वादशांश में हो तो बकरा, भेड़, मेढ़ा इत्यादि का जन्म कहना। वृष के द्वादशांश में हो तो गौ, बैल, भैंस इत्यादि चतुष्पद का जन्म कहना। कर्क के द्वादशांश में हो तो सिंह, मृग, कुत्ता, विल्ली इत्यादि का जन्म कहना। वृश्चिक के द्वादशांश में हो तो सर्प, विच्छू इत्यादि का जन्म कहना। धनु के उत्तरार्ध में हो तो घोड़ा, गधा इत्यादि का जन्म कहना। मकर का पूर्वार्ध में हो तो हरिण आदि का जन्म कहना। कोई आचार्य मेढक आदि जल जन्तु का जन्म कहते हैं। मीन के द्वादशांश में चन्द्रमा हो तो मछली आदि का जन्म कहना।

तथा सारावली में—

क्रूरैः सुबलसमेतैर्निर्बलैः सौम्यैर्वियोनिभागगते।
चन्द्रे ज्ञशनी केन्द्रे तदीक्षिते चोदये वियोनिः स्यात् ॥
मेषे शशी तदंशे छागादिप्रसवमाहुराचार्याः।
गोमहिषीणां गोंऽशे नररूपाणां तृतीयेंऽशे ॥
तत्र चतुर्थे भागे कूर्मादीनां भवेदुदकजानाम्।
व्याघ्रादीनां परतः परतो ज्ञेयं नराणाञ्च ॥
वणिगंशे नररूपा वृश्चिकभागे तथा भुजङ्गाद्याः।
खरतुरगाद्या नवमे मृगशिखिनां स्यात्तथा दशमे ॥
ज्ञेयाश्च तत्र विविधा वृक्षास्तृणजातयश्चित्राः।
एकादशे च पुरुषा जलजा नानाविधाश्चान्त्ये ॥ ५ ॥

वियोनिजन्म ज्ञान के लिये योगान्तर—

पापा बलिनः स्वभागगाः पारक्ये विबलाश्च शोभनाः ।
लग्नं च वियोनिसंज्ञकं दृष्ट्वाऽत्रापि वियोनिमादिशेत् ॥ २ ॥

बली पापग्रह अपने नवांश में हों, निर्बल शुभग्रह दूसरे ग्रहों के नवांश में हों और वियोनि संज्ञक लग्न (मेष, वृष, सिंह, वृश्चिक, धन का उत्तरार्ध, मकर का पूर्वार्द्ध, मीन) में से कोई लग्न हो तो चन्द्रमा जिस वियोनि संज्ञक राशि के द्वादशांश में स्थित हो उसके सदृश वियोनि का जन्म कहना चाहिये यह तृतीय योग है ॥२॥

चतुष्पदों के राशिवश अङ्गविभाग—

क्रियः शिरो वक्त्रगलो वृषोऽन्ये पदांसके पृष्ठमुरोऽथ पार्श्वे ।
कुक्षिस्त्वपानांघ्र्यथ मेढ्रमुष्कौ स्फिक्पुच्छमित्याह चतुष्पदाङ्गे ॥३॥

जिस तरह पहले राशि के वश नराकार काल रूप पुरुष का अङ्ग विभाग किया है, उसी तरह वियोनि में श्रेष्ठ चतुष्पद का राशि के वश अङ्ग विभाग करते हैं। चतुष्पदाकार काल चक्र बना कर उसके शिर में मेष, मुख या कण्ठ में वृष, अगले पाव और कन्धे पर मिथुन, पीठ में कर्क, छाती में सिंह, पार्श्वद्वय में कन्या, दोनों कोखियों में तुला, गुदा में वृश्चिक, पिछले पावों में धनु, लिङ्ग और अण्डकोश में मकर, चूतर पर मीन को स्थापन करे। यहाँ चतुष्पद में राशि वश अङ्गविभाग करना उपलक्षण मात्र है। पक्षियों में भी इस तरह अङ्ग विभाग करना चाहिए। चतुष्पद के पूर्वपाद स्थान में जो राशि स्थापन किया गया है, उसको पक्षी के पांख में स्थापन करना चाहिए।

प्रयोजन-राश्युपलक्षित अङ्ग में व्रणोपघातादिज्ञान करना ॥ २ ॥

वियोनि वर्ण ज्ञान—

लग्नांशकाद्ग्रहयोगेक्षणाद्वा वर्णान्वदेद्बलयुक्ताद्वियोनौ ।
दृष्ट्या समानान्प्रवदेच्च संख्यया रेखां वदेत्स्मरसंस्थैश्च पृष्ठे ॥३॥

अभीष्ट कुण्डली के लग्न में जो ग्रह वर्तमान हो उस ग्रह का जो वर्ण (वर्णास्ताम्रसितातिरक्त इत्यादिक में पठित वर्ण) हो वह वर्ण उस जन्तु का कहना चाहिए। अगर लग्न में कोई ग्रह न हो तो जो ग्रह लग्न को सबसे ज्यादा दृष्टि से देखता हो उसका वर्ण उस जन्तु का कहना चाहिये। अगर लग्न किसी भी ग्रह से युत दृष्ट न हो तो लग्न में जिस राशि का नवांश हो उसका जो वर्ण (रक्तः श्वेतः शुकतनुनिभ इत्यादिक में पठित वर्ण) हो वह वर्ण उस जन्तु का कहना चाहिए। अगर लग्न बहुत ग्रहों से युत दृष्ट हो तो अनेक वर्ण उस जन्तु का कहना चाहिए। उनमें भी जो ग्रह सबसे ज्यादा बलवान् हो उसका वर्ण उस जन्तु में ज्यादा कहना चाहिये। सप्तम स्थान स्थित ग्रहों में जो ग्रह सबसे बलवान् हो उस रङ्ग की रेखा उस जन्तु के पीठ पर कहना चाहिए ॥

तथा सारावली में—

शेषादिभिरुदयस्थैरंशैर्वा ग्रहयुतैश्च दृष्टैर्वा ।
स्वग्रहांशकसंयोगाद्विद्याद्वर्णान् पारशिके रूपान् ॥
सप्तमसंस्थाः कुर्युः पृष्ठे रेखां स्ववर्णसमाम् ।
वीक्षन्ते यावन्तो वियोनिवर्णाश्च तावन्तः ॥
बलदीप्तो गगनचरः करोति वर्णं वियोनीनाम् ।
पीतं करोति जीवः शशी सितं भार्गवो विचित्रञ्च ॥
रक्तं दिनकररुधिरौ रविजः कृष्णं बुधः शबलम् ।
स्वे राशौ परभागे परराशौ स्वे नवांशके तिष्ठन् ॥
पश्यन् ग्रहो विलग्ने स्ववर्णवर्णं तदा कुरुते ॥ ४ ॥

पक्षिजन्मज्ञान—

खगे दृकाणे बलसंयुतेन वा ग्रहेण युक्ते चरभांशकोदये ।
बुधांशके वा विहगाः स्थलाम्बुजाः शनैश्चरेन्द्वीक्षणयोगसम्भवाः ॥५॥

पक्षी के द्रेष्काण (मिथुन का दूसरा द्रेष्काण, सिंह का पहला द्रेष्काण, तुला का दूसरा द्रेष्काण, कुम्भ का पहिला द्रेष्काण) लग्न में हो और शनैश्चर अथवा चन्द्र से युत वा दृष्ट हो तो पक्षी का जन्म कहना चाहिए। यह पहला योग है।

अथवा लग्न में चर राशि का नवांश हो और शनैश्चर अथवा चन्द्रमा से युत दृष्ट हो तो पक्षी का जन्म कहना चाहिए। यह दूसरा योग है।

इन तीनों योगों में उत्पन्न पक्षी जलचर है या स्थलचर इसका ज्ञान इस तरह करना चाहिये। जैसे जहां पर शनैश्चर का योग वा दृष्टि हो वहां पर स्थलचर पक्षी का जन्म कहना चाहिए। जहां पर चन्द्रमा का योग वा दृष्टि हो वहां पर जलचर पक्षी का जन्म कहना चाहिये।

तथा सारावली में—

विहगोदितदृक्काणे ग्रहेण बलिना युतेऽथ चरभांशे ।
बौधेंऽशे वा विहगाः स्थलाम्बुजाः शनिशशीक्षणाद्योगात् ॥ ५ ॥

वृक्षजन्मज्ञान—

होरेन्दुसूरिरविभिर्विबलैस्तरूणां
तोये स्थले तरुभवोऽशकृतप्रभेदः ।
लग्नाद् ग्रहः स्थलजलर्क्षपतिस्तु यावां-
स्तावन्त एव तरवः स्थलतोयजाताः ॥ ६ ॥

प्रश्न काल में लग्न, चन्द्रमा, बृहस्पति और रवि निर्बल हों तो वृक्ष का जन्म

कहना चाहिए। परञ्च जलज वृक्ष है या स्थलज इसका ज्ञान-लग्न में जलचर राशि का नवांश हो तो जल में वृक्ष का जन्म कहना चाहिए। अगर स्थल राशि का नवांश हो तो स्थल में वृक्ष का जन्म कहना चाहिये।

लग्न से उक्त नवांश का स्वामी जितने संख्यक स्थान में हो उतनी संख्या वृक्ष की कहनी चाहिए अगर उक्त नवांश का स्वामी उच्चादि स्थानों में स्थित हो तो उक्त संख्या के द्विगुणित······आदि वृक्ष कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

लग्नार्कजीवचन्द्रैर्बलैः शेषैश्च मूलयोनिः स्यात् ।
स्थलजलभवनविभागा वृक्षादीनां प्रभेदकराः ॥
स्थलजलग्रहयोर्लग्नाद्यावति राशौ तु तेऽपि तावन्तः ।
द्वित्रिगुणत्वं तेषामायुर्दायप्रकारोक्तम् ॥ ६ ॥

जल-निर्जल-वृक्षविशेष ज्ञान—

अन्तःसाराञ्जनयति रविर्दुर्भगान् सूर्यसूनुः-
क्षीरोपेतांस्तुहिनकिरणः कण्टकाढ्यांश्च भौमः।
वागीशज्ञौ सफलविफलान्पुष्पवृक्षांश्च शुक्रः-
स्निग्धानिन्दुः कटुकविटपान्भूमिपुत्रश्च भूयः ॥ ७ ॥

पूर्वोक्त नवांश का स्वामी सूर्य हो तो अन्तःसार (शिंशपा = शीशम, साखू आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

नवांश का स्वामी शनि हो तो दुर्भग (कुश, काश, शरपत आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

नवांश का स्वामी चन्द्रमा हो तो क्षीर युक्त (ईख आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

नवांश का स्वामी मङ्गल हो तो कांटों से युक्त (बबूर, खैर आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

नवांश का स्वामी बृहस्पति हो तो फल युक्त (आम आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

नवांश का स्वामी बुध हो तो फलरहित (करीर आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

नवांश का स्वामी शुक्र हो तो पुष्प वृक्ष (चमेली, जुही आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

फिर चन्द्रमा नवांश का स्वामी हो तो स्निग्ध (देवदारु आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए।

मङ्गल नवांश के पति हो तो कटुक वृक्ष (भल्लाट आदि) वृक्षों का जन्म कहना चाहिए ॥ ७ ॥

शुभाशुभ वृक्ष और उत्पन्न स्थान का ज्ञान तथा वृक्ष संख्या ज्ञान—

शुभोऽशुभर्क्षे रुचिरं कुभूमिजं करोति वृक्षं विपरीतमन्यथा।
परांशके यावति विच्युतः स्वकाद्भवन्ति तुल्यास्तरवस्तथाभिधाः ॥८॥

इति बृहज्जातके वियोनिजन्माध्यायस्तृतीयः ॥ ३ ॥

उक्त नवांश का स्वामी शुभ ग्रह हो और पापग्रहों के घर में बैठा हो तो खराब भूमि में उत्तम वृक्ष को पैदा करता है।

अगर उक्त नवांश का स्वामी पापग्रह, शुभग्रह के घर में बैठा हो तो उत्तम भूमि में खराव वृक्ष को पैदा करता है।

इस अर्थ से यह सिद्ध होता है कि उक्त नवांश के स्वामी शुभग्रह, शुभग्रह के घर में बैठा हो तो उत्तम भूमि में उत्तम वृक्ष को पैदा करता है।

अगर पापग्रह, पापग्रह के घर में बैठा हो तो खराब भूमि में खराब वृक्ष को पैदा करता ।

वृक्ष संख्या ज्ञान—

उक्त नवांश का स्वामी अपने नवांश को छोड़ कर उससे जितनी संख्या वाले दूसरे नवांश पर जाकर बैठा हो तत्तुल्य तज्जातीय वृक्ष कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

स्वांशात्परांशगामिषु यावत्संख्या भवन्ति तावन्तः।
स्थलजा वा जलजा वा तरवः प्राक् संख्यया प्रवदेत् ॥ ८ ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां वियोनिजन्माध्यायस्तृतीयः।

अथ निषेकाध्यायश्चतुर्थः

गर्भ धारण करने के योग्य ऋतु समय का ज्ञान—

कुजेन्दुहेतु प्रतिमासमार्तवं गते तु पीडर्क्षमनुष्णदीधितौ।
अतोन्यथास्थे शुभपुंग्रहेक्षिते नरेण संयोगमुपैति कामिनी ॥ १ ॥

चन्द्रमा और मङ्गल ये दोनों स्त्रियों के मास-मास रजोदर्शन के कारण होते हैं। क्योंकि चन्द्रमा जलमय (रक्त स्वरूप) और मङ्गल अग्नि (पित्त स्वरूप) है, पित्त से रक्त जब क्षुभित होता है तब स्त्री को रजोदर्शन होता है।

अब गर्भ धारण के लायक रजोदर्शन को कहते हैं—

जब स्त्री की जन्म राशि से चन्द्रमा तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश स्थान को

छोड़ कर अन्य स्थान (प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पञ्चम, सप्तम, अष्टम, नवम और द्वादश) में हो, उस पर मङ्गल की दृष्टि हो तो उस समय का रजोदर्शन गर्भ धारण के योग्य होता है।

परन्तु जो स्त्री गर्भ धारण योग्य है वही गर्भ धारण कर सकती है। बाल, वृद्ध, रोगिणी और वन्ध्या स्त्री नहीं।

यहाँ पर वादरायण—

स्त्रीणां गतोऽनुपचयर्क्षमनुष्णरश्मिः संदृश्यते यदि धरातनयेन तासाम्।
गर्भग्रहार्तवमुशन्ति तदा न वन्ध्यावृद्धातुराल्पवयसामपि चैतदिष्टम्॥

तथा च सारावली में—

अनुपचयराशिस्थे कुमुदाकरबान्धवे रुधिरदृष्टे।
प्रतिमासं युवतीनां भवतीह रजो ब्रुवन्त्येके॥
इन्दुर्जलं कुजोऽग्निर्जलमस्रं त्वाग्निरेव पित्तं स्यात्।
एवं रक्ते क्षुभिते पित्तेन रजः प्रवर्त्तते स्त्रीषु॥
एवं यद्भवति रजो गर्भस्य निमित्तमेव कथितं तत्।
उपचयसंस्थे विफलं प्रतिमासं दर्शनं तस्य॥

अब स्त्री पुरुष संयोग के सम्भव—

जब पुरुष की जन्म राशि से चन्द्रमा तृतीय, षष्ठ, एकादश और दशम स्थान में स्थित हो और उस पर शुभग्रहों में पुरुषग्रह (बृहस्पति) की दृष्टि हो तो स्त्री पुरुष के साथ मैथुन को प्राप्त करती है।

यहाँ पर वादरायण—

पुरुषोपचयगृहस्थो गुरुणा यदि दृश्यते हिममयूखः।
स्त्रीपुरुषसंप्रयोगं तदा वदेदन्यथा नैव॥

सारावली में—

उपचयभवने शशभृद् दृष्टो गुरुणा सुहृद्भिरथवासौ।
पुंसां करोति योगं विशेषतः शुक्रसंदृष्टः॥

चतुर्थ दिन में स्नान के बाद यह विचार करना चाहिये इसको कहते हैं—

वादरायण—

ऋतु विरमे स्नातायां यद्युपचयसंस्थितः शशी भवति।
बलिना गुरुणा दृष्टो भर्त्रा सह संगमश्च तदा॥
राजपुरुषेण रविणा विटेन भौमेन वीक्षिते चन्द्रे।
सौम्येन चपलमतिना भृगुणा कान्तेन रूपवती॥
भृत्येन सूर्यपुत्रेणायाति स्त्री संगमं हि तदा।
एकैकेन फलं स्याद् दृष्टे नान्यैः कुजादिभिः पापैः॥

सर्वैः स्वगृहं त्यक्त्वा गच्छति वेश्यापदं युवतिः।

चतुर्थ आदि रात्रि में गर्भाधान होने से सन्तान में विशेषता—

पुत्रोऽल्पायुर्दारिका वंशकर्ता वन्ध्या पुत्रः सुन्दरीशो विरूपा।
श्रीमान् पापा धर्मशीलस्तथा श्रीः सर्वज्ञः स्यात्तुर्यरात्रात्क्रमेण॥

चतुर्थ रात्रि में गर्भाधान हो तो अल्पायु वाला पुत्र, पाँचवीं रात में कन्या, छठीं रात में वंश बढ़ाने वाला पुत्र, सातवीं रात में वन्ध्या स्त्री, आठवीं रात में पुत्र, नववीं रात में सुन्दरी कन्या, दसवीं रात में प्रभावशाली पुत्र, ग्यारहवीं रात में कुरूपा कन्या, बारहवीं रात में भाग्यशाली पुत्र, तेरहवीं रात में पाप करनेवाली कन्या, चौदहवीं रात में धर्म करने वाला पुत्र, पन्द्रहवीं रात में लक्ष्मी युक्त कन्या और सोलहवीं रात में सर्वज्ञ पुत्र उत्पन्न होता है।

और विशेष—

विभावरीषोडश भामिमीनामृतूद्गमाद्या ऋतुकालमाहुः।
नाद्याश्चतस्रोऽत्र निषेकयोग्याः पराश्च युग्माः सुतदाः प्रशस्ताः॥

स्त्रियों के ऋतुकाल से सोलह रात पर्य्यन्त ऋतुकाल कहा गया है, उनमें पहले की चार रात गर्भाधान के लायक नहीं है। शेष बारह रात के सम रात (६।८। १०।१२।१४।१६) में गर्भाधान होने से पुत्र होता है और विषम में कन्या होती है।

गर्भाधान कालिक लग्न से मैथुन का ज्ञान—

यथास्तराशिमिथुनं समेति तथैव वाच्यो मिथुनप्रयोगः।
असद्ग्रहालोकितसंयुतेऽस्ते सरोष इष्टैस्सविलासहासः॥ २॥

गर्भाधान कालिक लग्न से सप्तम स्थान में जो राशि हो वह (तन्द्राशिविशिष्ट-जन्तु) जिस तरह मैथुन (रति संभोग) करता है, उसी तरह गर्भाधान समय में पुरुष स्त्री के साथ संभोग करता है।

आधान लग्न से सप्तम स्थान पापग्रह से युत दृष्ट हो तो क्रोध, कलह अथवा जबरदस्ती के साथ रति संभोग समझना चाहिए।

अगर लग्न से सप्तम स्थान शुभ ग्रह से युत दृष्ट हो तो हास, विलास आदि के साथ रति संभोग समझना चाहिए।

तथा सारावली में—

द्विपदादयो विलग्नात् सुरतं कुर्वति सप्तमे यद्वत्।
तद्वत्पुरुषाणामपि गर्भाधानं समादेश्यम्॥
अस्तेऽशुभयुतदृष्टे सरोषकलहं भवेद् ग्राम्यम्।
सौम्यं सौम्यैः सुरतं वात्स्यायनसम्प्रयोगिकाख्यातम्॥
तत्र शुभाशुभमिश्रैः कर्मभिरधिवासिता विषयवृत्तिः।

गर्भसम्भवासम्भव ज्ञान—

रवीन्दुशुक्रावनिजैः स्वभागगैर्गुरौ त्रिकोणोदयसंस्थितेऽपि वा ।
भवत्यपत्यं हि विबीजिनामिमे करा हिमांशोर्विदृशामिवाफलाः ॥३॥

गर्भाधान काल में सूर्य, चन्द्रमा, शुक्र और मङ्गल अपने-अपने नवांश में हों तो गर्भसंभव कहना चाहिये ।

अथवा बृहस्पति नवम, पञ्चम और लग्न में स्थित हो तो गर्भ सम्भव कहना चाहिए। परन्तु इन योगों के रहते हुए भी जो नपुंसक (हिजरा) है, उसको निष्फल हो जाते हैं, जैसे चन्द्रमा की सुन्दर अमृतमय किरणें अन्धों को विफल होती हैं ।

गर्भ योग—

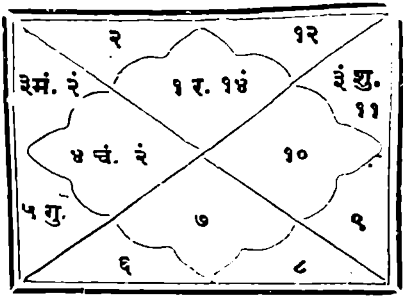

अगर पूर्वोक्त सव ग्रह अपने-अपने नवांश में न हों तो पुरुष की जन्म राशि से उपचय (तृतीय, षष्ठ, एकादश और दशम) स्थान में स्थित सूर्य और शुक्र अपने नवांश में हों तथा स्त्री जन्म राशि से तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश में स्थित चन्द्रमा और मङ्गल अपने-अपने नवांश का हों तो अवश्य गर्भ सम्भव कहना चाहिए।

यथा लघुजातक में—

वलयुतौ स्वगृहांशेष्वर्कसितावुपचयर्क्षगौ पुंसाम् ।
स्त्रीणां वा कुजचन्द्रौ यदा तदा गर्भसम्भवो भवति ॥

गर्भाधान काल से प्रसूति काल तक का शुभाशुभज्ञान—

दिवाकरेन्द्वोः स्मरगौ कुजार्कजौ गदप्रदौ पुंगलयोषितोस्तदा ।
व्ययस्वगौ मृत्युकरौ युतौ तथा तदेकदृष्ट्या मरणाय कल्पितौ ॥४॥

सूर्य और चन्द्रमा से सप्तम स्थान में मङ्गल और शनि हों तो क्रम से पुरुष और स्त्री को कष्ट देते हैं, जैसे सूर्य से सप्तम स्थान में मङ्गल या शनि हो तो पुरुष को कष्ट देते हैं ।

पुरुष रोग योग—

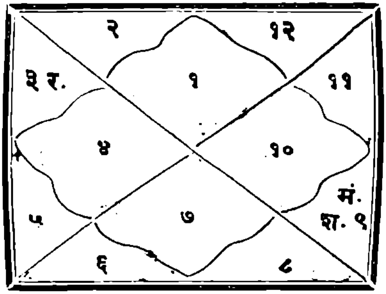

स्त्री रोग योग—

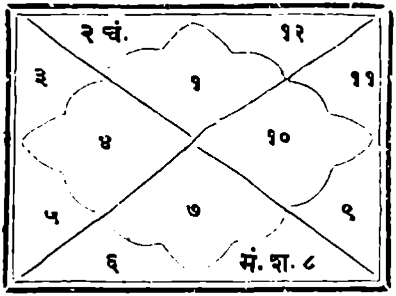

और चन्द्रमा से सप्तम स्थान में मङ्गल या शनैश्चर हो तो स्त्री को कष्ट देते हैं। यह कष्ट मङ्गल और शनि अपने अपने महीने में ही देते हैं। प्रत्येक ग्रह का मास इसी अध्याय के सोलहवें श्लोक में कहा है।

तथा सूर्य से द्वितीय, द्वादश इन दोनों स्थानों में से किसी एक में मङ्गल और दूसरे में शनैश्चर स्थित हो तो अपने अपने महीने में पुरुष को मरण देते हैं।

पुरुष मृत्यु योग—

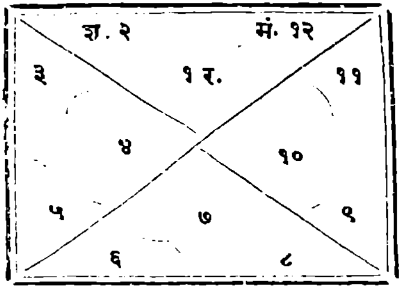

अगर चन्द्रमा से द्वितीय, द्वादश इन दोनों स्थानों में से किसी एक में मङ्गल और दूसरे में शनि हो तो स्त्री को मरण देते हैं ॥ ४ ॥

स्त्री मृत्यु याग—

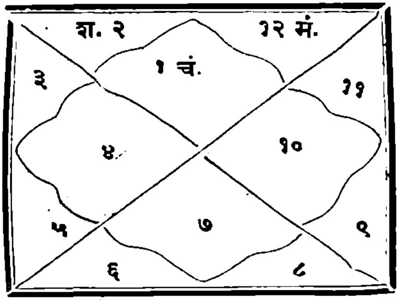

पिता, माता, पितृव्य, मातृष्वसाओं का शुभाशुभ ज्ञान—

दिवार्कशुक्रौ पितृमातृसंज्ञकौ शनैश्चरेन्दू निशि तद्विपर्यात् ।
पितृव्यमातृष्वसृसंज्ञितौ तु तावथौजयुग्मर्क्षगतो तयोः शुभौ ॥ ५ ॥

दिन में गर्भाधान हो तो सूर्य पितृसंज्ञक और शुक्र मातृसंज्ञक होता है। एवं रात में गर्भाधान हो तो शनि पितृसंज्ञक और चन्द्रमा मातृसंज्ञक होता है।

तथा दिन में गर्भाधान हो तो शनैश्चर पितृव्य (चाचा) संज्ञक और चन्द्रमा मातृष्वसा (मा की वहिन) संज्ञक होता है। एवं रात में गर्भाधान हो तो सूर्य पितृव्यसंज्ञक और शुक्र मातृष्वसृसंज्ञक होता है।

वे दोनों (पितृसंज्ञक और मातृसंज्ञक तथा पितृव्यसंज्ञक और मातृष्वसृसंज्ञक) क्रम से विषम और सम राशि में स्थित हों तो उन दोनों (पिता, माता तथा पितृव्य, मातृष्वसा) को शुभ करते हैं।

जैसे दिन में गर्भाधान हो और सूर्य विषम राशियों (मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन और कुम्भ) में से किसी राशि में स्थित हो तो पिता का शुभकारी होता है। और रात में गर्भाधान हो और सूर्य विषम राशियों में से किसी में हो तो पितृव्य (चाचा) का शुभकारी होता है।

तथा दिन में गर्भाधान हो और शुक्र सम राशियों (वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन) में से किसी में स्थित हो तो माता का शुभकारी होता है। एवं रात में गर्भाधान हो और शुक्र सम राशियों में से किसी में स्थित हो तो मातृष्वसा (माता की वहिन) का शुभकारी होता है।

इसी तरह रात में गर्भाधान हो और शनि विषम राशियों में से किसी एक राशि में स्थित हो तो पिता को शुभ करता है।

एवं दिन में गर्भाधान हो और शनैश्वर विषम राशियों में से किसी में स्थित हो तो पिता का शुभकारी होता है।

तथा रात में गर्भाधान हो और सम राशियों में से किसी एक में चन्द्रमा स्थित हो तो माता का शुभकारी होता है।

एवं दिन में गर्भाधान हो और सम राशियों में से किसी एक में चन्द्रमा स्थित हो तो मातृष्वसा का शुभकारी होता है। इस से विपरीत होने से अशुभकारी होता है।

जैसे दिन में गर्भाधान हो और सूर्य सम राशियों में से किसी एक में स्थित हो तो पिता का अशुभकारी होता है। एवं रात में गर्भाधान हो और सूर्य समराशियों में से किसी एक में स्थित हो तो पितृव्य का अशुभकारी होता है।

तथा दिन में गर्भाधान हो और शुक्र विषम राशियों में से किसी में स्थित हो तो माता का अशुभकारी होता है। एवं रात में गर्भाधान हो और शुक्र विषम राशियों में से किसी एक में स्थित हो तो माता के बहिन का अशुभकारी होता है।

तथा रात में गर्भाधान हो और शनैश्चर सम राशियों में से किसी में स्थित हो तो पिता का अशुभकारी होता है।

एवं दिन में गर्भाधान हो और शनैश्चर सम राशियों में से किसी में स्थित हो तो पितृव्य का शुभकारी होता है।

तथा रात में गर्भाधान हो और चन्द्रमा विषम राशियों में से किसी में स्थित हो तो मामा का अशुभकारी होता है।

एवं दिन में गर्भाधान हो और चन्द्रमा विषम राशियों में से किसी में स्थित हो तो माता के बहिन का अशुभकारी होता है ॥ ५ ॥

गर्भिणी मरण के दो योग—

अभिलषद्भिरुदयर्क्षमसद्भिर्मरणमेति शुभदृष्टिमयाते।
उदयराशिसहिते च यमे स्त्री विगलितोडुपतिभूसुतदृष्टे ॥ ६ ॥

गर्भाधान कालिक लग्न राशि में पापग्रह आने वाला हो, अर्थात् लग्न से पीछे द्वादश स्थान में स्थित हो, कोई शुभग्रह लग्न को नहीं देखता हो तो गर्भिणी स्त्री की मृत्यु होती है।

शनि गर्भाधान कालिक लग्न में हो तथा उस को क्षीण चन्द्रमा और मङ्गल देखता हो तो गर्भिणी की मृत्यु होती है ॥ ६ ॥

गर्भिणी के मरण में योगान्तर—

पापद्वयमध्यसंस्थितौ लग्नेन्दू न च सौम्यवीक्षितौ।
युगपत्पृथगेव वा वदेन्नारी गर्भयुता विपद्यते ॥ ७ ॥

एक काल में लग्न और चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य में वर्तमान हों उन को कोई शुभग्रह न देखता हो तो गर्भिणी की मृत्यु होती है।

एक काल में का यह अर्थ है कि लग्न में चन्द्रमा हो और एक पापग्रह द्वादश में, दूसरा द्वितीय में स्थित हो तो युगपत् दो पापग्रहों के मध्य में लग्न, चन्द्रमा कहे जाते हैं।

अथवा पृथक् पृथक् लग्न और चन्द्रमा दो पापग्रहों के बीच में हों अर्थात् द्वादश में एक पापग्रह हो दूसरा द्वितीय में हो, तृतीय में चन्द्रमा हो और चतुर्थ में फिर पापग्रह हो तथा लग्न, चन्द्रमा को कोई शुभग्रह नहीं देखता हो तो गर्भिणी की मृत्यु होती है। इस तरह यहाँ पर लग्न, चन्द्रमा के वश से अनेक योग हो सकते हैं ॥ ७ ॥

फिर गर्भिणी के मरण योग—

क्रूरैः शशिनश्चतुर्थगैर्लग्नाद्वा निधनाश्रिते कुजे।
बन्ध्वन्त्यगयोः कुजार्कयोः क्षीणेन्दौ निधनाय पूर्ववत् ॥ ८ ॥

पापग्रह चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में, मङ्गल अष्टम स्थानमें स्थित हो तो गर्भिणी की मृत्यु होती है।

अथवा लग्न से पापग्रह चतुर्थ स्थान में, अष्टम में मङ्गल हो तो गर्भिणी की मृत्यु होती है।

अथवा लग्न से चतुर्थ स्थान में मङ्गल, द्वादश में सूर्य, और चतुर्थ या द्वादश में क्षीण चन्द्र हो तो गर्भिणी की मृत्यु होती है ॥ ८ ॥

गर्भिणी की शस्त्र से मृत्यु और गर्भस्राव योग—

उदयास्तगयोः कुजार्कयोर्निधनं शस्त्रकृतं वदेत्तदा।
मासाधिपतौ निपीडिते तत्काले स्रवणं समादिशेत् ॥ ९ ॥

गर्भाधान कालिक लग्न में मङ्गल और सप्तम स्थान में सूर्य हो तो गर्भिणी की शस्त्र से मृत्यु होती है।

अगर मासाधिप किसी ग्रह से निपीड़ित (युद्ध में पराजित, धूम केतु से धूमित, उल्का से हत इत्यादि) हो तो उस महीने में गर्भस्राव बताना चाहिए ॥ ९ ॥

गर्भपुष्टि ज्ञान—

शशाङ्कलग्नोपगतैः शुभग्रहैस्त्रिकोणजायार्थसुखास्पदस्थितैः।
तृतीयलाभर्क्षगतैश्च पापकैः सुखी तु गर्भो रविणा निरीक्षितः ॥ १० ॥

जिस स्थान में चन्द्रमा हो उस में अथवा लग्न में अथवा लग्न, चन्द्र स्थान इन दोनों में शुभग्रह हों, चन्द्रमा अथवा लग्न अथवा दोनों से पञ्चम, नवम, सप्तम, द्वितीय, चतुर्थ और दशम स्थान में शुभग्रह हों चन्द्रमा अथवा लग्न अथवा दोनों से

तृतीय और एकादश स्थान में पापग्रह हों, चन्द्रमा अथवा लग्न अथवा दोनों पर सूर्य की दृष्टि हो तो गर्भ पुष्ट और सुखी कहना चाहिए।

किसी का मत है कि 'रविणा' के जगह में 'गुरुणा' ऐसा पाठ होना चाहिए, परन्तु वह युक्त नहीं है। क्योंकि—

सारावली में लिखा है—

होरेन्दुयुतैः सौम्यैस्त्रिकोणजायासुखास्वरार्थस्थैः ।
पापैस्त्रिलाभयातैःसुखी च गर्भो निरीक्षितो रविणा ॥

अर्थ-स्पष्ट है ॥ १० ॥

गर्भाधान काल अथवा प्रश्नकाल से पुरुष-स्त्री विभाग ज्ञान—

ओजर्क्षे पुरुषांशकेषु बलिभिर्लग्नार्कगुर्विन्दुभिः
पुंजन्म प्रवदेत्समांशकगतैर्युग्मेषु तैर्योषितः।
गुर्वर्कौ विषमे नरं शशिसितौ वक्रश्च युग्मे स्त्रियं
द्व्यङ्गस्था बुधवीक्षणाच्च यमलौ कुर्वन्ति पक्षे स्वके ॥ ११ ॥

गर्भाधानकालिक व प्रश्नकालिक लग्न, सूर्य, बृहस्पति और चन्द्रमा विषम राशि अथवा विषम राशि के नवांश में स्थित हों तो गर्भिणी के गर्भ में पुरुष कहना चाहिए।

अगर पूर्वोक्त लग्नादि सब सम राशि अथवा सम राशि के नवांश में स्थित हों तो गर्भिणी के गर्भ में स्त्री कहना चाहिए।

अथवा बलवान् सूर्य और बृहस्पति विषम राशि में स्थित हों तो गर्भिणी के गर्भ में पुरुष कहना चाहिए।

अगर बलवान् चन्द्रमा, शुक्र और मङ्गल सम राशि में स्थित हों तो गर्भ में स्त्री कहना चाहिए।

पुरुष जन्म योग—

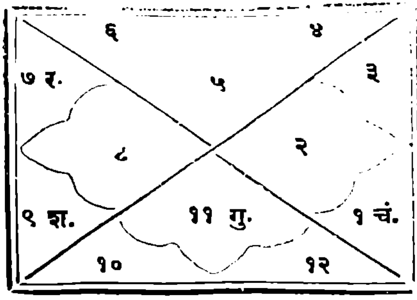

स्त्री जन्म योग—

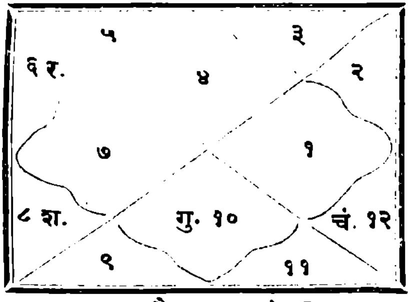

वेही पूर्वोक्त ग्रह (सूर्य, बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र और मङ्गल) द्विस्वभाव

राशि के नवांश में हों, बुध से देखे जाते हों तो अपने-अपने पक्ष में यमल (जोड़ा) का जन्म देते हैं।

अर्थात् सूर्य और बृहस्पति विषम द्विस्वभाव राशि (मिथुन और धन) में हों और बुध से देखे जाते हों तो दो बालक का जन्म कहना चाहिये।

अगर मङ्गल, चन्द्रमा, शुक्र ये सम द्विस्वभाव राशि (कन्या, मीन) में स्थित हों और बुध से देखे जाते हों तो कन्या का जन्म कहना चाहिये।

अगर दोनों तरह के ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों और बुध से दृष्ट हों तो एक बालक दूसरा कन्या का जन्म कहना चाहिए॥ ११॥

यमल जन्म योग—

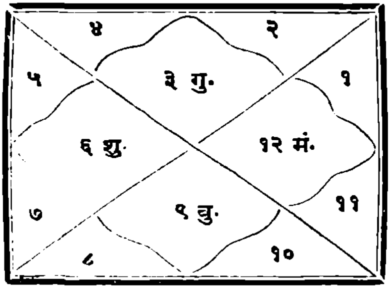

यहाँ पर विशेष—

अष्टाष्टमगे शुक्रे निषेकर्त्तास्सुतोद्भवः।
अथवाऽऽधानलग्नात्तु त्रिकोणस्थे दिनेश्वरे॥
अस्मिन्नाधानलग्ने तु शुभदृष्टियुतेऽथवा।
दीर्घायुर्भाग्यवान् जातः सर्वविद्याविशारदः॥

पुत्र जन्म का दूसरा योग—

विहाय लग्नं विषमर्क्षसंस्थः सौरोऽपि पुंजन्मकरो विलग्नात्।
प्रोक्तग्रहाणामवलोक्य वीर्यं वाच्यः प्रसूतौ पुरुषोऽङ्गना वा॥ १२॥

गर्भाधान काल में अथवा प्रश्न काल में लग्न को छोड़ कर लग्न से विषम स्थान (तृतीय, पञ्चम, सप्तम, नवम, एकादश) में शनैश्चर हो तो पुत्र जन्म कारक होता है।

इस प्रकार कहे हुए योगों के बलाबल को देख कर जो बली हो तदनुसार पुत्र अथवा कन्या का जन्म निश्चय करके कहना चाहिए॥ १२॥

नपुंसक के योग—

अन्योऽन्यं यदि पश्यतश्शशिरवी यद्यार्किसौम्यावपि
वक्रो वा समगं दिनेशमसमे चन्द्रोदयौ चेत्स्थतौ ।
युग्मौजर्क्षगतावपीन्दुशशिजौ भूम्यात्मजेनेक्षितौ
पुम्भागे सितलग्नशीतकिरणाः षट् क्लीबयोगाः स्मृताः ॥ १३ ॥

अब छै प्रकार के नपुंसक योग को कहते हैं—अगर विषम राशि में सूर्य, समराशि में चन्द्रमा हो और दोनों परस्पर एक दूसरे को देखते हों तो नपुंसक योग होता है (१)।

शनि विषम राशि में, बुध सम राशि में हो और दोनों परस्पर देखते हों तो नपुंसक योग होता है (२)।

यदि वा सम राशि में सूर्य, विषम राशि में मङ्गल हो और दोनों परस्पर देखते हों तो नपुंसक योग होता है (३)।

यदि वा लग्न और चन्द्रमा विषम राशि में हों, इनको सम राशि में वर्तमान मङ्गल देखता हो तो नपुंसक योग होता है (४)।

यदि वा विषम राशि में चन्द्रमा और सम राशि में बुध हो और दोनों को मङ्गल देखता हो तो नपुंसक योग होता है (५)।

यदि वा लग्न, शुक्र और चन्द्रमा पुरुष राशि और पुरुष राशि के नवांश में हो तो नपुंसक योग होता है (६)।

तथा वादरायणः—

अन्योन्यं रविशशिनौ विषमौ विषमर्क्षगौ निरीक्ष्येते ।
इन्दुजरविपुत्रौ वा तथैव नपुंसकं कुरुतः ॥
वक्रो विषमे सूर्यः समगश्चैवं परस्परालोकात् ।
विषमर्क्षे लग्नेन्दू समराशिगः कुजोऽवलोकयति ॥
बुधचन्द्रौ कुजदृष्टौ विषमर्क्षसमर्क्षगौ तथैवोक्तौ ।
ओजनवांशकसंस्था लग्नेन्दुसितास्तथैवोक्ताः ॥ १३ ॥

एक साथ दो और तीन सन्तति का योग—

युग्मे चन्द्रसितौ तथौजभवने स्युर्ज्ञारजीवोदया-
लग्नेन्दू नृनिरीक्षितौ च समगौ युग्मेषु वा प्राणिनः ।
कुर्युस्ते मिथुनं ग्रहोदयगतान् द्व्यङ्गांशकान् पश्यति
स्वांशे ज्ञे त्रितयं ज्ञगांशकवशाद्युग्मं त्वमिश्रैः समम् ॥ १४ ॥

गर्भाधान काल में अथवा प्रश्नकाल में चन्द्रमा, शुक्र दोनों सम राशियों में बैठे

हों, बुध, मङ्गल, बृहस्पति, लग्न ये सब विषम राशियों में स्थित हों तो मिथुन (युगल = एक पुत्र और एक कन्या) कहना चाहिये।

अथवा लग्न, चन्द्रमा दोनों सम राशि में स्थित हों और किसी पुरुष ग्रह से देखे जाते हों तो भी एक कन्या और एक बालक दोनों का युगल कहना चाहिए।

अथवा उक्त मङ्गल, बुध, बृहस्पति, लग्न ये बलवान् होकर सम राशि में हों तो भी एक कन्या और एक बालक का युगल कहना चाहिये।

पूर्वोक्त सब ग्रह (मङ्गल, बुध, बृहस्पति), लग्न ये सब द्विस्वभाव राशियों के नवांश में स्थित हों, उनको अपने नवांश में बैठा हुआ बुध देखता हो तो गर्भ में तीन सन्तान कहना चाहिये।

किन्तु यहाँ पर इतना विशेष जानना चाहिए, कि बुध जिस नवांश में हो उस नवांश के वश सन्ततित्रय में दो बालक या कन्या और एक उन दोनों से भिन्न कहना चाहिए।

जैसे मिथुन के नवांश में बैठ कर बुध पूर्वोक्त योगकारी ग्रहों को देखता हो तो गर्भिणी के गर्भ में दो बालक और उनसे भिन्न (एक कन्या) कहना चाहिए।

कन्या के नवांश में स्थित हो कर बुध पूर्वोक्त योगकारी ग्रहों को देखता हो तो दो कन्या, उनसे भिन्न एक बालक गर्भिणी के गर्भ में कहना चाहिए।

तीनों पुरुष या तीनों कन्या ही का योग इस प्रकार होता है—

यदि स्त्री संज्ञक नवांश में स्थित बुध स्त्रीसंज्ञक नवांशगत पूर्वोक्त लग्न सहित सब ग्रहों को देखता हो तो गर्भिणी के गर्भ में तीनों कन्या ही कहना चाहिए।

जैसे कन्या के नवांश में स्थित बुध कन्या और मीन के नवांश में स्थित पूर्वोक्त लग्न सहित सब ग्रहों को देखता हो तो गर्भ में तीनों कन्या ही कहना चाहिए।

अगर पुरुष संज्ञक राशि के नवांश में स्थित बुध, पुरुष संज्ञक नवांश में स्थित पूर्वोक्त लग्न सहित सब ग्रहों को देखता हो तो गर्भ में तीनों लड़का ही कहना चाहिए।

जैसे मिथुन के नवांश में स्थित बुध, मिथुन और धन के नवांश में स्थित पूर्वोक्त लग्न सहित सब ग्रहों को देखता हो तो गर्भ में तीनों लड़का ही कहना चाहिए॥१४॥

तीन से अधिक सन्तति का ज्ञान—

धनुर्धरस्यान्तगते विलग्ने ग्रहैस्तदंशोपगतैर्बलिष्ठैः।
ज्ञेनार्किणा वीर्य्ययुतेन दृष्टे सन्ति प्रभूता अपि कोशसंस्थाः ॥१५॥

गर्भाधान कालिक लग्न में धनु राशि या धनु राशि का नवांश हो और बलवान् हो कर यत्र कुत्र स्थित सब ग्रह धन राशि के नवांश में हों, तथा बलवान् बुध और शनि लग्न को देखते हों तो गर्भ में बहुत सन्तान (पाँच से लेकर दश पर्य्यन्त) कहना चाहिए।

सारावली में—

लग्ने समराशिगते चन्द्रे च निरीक्षिते वलयुतेन ।
गगनसदा वक्तव्यं मिथुनं गर्भस्थितं नित्यम् ॥
समराशौ शशिसितयोर्विषमे गुरुवक्रसौम्यलग्नेषु ।
द्विशरीरे वा वलिषु प्रवदेत् स्त्रीपुरुषमत्रैव ॥
द्विशरीरांशकयुक्तान् ग्रहान् विलग्नं च पश्यतीन्दुसुते ।
मिथुनांशे कन्यैका द्वौ पुरुषौ त्रितयमेवं स्यात् ॥
द्विशरीरांशकयुक्तान् ग्रहान् विलग्नं च पश्यतीन्दुसुते ।
कन्यांशे द्वे कन्ये पुरुषश्च निषिच्यते गर्भे ॥
मिथुने धनुरंशगतान् ग्रहान् विलग्नं च पश्यतीन्दुसुतः ।
मिथुनांशस्थश्च यदा पुरुषत्रितयं तदा गर्भे ॥
कन्यामीनांशस्थान् विहगानुदयं च युवतिभागगतः ।
पश्यति शशिरगुतनयः कन्यात्रितयं तदा गर्भे ॥ १५ ॥

गर्भ के मासाधिप और उनका फल—

कललघनाङ्कुरास्थिचर्माङ्गजचेतनपाः
सितकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किबुधाः परतः ।
उदयपचन्द्रसूर्यनाथाः क्रमशो गदिता
भवति शुभाशुभं च मासाधिपतेः सदृशम् ॥ १६ ॥

गर्भाधान से प्रथम एक महीने में कलल (रज, वीर्य, दोनों का मिश्रण) होता है ।
द्वितीय महीने में घन (पिण्ड) रूप होता है ।
तीसरे महीने में उस पिण्ड पर हाथ, पैर आदि अवयव का अंकुर होता है ।
चौथे महीने में हड्डी होती है ।
पाँचवें महीने में चर्म (खाल) होता है ।
छठे महीने में रोम होता है ।
सातवें महीने में चैतन्य होता है । इन सात महीनों के स्वामी क्रम से शुक्र, मङ्गल, गुरु, सूर्य, चन्द्र, शनि और बुध होते हैं ।
आठवें महीने में माता के खाए हुए रस का आस्वादन करता है ।
नवें महीने में गर्भ से निकलने का उद्वेग होता है ।
दसवें महीने में प्रसव होता है ।

इन तीन महीनों के स्वामी क्रम से लग्नेश, चन्द्रमा और सूर्य हैं । गर्भाधान के समय में जिस महीने का स्वामी कलुषित (रश्मिहीन, अस्त आदि) हो उस महीने में गर्भ में पीड़ा कहना चाहिए ।

तथा जिस महीने का स्वामी युद्ध में पराजित हो उस मास में गर्भ का पतन होता है, जिस महीने का स्वामी बलवान् हो उस महीने में गर्भ की पुष्टि होती है।

तथा लघु जातक में—

कललघनावयवास्थित्वक्रोमस्मृतिसमुद्भवाः क्रमशः।
मासेषु शुक्रकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किसौम्यानाम् ॥
अशनोद्वेगप्रसवाः परतो लग्नेशचन्द्रसूर्याणाम्।
कलुषैः पीडा पतनं निपीडितैर्निर्मलैः पुष्टिः ॥

यहाँ यवनाचार्य प्रथम मासाधिप मङ्गल और द्वितीय मासाधिप शुक्र को कहते हैं।

यथा उनका वचन—

कुजास्फुजिज्जीवरवीन्दुसौरशशांकलग्नेन्दुदिवाकराणाम् ।
मासाधिपत्यप्रभवो न चैषां जयोपघातैर्ग्रहवद्भवन्ति ॥
आद्ये तु मासे कललं द्वितीये पेशिस्तृतीयेऽपि भवन्ति शाखाः।
अस्थीन्यथ स्नायुशिराश्चतुर्थे मज्जान्त्रचर्माण्यपि पञ्चमे तु ॥
षष्ठे त्वसृग्रोमनखैर्यकृच्च चेतस्विता सप्तममासि चिन्त्या।
तृष्णाशनास्वादनमष्टमे स्यात् स्पर्शोपरोधौ नवमे रतिश्च ॥
स्रोतोभिरुद्घाटितपूर्णदेहो गर्भोऽर्कमासे दशमे प्रसूते।

परन्तु बहु सम्मत के कारण वराहमिहिर का मत ही ठीक है ॥ १६ ॥

अधिकाङ्ग, मूक और बहुत दिनों के बाद बोलने के योग—

त्रिकोणगे ज्ञे विबलैस्तथाऽपरैर्मुखाङ्घ्रिहस्तैर्द्विगुणस्तदा भवेत्।
अवाग्गवीन्दावशुभैर्भसन्धिगैः शुभेक्षितैश्चेत्कुरुते गिरश्चिरात् ॥ १७ ॥

गर्भाधानकालिक अथवा प्रश्नकालिक लग्न से पञ्चम और नवम में बुध बैठा हो, शेष सब ग्रह बलरहित हों तो गर्भ में दो शिर, चार हाथ और चार पैर वाला सन्तान कहना चाहिए।

वृष राशि में चन्द्रमा बैठा हो, सब पापग्रह भसन्धि (कर्क, वृश्चिक, मीन इन राशियों के अन्त्य नवांश) में स्थित हों तो गर्भ में मूक (गूँगा) सन्तान कहना चाहिए।

अगर वृष राशि में चन्द्रमा और सब पापग्रह भसन्धि में स्थित हों तथा चन्द्रमा को शुभग्रह देखते हों तो बहुत दिन के बाद वह सन्तान बोलेगा ऐसा कहना चाहिए। बली शुभग्रह और अशुभग्रह दोनों से चन्द्रमा देखा जाता हो तो भी बहुत दिन के बाद बोलने वाला सन्तान कहना चाहिए। केवल पापग्रह से देखा जाता हो तो मूक कहना चाहिये ॥ १७ ॥

सदन्तादि योग—

सौम्यर्क्षांशे रविजरुधिरौ चेत्सदन्तोऽत्र जातः
कुब्जः स्वर्क्षे शशिनि तनुगे मन्दमाहेयदृष्टे ।
पंगुर्मीने यमशशिकुजैर्वीक्षिते लग्नसंस्थे
सन्धौ पापे शशिनि च जडः स्यान्न चेत्सौम्यदृष्टिः ॥ १८ ॥

शनैश्चर और मङ्गल बुध की राशि (मिथुन, कन्या) में अथवा उन राशियों के नवांश में हों तो गर्भ में सदन्त (दाँतवाला) सन्तान कहना चाहिए।

लग्न का चन्द्रमा स्वराशि (कर्क) में बैठा हो और शनैश्चर, मङ्गल ये दोनों देखते हों तो गर्भ में कुब्ज (कुबड़ा) सन्तान कहना चाहिए।

लग्न में मीन राशि हो और उस लग्न को शनैश्चर, चन्द्रमा, मङ्गल ये तीनों ग्रह देखते हों तो गर्भ में पङ्गु (लँगड़ा) सन्तान कहना चाहिए।

पापग्रहों के साथ चन्द्रमा भसन्धि (कर्क, वृश्चिक, मीन इनके अन्त्य नवांश) में बैठा हो और कोई शुभग्रह नहीं देखता हो तो गर्भ में जड़ (मूर्ख) सन्तान कहना चाहिए।

वामन और अङ्गहीन योग—

सौरशशाङ्कदिवाकरदृष्टे वामनको मकरान्त्यविलग्ने ।
धीनवमोदयगैश्च दृकाणैः पापयुतैरभुजाङ्घ्रिशिराः स्यात् ॥ १९ ॥

मकर का अन्त्य नवांश लग्न में हो, और उस लग्न पर शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य की दृष्टि हो तो गर्भ में वामन (छोटे शरीर का) सन्तान कहना चाहिये।

अगर लग्न में पञ्चम अथवा नवम राशि अथवा लग्न जिस राशि में हो उस राशि का द्रेष्काण हो अर्थात् लग्न में द्वितीय अथवा तृतीय अथवा प्रथम द्रेष्काण पापग्रहों से युक्त हो क्यों कि द्वितीय, तृतीय, और प्रथम द्रेष्काण क्रम से पञ्चम, नवम और लग्न की राशि में होते हैं। उन तीनों को सूर्य, चन्द्रमा और शनैश्चर देखते हों तो गर्भ में क्रम से हाथ से रहित, पाँव से रहित, भुजा से रहित और शिर से रहित सन्तान कहना चाहिए।

जैसे लग्न में पापग्रह मङ्गल से युत द्वितीय द्रेष्काण में हो तथा उस को सूर्य, चन्द्रमा और शनैश्चर देखते हों तो हाथ रहित, एवं लग्न में पापग्रह (मङ्गल) तृतीय द्रेष्काण में हों तथा उस को उक्त तीनों ग्रह देखते हों तो पैर से रहित, यदि वा लग्न में लग्न की राशि का पापग्रह (मङ्गल) से युत द्रेष्काण हो तथा उस को उक्त तीनों ग्रह देखते हों तो शिर से रहित सन्तान कहना चाहिए।

कोई इस का अर्थ इस तरह करते हैं। मकर राशि का अन्त्य नवांश लग्न में हो

तथा उस पर शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य की दृष्टि हो तो वामन सन्तान कहना चाहिये।

अगर लग्न में द्वितीय, तृतीय और प्रथम द्रेष्काण पापग्रहों से युत हो तो क्रम से हाथ से रहित, पाँव से रहित और शिर से रहित सन्तान कहना चाहिए। यहाँ भुजरहितादि योग में 'सौरशशाङ्कदिवाकरदृष्टे' इस को नहीं लगाते हैं।

किसी का मत है कि जब लग्न में प्रथम द्रेष्काण का उदय रहेगा उस समय पञ्चम और नवम राशि में भी प्रथम द्रेष्काण ही का उदय रहेगा, ये तीनों द्रेष्काण पापग्रहों से युत हों तो भुजरहित सन्तान कहना चाहिए। एवं लग्न में जब द्वितीय द्रेष्काण का उदय रहेगा उस समय पञ्चम और नवम राशि में भी द्वितीय द्रेष्काण ही उदित रहेगा। इन तीनों स्थानों के द्रेष्काण पापग्रहों से युत हों तो पाँव से रहित सन्तान कहना चाहिए।

इसी तरह लग्न में जब तृतीय द्रेष्काण का उदय रहेगा उस समय पञ्चम और नवम राशि में भी तृतीय द्रेष्काण ही उदित रहेगा। ये तीनों द्रेष्काण पापग्रहों से युत हों तो शिर से रहित सन्तान कहना चाहिए। वामन योग पूर्ववत्।

इस तरह से अनेक आचार्यों ने अनेक अर्थ किये हैं, परञ्च कोई यथार्थ नहीं प्रतीत होता है।

अतः वास्तविक अर्थ नीचे लिखते हैं—

मकर राशि का अन्त्य नवांश लग्न में हो और उस पर शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य की दृष्टि हो तो वामन सन्तान कहना चाहिए।

तथा गर्भाधान काल में लग्न से पञ्चम राशि में जो द्रेष्काण हो वह यदि मङ्गल से युत हो तथा शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य से दृष्ट हो तो हाथ से रहित सन्तान कहना चाहिए।

एवं लग्न से नवम राशि में जो द्रेष्काण हो वह अगर मङ्गल से युत हो तथा शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य से दृष्ट हो तो पांव से रहित सन्तान कहना चाहिए।

एवं लग्न में स्थित जो द्रेष्काण हो वह अगर मङ्गल से युत हो कर शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य से दृष्ट हो तो शिर से रहित सन्तान कहना चाहिए।

यही व्याख्या ठीक है, क्योंकि भगवान् गर्ग का वचन भी इसी व्याख्या को पुष्ट करता है—

लग्नाद्द्रेष्काणगो भौमः सौरसूर्येन्दुवीक्षितः।
कुर्याद्विशिरसं तद्वत्पञ्चमे बाहुवर्जितम्॥
विपदं नवमस्थाने यदि सौम्यैर्न वीक्षितः।

तथा सारावली में—

भौमयुता द्रेष्काणास्त्रिकोणलग्नेषु संदृष्टाः।
विभुजांघ्रिमस्तकः स्याच्छनिरविचन्द्रैर्वदेद्गर्भः॥ १९

अन्ध और काण योग—

रविशशियुते सिंहे लग्ने कुजार्किनिरीक्षिते
नयनरहितः सौम्यासौम्यैः सबुद्बुदलोचनः ।
व्ययगृहगतश्चन्द्रो वामं हिनस्त्यपरं रवि-
र्न शुभगदिता योगा याप्या भवन्ति शुभेक्षिताः ॥ २० ॥

सूर्य और चन्द्रमा सिंह लग्न में बैठे हों तथा मङ्गल और शनैश्चर से दृष्ट हों तो गर्भ में नेत्रहीन सन्तान कहना चाहिए।

अगर केवल सूर्य लग्न में हो और मङ्गल शनैश्चर इन दोनों से दृष्ट हो तो दक्षिण नेत्र से हीन (काना) सन्तान कहना चाहिए।

अगर केवल चन्द्रमा सिंह लग्न में हो और मङ्गल, शनैश्चर दोनों से दृष्ट हो तो वाम नेत्र से रहित सन्तान कहना चाहिए।

यदि वा सूर्य और चन्द्रमा दोनों सिंह लग्न में बैठे हों तथा शुभग्रह और पाप ग्रह दोनों से दृष्ट हों तो बुद्बुद (फूली युक्त या हिलने वाला या एक छोटा एक बड़ा नेत्र वाला) सन्तान कहना चाहिए।

यहाँ पर भी केवल सूर्य सिंह लग्न में हो और शुभ, अशुभ दोनों ग्रह से देखा जाता हो तो दक्षिण नेत्र, केवल चन्द्रमा सिंह लग्न में हो और शुभ, अशुभ दोनों ग्रहों से देखा जाता हो तो वाम नेत्र सबुद्बुद कहना चाहिए।

गर्भाधान कालिक लग्न अथवा जन्म कालिक लग्न से चन्द्रमा द्वादशस्थान में स्थित हो तो वाम नेत्र और सूर्य हो तो दक्षिण नेत्र का नाश करता है।

इस अध्याय में 'त्रिकोणगे ज्ञे विबलैस्ततोऽपरैः' इत्यादि पद्य से यहाँ तक जितने अशुभ योग कहे गये हैं, उनमें योग करने वाले ग्रहों पर अगर एक भी शुभग्रह की दृष्टि हो तो पठित सम्पूर्ण खराब फल नहीं होता है, किन्तु बहुत थोड़ा होता है।

प्रसङ्गवश गर्भाधान के मुहूर्त—

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं।
दास्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम् ॥
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे।
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥
भद्रा षष्ठी पर्व रिक्ता च संध्या भौमार्कार्की नाद्यरात्रीश्चतस्रः।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्रह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥
केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्च पापैस्त्र्यारिगैः पुंग्रहदृष्टलग्ने।
ओजांशकेऽब्जेऽपि च युग्मरात्रौ चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं सत् ॥
बलान्वितावर्कसितौ स्वभांशे पुंसां यदा चोपचये भवेताम्।
तथाङ्गनानां शनिभौमजीवास्तदा भवेद्गर्भसमुद्भवश्च ॥

स्त्रीणां विधौ चोपचये कुजेन दृष्टेऽपि गर्भग्रहणस्य योगः।
पुंसां तथा गीष्पतिना प्रदृष्टे स्त्रीपुंसयोर्योगमतोऽन्यथा न ॥

तीनों प्रकार का गण्डान्त, जन्म नक्षत्र, अष्टम नक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, ग्रहण काल, पात योग, वैधृति योग, माता-पिता का श्राद्ध दिन, परिघयोग, उत्पात से हत नक्षत्र, जन्म राशि से अष्टम राशि और पाप नक्षत्र गर्भाधान में त्याज्य हैं।

भद्रा, षष्ठी, पर्व दिन, रिक्ता (४।१४।९), सन्ध्या काल, मङ्गल, रवि, शनैश्चर वार और पहली चार रातें गर्भाधान में वर्जित हैं।

तीनों उत्तरा, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ होता है।

केन्द्र, त्रिकोण इन दोनों में शुभग्रह, ६, ८, ११ इन स्थानों में पापग्रह हों, पुरुष ग्रह (रवि, मङ्गल, गुरु) लग्न को देखता हो, विषम नवांश में चन्द्रमा हो और सम रात्रि हो तो गर्भाधान शुभ होता है।

चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य और अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भाधान मध्यम होता है।

जब पुरुष के सूर्य, शुक्र ये दोनों अपने नवांश या उपचय स्थान में बली हो कर बैठे हों तथा स्त्री के चन्द्रमा, मंगल, ये दोनों उक्त स्थान में उसी तरह हों तो गर्भधारण होता है।

अब स्त्री के उपचय स्थान में स्थित चन्द्रमा को मंगल देखता हो और पुरुष के चन्द्र को गुरु देखता हो तो गर्भधारण का योग होता है, अन्यथा नहीं ॥ २० ॥

आधानलग्न से प्रसवकालज्ञान—

तत्कालमिन्दुसहितो द्विरसांशको य-
स्तत्तुल्यराशिसहिते पुरतः शशांके।
यावानुदेति दिनरात्रिसमानभाग-
स्तावद्गते दिननिशोः प्रवदन्ति जन्म ॥ २१ ॥

गर्भाधान काल या प्रश्न काल में जिस राशि के जितनी संख्या वाले द्वादशांश में चन्द्रमा स्थित हो, यहाँ कोई २ 'तात्कालिकेन्दुसहितो द्विरशांशको यः' ऐसा पाठ मानते हैं। तो भी अर्थ वही रहता है।

जैसे गर्भाधान कालिक अथवा प्रश्न कालिक चन्द्रमा जितनी संख्या वाले द्वादशांश में स्थित हो उतनी संख्या मेषादि से गणना करने पर जो राशि मिले, दशवें महीने में उस राशि में जब चन्द्रमा आवे तब जन्म कहना चाहिये, ऐसा अर्थ करते हैं।

तथा सारावली में—

यस्मिन् द्वादशभागे गर्भाधाने व्यवस्थितश्चन्द्रः।
तत्तुल्यर्क्षे प्रसवं गर्भस्य समादिशेत्प्राज्ञः ॥

किसी का मत यह है कि गर्भाधान काल अथवा प्रश्न काल में जिस राशि में

चन्द्रमा स्थित हो, उसमें जिस राशि का जितनी संख्या वाला द्वादशांश हो, उस द्वादशांश वाली राशि में उतनी संख्या आगे जो राशि मिले उस राशि पर दशम मास में जब चन्द्रमा आवे तब जन्म कहना चाहिए। यही अर्थ यथार्थ है, क्योंकि इसी अर्थ को भगवान् गार्गि का वचन पुष्ट करता है—

यावत्संख्ये द्वादशांशे शीतरश्मिर्व्यवस्थितः।
तत्संख्यो यस्ततो राशिर्जन्मेन्दौ तद्गते वदेत्।

यहां पर नक्षत्र आनयन करने के लिये अनुपात—

यदि चन्द्रस्थ द्वादशांश प्रमाण (२° । ३०′ = १५०′) में राशि कला अठारह सौ पाते हैं तो चन्द्र भुक्त द्वादशांश कला में क्या ? लब्धि में एक नक्षण चरण के कला प्रमाण (८००) से भाग देने से लब्धि गत नक्षत्र शेष वर्तमान नक्षत्र का मान होगा।

गर्भकाल या प्रश्न काल से दिन और रात्रि का ज्ञान—

इष्ट काल में 'गोजाश्विकर्किमिथुना' इत्यादि श्लोक से लग्न राशि दिनसंज्ञक या रात्रिसंज्ञक है इसका ज्ञान करके दिन संज्ञक हो तो दिन में रात्रि संज्ञक हो तो रात्रि में जन्म कहना चाहिए।

दिनरात्रिगतेष्टकालज्ञान—

गर्भाधान काल या प्रश्नकाल में लग्नराशि दिनसंज्ञक हो तो दिन मान से रात्रिसंज्ञक हो तो रात्रिमान से जितना काल भाग गत हुआ हो उतना ही दिन या रात्रि से गतकाल में जन्म कहना चाहिए, यह जिसका मत है उसका प्रमाण सारावली में—

तत्कालं दिवसनिशा समुदेति राशिभागो यः।
यावानुदयस्तावान्वाच्यो दिवसस्य रात्रेर्वा ॥
इत्याधाने प्रथमं प्रसूतिकालं सुनिश्चितं कृत्वा।
जातकविहितं च विधिं विचिन्तयेत्तत्र गणितज्ञः ॥ २१ ॥

उदाहरण—शुभशाके १८३१, संवत् १९६६ सन् १३१७ साल कार्तिक कृष्ण अष्टमी दण्डादि = (२६।१३) तदुपरि नवमी, पुनर्वसुनक्षत्रदण्डादि=(४।२६) तदुपरि पुष्य, सिद्धियोगदण्डादि = (२६।३६) तदुपरि साध्य, गुरु वासर में श्रीसूर्य भुक्त तुलांशकादि = (२।००।५२), सूर्योदय से इष्टघट्यादि = (५३।१२), मिश्रमान = (४४।१६), मिश्रेष्टान्तर धन = (००।०८।५५) तात्कालिकरवि = (६।०२।०९।४५) अयनांश = (२०।५१।१९,) प्रश्नलग्न राश्यादि = (४।२५।३३।५३) दिनमान = २८।३१, रात्रिमान (३१।२९) रात्रि में पूर्वनत = ६।४९, उन्नत = २३।११, दशम लग्न राश्यादि = १।२५।१९।१४, भयात = ४८।४१, भभोग = ५९।१४।

इस समय में किसी को गर्भाधान हुआ।

गर्भाधानकालिकस्फुटग्रह—

रवि	६।०२।०९।४५	गति	५९।४५
चन्द्र	३।१४।१८।२६	गति	८१०।२१
मङ्गल	४।२२।४९।५४	गति	३७।०२
बुध	५।२१।३७।२१	गति	१०।५
बृहस्पति	८।११।२५।१३	गति	९।३५
शुक्र	५।०३।५६।४६	गति	७३।१९
शनि	४।११।१५।१२	गति	५।१४
राहु	२।१६।७ ।४५	गति	३।११
केतु	८।१६। ७।४५	गति	३।११

गर्भाधान कालिक तन्वादि द्वादशभाव ससन्धि—

तनु	४।२५।३३।५३	सन्धि	५।१०।३१।२६
धन	५।२५।२९।००	सन्धि	६।१०।२६।३४
सहज	६।०५।२४।०७	सन्धि	७।१०।२१।४०
बन्धु	७।२५।१९।१४	सन्धि	८।१०।२१।४१
सुत	८।२५।२४।७	सन्धि	९।१०।२६।३३
रिपु	९।२५।२९।००	सन्धि	१०।१०।३१।२७
जाया	१०।२५।३३।५३	सन्धि	११।१०।३१।२६
मृत्यु	११।२५।२९।००	सन्धि	००।१०।२६।३४
धर्म	००।२५।२४।०७	सन्धि	१।१०।२१।४०
कर्म	१।२५।१९।१४	सन्धि	२।१०।२१।४१
आय	२।२५।२५।०७	सन्धि	३।१०।२६।३३
व्यय	३।२५।२९।००	सन्धि	४।१०।३१।२७

गर्भाधानकालिककुण्डली—

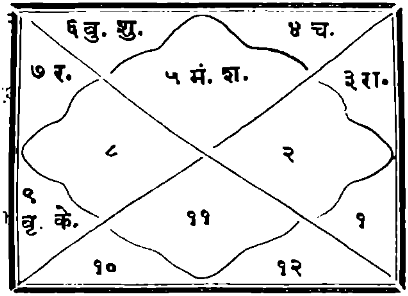

अब यहाँ विचार करना है कि प्रसव किस काल में होगा, इस कुण्डली में स्पष्ट चन्द्रमा = (३।१४।१८।२६), अतः कर्क राशि के छठे द्वादशांश में चन्द्रमा हुआ। परन्तु कर्क राशि में षष्ठ द्वादशांश धनु का होता है, अतः धनु से षष्ठ (वृष) राशिस्थ चन्द्रमा कार्तिक से दशम मास (श्रावण) में जब होगा तब प्रसव कहना चाहिए।

अब नक्षत्र ज्ञान करते हैं। वृष राशि में तीन नक्षत्रों का भाग है, कृत्तिका का तीन चरण, रोहिणी का चारों चरण और मृगशिरा के दो चरण हैं। उनमें किस नक्षत्र के किस चरण में जन्म होगा इसका ज्ञान करना है,

यहां पर अंशादि चन्द्र—(१४।१८।२६), है

अतः चन्द्रमा के भुक्त द्वादशांश = (१४°।१८′।२६)—(१२°।३०′) =

(१°।४′।८।२६) = १०८′।२६″ = १०८′ स्वल्पान्तर के कारण २६ विकला का त्याग किया।

अब अनुपात किया कि—चन्द्रस्थ द्वादशांशकला १५०′ (२°।३०′ = १५०′) में राशिकला अठारहसौ पाते हैं तो चन्द्रभुक्त द्वादशांशकला (१०८′) में क्या।

$$= \frac{१८०० \times १०८}{१५०} = १२ \times १०८ = १२९६ = \text{राशिभुक्तकला},$$

एक राशि में नव चरण होते हैं,

अतः एक चरण में कलामान = $\frac{१८००}{९}$ = २००, इतना आया। इससे राशि भुक्तकला में भाग दिया तो $\frac{१२९६}{२००}$, लब्धि गत चरण = ६,

शेष वर्तमान चरण में भुक्त कला = $\frac{९६}{२००} = \frac{१२}{२५}$,

अतः वृष राशि के सप्तम चरण में अर्थात् रोहिणी नक्षत्र के चतुर्थ चरण में प्रसव कहना चाहिए।

दिन अथवा रात्रि में प्रसव होगा इसका ज्ञान—

गर्भाधान कालिक लग्न सिंह = (४।२५।३३।५३) में अष्टम नवमांश मीन का है। मीन रात्रि में बली होता है, अतः रात्रि में प्रसव कहना चाहिए।

अब यहां रात्रि गत इष्ट काल का ज्ञान करते हैं। अष्टम नवांश की भुक्तकला = (२५°।३३′।५३″) − (२३°।२०′) =

(२°।१३'।५३") = १३३'।५३" स्वल्पान्तर से १३४' ग्रहण किया।

एक नवमांश में कला मान = (३°।२०') = २००' गर्भाधान की रात्रि का मान = (३१।२९) = ३१ स्वल्पान्तर से।

अब अनुपात किया कि एक नवमांश कला (२००) में गर्भाधान के रात्रि घटीमान ३१ पाते हैं तो नवमांश का मुक्त कला (१३४') में क्या =

$\frac{३१ \times १३४}{२००} = \frac{३१ \times ६७}{१००} = \frac{२०७७}{१००}$ = लब्ध घटी = २०,

शेष = ७७ को साठ से गुणा किया तो ४६२० हुआ, इसमें फिर सौ का भाग दिया तो लब्ध पला = ४६ आई।

अतः सिद्ध हुआ कि उस रात्रि के इतने घट्यादि (२०।४६) बीतने पर प्रसव होगा।

तीन वर्ष अथवा बारह वर्ष गर्भधारण योग—

उदयति मृदुभांशे सप्तमस्थे च मन्दे
यदि भवति निषेकः सूतिरब्दत्रयेण।
शशिनि तु विधिरेष द्वादशेऽब्दे प्रकुर्या-
न्निगदितमिह चिन्त्यं सूतिकालेऽपि युक्त्या॥ २२॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके निषेकाध्यायश्चतुर्थः॥ ४॥

गर्भाधान कालिक लग्न में शनि का नवांश हो अर्थात् मकर या कुम्भ राशि का नवांश हो और लग्न से सप्तम भाव में शनि बैठा हो, ऐसे योग में गर्भाधान होने से गर्भाधान के दिन से तीसरे वर्ष में प्रसव होता है।

अगर इस तरह का योग चन्द्रमा के वश हो अर्थात् किसी भी लग्न में चन्द्र-नवांश (कर्क राशि के नवांश) हो और लग्न से सप्तम में चन्द्रमा हो ऐसे योग में गर्भाधान होने से बारह वर्ष में प्रसव होता है।

इस अध्याय में कहे हुए योग (अङ्गहीनाधिकयोग, पित्रादिकष्टयोग···इत्यादि) जन्म लग्न से भी जो समीचीन समझ में आवे सो विचार कर कहना चाहिये॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां निषेकाध्यायश्चतुर्थः॥ ४॥

अथ सूतिकाध्यायः पञ्चमः

पिता के परोक्ष में जन्म का ज्ञान—

पितुर्जातः परोक्षस्य लग्नमिन्दावपश्यति।
विदेशस्थस्य चरमे मध्याद्भ्रष्टे दिवाकरे॥ १॥

जन्म समय में चन्द्रमा लग्न को न देखता हो तो पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिये।

अब स्वदेश या परदेश में पिता की स्थिति का ज्ञान करते हैं।

जैसे—यदि चन्द्रमा लग्न को न देखता हो और सूर्य दशम स्थान से भ्रष्ट (च्युत) हो कर चर राशि में स्थित हो,

अर्थात् अष्टम, नवम, एकादश, द्वादश इन भावों में से किसी में स्थित हो कर चर राशि में हो तो विदेश में स्थित पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिए।

यदि वा चन्द्रमा लग्न को न देखता हो और सूर्य अष्टम, नवम, एकादश, द्वादश, इनमें से किसी भाव में स्थित हो कर स्थिर राशि में हो तो स्वदेश में स्थित पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिए।

इसी तरह चन्द्रमा लग्न को न देखता हो और सूर्य अष्टम, नवम, एकादश, द्वादश इनमें से किसी भाव में स्थित हो कर द्विस्वभाव राशि में हो तो रास्ते में चलते हुए पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिये॥

तथा सरावली में—

होरामनीक्षमाणे पितरि न गेहस्थिते शशिनि जातः।
मेषूरणाच्च्युते वा चरगे भानौ विदेशगते ॥ १ ॥

पिता के परोक्ष में जन्म ज्ञान का योगान्तर—

उदयस्थेऽपि वा मन्दे कुजे वास्तमुपागते।
स्थिते चान्तःक्षपानाथे शशाङ्कसुतशुक्रयोः॥ २ ॥

शनैश्चर लग्न में स्थित हो और चन्द्रमा लग्न को न देखता हो तो विदेश में स्थित पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिए।

अथवा मङ्गल लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हो और चन्द्रमा लग्न को न देखता हो तो विदेश में स्थित पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिये।

अथवा चन्द्रमा, बुध और शुक्र के बीच में स्थित हो और लग्न को न देखता हो तो विदेश में स्थित पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिए।

तथा लघु जातक में—

चन्द्रे लग्नमपश्यति मध्ये वा सौम्यशुक्रयोश्चन्द्रे।
जन्म परोक्षस्य पितुर्यमोदये वा कुजे चास्ते॥ २॥

सर्पस्वरूप और सर्पवेष्टित जातक का ज्ञान—

शशाङ्के पापलग्ने वा वृश्चिकेशत्रिभागगे।
शुभैः स्वायस्थितैर्जातः सर्पस्तद्वेष्टितोऽपि वा॥ ३॥

चन्द्रमा वृश्चिकेश (मङ्गल) के द्रेष्काण (मेष में प्रथम द्रेष्काण, कर्क में द्वितीय द्रेष्काण, सिंह में तृतीय द्रेष्काण, वृश्चिक में प्रथम द्रेष्काण, धनु में द्वितीय द्रेष्काण,

मीन में तृतीय द्रेष्काण) में से किसी एक द्रेष्काण में हो और द्वितीय, एकादश इन दोनों स्थानों में शुभग्रह स्थित हों तो सर्परूप जातक का जन्म कहना चाहिए।

अथवा पापग्रह की राशि लग्न में हो, उसमें मङ्गल के पूर्वोक्त द्रेष्काण में से किसी एक द्रेष्काण का उदय हो, द्वितीय और एकादश में शुभग्रह हों तो सर्प से वेष्टित जातक का जन्म कहना चाहिए।

यहाँ पर किसी आचार्य की व्याख्या इस तरह है—

जैसे चन्द्रमा पापग्रह के लग्न में हो अथवा मङ्गल के द्रेष्काण में हो और चन्द्रमा से द्वितीय और एकादश में शुभग्रह हों तो सर्प अथवा सर्प से वेष्टित जातक का जन्म कहना चाहिए।

बहुमत के कारण यहाँ पर पूर्व का अर्थ ही ठीक है।

भगवान् गार्गि का वचन—

भौमद्रेष्काणगे चन्द्रे सौम्यैरायधनस्थितैः।
सर्पस्तद्वेष्टितस्तद्वत्पापलग्ने विनिर्दिशेत् ॥

तथा सारावली में—

भौमद्रेष्काणगतेन्दौ लग्ने वा संस्थिते वदेज्जातम्।
द्व्येकादशगैः सौम्यैरहिर्वेष्टितको भुजङ्गो वा ॥ ३ ॥

कोश से वेष्टित यमल योग—

चतुष्पदगते भानौ शेषैर्वीर्यसमन्वितैः।
द्वितनुस्थैश्च यमलौ भवतः कोशवेष्टितौ ॥ ४ ॥

चतुष्पद राशियों (मेष, वृष, सिंह, धनु का परार्ध, मकर का पूर्वार्ध) में से किसी एक राशि में सूर्य स्थित हो और बल युक्त सब शुभग्रह द्विस्वभाव राशियों में स्थित हों तो एक जरायु से लिपटा हुआ यमल (जोड़ा) का जन्म होता है ॥४॥

नाल से वेष्टित जातक के जन्म का ज्ञान—

छागे सिंहे वृषे लग्ने तत्स्थे सौरेऽथवा कुजे।
राश्यंशसदृशे गात्रे जायते नालवेष्टितः ॥ ५ ॥

मेष, सिंह और वृष राशियों में से कोई एक राशि लग्न में हो और उसमें शनैश्चर या मङ्गल बैठा हो तो नाल से वेष्टित सन्तान का जन्म होता है।

अब जातक के किस अङ्ग को नाल से वेष्टित कहना चाहिए इसका ज्ञान करते हैं—

लग्न में जिस राशि का नवांश उदित हो उस राशि का (कालाङ्गानि वराङ्गमाननं''इत्यादि से सिद्ध) जो अङ्ग उस अङ्ग को नालवेष्टित कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

सिंहाजगोभिरुदये सूते नलिनवेष्टितो जन्तुः।
लग्ने कुजेऽथ सौरे राश्यंशसमानगात्रेषु ॥ ५ ॥

जार से उत्पन्न का ज्ञान—

न लग्नमिन्दुञ्च गुरुर्निरीक्षते न वा शशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् ॥ ६ ॥

लग्न और चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो तो जार (पर पुरुष) से उत्पन्न सन्तान कहना चाहिए ।

अथवा सूर्य सहित चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो तो जार से उत्पन्न सन्तान कहना चाहिए ।

अथवा पापग्रह से युत चन्द्रमा सूर्य के साथ किसी राशि में हो तो जार से उत्पन्न सन्तान कहना चाहिए । अगर चन्द्रमा बृहस्पति के गृह में बैठ कर उसके द्रेष्काण या उसके नवांश या उसके द्वादशांश या उसके त्रिंशांश में हो अथवा अन्य किसी राशि में भी बृहस्पति के साथ चन्द्रमा हो तो पूर्वोक्त योग रहते हुए भी जार से उत्पन्न सन्तान नहीं कहना चाहिए ।

यतः भगवान् गार्गि का ऐसा वचन है—

गुरुश्चेत्भगते चन्द्रे तद्युक्ते वान्यराशिगे ।
तद्द्रेष्काणे तदंशे वा न परेर्जात इष्यते ॥

यहां पर वृद्ध—

तुर्यचन्द्रेक्षितः खेटः शत्रुभिर्वा युतेक्षितः ।
परेण जायते बालो निश्चितं च यथा पशुः ॥
त्रिषष्ठद्विसुताधीशो यदा लग्ने स्थितः सदा ।
तथापि परजातः स्याद्भृत्याद्यन्यसुतादिभिः ॥
लग्ने क्रूरोऽस्तगः सौम्यः कर्मस्थो रविनन्दनः ।
अस्मिन् योगे च यो जातो जायते वर्णसङ्करः ॥
मूर्तौ चेन्दुश्च दुश्चिक्ये भूमिनन्दनभार्गवौ ।
यद्या पञ्चदशावर्णे तदापि परबालकः ॥
ग्रहराजे स्थिते लग्ने चतुर्थे सिंहिकासुतः ।
स्वदेवरात्सुतोत्पत्तिर्जाता तस्या न संशयः ॥
लग्ने राहुधरापुत्रौ सप्तमे चन्द्रभास्करौ ।
नीचेन जायते बालो यदि राज्ञी भवेदपि ॥
सूर्ययुक्तेन्दुलग्नस्थे सप्तमे भौमभास्करौ ।
अस्मिन् योगे यदा जन्म परेणैव हि जायते ॥
केन्द्रं शून्यं भवेद्यस्य सोऽपि जातः परेण हि ।
द्विषष्ठाष्टमरिःफेषु ग्रहास्तिष्ठन्ति यस्य सः ॥
एकस्थाने यदास्तेशलग्नेशौ सोऽपि जारजः ।

जीवो निशाकरं लग्नं नेक्षेतापि च जारजः ॥
जीववर्गविहीनांशे तदा योगः पराज्जनेः ।
द्विशत्रू चैककेन्द्रस्थावन्यग्रहविवर्जितौ ॥
तदापि परजातः स्यात्स्थिरलग्ने विशेषतः ।
चतुर्थे दशमे लग्ने पापयुग्विधुसंस्थितः ॥
लग्नेशे संस्थिते लग्ने परजातः कदाचन ।
भङ्गोऽयं सर्वयोगानामिति ते कथितं मया ॥

यदि ग्रह चतुर्थ स्थान में स्थित चन्द्रमा से देखा जाता हो अथवा बहुत शत्रु ग्रहों से युत दृष्ट हो तो पशु की तरह जार से उत्पन्न जातक होता है।

तृतीय, षष्ठ, द्वितीय, पञ्चम इन स्थानों के स्वामी लग्न में स्थित हों तो भृत्यादि से उत्पन्न कहना चाहिये।

लग्न में पापग्रह, सप्तम स्थान में शुभग्रह और दशम में मङ्गल स्थित हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक को वर्णसङ्कर कहना चाहिए।

लग्न में चन्द्रमा, तृतीय स्थान में मङ्गल और शुक्र हो तो पञ्चदश आवर्ण रहने पर भी जारज कहना चाहिए।

सूर्य लग्न में और राहु चतुर्थ में हो तो निश्चय करके अपने देवर से सन्तान कहना चाहिये।

लग्न में राहु और मङ्गल तथा सप्तम में चन्द्रमा और सूर्य हो तो नीच जाति से उत्पन्न सन्तान कहना चाहिए।

सूर्य से युत चन्द्रमा लग्न में हो अथवा सप्तम में मङ्गल और सूर्य हो तो ऐसे योग में जार से उत्पन्न सन्तान कहना चाहिए।

जिसके केन्द्र स्थान में कोई ग्रह नहीं हो उसको भी जार से उत्पन्न कहना चाहिए।

जिसके सब ग्रह द्वितीय, षष्ठ, अष्टम और द्वादश में स्थित हों तो परजातक कहना चाहिए।

तथा इनमें कोई एक ग्रह उक्त स्थान से भिन्न स्थान में भी हो तो निश्चय करके परजातक ही कहना चाहिए।

लग्नेश और सप्तमेश दोनों किसी एक राशि में हों तो परजातक कहना चाहिए।

चन्द्रमा और लग्न को बृहस्पति नहीं देखता हो तो जार से उत्पन्न कहना चहिए।

लग्न में बृहस्पति का वर्ग नहीं हो तो जार से उत्पन्न कहना चाहिए।

दो परस्पर शत्रु ग्रह (रवि, शुक्र इत्यादि) केन्द्र स्थान में एक जगह स्थित हों और उस स्थान में दूसरा ग्रह नहीं हो तो परजातक कहना चाहिए।

अगर एक साथ स्थित परस्पर दो शत्रु ग्रह स्थिर लग्न में हों तो विशेष करके जारज कहना चाहिए। पापग्रह से युत चन्द्रमा चतुर्थ, दशम अथवा लग्न में स्थित हो और लग्नेश लग्न को देखता हो तथापि जार से उत्पन्न कहना चाहिए।

अगर लग्नेश लग्न में बैठा हो तो पूर्वोक्त योग रहने पर भी जारज नहीं होता है ॥६॥

जातक के पितृबन्धन योग—

क्रूरर्क्षगतावशोभनौ सूर्याद्द्यूननवात्मजस्थितौ ।
बद्धस्तु पिता विदेशगः स्वे वा राशिवशादथो पथि ॥ ७ ॥

दो पापग्रह (शनि और मंगल) पापग्रहों के राशि में स्थित हों और सूर्य से सप्तम, नवम या पञ्चम में स्थित हों तो बालक का पिता बन्धन युक्त (कारागृह में) है ऐसा कहना चाहिए ।

कहाँ पर बन्धन युक्त है इसका निर्णय करते हैं—

पूर्वोक्त सब योग हों और सूर्य चर राशि में हो तो विदेश में, स्थिर राशि में हो तो अपने देश में और द्विस्वभाव राशि में हो तो रास्ते में बन्धन युक्त जानना चाहिए ।

नौकास्थजन्मयोग—

पूर्णे शशिनि स्वराशिगे सौम्ये लग्नगते शुभे सुखे ।
लग्ने जलजेऽस्तगेऽपि वा चन्द्रे पोतगता प्रसूयते ॥ ८ ॥

पूर्णबली चन्द्रमा स्वराशि (कर्क) में स्थित हो, बुध लग्न में हो और शुभग्रह (बृहस्पति) सुख (चतुर्थ) स्थान में स्थित हो तो नौका पर जन्म कहना चाहिए ।

अथवा जलचर राशियों (कर्क, मकर के परार्द्ध और मीन) में से कोई राशि लग्न में हो और सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो तो नाव पर जन्म कहना चाहिए ॥८॥

जल में जन्म का ज्ञान—

आप्योदयमाप्यगः शशी सम्पूर्णः समवेक्षतेऽथवा ।
मेषूरणबन्धुलग्नगः स्यात्सूतिः सलिले न संशयः ॥ ९ ॥

जलचर राशियों (कर्क, मकर के परार्द्ध और मीन) में से कोई राशि लग्न में हो और चन्द्रमा भी जलचर राशि का हो तो सलिले (जल के समीप में) जन्म कहना चाहिए ।

अथवा जलचर राशि लग्न में हो और उसको पूर्णबली चन्द्रमा देखता हो तो जल के समीप में जन्म कहना चाहिए ।

अथवा जलचर राशि में बैठा हुआ चन्द्रमा दशम या चतुर्थ या लग्न में हो तो निश्चय कर के जल के समीप में जन्म कहना चाहिए ॥

तथा सरावली में—

सलिलमलग्नं चन्द्रो जलचरराशौ तु वेक्षते पूर्णः ।
प्रसवं सलिले विद्याद्बन्धूदयदशमगश्च यदा ॥ १ ॥

वन्धनागार और गर्त में जन्म का योग—

उदयोडुपयोर्व्ययस्थिते गुप्त्यां पापनिरीक्षिते यमे ।

अलिकर्कियुते विलग्नगे सौरे शीतकरेक्षितेऽवटे ॥ १० ॥

लग्न और चन्द्रमा दोनों एक स्थान में स्थित हों और उन से द्वादश स्थान में स्थित शनैश्चर पापग्रहों से देखा जाता हो तो बन्धनागार (जेलखाना) में जन्म कहना चाहिए।

शनैश्चर वृश्चिक अथवा कर्क राशि के लग्न में हो और चन्द्रमा उस को देखता हो तो अवट (खाईं) में जन्म कहना चाहिए ॥ १० ॥

क्रीड़ा भवनादि में जन्म का योग—

मन्देऽब्जगते विलग्नगे बुधसूर्येन्दुनिरीक्षिते क्रमात्।
क्रीडाभवने सुरालये सोषरभूमिषु च प्रसूयते ॥ ११ ॥

शनैश्चर जलराशि (कर्क, मकर का परार्द्ध और मीन) का हो कर लग्न में बैठा हो और उस को बुध, सूर्य और चन्द्रमा देखते हों तो क्रम से क्रीडा भवन (विहार के गृह), सुरालय (देवघर) और ऊपर भूमि में जन्म कहना चाहिए।

जैसे शनैश्चर जलचर राशि के लग्न में हो और बुध से देखा जाता हो तो क्रीडा भवन में जन्म कहना चाहिए।

यदि शनैश्चर जलचर राशि के लग्न में बैठ कर सूर्य से देखा जाता हो तो देवालय में जन्म कहना चाहिए।

यदि वा शनैश्चर जलचर राशि के लग्न में स्थित हो कर चन्द्रमा से देखा जाता हो तो ऊपर भूमि में जन्म कहना चाहिए ॥ ११ ॥

श्मशानादि में जन्म के योग—

नृलग्नगं प्रेक्ष्य कुजः श्मशाने रम्ये सितेन्दू गुरुरग्निहोत्रे।
रविर्नरेन्द्रामरगोकुलेषु शिल्पालये ज्ञः प्रसवं करोति ॥ १२ ॥

मनुष्य राशियों (मिथुन, कन्या, तुला, धनु के पूर्वार्द्ध और कुम्भ) में से कोई राशि लग्न में हो उस में शनैश्चर बैठा हो और उस पर मंगल की दृष्टि हो तो श्मशान में जन्म कहना चाहिए।

यदि मनुष्य राशि के लग्न में शनैश्चर स्थित हो कर चन्द्रमा और शुक्र से देखा जाता हो तो रम्य (सुन्दर) स्थान में जन्म कहना चाहिए।

यदि वा मनुष्य राशि के लग्न में स्थित शनैश्चर बृहस्पति से देखा जाता हो तो अग्निशाला में जन्म कहना चाहिए।

एवं मनुष्य राशि के लग्न में स्थित शनैश्चर सूर्य से देखा जाता हो तो राजा के गृह अथवा देवस्थान अथवा गोशाला में जन्म कहना चाहिए।

एवञ्च मनुष्य राशि के लग्न में स्थित शनैश्चर बुध से देखा जाता हो तो शिल्पशाला में जन्म कहना चाहिए ॥

तथा सारावली में—

रविजे जलजविलग्ने क्रीड़ोद्याने बुधेक्षिते प्रसवः ।
रविणा देवागारे तथोखरे चैव चन्द्रेण ॥
आरण्यभवनलग्ने गिरिवरदुर्गे तथा नरविलग्ने ।
रुधिरेक्षिते श्मशाने शिल्पिकनिलये च सौम्येन ॥

तथा बादरायण—

सूर्येक्षिते गोनृपदेववासे शुक्रेन्दुजाभ्यां रमणीयदेशे ।
सुरेज्यदृष्टे द्विजवन्हिहोत्रे नरोदये सम्प्रवदन्ति सूतिम् ॥

प्रसव देश का ज्ञान—

राश्यंशसमानगोचरे मार्गे जन्म चरे स्थिरे गृहे ।
स्वर्क्षांशगते स्वमन्दिरे बलयोगात्फलमंशकर्क्षयोः ॥ १३ ॥

जन्म लग्न की राशि और नवांश के समान भूमि में प्राणी का जन्म कहना चाहिए । अगर जन्म लग्न राशि और नवांश राशि चर संज्ञक हो तो रास्ते में, स्थिर संज्ञक हो तो घर में जन्म कहना चाहिए ।

जन्म लग्न में जो राशि हो उसी राशि के नवांश का भी उदय हो तो अपने घर में जन्म कहना चाहिए ।

जहां लग्न की राशि और नवांश राशि भिन्न हो वहां उन दोनों में जो बली हो उसी का फल कहना चाहिए ॥ १३ ॥

माता से त्यक्तसन्तान का ज्ञान—

आरार्कजयोस्त्रिकोणगे चन्द्रेऽस्ते च विसृज्यतेऽम्बया ।
दृष्टेऽमरराजमन्त्रिणा दीर्घायुस्सुखभाक् च स स्मृतः ॥ १४ ॥

मङ्गल और शनैश्चर एक राशि में बैठा हो और उस राशि से पञ्चम, नवम, सप्तम स्थानों में से किसी एक में चन्द्रमा बैठा हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक को माता छोड़ देती है ।

यदि पूर्वोक्त योग में बृहस्पति की दृष्टि चन्द्रमा पर हो तो माता से त्यक्त भी जातक दीर्घायु और सुखी होता है ॥ १४ ॥

माता से त्यक्तसन्तान का मृत्युयोग—

पापेक्षिते तुहिनगावुदये कुजेऽस्ते
त्यक्तो विनश्यति कुजार्कजयोस्तथाये ।
सौम्येऽपि पश्यति तथाविधहस्तमेति
सौम्येतरेषु परहस्तगतोऽप्यनायुः ॥ १५ ॥

चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर पापग्रह (सूर्य और शनैश्चर) से देखा जाता हो और

मङ्गल लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हो तो माता से त्यक्त सन्तान मर जाता है।

तथा चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर पापग्रह (सूर्य) से देखा जाता हो और लग्न से एकादश स्थान में शनैश्चर, मङ्गल ये दोनों हों तो भी माता से त्यक्त सन्तान मर जाता है।

एवं चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर पापग्रह से देखा जाता हो और उस पर शुभ ग्रह (शुक्र, बुध और गुरु) की भी दृष्टि हो तो उन शुभग्रहों में जो बलवान् हो वह जिस वर्ण का स्वामी हो उस वर्ण के हाथ में वह सन्तान जाता है और जीवित रहता है।

अगर चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर पापग्रह से देखा जाता हो तथा उस पर शुक्र और बुध की दृष्टि हो किन्तु बृहस्पति की दृष्टि न हो तो परहस्त में गया हुआ सन्तान मर जाता है॥

तथा सारावली में—

म्रियते पापैर्दृष्टे शशिनि विलग्ने कुजेऽस्तगे त्यक्तः।
लग्नाच्च लाभगतयोर्वसुधासुतमन्दयोरेवम्॥
पश्यति सौम्यो बलवान् यादृग्गृह्णाति तादृशो जातम्।
शुभपापग्रहदृष्टे परैर्गृहीतोऽप्यसौ म्रियते॥
सर्वेष्वेतेषु यदा योगेषु शशिसुरेज्यसन्दृष्टः।
भवति तदा दीर्घायुर्हस्तगतः सर्ववर्णेषु॥ १५॥

प्रसव के घर का ज्ञान—

पितृमातृगृहेषु तद्बलात्तरुशालादिषु नीचगैः शुभैः।
यदि नैकगतैस्तु वीक्षितौ लग्नेन्दू विजने प्रसूयते॥ १६॥

जन्म काल में पित्रादिसंज्ञक ग्रहों में जो ग्रह सब से बलवान् हो उसके घर में जन्म कहना चाहिए।

जैसे पितृसंज्ञक ग्रह सबसे बलवान् हो तो पिता के घर में, मातृसंज्ञक ग्रह सबसे बलवान् हो तो माता के घर में, पितृव्यसंज्ञक ग्रह सबसे बलवान् हो तो पिता के भाई के घर में, और मातृव्यसंज्ञक ग्रह सब से बलवान् हो तो माता के घर में जन्म कहना चाहिए।

यदि सब शुभग्रह अपने अपने नीच स्थान में बैठे हों तो वृक्ष के नीचे, लकड़ी आदि के घर में, नदी के तट पर, कूप के समीप में, बगीचे में या पर्वतादि देश में जन्म कहना चाहिए।

यदि वा सब शुभग्रह नीच स्थान में स्थित हों तथा लग्न, चन्द्रमा ये दोनों एक राशि में बैठे हुए बहुत ग्रहों से नहीं देखे जाते हों तो विजन (निर्जन स्थान वनादिक) में जन्म कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

पितृमातृग्रहवर्गे तत्स्वजनगृहेषु बलयोगात् ।
प्राकारतरुनदीषु च सूतिर्नीचाश्रितैः सौम्यैः ॥
नेक्षेते लग्नेन्दू यद्येकस्था ग्रहास्तदाऽटव्याम् ॥ १६ ॥

दीपसम्भवासम्भव और भूप्रदेश का ज्ञान—

मन्दर्क्षांशे शशिनि हिबुके मन्ददृष्टेऽब्जगे वा
तद्युक्ते वा तमसि शयनं नीचसंस्थैश्च भूमौ ।
यद्वद्राशिर्व्रजति हरिजं गर्भमोक्षस्तु तद्वत्
पापैश्चन्द्रात्स्मरसुखगतैः क्लेशमाहुर्जनन्याः ॥ १७ ॥

जिस के जन्म कुण्डली में शनैश्वर के नवमांश में चन्द्रमा बैठा हो उस का अन्धकार में जन्म कहना चाहिए।

अथवा चन्द्रमा लग्न से चतुर्थ स्थान में बैठा हो तो भी अन्धकार में जन्म कहना चाहिए ।

अथवा चन्द्रमा, शनैश्वर से देखा जाता हो तो भी अन्धकार में जन्म कहना चाहिए ।

अथवा चन्द्रमा जलचर राशि के नवांश में हो तो भी अन्धकार में जन्म कहना चाहिये ।

अथवा चन्द्रमा शनि के साथ बैठा हो तो भी अन्धकार में जन्म कहना चाहिए ।

इसी तरह गर्भाधान काल में भी दीप सम्भवासम्भव का ज्ञान करना चाहिए ।

इन पूर्वोक्त योगों में यदि सूर्य से चन्द्रमा देखा जाता हो तो अन्धकाराभाव कहना चाहिए ।

यतः यवनेश्वरने ऐसा कहा है—

सौरांशकस्थे शशिनि प्रलग्ने जले जलाख्यांशकमाश्रिते वा ।
स्वांशस्थिते केन्द्रगतेऽर्कजे वा जातस्तमिस्रे यदि वार्कदृष्टः ॥

तथा सारावली में—

बलवति सूर्ये दृष्टे बहुप्रदीपान् वदेत् कुपुत्रेण ।
अन्यैरपिगतवीर्यैः सूती ज्योतिस्तृणैर्भवति ॥
सौरांशे जलजांशे चन्द्रेऽर्कयुतेऽथवा हिबुके ।
तद् दृष्टे वा कुर्य्यात्तमसि प्रसवं न सन्देहः ॥

तीन अथवा उस से ज्यादा ग्रह अपने अपने नीच स्थान में हों तो पृथ्वी पर (तृण से अच्छादित भूमिपर) जन्म कहना चाहिए ।

किसी आचार्य का मत है कि चन्द्रमा नीच में अथवा लग्न से चतुर्थ में अथवा लग्न में स्थित हो तो भी पृथ्वी पर शयन कहना चाहिए ।

यथा सारावली में—

नीचस्थे भूशयनं चन्द्रेऽप्यथवा सुखे विलग्ने वा ॥

लग्न में जो राशि हो उस का उदय जिस तरह होता हो उसी तरह बालक का जन्म कहना चाहिए।

जैसे शीर्षोदय राशि लग्न में हो तो उत्तान मुख, पृष्ठोदय राशि लग्न में हो तो नीचे मुख कर के पीठ को दिखाते हुए, मीन राशि लग्न में हो तो पार्श्व को दिखाते हुए जन्म कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

शीर्षोदये विलग्ने मूर्ध्ना प्रसवोऽन्यथोदये चरणैः।
उभयोदये च हस्तैः शुभदृष्टे शोभनोऽन्यथा नेष्टः॥

किसी का मत है कि लग्न में जो नवमांश हो उस का स्वामी लग्न में या वक्री हो तो विपरीत क्रम से गर्भ का मोक्ष कहना चाहिए।

यहां पर मणित्थ का वचन—

लग्नाधिपेंऽशकपतौ लग्नस्थे वक्रिते ग्रहेऽप्यथवा।
विपरीतगतो मोक्षो वाच्यो गर्भस्य संक्लेशः॥

अगर चन्द्रमा से पापग्रह सप्तम अथवा चतुर्थ में स्थित हो तो माता को कष्ट कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

क्लेशो मातुः क्रूरैर्बन्धवस्तगतैः शशाङ्कयुक्तैर्वा ॥ १७ ॥

दीप और गृहद्वार का ज्ञान—

स्नेहः शशाङ्कादुदयाच्च वर्त्तिर्दीपोऽर्कयुक्तर्क्षवशाच्चराद्यः।
द्वारञ्च तद्वास्तुनि केन्द्रसंस्थैर्ज्ञेयं ग्रहैर्वीर्यसमन्वितैर्वा ॥ १८ ॥

चन्द्रमा के वश सूतिका के गृहस्थित दीपक में तैल कहना चाहिए।

जैसे पूर्णवली चन्द्रमा हो तो तैल भरा हुआ क्षीण चन्द्रमा हो तो थोड़ा तैल कहना चाहिए।

पर ऐसा अर्थ करने से अमावावस्था में सब का अन्धकार ही में जन्म सिद्ध होगा परन्तु ऐसा नहीं होता है, अतः इस तरह अर्थ करना अमूल है।

वास्तव में अर्थ यह है कि जन्म समय में जिस राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह अगर राशि के प्रारम्भ स्थान ही में हो तो तैल से पूर्ण दीपक कहना चाहिए।

अगर ठीक राशि के मध्य में स्थित हो तो दीपक में आधा तैल कहना चाहिए।

अगर राशि के अन्त में हो तो दीपक खाली कहना चाहिये, इस के मध्य में अनुपात से तैल जानना चाहिए।

अब दीपक में बत्ती का ज्ञान करते हैं—

लग्न से बत्ती का ज्ञान करना चाहिए।

जैसे लग्न के प्रारम्भ में जन्म हुआ हो तो जन्म काल ही में दीपक में बत्ती दिया गया है, ऐसा कहना चाहिए। लग्न के मध्य में जन्म हो तो आधी बत्ती जली हुई कहनी चाहिए। लग्न के अन्त में जन्म हो तो कुछ शेष मात्र बत्ती समझनी चाहिए, बीच में अनुपात से बत्ती का ज्ञान करना चाहिए।

यथा सारावली में—

यावल्लग्नादुदितं वर्तिर्दग्धा तु तावती भवति ॥

सूर्य जिस राशिमें स्थित हो उसके अनुसार चर, स्थिर इत्यादि दीप जानना चाहिए।

जैसे सूर्य चर राशिमें स्थित हो तो किसीको दीपक इधरउधरकरते हुए कहना चाहिए

स्थिर राशि में स्थित सूर्य हो तो दीप को स्थिर कहना चाहिए।

द्विस्वभाव में स्थित हो तो चलित और स्थिर दोनों दीपक को कहना चाहिए।

किसी का मत है कि सूर्य जिस राशि में स्थित हो वह राशि जिस दिशा का स्वामी हो उसी दिशा में दीपक कहना चाहिए।

किसी का मत है कि दिन और रात दोनों में आठ पहर होते हैं, इनमें भ्रमण के वश जिस पहर में जिस दिशा में सूर्य हो उसी दिशा में दीपक कहना चाहिए।

जैसे दिन के प्रथम पहर में जन्म हो तो पूरब में, द्वितीय पहर में जन्म हो तो अग्निकोण में, तृतीय पहर में जन्म हो तो दक्षिण में, चतुर्थ पहर में जन्म हो तो नैर्ऋत्य में, पञ्चम पहर में जन्म हो तो पश्चिम में, षष्ठ पहर में जन्म हो तो वायव्य कोण में, सप्तम पहर में जन्म हो तो उत्तर में और अष्टम पहर में जन्म हो तो ईशान कोण में दीपक कहना चाहिए।

सारावलीकार का मत है कि गृह को बारह भाग करके पूर्वादि क्रम से मेषादि बारह राशियों को स्थापन करे, जिस राशि में सूर्य बैठा हो उस राशि का स्थान द्वादश विभाग विभक्त घर में जिस भाग में हो वहाँ पर दीप कहना चाहिए।

यहां पर राशियों के न्यास करने का चक्र—

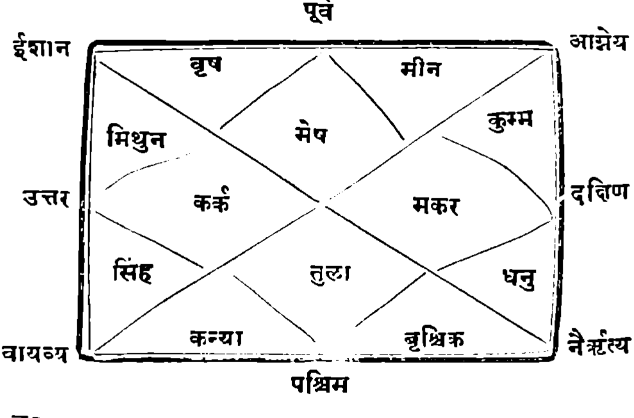

उनका प्रमाण—

द्वादशभागविभक्ते वासगृहेऽवस्थिते सहस्रांशौ ।
दीपश्चरस्थिरादिषु तथैव वाच्यः प्रसवकाले ॥

किसी का मत है कि लग्न राशि का जो वर्ण हो दीपक की बत्ती उसी रङ्ग की कहनी चाहिए।

यथा मणित्थ का वचन—

लग्नस्य योऽत्र वर्णो निर्दिष्टस्तेन वर्तिरादेश्या ॥

केन्द्र में स्थित ग्रह के वश वास्तु में सूतिका के घर का दरवाजा कहना चाहिए।

जैसे रवि केन्द्र में हो तो पूरब तरफ, शुक्र केन्द्र में हो तो आग्नेय कोण में, मङ्गल केन्द्र में हो तो दक्षिण तरफ, राहु केन्द्र में हो तो नैर्ऋत्य कोण में, शनि केन्द्र में हो तो पश्चिम तरफ, चन्द्रमा केन्द्र में हो तो वायव्य कोण में, बुध केन्द्र में हो तो उत्तर तरफ और बृहस्पति केन्द्र में हो तो ईशान कोण में सूतिका के घर का द्वार कहना चाहिए।

अगर केन्द्र में बहुत ग्रह हों तो उनमें जो ग्रह बलवान् हो उसकी दिशा में सूतिका के घर का द्वार कहना चाहिए।

अगर केन्द्र में कोई ग्रह न हो तो लग्न में जो राशि हो उसकी दिशा में द्वार कहना चाहिए।

लघुजातक में कहा भी है—

द्वारं वास्तुनि केन्द्रोपगाद् ग्रहाद्विलग्नर्क्षात् ।

किसी का मत है कि लग्न में जिस राशि का द्वादशांश हो उस राशि की दिशा में सूतिका गृह का द्वार कहना चाहिए।

उनका वचन—

लग्नद्वादशभागराशिदिगभिमुखं सूतिकागृहद्वारम् ।

तथा मणित्थ

लग्ने यो द्विरसांशस्तदभिमुखं सूतिकागृहे द्वारम् ।

सारावलीकार का मत है कि ग्रहों में जो सबसे बलवान् हो उसकी दिशा में सूतिका गृह का द्वार कहना चाहिए।

उनका वचन—

वासगृहोद्यानगतं द्वारं दिक्पालकाद्बलोपेतात् ॥ १८ ॥

सूतिकागृह का स्वरूप—

जीर्णं संस्कृतमर्कजे क्षितिसुते दग्धं नवं शीतगौ
काष्ठाढ्यं न दृढं रवौ शशिसुते तन्नैकशिल्पोद्भवम् ।
रम्यं चित्रयुतं नवं च भृगुजे जीवे दृढं मन्दिरं
चक्रस्थैश्च यथोपदेशरचनां सामन्तपूर्वां वदेत् ॥ १९ ॥

जन्म काल में सब ग्रहों से शनैश्चर बलवान् हो तो मरम्मत किया हुआ पुराना घर सूतिका का कहना चाहिए।

सबसे मङ्गल बलवान् हो तो आग से जला हुआ, चन्द्रमा बलवान् हो तो नवीन सूतिका का घर कहना चाहिए।

अगर सबसे चन्द्रमा बली शुक्ल पक्ष के जन्म-पत्री में हो तो लिपा पुता हुआ नवीन घर कहना चाहिए।

अगर सबसे बलवान् सूर्य हो तो कच्चा और लकड़ी से भरा हुआ घर कहना चाहिए।

सबसे बलवान् बुध हो तो नाना प्रकार के शिल्प से युत, शुक्र हो तो सुन्दर और चित्र युत, बृहस्पति हो तो मजबूत सूतिका का घर कहना चाहिए।

इसी प्रकार सबसे जो ग्रह बलवान् हो उसके सम्मुख, पीछे और पार्श्व में जो ग्रह हों उनके समान सूतिका गृह के आगे, पीछे और दोनों बगल में दूसरे गृहों का स्वरूप कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

भवनग्रहसंयोगे प्रतिवेश्माश्चिन्तनीयाश्च ।
देवालयाम्बुपावककोशविहाराद्यवस्करस्थानम् ॥
निद्रागृहं भास्करशशिकुजगुरुभार्गवार्किबुधभोगात् ॥

यहाँ वराहमिहिराचार्य शालाप्रमाण नहीं कहा अतः वह जानने के लिये लघुजातकोक्त प्रमाण—

गुरुरुच्चो दशमस्थो द्वित्रिचतुर्भूमिकं करोति गृहम् ।
धनुषि सबलस्त्रिशालं द्विशालमन्येषु यमलेषु ॥

अगर बृहस्पति उच्च (कर्क) में स्थित होकर दशम भाव में स्थित हो तो दो, तीन अथवा चार मञ्जिल का मकान कहना चाहिए।

अर्थात् गुरु दशम स्थान में कर्क के पाँच अंश के भीतर हो तो तिमञ्जिला, पाँच अंश से ऊपर हो तो दोमञ्जिला और परमोच्चांश (पाँच अंश) पर हो तो चौमञ्जिला सूतिका का घर कहना चाहिए।

तथा बलवान् होकर बृहस्पति धनु राशि में स्थित हो तो तीन शाला (बरामदा) वाला घर कहना चाहिए।

अन्य द्विस्वभाव राशियों (मिथुन, कन्या, मीन) में बली गुरु बैठा हो तो दो शाला (बरामदा) वाला मकान कहना चाहिए॥ १९ ॥

समस्तवास्तुभूमि में किस तरफ सूतिका का घर है इसका ज्ञान—

मेषकुलीरतुलालिघटैः प्रागुत्तरतो गुरुसौम्यगृहेषु ।
पश्चिमतश्च वृषेण निवासो दक्षिणभागकरौ मृगसिंहौ ॥ २० ॥

मेष, कर्क, तुला, वृश्चिक और कुम्भ इन पाँच राशियों में से कोई राशि अथवा किसी का नवांश जन्म लग्न में हो तो वास्तु में पूरव तरफ सूतिका का निवास स्थान कहना चाहिए।

धनु, मीन, मिथुन और कन्या इन राशियों में से कोई राशि अथवा किसी का नवांश हो तो वास्तु में उत्तर तरफ सूतिका का निवास कहना चाहिए।

एवं वृष राशि अथवा इसका नवांश लग्न में हो तो पश्चिम तरफ सूतिका का निवास स्थान कहना चाहिए।

तथा मकर और सिंह राशि अथवा इन दोनों में से किसी राशि का नवांश लग्न में हो तो वास्तु भूमि में दक्षिण तरफ सूतिका का निवास स्थान कहना चाहिए॥२०॥

सूतिका शयन ज्ञान—

प्राच्यादिगृहे क्रियादयो द्वौ द्वौ कोणगता द्विमूर्त्तयः।
शय्यास्वपि वास्तुवद्वदेत्पादैः षट्त्रिनवान्त्यसंस्थितैः॥ २१॥

सूतिका गृह में मेषादि दो-दो राशियों के क्रम से पूरव आदि दिशाओं में और एक-एक द्विस्वभाव राशि के क्रम से आग्नेयादि कोणों में सूतिका का शयन समझना चाहिए।

जैसे मेष और वृष राशि लग्न में हो तो घर में पूरव तरफ शयन करना चाहिए। मिथुन राशि लग्न में हो तो आग्नेय कोण में, कर्क और सिंह राशि लग्न में हो तो दक्षिण तरफ, कन्या राशि लग्न में हो तो नैर्ऋत्य कोण में, तुला और वृश्चिक राशि लग्न में हो तो पश्चिम तरफ, धनु राशि लग्न में हो तो वायव्य कोण में, मकर और कुम्भ राशि लग्न में हो तो उत्तर तरफ तथा मीन राशि लग्न में हो तो सूतिका गृह के ईशान कोण में सूतिका का शयन कहना चाहिए।

यहां पर स्फुटार्थ के लिये चक्र—

	ईशान	पूर्व	आग्नेय	
	मीन १२	मेष १ वृष २	मिथुन ३	
उत्तर	मकर १० कुम्भ ११		कर्क ४ सिंह ५	दक्षिण
	धनु ९	तुला ७ वृश्चिक ८	कन्या ६	
	वायव्य	पश्चिम	नैर्ऋत्य	

जन्म लग्न से तृतीय, षष्ठ, नवम और द्वादश राशियाँ सूतिका की शय्या के पावें होती हैं।

जैसे तृतीय और षष्ठ राशि दाहिने भाग के तथा नवम और द्वादश बाएँ भाग के पाव होती हैं। शेष राशियाँ शय्या के शिरहाना आदि होती हैं।

जैसे जन्म लग्न और द्वितीय राशि शिरहाने में, चतुर्थ और पञ्चम राशि दक्षिण भाग में, सप्तम और अष्टम राशि पैताने में तथा दशम और एकादश वाम भाग में समझना चाहिए।

तथा जिस भाग में द्विस्वभाव राशि हो वह स्थान झुका हुआ और जिस स्थान में पापग्रह हो वह स्थान इसी अध्याय के १९ वें श्लोक के अनुसार जीर्णादि स्थान समझना चाहिए।

अर्थात् शनि हो तो पुराना, मङ्गल हो तो आग से जला हुआ, सूर्य हो तो कमजोर इत्यादि शय्या का अङ्ग कहना चाहिए॥ २१॥

स्फुटार्थ के लिये चक्र—

पादस्थान | शिरः स्थान | पादस्थान

वाम					दक्षिण
	मीन	मेष	वृष	मिथुन	
	कुम्भ	×	×	कर्क	
वाम	मकर	×	×	सिंह	दक्षिण
	धनु	वृश्चिक	तुला	कन्या	

पादस्थान | पैतान | पादस्थान

उपसूतिका की संख्या का ज्ञान—

चन्द्रलग्नान्तरगतैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिकाः।
वहिरन्तश्च चक्रार्धे दृश्यादृश्येऽन्यथापरे॥ २२॥

लग्न और चन्द्रमा के मध्य में (लग्न से चन्द्रमा पर्यन्त) जितने ग्रह स्थित हों उतनी उपसूतिका (जन्म काल में सूतिका के पास रहने वाली स्त्री) कहना चाहिए।

और उनका स्वरूप, आभूषणादि उन ग्रहों के समान कहना चाहिए।

तथा सारावली में—

शशिलग्नविवरयुक्ता ग्रहतुल्याः सूतिकाश्च विज्ञेयाः।
अनुदितचक्रार्धयुतैरन्तर्वहिरन्यथा वदन्त्येके॥

लक्षणरूपविभूषणयोगास्तासां शुभैर्योगात् ।
क्रूरे विरूपदेहा लक्षणहीनाश्च रौद्रमलिनाश्च ॥

उपसूतिकाओं में भी दृश्य चक्रार्ध (सप्तम भाव के भोग्यांश आरम्भ कर लग्न के भुक्तांश पर्य्यन्त) में जितने ग्रह स्थित हों उतनी स्त्री सूतिका गृह के बाहर कहना चाहिए ।

और अदृश्य चक्रार्ध (लग्न के भोग्यांश प्रारम्भ कर सप्तम भाव के भुक्तांश पर्य्यन्त) में जितने ग्रह हों उतनी स्त्री सूतिका घर के भीतर कहना चाहिए ।

यहाँ पर अन्य आचार्य (जीव शर्मा आदि) इसके उलटा कहते हैं ।

अर्थात् दृश्यचक्रार्ध में जितने ग्रह स्थित हों उतनी स्त्री सूतिका घर में और अदृश्य चक्रार्ध में जितने ग्रह स्थित हों उतनी स्त्री सूतिका घर के बाहर कहना चाहिए ।

यहाँ जीवशर्मा का वचन—

शशिलग्नान्तरसंस्था ग्रहतुल्या सूतिकाश्च वक्तव्याः ।
उदगर्धेऽभ्यन्तरगा बाह्याश्चक्रस्य दृश्येऽर्धे ॥

परन्तु वराहमिहिर को यह अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि लघुजातक में भी कहे हैं—

शशिलग्नान्तरसंस्था ग्रहतुल्याः सूतिकाश्च वक्तव्याः ।
उदगर्धेऽभ्यन्तरगा बाह्याश्चक्रस्य दृश्येऽर्धे ॥

यहाँ पर 'स्वतुङ्गवक्रोपगतैस्त्रिसंगुणम्' इत्यादि आयुर्दाय आनयन की तरह अपने उच्च स्थान गत और वक्री जो ग्रह हों उनकी तिगुनी संख्या के समान उपसूतिका कहनी चाहिए ।

और जो ग्रह अपने नवांश, अपने स्थान तथा अपने द्रेष्काण में स्थित हों उनकी द्विगुणी संख्या के समान उपसूतिका कहनी चाहिए ॥ २२ ॥

ग्रन्थान्तर में उपसूतिका का ज्ञान—

धनान्त्यबन्धुस्थितखेचरेन्द्रैर्वाच्यास्तदानीमुपसूतिकाश्च ।
तत्स्थानपैः खेचरसंयुतैश्च के चिद्वदन्त्यत्र सहस्थितैश्च ॥

जन्म लग्न से द्वितीय, द्वादश और चतुर्थ स्थान में जितने ग्रह हों उतनी उपसूतिका कहनी चाहिए ।

किसी का मत है कि पूर्वोक्त स्थानों के स्वामियों के साथ जितने ग्रह हों उतनी उपसूतिका कहनी चाहिए ।

कोई आचार्य इस तरह कहते हैं—

मीने मेषे तथाप्येका चतस्रो वृषकुम्भयोः ।
अन्यलग्ने च तिस्रः स्याद्वाणाश्च धनकर्कयोः ॥

किसी आचार्य का मत है कि मीन अथवा मेष जन्म लग्न हो तो क उपसूतिका होती है ।

वृष अथवा कुम्भ लग्न हो तो चार उपसूतिकाएं होती हैं।
धनु अथवा कर्क लग्न हो तो पांच उपसूतिकाएं होती हैं।
और शेष लग्न में तीन उपसूतिकाएं होती हैं।

किसी आचार्य का मत—

वाजान्त्ययोर्मृगतुलालिहरिज्ञभेषु ।
गोकुम्भयोरितरयोश्च दृगादिसंख्याः ॥

मेष और मीन जन्म लग्न हो तो दो, मकर, तुला, वृश्चिक, सिंह, मिथुन और कन्या लग्न में तीन, वृष और कुम्भ में चार तथा कर्क और धनु लग्न में चार उपसूतिकाएं होती हैं।

उपसूतिकाओं की जाति का ज्ञान—

तत्र स्थिते भानुसुते तु शूद्रा रवौ स्थिते क्षत्रियभामिनी सा।
राहुध्वजाभ्यामथ जातिहीना त्वन्यैर्ग्रहैर्जातिसमा प्रदिष्टा॥
जीवेन्दुपुत्रासुरदेवपूज्यैस्तत्र स्थितैर्ब्रह्मकुलाभिरामा ।

अगर पूर्वोक्त स्थान में शनैश्चर बैठा हो तो शूद्र जाति की स्त्री सूतिका घर में कहना चाहिए।

रवि स्थित हो तो क्षत्राणी कहना चाहिए।

राहु और केतु हों तो हीन जाति की स्त्री, बृहस्पति, बुध और शुक्र हों तो ब्राह्मणी तथा शेष ग्रह हों तो अपनी जाति की स्त्री कहना चाहिए।

उपसूतिकाओं के स्वरूपादि का ज्ञान—

क्रूरैर्विरूपदेहा लक्षणहीनाश्च रौद्रमलिनाश्च।
पापग्रहैस्तु विधवा सधवा सौम्यखेचरा ॥
बुधशुक्रौ कुमारी स्याद् गुरुसूर्यौ प्रसूतिका।
अन्यग्रहेषु वृद्धा स्याद् बाला पूर्णश्च शीतगुः॥

यदि क्रूरग्रह हों तो उपसूतिका कुरूपा, लक्षण से हीना, मैली कुचैली होती है और शुभग्रह हों तो शुभ लक्षण से युक्त उपसूतिका होती है।

अगर पापग्रह हों तो विधवा, शुभग्रह हों तो सधवा उपसूतिका होती है।

तथा बुध और शुक्र हो तो कुमारी, बृहस्पति और सूर्य हो तो बच्चे वाली, पूर्ण चन्द्र हो तो बाला और शेष ग्रह हों तो वृद्धा उपसूतिका होती है ॥ २२ ॥

बालक के स्वरूपादिज्ञान—

लग्ननवांशपतुल्यतनुः स्याद्वीर्ययुतग्रहतुल्यतनुर्वा।
चन्द्रसमेतनवांशपवर्णः कादिविलग्नविभक्तभगात्रः ॥ २३ ॥

जन्म लग्न में जिस राशि का नवांश हो अगर वह राशि बलवान् हो तो उसका जो स्वामी ग्रह हो उसके समान (मधुपिङ्गलदृक् इत्यादि के समान) जातक का शरीर कहना चाहिए।

अगर वह राशि बलवान् न हो तो सब ग्रहों में जो ग्रह बलवान् हो उसके समान स्वरूप कहना चाहिए।

अथवा चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में स्थित हो उस नवांश राशि का जो स्वामी हो उसके समान स्वरूप कहना चाहिए।

ह्रस्व-दीर्घादि स्वरूप का ज्ञान कहते हैं—जिस तरह मेषादि राशि क्रम से काल पुरुष का अङ्ग विभाग किया गया है उसी तरह लग्नादि क्रम से काल पुरुष का अङ्ग विभाग करना चाहिए।

जैसे शिर में लग्न, मुख में द्वितीय भाव, स्तनमध्य में तृतीय भाव, हृदय में चतुर्थ भाव, जठर में पञ्चम भाव, कटि में षष्ठ भाव, नाभि से नीचे में सप्तम भाव, लिङ्ग में अष्टम भाव, ऊरु में नवम भाव, जङ्घा में दशम भाव, जानु में एकादश भाव, पैर में द्वादश भाव की कल्पना करे।

प्रथमाध्याय १९ वें श्लोक में (पूर्वार्द्ध विषयादयः कृतगुणाः इत्यादि में) राशियों का मान कहा गया है, उसके अनुसार जिस अङ्ग में अधिक मान वाली राशि और अधिक मान वाली राशि का स्वामी स्थित हो उस अङ्ग को दीर्घ कहना चाहिए।

यहां पर सत्याचार्य—

दीर्घाधिपतिर्दीर्घे ग्रहः स्थितोऽवयवदीर्घकृद्भवति।

इससे सिद्ध होता है कि जिस अङ्ग में अल्पमान वाली राशि और अल्पमान वाली राशि का स्वामी स्थित हो उस अङ्ग को ह्रस्व कहना चाहिए।

जिस अङ्ग में दीर्घमान वाली राशि का स्वामी अल्प मान वाली राशि में स्थित हो उस अङ्ग को मध्य प्रमाण (न दीर्घ न ह्रस्व) कहना चाहिए।

जिस अङ्ग में अल्पमान वाली राशि का स्वामी दीर्घमान वाली राशि में हो उस अङ्ग को भी मध्यम प्रमाण कहना चाहिए।

जिस अङ्ग में बहुत ग्रह स्थित हों तो उनमें सबसे बली ग्रहके वश दीर्घादि अङ्ग कहना चाहिए।

जिस अङ्ग में कोई ग्रह न हो उस अङ्ग का प्रमाण उस राशि के वश कहना चाहिए।

द्रेष्काण के वश अङ्ग विभाग—

कं दृक्श्रोत्रनसाकपोलहनवो वक्त्रञ्च होरादय-
स्ते कण्ठांसकबाहुपार्श्वहृदयक्रोडानि नाभिस्ततः।

बस्तिः शिश्नगुदे ततश्च वृषणावूरू ततो जानुनी
जङ्घाङ्घ्रीत्युभयत्र वाममुदितैर्द्रेष्काणभागैस्त्रिधा ॥ २४ ॥

प्रथम, द्वितीय और तृतीय इन तीनों द्रेष्काणों के वश शरीर के तीन भाग करे। जैसे लग्न में प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो शिर से लेकर मुख पर्य्यन्त सात भाग बारह अङ्गों का प्रथम अङ्ग विभाग करे।

द्वितीय द्रेष्काण का उदय हो तो कण्ठ से लेकर नाभि पर्य्यन्त सात भाग बारह अङ्गों का द्वितीय अङ्ग विभाग करे।

लग्न में तृतीय द्रेष्काण का उदय हो तो बस्ति से लेकर पाव पर्य्यन्त सात भाग बारह अङ्गों का तृतीय अङ्ग विभाग करे।

इसके बाद पूर्वोक्त तीनों द्रेष्काणों में जिस द्रेष्काण का उदय हो उसके अङ्ग क्रम से लग्नादि का द्वादश भावों में न्यास करे।

तथा अदृश्य चक्रार्द्ध (लग्न के भोग्यांश से लेकर सप्तम के भुक्तांश पर्य्यन्त)से दक्षिण और अदृश्य चक्रार्द्ध (सप्तम के भोग्यांश से लेकर लग्न के भुक्तांश पर्य्यन्त) से वाम भाग की कल्पना करे।

जैसे लग्न में प्रथम द्रेष्काण का सम्भव हो तो लग्न में शिर, द्वितीय भाव में दक्षिण नेत्र, द्वादश भाव में वाम नेत्र, तृतीय भाव में दक्षिण कान, एकादश भाव में वाम कान, चतुर्थ भाव में दक्षिण नासिका, दशम भाव में वाम नासिका, पञ्चम भाव में दक्षिण कपोल (गाल), नवम भाव में वाम कपोल, षष्ठ भाव में दक्षिण हनु (दाढी), अष्टम भाव में वाम हनु और सप्तम भाव में मुख का न्यास करे।

इसी तरह लग्न में द्वितीय द्रेष्काण का उदय होतो लग्न में कण्ठ, द्वितीय भाव में दक्षिण स्कन्ध, द्वादश भाव में वाम स्कन्ध, तृतीय भाव में दक्षिण भुजा, एकादश भाव में वाम भुजा, चतुर्थ भाव में दक्षिण पार्श्व, दशम भाव में वाम पार्श्व, पञ्चम भाव में हृदय का दक्षिण भाग, नवम भाव में हृदय का वाम भाग, षष्ठ भाव में पेट का दक्षिण भाग, अष्टम भाव में पेट का वाम भाग और सप्तम भाव में नाभि का न्यास करे।

एवं लग्न के तृतीय द्रेष्काण का उदय हो तो लग्न में वस्ति (नाभि और लिङ्ग का मध्य भाग), द्वितीय भाव में लिङ्ग और गुदा का दक्षिण भाग, द्वादश भाव में लिङ्ग और गुदा का वाम भाग, तृतीय भाव में अण्ड कोष का दक्षिण भाग, एकादश भाव में वाम भाग, चतुर्थ भाव में दक्षिण ऊरु, दशम भाव में वाम ऊरु, पञ्चम भाव में दक्षिण जानु, नवम भाव में वाम जानु, षष्ठ भाव में दक्षिण जङ्घा, अष्टम भाव में वाम जङ्घा, सप्तम भाव में दोनों पैरों की कल्पना करे ॥ २४ ॥

द्रेष्काण के अङ्ग विभाग चक्र—

राशि	लग्न राशि	द्वितीय राशि	तृतीय राशि	चतुर्थ राशि	पञ्चम राशि	षष्ठ राशि	सप्तम राशि
प्रथम द्रेष्काण द०	शिर	नेत्र	कान	नासिका	गाल	दाढी	मुख
द्वितीय द्रेष्काण द०	कण्ठ	स्कन्ध	भुज	पार्श्व	हृदय	पेट	नाभि
तृतीय द्रेष्काण द०	वस्ति	लिङ्ग, गुदा	अण्ड कोश	ऊरु	जानु	जङ्घा	पैर
राशि	लग्न राशि	द्वादश राशि	एकाद. राशि	दशमराशि	नवम राशि	अष्टम राशि	सप्तम राशि
प्रथम द्रेष्काण वा०	शिर	नेत्र	कान	नासिका	गाल	दाढी	मुख
द्वितीय द्रेष्काण वा०	कण्ठ	स्कन्ध	भुज	पार्श्व	हृदय	पेट	नाभि
तृतीय द्रेष्काण वा०	वस्ति	लिङ्ग, गदा	अण्ड कोष	ऊरु	जानु	जङ्घा	पैर

जातक के अङ्ग में चिह्न का ज्ञान—

तस्मिन्पापयुते व्रणं शुभयुते दृष्टे च लक्ष्मादिशे-
त्स्वर्क्षांशे स्थिरसंयुतेषु सहजः स्यादन्यथाऽऽगन्तुकः ।
मन्देऽश्मानिलजोऽग्निशस्त्रविषजो भौमे बुधे भूभवः
सूर्ये काष्ठचतुष्पदेन हिमगौ श्रृङ्ग्यब्जजोऽन्यैः शुभम् ॥ २५ ॥

पूर्वोक्त रीत्या प्रथम द्रेष्काण में शिर आदि, द्वितीय द्रेष्काण में कण्ठ आदि और तृतीय द्रेष्काण में वस्ति आदि अङ्ग विभाग करके जिस राशि के द्रेष्काण में पापग्रह स्थित हो उस राशि के अङ्ग विभाग से जो अङ्ग हो उसमें घाव इत्यादि कहना चाहिए।

जिस राशि के द्रेष्काण शुभग्रह से युत अथवा दृष्ट हो उस राशि के अङ्ग में तिल, मश इत्यादि का चिह्न कहना चाहिए।

अगर पूर्वोक्त ग्रह अपनी राशि अथवा अपनी राशि के नवांश अथवा स्थिर राशि के

नवांश में स्थित हो तो जन्म से ही घाव, मशा इत्यादि का चिह्न कहना चाहिए।

उक्त स्थान से अन्य स्थान में ग्रह स्थित हो तो आगन्तुक (जन्म के बाद) घाव, मशा इत्यादि का चिह्न कहना चाहिए।

किसी आचार्य का मत है—

कि आगन्तुक चिह्न ग्रह अपने दशा काल में कुछ निमित्त लेकर करते हैं। अब ग्रह के वश निमित्त को कहते हैं—

अगर व्रणकर्ता शनैश्चर हो तो पत्थर से अथवा वातव्याधि से, व्रणकर्ता मङ्गल हो तो अग्नि से अथवा शस्त्र से अथवा विष से घाव आदि कहना चाहिए।

अगर बुध व्रणकर्ता हो तो पृथ्वी पर गिरने से घाव इत्यादि कहना चाहिए।

अगर व्रणकर्ता सूर्य हो तो लकड़ी के लगने से अथवा गौ, बैल, भैंस इत्यादि चार पाँव वाले जीव से घाव आदि कहना चाहिए।

व्रणकर्ता चन्द्रमा हो तो सींग वाले जीवों से अथवा जल-जन्तुओं से घाव आदि कहना चाहिए।

अन्य ग्रह (शुभग्रह) जिस अङ्ग में स्थित रहते हैं उस अङ्ग में शुभ लक्षण वाला चिह्न होता है ॥ २५ ॥

व्रण का ज्ञान—

समनुपतिता यस्मिन्भागे त्रयः सबुधा ग्रहा-
भवति नियमात्तस्यावाप्तिः शुभेष्वशुभेषु वा
व्रणकृदशुभः षष्ठे देहे तनोर्भसमाश्रिते
तिलकमशकृद्दृष्टः सौम्यैर्युतश्च सलक्ष्मवान् ॥ २६ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके सूतिकाऽध्यायः पञ्चमः ॥ ५ ॥

बुध से संयुक्त तीन शुभग्रह अथवा पापग्रह जिस राशि में स्थित हों उस राशि के अङ्ग में निश्चय करके घाव इत्यादि का चिह्न कहना चाहिए।

तथा इन चार ग्रहों में जो सबसे बलवान् हो उसी की दशा में व्रण कहना चाहिए। अगर पापग्रह लग्न से षष्ठ स्थान में स्थित हो तो वह षष्ठस्थ राशि अङ्ग विभाग में जिस अङ्ग में हो उसी अङ्ग में घाव करता है।

एवं पापग्रह लग्न से षष्ठ स्थान में स्थित हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो तिल, मशा आदि करता है।

यदि वा शुभग्रह से युत पापग्रह लग्न से षष्ठ स्थान में स्थित हो तो लक्ष्मवान् (राश्युपलक्षित अङ्ग में चिह्न विशिष्ट वाला) होता है, तथा उस अङ्ग में रोमों के समूह होते हैं ॥ २६ ॥

इति बृहज्जातकके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां सूतिकाध्यायः पञ्चमः ।

अथारिष्टाध्यायः षष्ठः

अरिष्ट योगद्वय—

सन्ध्यायां हिमदीधितिहोरा पापैर्भान्तगतैर्निधनाय ।
प्रत्येकं शशिपापसमेतैः केन्द्रैर्वा स विनाशमुपैति ॥ १ ॥

जिस जातक का सन्ध्या काल में जन्म हो, लग्न में चन्द्रमा की होरा हो और पापग्रह अन्त्य नवांश में बैठे हों तो उस जातक का मरण होता है।

अथवा प्रत्येक केन्द्र में चन्द्रमा और तीन पापग्रह हों अर्थात् चारों केन्द्र स्थानों में से किसी एक स्थान में चन्द्रमा, दूसरे में सूर्य, तीसरे में मङ्गल और चौथे में शनि हो तो उस जातक का मरण होता है ॥ १ ॥

संहिता में सन्ध्यालक्षण—

अर्धास्तमयात्सन्ध्या व्यक्तीभूता न तारका यावत् ।
तेजः-परिहानिमुखाद्भानोरर्धोदयो यावत् ॥

प्रत्येक दिन में सूर्य के अर्द्धास्त हो जाने के समय जब तक आकाश में नक्षत्र भली-भाँति न देख पड़े तब तक सायं सध्या काल है ।

तथा सूर्य के अर्द्धोदित हो जाने के बाद नक्षत्रों के दर्शन तक प्रातः संध्या काल है।

अन्य अरिष्ट योग—

चक्रस्य पूर्वापरभागगेषु क्रूरेषु सौम्येषु च कीटलग्ने ।
क्षिप्रं विनाशं समुपैति जातः पापैर्विलग्नास्तमयान्वितैश्च ॥ २ ॥

जिसके जन्म समय चक्र के पूर्वार्ध में पापग्रह और पश्चिमार्ध में शुभग्रह हों तथा कर्क अथवा वृश्चिक लग्न हो तो उस जातक की मृत्यु होती है ।

जिस राशि में जितने लग्न के भुक्तांश हों लग्न राशि से चतुर्थ राशि में उतने अंश छोड़ कर शेप अंश से लेकर जन्म लग्न राशि से दशम राशि में लग्न के भुक्तांश तुल्य अंश तक चक्र का परार्द्ध और शेप पूर्वार्ध होता है ।

कीट शब्द से कर्क और वृश्चिक दोनों का ग्रहण करना चाहिए ।

तथा बादरायण—

पूर्वापरभागगतैः शुभाशुभैरलिनि कर्कटे लग्ने ।
जातस्य शिशोर्मरणं सद्यः कथयन्ति यवनेन्द्राः ॥

पापग्रह लग्न और सप्तम स्थान के दोनों तरफ हों, जैसे लग्न के दोनों तरफ द्वादश और द्वितीय स्थान, सप्तम के दोनों तरफ षष्ठ और अष्टम स्थान इन चारों स्थानों में पापग्रह बैठे हों तो वह जातक शीघ्र मर जाता है ।

किसी के मत से यहाँ दो योग होते हैं ।

जैसे लग्न के दोनों तरफ (द्वादश और द्वितीय) में पापग्रह हों तो वह जातक मर जाता है, यह एक योग।

और सप्तम के दोनों तरफ (षष्ठ और अष्टम) में पापग्रह हों तो जातक शीघ्र मर जाता है यह दूसरा योग।

कोई आचार्य 'अभितः' का अर्थ सम्मुख करते हैं।

जैसे लग्न के सम्मुख (इससे द्वितीय राशि) और सप्तम के सम्मुख इससे द्वितीय राशि (लग्न से अष्टम राशि)।

इन दोनों स्थानों में पापग्रह हों तो जातक शीघ्र मर जाता है।

किसी का मत है कि जो स्थान लग्न और सप्तम की अभिलाषा करते हों अर्थात् द्वादश और षष्ठ, क्योंकि जो ग्रह द्वादश में जाता है वह लग्न की अभिलाषा करता है और षष्ठ में जाता है वह सप्तम की अभिलाषा करता है अतः द्वादश और षष्ठ इन दोनों स्थानों में पापग्रह हों तो जातक शीघ्र मर जाता है।

यहाँ पहला अर्थ ही यथार्थ है क्योंकि—

गार्गि का वचन ऐसा है—

रिपुव्ययगतैः पापैर्यदि वा धनमृत्युगैः।
लग्ने वा पापमध्यस्थे द्यूने वा मृत्युमाप्नुयात्॥ २॥

अरिष्टयोगान्तर—

पापावुदयास्तगतौ क्रूरेण युतश्च शशी।
दृष्टश्च शुभैर्न यदा मृत्युश्च भवेदचिरात्॥ ३॥

लग्न और सप्तम इन दोनों स्थानों में पापग्रह बैठे हों, पापग्रह से युत होकर चन्द्रमा किसी स्थान में हो और उस पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो शीघ्र जातक की मृत्यु होती है॥ ३॥

अरिष्टयोगान्तक—

क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः।
केन्द्रेषु शुभाश्च न चेत्क्षिप्रं निधनं प्रवदेत्॥ ४॥

जन्म लग्न से द्वादश में क्षीण चन्द्रमा हो, पापग्रह लग्न और अष्टम इन दोनों स्थानों में हों और केन्द्र (१, ४, ७, १०) में कोई शुभग्रह न हो तो जातक का शीघ्र मरण हो जाता है।

भगवान् गार्गि—

क्षीणे चन्द्रे व्ययगते पापैरष्टमलग्नगैः।
केन्द्रयाह्यगतैः सौम्यैर्जातस्य निधनं भवेत्॥ ४॥

अरिष्टयोगान्तर—

क्रूरसंयुतः शशी स्मरान्त्यमृत्युलग्नगः ।
कण्टकाद्बहिः शुभैरवीक्षितश्च मृत्युदः ॥ ५ ॥

पापग्रह से युत चन्द्रमा सप्तम, द्वादश, अष्टम और लग्न इन स्थानों में से किसी स्थान में हो और उस पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तथा केन्द्र में कोई शुभ ग्रह न हो तो जातक का मरण होता है ॥

तथा सारावली में—

व्ययाष्टसप्तोदयगे शशाङ्के पापैः समेते शुभदृष्टिहीने ।
केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु जातस्य सद्यः कुरुते प्रणाशम् ॥ ५ ॥

अरिष्टयोगान्तर—

शशिन्यरिविनाशगे निधनमाशु पापेक्षिते
शुभैरथ समाष्टकं दलमतश्च मिश्रैः स्थितिः ।
असद्भिरवलोकिते वलिभिरत्र मासं शुभे
कलत्रसहिते च पापविजिते विलग्नाधिपे ॥ ६ ॥

चन्द्रमा लग्न से षष्ठ अथवा अष्टम स्थान में स्थित हो, उस पर पापग्रह की दृष्टि हो और किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो जातक का शीघ्र मरण होता है।

यदि लग्न से षष्ठ अथवा अष्टम स्थान स्थित चन्द्रमा पर केवल शुभग्रह की दृष्टि हो तो जातक आठ वर्ष जीता है।

यदि वा षष्ठ और अष्टम स्थान स्थित चन्द्रमा पर पापग्रह और शुभग्रह दोनों की दृष्टि हो तो चार वर्ष जीता है।

इससे यह सिद्ध होता है कि लग्न से षष्ठ अथवा अष्टम स्थान स्थित चन्द्रमा पर शुभग्रह और पापग्रह दोनों में से किसी की दृष्टि न हो तो मरण नहीं होता है।

तथा लग्न से षष्ठ या अष्टम में स्थित चन्द्रमा शुभग्रह के गृह में या शुभग्रह से युत हो तो जातक का मरण नहीं होता है।

यथा यवनेश्वर—

लग्नाच्छशी नैधनगोऽशुभर्क्षे षष्ठोऽथवा पापनिरीक्षितश्च ।
सर्वायुराहन्ति शुभैर्विमिश्रस्तदीक्षितोऽब्दाष्टकमर्धकं वा ॥

जिसका कृष्ण पक्ष के दिन में तथा शुक्लपक्ष की रात्रि में जन्म हो उसके जन्म लग्न से षष्ठ या अष्टम स्थित चन्द्रमा पर शुभग्रह और पापग्रह की भी दृष्टि हो तथापि नहीं मरता है।

यथा माण्डव्य—

पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां कृष्णेऽथवाऽहनि शुभाशुभदृश्यमानः।
तं चन्द्रमा रिपुविनाशगतोऽपि यत्नादापत्सु रक्षति पितेव शिशुं न हन्ति॥

तथा षष्ठ अथवा अष्टम स्थान स्थित शुभग्रह पर बलवान् पापग्रह की दृष्टि हो तो एक मास पर्यन्त जीता है।

यदि षष्ठ अथवा अष्टम स्थित शुभग्रह पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो नहीं मरता है।

यथा लघुजातक में—

शशिवत्सौम्याः पापैर्वक्रिभिरवलोकिता न शुभदृष्टाः।
मासेन मरणदाः स्युः पापयुतो लग्नपश्चास्ते॥

लग्न के स्वामी लग्न से सप्तम स्थान में हो और युद्ध में पापग्रह से हार गया हो तो भी जातक एक मास पर्य्यन्त जीता है॥ ६॥

अरिष्टयोगान्तर—

लग्ने क्षीणे शशिनि निधनं रन्ध्रकेन्द्रेषु पापैः
पापान्तःस्थे निधनहिबुकद्यूनयुक्ते च चन्द्रे।
एवं लग्ने भवति मदनच्छिद्रसंस्थैश्च पापै-
र्मात्रा सार्द्धं यदि न च शुभैर्वीक्षितः शक्तिभृद्भिः॥ ७॥

लग्न में क्षीण चन्द्रमा, अष्टम और केन्द्र में पापग्रह स्थित हो तो जातक का मरण होता है।

अथवा चन्द्रमा पापग्रहों के मध्य में स्थित होकर अष्टम, चतुर्थ, सप्तम इन स्थानों में से किसी एक स्थान में बैठा हो तो जातक का मरण होता है।

अथवा पापग्रहों के मध्य में स्थित होकर चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तो और पापग्रह सप्तम और अष्टम स्थान में स्थित हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक माता के साथ मर जाता है।

अगर इस योग में किसी बली शुभग्रह की दृष्टि चन्द्रमा पर हो तो केवल उत्पन्न जातक मर जाता है॥ ७॥

अरिष्टयोगान्तर—

राश्यन्तगे सद्भिरवीक्ष्यमाणे चन्द्रे त्रिकोणापगतैश्च पापैः।
प्राणैः प्रयात्याशु शिशुर्वियोगमस्ते च पापैस्तुहिनांशुलग्ने॥ ८॥

चन्द्रमा जिस किसी राशि के अन्त्य नवांश में स्थित हो उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो और पापग्रह पञ्चम और नवम स्थान में हों तो उस जातक का शीघ्र मरण होता है।

अथवा लग्न में चन्द्रमा और सप्तम में पापग्रह स्थित हो तो उस जातक का शीघ्र मरण होता है।

यहाँ पर 'तुहिनांशुलग्ने' इसका अर्थ किसी ने 'कर्कलग्ने' ऐसा लिखा है सो ठीक नहीं है।

क्योंकि लघुजातक में भी कहा है—

उदयगतो वा चन्द्रः सप्तमराशिस्थितैः पापैः ॥ ८ ॥

अरिष्टयोगान्तर—

अशुभसहिते ग्रस्ते चन्द्रे कुजे निधनाश्रिते
जननिसुतयोर्मृत्युर्लग्ने रवौ तु सशस्त्रजः।
उदयति रवौ शीतांशौ वा त्रिकोणविनाशगै-
र्निधनमशुभैर्वीर्योपेतैः शुभैर्न युतेक्षिते ॥ ९ ॥

शनैश्चर और राहु इन दोनों से युक्त होकर चन्द्रमा लग्न में बैठा हो और लग्न से अष्टम में मङ्गल हो तो माता के साथ जातक की मृत्यु होती है।

अथवा शनैश्चर, बुध और राहु इन तीनों से युक्त सूर्य लग्न में बैठा हो तथा मङ्गल से अष्टम स्थान में बैठा हो तो किसी शस्त्र से माता के साथ जातक की मृत्यु होती है।

अथवा सूर्य किम्वा चन्द्रमा लग्न में बैठा हो, पापग्रह लग्न से पञ्चम, नवम और अष्टम स्थान में स्थित हों तथा बलवान् शुभग्रह की दृष्टि सूर्य या चन्द्रमा इन दोनों में से किसी पर न हो तो जातक की मृत्यु होती है ॥ ९ ॥

अरिष्टयोगान्तर—

असितरविशशाङ्कभूमिजैर्व्ययनवमोदयनैधनाश्रितैः।
भवति मरणमाशु देहिनां यदि बलिना गुरुणा न वीक्षिताः ॥१०॥

द्वादश में शनैश्चर, नवम में रवि, लग्न में चन्द्रमा और अष्टम में मङ्गल स्थित हो तथा बलवान् बृहस्पति से दृष्ट न हो तो जातक की मृत्यु होती है ॥ १० ॥

अरिष्टयोगान्तर—

सुतमदननवान्त्यलग्नरन्ध्रेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः।
भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यैर्यदि बलिभिर्न युतोऽवलोकितो वा ॥११॥

पापग्रह से युत चन्द्रमा पञ्चम, सप्तम, नवम, द्वादश, प्रथम, अष्टम इन भावों में से किसी एक भाव में स्थित हो और बलवान् शुक्र, बुध और बृहस्पति से युत या दृष्ट न हो तो मरण करने वाला होता है ॥ ११ ॥

अनुक्त मृत्यु समय का निरूपण—

योगे स्थानङ्गतवति बलिनश्चन्द्रे स्वं वा तनुगृहमथवा ।
पापैर्दृष्टे बलवति मरणं वर्षस्यान्ते किल मुनिगदितम् ॥ १२ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातकेऽरिष्टाध्यायः ॥ ६ ॥

पूर्वोक्त जिन अरिष्ट योगों में मरण समय का निरूपण नहीं किया गया है उन सब योगों में मरण समय का निश्चय करते हैं।

योग कर्ता ग्रहों में जो सबसे बली हो वह जन्म समय में जिस राशि में स्थित हो उस राशि में गमनक्रम से जब चन्द्रमा आता है तब मरण कहना चाहिए।

अथवा जन्म समय में जिस राशि में चन्द्रमा हो पुनः गतिक्रम से उसी राशि में जब आता है तब मरण कहना चाहिए।

अथवा जन्मलग्न राशि में गतिक्रम से जब चन्द्रमा आता है तब मरण कहना चाहिए।

अथवा पूर्वोक्त योगस्थानों में गतिक्रम से आया हुआ चन्द्रमा जब बलवान् होता हो और पापग्रहों से देखा जाता हो तब मरण कहना चाहिए ॥ १२ ॥

अन्यजातकोक्त अरिष्ट योग—

लग्नसप्तमगौ पापौ चन्द्रोऽपि क्रूरसंयुतः ।
यदा त्वनीक्षितः सौम्यैः शीघ्रं मृत्युं विनिर्दिशेत् ॥

लग्न और सप्तम स्थान में पापग्रह हो, पापग्रह से युत चन्द्रमा भी हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो उत्पन्न जातक का शीघ्र मरण कहना चाहिए।

रविचन्द्रभौमगुरुभिः कुजभृगुसूर्येन्दुभिस्तथैकस्थैः ।
रविशनिभौमशशाङ्कैर्मरणं खलु पञ्चभिर्वर्षैः ॥

सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल, बृहस्पति अथवा मङ्गल, शुक्र, सूर्य, चन्द्रमा अथवा सूर्य, शनि, मङ्गल, चन्द्रमा किसी एक स्थान में हो तो पाँच वर्ष में मृत्यु होती है।

तृतीयषष्ठस्थितखेचरेन्द्रैः पापग्रहैरन्त्यगतैश्च सौम्यैः ।
शशी मूर्ति वा कुमुदाख्यबन्धौ चतुर्थरन्ध्रस्थितपापखेटे ॥

तृतीय और षष्ठ स्थान में पापग्रह स्थित हों, द्वादश स्थान में शुभग्रह हों तो जातक की मृत्यु होती है।

राहुः सप्तमभवने शशिसूर्यनिरीक्षितो न शुभदृष्टः ।
दशभिर्द्वाभ्यां सहितैरब्दैर्जातं विनाशयति ॥

लग्न से सप्तम स्थान में राहु हो उस पर सूर्य और चन्द्रमा की दृष्टि हो और किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो बारहवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।

लग्नेऽर्कचन्द्रौ व्ययगास्तु पापाः शशीमर्ति शोभनदृश्यभावे ।
दिनेशचन्द्रौ व्ययगौ तदीशे लग्नस्थिते देहविनाशमाहुः ॥

लग्न में सूर्य और चन्द्रमा हों, द्वादश स्थान में पापग्रह हों उन सब पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो जातक की मृत्यु होती है।

अथवा सूर्य और चन्द्रमा लग्न में हों और लग्नेश लग्न में स्थित हो तो जातक का शरीरविनाश कहना चाहिए।

जीर्णे शशिनि लग्नस्थे पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः।
यो जातो मृत्युमाप्नोति सोऽचिरात्तु न संशयः॥

लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो, पापग्रह केन्द्र (१,४,७,१०), अष्टम स्थानों में स्थित हों ऐसे योग में जो जातक उत्पन्न हो उसकी मृत्यु होती है।

पापयोर्मध्यगश्चन्द्रो लग्नाष्टद्व्यन्तसप्तगः।
अचिरान्मृत्युमाप्नोति यो जातःस शिशुस्तदा॥

दो पापग्रहों के मध्य में हो कर चन्द्रमा लग्न, द्वितीय, द्वादश, सप्तम इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है।

पापद्वयमध्यगते चन्द्रे लग्नसमाश्रिते।
सप्ताष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः॥

दो पापग्रहों के मध्यमें स्थित हो कर चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तथा सप्तम और अष्टम स्थान में पापग्रह हों तो माता के साथ जातक की मृत्यु होती है।

शुक्रो रविराशिसहिता मारयति नरं प्रसवकाले।
दृष्टस्तु देवगुरुणा नवभिर्वर्षैर्न सन्देहः॥

जिसके जन्मकाल में रवि की राशि (सिंह) में शुक्र बैठा हो तो उस जातक की शीघ्र मृत्यु होती है। अगर शुक्र बृहस्पति से देखा जाता हो तो नव वर्ष तक जीता है।

निधनेशयुते चन्द्रे जातमात्रो न जीवति।
रौद्रसार्पमुहूर्ते च प्राणांस्त्यजति बालकः॥

अष्टमेश से सहित चन्द्रमा हो तो पैदा होते ही बालक की मृत्यु होती है। रौद्र और सार्प मुहूर्त में पैदा हुआ जातक भी प्राण को छोड़ता है।

रवौ पापान्विते ग्रस्ते यदा लग्नं समाश्रिते।
अष्टमस्थे कुजे शस्त्रान्मृतिः स्यान्मातृबालयोः॥

पापग्रह से युत रवि ग्रस्त (ग्रहण कालिक) हो कर लग्न में बैठा हो और अष्टम स्थान में मङ्गल हो तो माता के साथ शस्त्र के प्रहार से जातक की मृत्यु होती है।

भास्करहिमकरसहितः शनैश्चरो मृत्युदः सूतौ।
वर्षैर्नवभिर्जातैरित्याहुर्ब्रह्मशौण्डाख्याः॥

जन्मकाल में सूर्य अथवा चन्द्रमा से युत शनैश्चर हो तो नव वर्ष में जातक की मृत्यु होती है। यह ब्रह्मशौण्ड आचार्य का मत है।

भौमदिवाकरसौराश्छिद्रे जातस्य यस्य रिपुगेहे ।
म्रियतेऽवश्यं स नरो यमकृतरक्षोऽपि मासेन ॥

जिसके अष्टम स्थान में मङ्गल या सूर्य या शनि स्थित हो कर शत्रु के घर में बैठा हो तो यमराज से रक्षित बालक भी एक महीने में मर जाता है।

शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्फधर्माष्टमेषु च ।
शुभैरवीक्ष्यमाणेषु यो जातो निधनं गतः ॥

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर, सूर्य और मङ्गल क्रम से द्वादश, नवम और अष्टम में स्थित हों और उन पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक की शीघ्र मृत्यु होती है।

शनिक्षेत्रगतो भानुर्भानुक्षेत्रगतः शनिः ।
विंशद्वर्षे भवेन्नाशो रक्षिता यदि शङ्करः ॥

शनि क्षेत्र (मकर, कुम्भ) में सूर्य बैठा हो और सूर्य के क्षेत्र (सिंह) में शनि बैठा हो तो शङ्कर के रक्षा करने पर भी बीस वर्ष में मृत्यु होती है।

एकः पापोऽष्टमगः शत्रुगृहे पापवीक्षितो वर्षात् ।
मारयति नरं जातं सुधारसो येन पीतोऽपि ॥

एक भी पापग्रह अष्टम स्थान में स्थित हो कर शत्रु के घर में हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो अमृत पिलाने पर भी एक वर्ष में उस जातक की मृत्यु होती है।

लग्ने लग्नाधिपो यस्य पापयुक्तेक्षितो भवेत् ।
पीडां करोति जातस्य शुभयुग्दृष्टितोऽल्पिकाम् ॥

जिसके पापग्रह से युत लग्नेश लग्न में बैठा हो और पापग्रह से युत दृष्ट हो तो पीडा करता है। किसी शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो कम पीड़ा करता है।

लग्नस्थितो यदा राहुः केन्द्रे भवति चन्द्रमाः ।
बालस्य तदारिष्टं स्याद्रक्षिता यदि शङ्करः ॥

जिसके लग्न में राहु और केन्द्र में चन्द्रमा हो तो शङ्कर से रक्षा करने पर भी बालक को अरिष्ट कहना चाहिये।

चतुर्थे च यदा राहुः केन्द्रषष्ठाष्टगः शशी ।
दशमेऽब्दे भवेन्मृत्युर्जातकस्य न संशयः ॥

जिसके चतुर्थ स्थान में राहु बैठा हो; केन्द्र, षष्ठ अथवा अष्टम में चन्द्रमा हो तो निश्चय करके दशम वर्ष में उस जातक की मृत्यु होती है।

सप्तमे च यदा राहुर्मूर्तौ भवति चन्द्रमाः ।
अष्टमे मङ्गलश्चैव स याति यममन्दिरम् ॥

जिसके सप्तम में राहु, लग्न में चन्द्रमा और अष्टम में मङ्गल बैठा हो वह जातक यमराज के मन्दिर जाता है अर्थात् उसकी मृत्यु होती है।

क्षीणशरीरश्चन्द्रो लग्नस्थः क्रूरवीक्षितः कुरुते ।
स्वर्गमनं हि पुंसां कुलीरगोजान्परित्यज्य ॥

क्षीण चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो जातक को स्वर्ग गमन कराता है । अर्थात् उसकी मृत्यु होती है ।

परन्तु कर्क, वृष, मेष इनमें से किसी राशि का चन्द्रमा हो कर लग्न में बैठा हो तो पापग्रह से देखने पर भी उक्त दोष नहीं होता है ।

चन्द्रः कुजरवियुक्तः स्वसुतस्थाने न वापि शुभदृष्टः ।
मरणं शिशोः प्रयच्छति वर्षे नवमे न सन्देहः ॥

मङ्गल और सूर्य से युक्त चन्द्रमा स्वसुत (बुध) के घर में बैठा हो और किसी भी शुभग्रह की दृष्टि उस पर नहीं हो तो निश्चय करके नववें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है ।

होराधिपतिः सूर्यः स्वपुत्रसंहितोऽष्टमे भवति राशौ ।
वर्षैं राशिप्रमितैर्मरणाय सितेन सन्दृष्टः ॥

होरा के स्वामी हो कर सूर्य अपने पुत्र (शनि) के साथ अष्टम स्थान में बैठा हो और शुक्र की उस पर दृष्टि हो तो जिस राशि में बैठा हो उस राशि तुल्य वर्ष में जातक को मारता है ।

आरार्कौ वक्रिणौ मृत्युश्चान्योन्यभवनस्थितौ ।
वेश्मषण्मृत्युरिष्फस्थाः क्षीणेन्दूत्पत्तिपाष्टमाः ॥

मङ्गल और शनि वक्री हो कर परस्पर एक दूसरे के घर में स्थित हों और लग्नेश अथवा अष्टमेश हो कर क्षीण चन्द्रमा चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, द्वादश इन स्थानों में से किसी में स्थित हो तो जातक की मृत्यु होती है ।

आपोक्लिमस्थिताः सर्वे ग्रहा बलविवर्जिताः ।
षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥

जिसके सब निर्बल ग्रह आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) स्थानों में स्थित हों, वह दो मास या छः मास जीता है ॥

विलग्नाधिपतिर्जीवो निधने चार्कजो भवेत् ।
कृच्छ्रेण जीवितं विद्यात् तृणप्रायो भवेन्नरः ॥

जिस जातक के लग्नाधिपति बृहस्पति हों और शनि अष्टम स्थान में हो तो कष्ट से उसका जीवन व्यतीत होता है और देखने में घास के सदृश दुबला होता है ॥

चतुर्थे नवमे सूर्ये चाष्टमे च बृहस्पतौ ।
द्वादशस्थे शशाङ्के च सद्यो मृत्युं विनिर्दिशेत् ॥

सूर्य चतुर्थ या नवम स्थान में, बृहस्पति अष्टम में और चन्द्रमा द्वादश स्थान में हो तो शीघ्र मृत्यु कहना चाहिए ।

द्वादशस्थो यदा सौरो जन्म संस्थोऽपि भूसुतः।
चतुर्थे सैंहिकेयश्च सोऽष्टमासान्न जीवति ॥

जिसके शनैश्चर द्वादश में, मङ्गल जन्मलग्न में और राहु चतुर्थ में हो वह आठ मास के बाद नहीं जीता है।

मेषालिमृगकुम्भस्थो लग्नादष्टमगो रविः।
द्वित्र्यादिपापकैर्दृष्टो मरणाय न संशयः॥

मेष, वृश्चिक, मकर, कुम्भ इन राशियों में से किसी राशि का रवि हो कर लग्न से अष्टम स्थान में बैठा हो और दो, तीन इत्यादि पापग्रहों से देखा जाता हो तो निश्चय करके मरण करता है।

द्वादशस्थौ रविकुजावष्टमस्थौ यदा शनिः।
वर्षमेकं न जीवेत् रक्षिता यदि शङ्करः॥

रवि और मङ्गल द्वादश स्थान में और शनि अष्टम स्थान में स्थित हो तो शिव के रक्षा करने पर भी एक वर्ष नहीं जीता है अर्थात् एक वर्ष के अन्दर ही में मर जाता है।

लग्नाच्च नवमे सूर्यः सप्तमे च शनैश्चरः ।
एकादशे गुरुभृगू त्रिमासं मृत्युमृच्छति ॥

जिसके लग्न से नवम स्थान में सूर्य, सप्तम में शनैश्चर और एकादश में बृहस्पति, शुक्र हों तो वह जातक तीन मास के अन्दर ही में मर जाता है।

अष्टमस्था ग्रहाः सर्वे पापदृष्टयुतास्तु वा।
भौममन्दर्क्षगाश्चेत्तु शुभदृष्टिविवर्जिताः॥

सब ग्रह अष्टम स्थान में स्थित हों और उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो मृत्यु-कारक होते हैं। अथवा सब ग्रह मङ्गल और शनि के घर (मेष, वृश्चिक और मकर, कुम्भ) में बैठे हों और शुभग्रह से देखे जाते हों तो मृत्यु कारक होते हैं।

लग्ने माने सप्तमे चाथ बन्धौ पापाः खेटा जन्मकाले तु सर्वे।
तिष्ठन्त्येते स्वल्पमायुः प्रदिष्टं तेषामेको लग्नगो वा यदि स्यात्॥

जिसके जन्म काल में लग्न, दशम, सप्तम, चतुर्थ इन स्थानों में सब पापग्रह हों और इनमें से कोई एक लग्नेश भी हों तथापि वह जातक अल्पायु होता है।

व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः सूर्यशुक्रेन्दुराहवः।
विशेषान्नाशकर्तारो दृष्टया वा भङ्गकारिणः॥

द्वादश स्थान में कोई ग्रह शुभदायक नहीं होता है। विशेष करके द्वादशस्थान में सूर्य, शुक्र, चन्द्रमा और राहु नाशकारक होते हैं अथवा नेत्र को नाश करते हैं॥

होरायाः कण्टके चन्द्रे न च केन्द्रे बृहस्पतिः।
निधने वाऽशुभः कश्चित्तदारिष्टं प्रजायते॥

लग्न से केन्द्र (१, ४, ७, १०) में चन्द्रमा, केन्द्र में बृहस्पति न हो और अष्टम में कोई शुभग्रह हो तो जातक को अरिष्ट कहना चाहिए।

क्षीणेन्दुः पापसंदृष्टो राहुदृष्टो विशेषतः।
जातो यमपुरं याति दिनैः कतिपयैरपि॥

क्षीण चन्द्रमा को पापग्रह और विशेष करके राहु देखता हो तो थोड़े ही दिनों में जातक यमपुर जाता है॥

जन्मलग्नपतिः षष्ठे व्यये मृत्यौ च तिष्ठति।
अस्तं गतो दुःखकरो राशितुल्ये च वत्सरे॥

जन्म लग्न का स्वामी ग्रह, द्वादश, अष्टम इन स्थानों में से किसी में बैठा हो और अस्त हो तो राशि के समान वर्ष में दुःख कारक होता है।

व्ययशत्रुगतैः क्रूरैर्द्रव्यमृत्युगतैरपि।
पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृतिं वदेत्॥

जिसके जन्म काल में पापग्रह द्वादश और षष्ठ स्थान में हों अथवा द्वितीय और अष्टम स्थान में हों तथा लग्न दो पापग्रहों के मध्य में हों तो उस जातक की अवश्य मृत्यु होती है।

चन्द्रसूर्यगृहे राहुश्चन्द्रसूर्ययुतो यदि।
सौरिभौमेक्षितं लग्नं पक्षमेकं स जीवति॥

चन्द्रमा और सूर्य से युत राहु, चन्द्र और सूर्य के घर (कर्क और सिंह) में हों और लग्न को शनैश्चर और मङ्गल देखता हो तो एक पक्ष बाद वह जातक मर जाता है।

कोणाष्टकेन्द्रगाः पापाः शुभा रिष्फारिकोणगाः।
आदित्योदयवेलायां जातः सद्यो विनश्यति॥

सब पापग्रह कोण, अष्टम और केन्द्र में, सब शुभग्रह द्वादश, षष्ठ और कोण में हों और सूर्योदय के समय जन्म हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु हो जाती है।

ग्रहणपरिवेषकाले जातः पापग्रहे विलग्नस्थे।
लग्नेशे बलहीने जीवति पक्षत्रयं त्रिमासं वा॥

ग्रहण या परिवेष काल में पाप युक्त लग्न हो और लग्नेश निर्बल हो तो तीन पक्ष या तीन मास जीता है।

लग्नाच्छष्ठे शनिकुजौ सौम्येस्ते द्वादशे स्थितः।
तनुस्थानगते चन्द्रे मासमेकं न जीवति॥

जिसके जन्म काल में लग्न से षष्ठ स्थान में शनि और मङ्गल हो, बुध द्वादश में हो और लग्न में चन्द्रमा हो तो एक मास के बीच ही में वह जातक मर जाता है।

व्ययाष्टसप्तोदयगे शशांके पापेन दृष्टे शुभदृष्टिहीने।
केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु प्राणैर्वियोगं व्रजति प्रसूतः॥

जिसके चन्द्रमा द्वादश, अष्टम, सप्तम, लग्न इन स्थानों में से किसी स्थान में

हो, उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो और कोई शुभग्रह केन्द्र में न हो तो उसको प्राण से वियोग होता है, अर्थात् मर जाता है ।

जातः सौरिर्विलग्नस्थो भृगुः सूर्येण संयुतः ।
द्वादशस्थो गुरुश्चैव पञ्च मासं न जीवति ॥

जिसके लग्न में शनि, सूर्य से युत शुक्र और द्वादश में बृहस्पति हो तो पांच मास के अन्दर उसकी मृत्यु होती है ।

तृतीयस्थौ रविकुजावष्टमस्थो यदा शनिः ।
बलहीनौ गुरुभृगू वर्षमेकं न जीवति ॥

रवि और मङ्गल तृतीय में, शनि अष्टम स्थान में और बृहस्पति, शुक्र निर्बल हो तो जातक एक वर्ष के अन्दर मर जाता है ।

अरिजायास्थिते चन्द्रे भृगुपुत्रेण संयुते ।
मार्तण्डे दशमस्थे च मासमेकं न जीवति ॥

जिसके षष्ठ या सप्तम में शुक्र से युत चन्द्रमा हो और सूर्य दशम स्थान में हो वह जातक एक मास के अन्दर ही में मर जाता है ।

पापः सप्तमगः पङ्कुर्द्वादशे चन्द्रमा यदि ।
अष्टमे मङ्गलो यस्य तस्य मृत्युर्भवेद् ध्रुवम् ॥

जिसके पापग्रह शनि सप्तम में, चन्द्रमा द्वादश में और अष्टम में मङ्गल हो वह जातक नहीं जीता है ।

लग्नसप्तमगे भौमे लग्ने भास्करशीतगू ।
यदा षष्ठे गुरुभृगू तदा कष्टं समादिशेत् ॥

जिसके लग्न से सप्तम में मङ्गल, सूर्य और चन्द्रमा लग्न में और बृहस्पति, शुक्र षष्ठ स्थान में हो तो जातक को कष्ट कहना चाहिए ।

लग्नस्थोऽपि यदा पापः सौम्यो द्वादशसंस्थितः ।
तदा मृत्युं व्रजेज्जातो देवराजसमो यदि ॥

पापग्रह लग्न में और शुभग्रह द्वादश में स्थित हो तो इन्द्र के समान जातक का भी मरण होता है ।

लग्नस्थाः सर्वपापास्तु द्वादशस्थो यदा गुरुः ।
बुधो भवेद्यदा षष्ठः स याति यममन्दिरम् ॥

जिसके सब पापग्रह लग्न में, गुरु द्वादश में और बुध षष्ठ में हो तो वह यम मन्दिर जाता है ।

सूर्यकृतारिष्ट—

पापास्त्रिकोणकेन्द्रे सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगाश्च ।
सूर्योदये प्रसूतः सद्यः प्राणांस्त्यजति जन्तुः ॥

सूर्योदय के समय जन्म हो, पापग्रह त्रिकोण और केन्द्र में हो और शुभग्रह

षष्ठ, अष्टम और द्वादश में हों तो प्राणी बहुत जल्दी प्राण को छोड़ता है।

सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः।
सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा चात्मवधो भवेत्॥

सूर्य पापग्रह से युत हो अथवा दो पापग्रहों के मध्य में हो और सूर्य से सप्तम पापग्रह हो तो जातक की मृत्यु होती है।

चन्द्रकृतारिष्ट—

द्यूनचतुरस्रसंस्थे पापद्वयमध्यगते शशिनि जातः।
विलयं प्रयाति नियतं देवैरपि रक्षितो बालः॥

जिसके जन्म काल में दो पापग्रहों के मध्य में स्थित हो कर चन्द्रमा सप्तम, चतुर्थ, अष्टम इन स्थानों में से किसी में स्थित हो तो देवता से सुरक्षित बालक का भी नाश होता है।

क्षीणे शशिनि विलग्ने पापैः केन्द्रेषु मृत्युसंस्थैर्वा।
भवति विपत्तिरवश्यं यवनाधिपतेर्मतं चैतत्॥

जिसके जन्म काल में क्षीण चन्द्रमा लग्न में, पापग्रह केन्द्र अथवा अष्टम स्थान में हो तो निश्चय करके विपत्ति होती है। यह यवनाचार्य का मत है।

चन्द्रं क्रूरयुतं क्षीणं पश्येद्राहुर्यदा तदा।
दिनैः स्वल्पतरैर्बालः कालस्यालयमाव्रजेत्॥

जिसके जन्म काल में पापग्रह से युत क्षीण चन्द्रमा को राहु देखता हो तो थोड़े ही दिनों में जातक काल के घर में जाता है।

चन्द्रः पापेन संयुक्तश्चन्द्रो वा पापमध्यगः।
चन्द्रात्सप्तमगः पापस्तदा मातृवधो भवेत्॥

चन्द्रमा पापग्रह से युत हो अथवा दो पापग्रहों के मध्य में हो अथवा चन्द्रमा से सप्तम में पापग्रह हो तो जातक की माता का वध होता है।

भौमक्षेत्रे यदा भौमः षष्ठमृत्यौ च चन्द्रमाः।
षष्ठाष्टमेऽब्दे मृत्युः स्याद्यदि शक्रोऽपि रक्षिता॥

मङ्गल अपने गृह (मेष, वृश्चिक) में और चन्द्रमा षष्ठ स्थान में हो तो षष्ठ या अष्टम वर्ष में मृत्यु होती है, अगर इन्द्र भी रक्षा करने वाले हों तथापि।

मङ्गलकृतारिष्ट—

भौमक्षेत्रे यदा भौमः षष्ठमृत्यौ च चन्द्रमाः।
षष्ठाष्टमेऽब्दे मृत्युः स्याद्रक्षको यदि शङ्करः॥

मङ्गल अपने गृह में हो और चन्द्रमा षष्ठ या अष्टम स्थान में हो तो महादेव भी रक्षा करने वाले हों तथापि उस जातक की षष्ठ या अष्टम वर्ष में मृत्यु होती है।

भौमो विलग्ने शुभदैरदृष्टः षष्ठेऽष्टमे चार्कसुतेन दृष्टः।
सद्यः शिशुं हन्ति वदेन्मनीषी स्मरे यमारौ न शुभेक्षितौ तु॥

लग्न में मङ्गल हो और उस पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो शीघ्र जातक की मृत्यु होती है।

अथवा मङ्गल षष्ठ या अष्टम स्थान में हो और उस पर शनैश्चर की दृष्टि हो तो शीघ्र जातक की मृत्यु होती है।

अथवा मङ्गल और शनि सप्तम स्थान में हो और उस पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो शीघ्र जातक की मृत्यु होती है।

बुधकृतारिष्ट—

कर्कटसद्मनि सौम्यः षष्ठाष्टमसंस्थितो विलग्नर्क्षात्।
चन्द्रेण दृश्यमूर्तिर्वर्षचतुष्केण मारयति॥

बुध लग्न से षष्ठ या अष्टम में स्थित हो कर कर्क में हो और उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो चार वर्ष में जातक को मारता है।

षष्ठाष्टमे च मूर्तौ च जन्मकाले यदा बुधः।
वर्षे चतुर्थे मृत्युः स्याद्यदि देवोऽपि रक्षकः॥

जन्म काल में षष्ठ या अष्टम या लग्न में बुध बैठा हो तो देवता से रक्षा करने पर भी चार वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।

बृहस्पतिकृतारिष्ट—

बृहस्पतिर्भौमगृहेऽष्टमस्थः सूर्येन्दुभौमार्कजदृष्टमूर्तिः।
वर्षैस्त्रिभिर्भार्गवदृष्टिहीनो लोकान्तरं प्रापयति प्रसूतम्॥

बृहस्पति अष्टम स्थान में स्थित हो कर मेष या वृश्चिक में हो, सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल और शनि से देखा जाता हो और उस पर शुक्र की दृष्टि न हो तो जातक तीन वर्ष में लोकान्तर चला जाता है।

सुरगुरुशशिरवियुतः शशिजः क्रूरदृष्टोऽपि मारयति।
एकादशभिर्वर्षैर्देवाङ्केऽपि स्थितं बालम्॥

जिस के जन्म काल में बृहस्पति, रवि और चन्द्रमा से युत बुध पापग्रह से देखा जाता हो तो देवता को गोद में स्थित बालक की भी ग्यारहवें वर्ष में मृत्यु होती है।

शुक्रकृतारिष्ट—

रविशशिभवने शुक्रो द्वादशरिपुरन्ध्रगोऽशुभैः सर्वैः।
दृष्टः करोति मरणं षड्भिर्वर्षैः किमिह चित्रम्॥

रवि अथवा चन्द्रमा की राशि (सिंह अथवा कर्क) का शुक्र हो कर द्वादश, षष्ठ, अष्टम इन में से किसी भाव में बैठा हो तो छै वर्ष में जातक की मृत्यु होती है,। इस में कुछ आश्चर्य की बात नहीं है।

शनिकृतारिष्ट—

मारयति षोडशाहाच्छनैश्चरः पापवीक्षितो लग्ने।
सद्युक्तो मासेन तु वर्षाच्छुक्रेण मारयति॥

शनैश्चर लग्न में स्थित हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो सोलह दिन के भीतर जातक को मारता है।

शुभग्रह से युत हो तो एक मास में मारता है।

शुक्र से युत हो तो एक वर्ष में मारता है।

वक्री शनिर्भौमगृहं प्रयातश्छिद्रेऽथ पष्ठेऽथ चतुष्टये वा।
कुजेन सम्प्राप्तवलेन दृष्टो वर्षद्वयं जीवति तत्र बालः॥

वक्री हो कर शनि मेप या वृश्चिक का हो कर अष्टम, पष्ठ, केन्द्र इन में किसी स्थान में बैठा हो और बलवान् मङ्गल से देखा जाता हो तो जातक दो वर्ष तक जीता है।

राहुकृतारिष्ट—

राहुश्चतुष्टयस्थो निधनाय निरीक्षितः पापैः।
वर्षैर्वदन्ति दशभिः षोडशभिः केचिदाचार्याः॥

केन्द्र में स्थित राहु पापग्रहों से देखा जाता हो तो दश वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।

किसी आचार्य का मत है कि ऐसे योग में उत्पन्न जातक की सोलह वर्ष में मृत्यु होती है।

लग्नकृतारिष्ट—

लग्नं पापेन संयुक्तं लग्नं वा पापमध्यगम्।
लग्नात्सप्तमगः पापस्तदा चात्मवधो भवेत्॥

लग्न पापग्रह से युत हो अथवा दो पापग्रह के मध्य में हो अथवा लग्न से सप्तम में पापग्रह हो तो जातक का वध होता है।

मातृकष्ट—

चन्द्रमा यदि पापानां त्रितयेन प्रदृश्यते। मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं वदेत्॥

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः।
तस्य मातुर्भवेन्मृत्युर्मृते पितरि जायते॥

पापात्सप्तमरन्ध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते। बलिभिः पापकैर्दृष्टे जातो भवति मातृहा॥

उच्चस्थो वाऽथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः।
पानहीनो भवेद्बालः—अजाक्षीरेण जीवति॥

चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रे यदा भवेत्। तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत्॥

द्वादशे रिपुभावे वा यदा पापग्रहो भवेत्। तदा मातुर्भयं कुर्याच्चतुर्थे दशमे पितुः॥

लग्ने क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च। सप्तमे भवने क्रूरः परिवारक्षयंकरः॥

लग्नस्थे च गुरौ सौरौ धने राहौ तृतीयगे। इति चेज्जन्मकाले स्यात्तस्य माता न जीवति॥

क्षीणचन्द्रात्त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।
माता परित्यजेद्बालं षण्मासाच्च न संशयः॥

एकांशकस्थौ मन्दारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा।
शशिकेन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां न जीवति॥

अगर चन्द्रमा तीन पापग्रहों से देखा जाता हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक की माता मर जाती है।

अगर चन्द्रमा शुभग्रह से देखा जाता हो तो शुभ कहना चाहिए, अर्थात् उसको मातृहा योग नहीं लगता है।

राहु, बुध, शुक्र, शनैश्चर और सूर्य जिसके धन स्थान में स्थित हों उसके पिता की मृत्यु के बाद माता की भी मृत्यु होती है।

पापग्रह से सप्तम या अष्टम स्थान में पापग्रह से युत चन्द्रमा बैठा हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो माता की मृत्यु होती है।

उच्च का अथवा नीच का होकर रवि लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हो तो माता के दुग्ध पान से रहित होकर जातक अजाक्षीर से जीता है, अर्थात् जन्म लेते ही उसकी माता मर जाती है।

पापग्रह चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में रिपुक्षेत्री होकर बैठा हो तो उसकी माता का नाश होता है अगर केन्द्र में शुभग्रह न हों।

जिसके जन्म लग्न से द्वादश वा षष्ठ में पापग्रह हों तो माता को और लग्न चतुर्थ वा दशम में हो तो पिता को अरिष्ट करता है।

जिसके लग्न, द्वादश और सप्तम स्थान में पापग्रह हों और धन स्थान में शुभग्रह हों तो उस जातक के परिवार का क्षय होता है।

जिसके लग्न में बृहस्पति, धन स्थान में शनैश्चर और तृतीय में राहु हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक की माता मर जाती है।

क्षीण चन्द्रमा से नवम और पञ्चम स्थान में शुभग्रहों से रहित पापग्रह हों तो निश्चय करके छः मास के भीतर माता बालक को त्याग देती है।

जहाँ कहीं स्थित होकर शनि और मङ्गल एक नवांश में स्थिर हो तो जातक दो माताओं से पाला जाता है।

अथवा चन्द्रमा से केन्द्र में स्थित शनि और मङ्गल हों तो जातक दो माताओं से पाला जाता है।

पितृकष्ट—

लग्ने सौरिर्मदे भौमः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः।
इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति॥

लग्ने जीवो धने मन्दरविभौमबुधास्तथा। विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता॥
सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः। सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा पितृवधो भवेत्॥
सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनन्दनः। राहुर्व्यये न यस्यैव पिता कष्टेन जीवति॥
दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रसमाश्रितः। म्रियते तस्य जातस्य पिता शीघ्रं न संशयः॥

रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः । कुजश्च सप्तमस्थाने पिता तस्य न जीवति ॥

भौमांशकस्थिते भानौ स्वपुत्रेण निरीक्षिते ।
प्राग्जन्मनो निवृत्तिः स्यान्मृत्युर्वापि शिशोः पितुः ॥

पाताले चाम्बरे पापौ द्वादशे च यदा स्थितौ । पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशान्तरं व्रजेत् ॥

राहुजीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाथ चतुर्थके । त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तातं न पश्यति ॥

भानुः पिता च जन्तूनां चन्द्रो माता तथैव च । पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा ॥

पित्ररिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम् ।
भानोः षष्ठाष्टमर्क्षस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः ॥
चतुरस्रगतैर्वापि पित्ररिष्टं विनिर्दिशेत् ।

जिसके जन्म काल में लग्न में शनैश्चर, सप्तम में मंगल और षष्ठ स्थान में चन्द्रमा हो तो उसका पिता नहीं जीता है।

जिसके लग्न में बृहस्पति, धन स्थान में शनैश्चर, सूर्य, मङ्गल और बुध हों तो उस जातक के विवाह समय में पिता का मरण होता है।

सूर्य पापग्रह से युत हो या दो पापग्रहों के मध्य में हो और सूर्य से सप्तम में पापग्रह हो तो उसके पिता का वध होता है।

जिसके सूर्य सप्तम स्थान में, मङ्गल दशम में स्थित हो और राहु द्वादश में न हो तो उसका पिता कष्ट से जीता है।

जिसके दशम में स्थित होकर मङ्गल शत्रुक्षेत्र में हो उस जातक का पिता बहुत जल्दी मर जाता है।

जिसके चन्द्रमा षष्ठ स्थान में, शनैश्चर लग्न में और सप्तम में मंगल हो तो उसका पिता नहीं जीता है।

सूर्य अपने पुत्र (शनि) से दृष्ट हो और मंगल के नवांश में हो तो जातक की मृत्यु होती है, अथवा जातक के पिता की मृत्यु होती है।

दो पापग्रह चतुर्थ, दशम, द्वादश इनमें से किसी स्थान में स्थित हो तो जातक माता और पिता को मार कर देश-देश में घूमता है।

जिसके शत्रुक्षेत्र में स्थित राहु और बृहस्पति लग्न अथवा चतुर्थ में स्थित हो तो २३ वर्ष की अवस्था में जातक के पिता की मृत्यु होती है।

प्राणियों के पिता सूर्य और माता चन्द्रमा हैं।

अतः सूर्य पापग्रह से युत दृष्ट हो या दो पापों के बीच में हो तो जातक के पिता को अरिष्ट कहना चाहिए।

इसी तरह चन्द्रमा पापग्रहों से युत दृष्ट अथवा दो पापग्रहों के मध्य में हो तो माता को अरिष्ट कहना चाहिए।

सूर्य से षष्ठ और अष्टम में शुभग्रह से वियुत पापग्रह हो अथवा सूर्य से चतुर्थ और अष्टम में शुभग्रह से रहित पापग्रह हो तो पिता को अरिष्ट कहना चाहिए।

अरिष्ट-भङ्ग-योग—

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात्केन्द्रगतो यदि ।
अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा ॥

एक एव बली जीवो लग्नस्थोऽरिष्टसंचयम् । हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः ॥
एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः । अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाको त्रिपुरं यथा ॥
शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते । विपरीतं कृष्णपक्षे तदारिष्टविनाशनम् ॥
व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुलालग्ने तु जायते । जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत् ॥
गुरुभौमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथवा कुजः । हत्वारिष्टमशेषं च जनन्याः शुभकृद्भवेत् ॥
चतुर्थदशमे पापः सौम्यमध्ये यदा भवेत् । पितुः सौख्यकरो योगः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः ॥

लग्नाच्चतुर्थे यदि पापखेटः केन्द्रत्रिकोणे सुरराजमन्त्री ।
कुलद्वयानन्दकरः प्रसूतो दीर्घायुरारोग्यसमन्वितश्च ॥
सौम्यान्तरगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः ।
सद्यो नाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्थफलं न तत् ॥

बुध, बृहस्पति, शुक्र इन तीनों में से कोई एक भी ग्रह लग्न से केन्द्र स्थान में बैठा हो तो जिस तरह सम्पूर्ण अन्धकार को सूर्य नाश करते हैं, उसी तरह सम्पूर्ण पूर्वोक्त अरिष्ट को नाश करता है ।

बलवान् होकर एक बृहस्पति लग्न में बैठा हो तो जिस तरह महादेव के प्रणाम से सम्पूर्ण पाप का क्षय होता है उसी तरह अरिष्ट संचय का नाश होता है ।

केवल एक लग्नेश बली हो कर केन्द्र में बैठा हो तो जिस तरह त्रिपुर नामक राक्षस को महादेव ने नाश किया उसी तरह सम्पूर्ण अरिष्ट को नाश करता है ।

शुक्ल पक्ष के दिन में जन्म हो और लग्न पर शुभग्रह की दृष्टि हो अथवा कृष्ण पक्ष की रात में जन्म हो और लग्न पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो सम्पूर्ण अरिष्ट को नाश करता है ।

सूर्य जिसके द्वादश स्थान में स्थित हो कर तुला लग्न में बैठा हो तो वह जातक सौ वर्ष जीता है ।

बृहस्पति और मङ्गल दोनों एक राशि में हो अथवा मङ्गल पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो सम्पूर्ण अरिष्ट को नाश करके माता को शुभकारी होता है ।

चतुर्थ और दशम में स्थित पापग्रह केन्द्र अथवा त्रिकोण में हों तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक पिता को सुख देता है ।

लग्न से चतुर्थ स्थान में पापग्रह हों और केन्द्र या त्रिकोण में बृहस्पति हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक मातृकुल और पितृकुल दोनों को आनन्द देने वाला होता है । तथा दीर्घायु, आरोग्य से युत होता है ।

पापग्रह दो शुभग्रहों के मध्य में हों और शुभग्रह केन्द्र या त्रिकोण में हों तो शीघ्र अरिष्ट को नाश करते हैं ।

लघुजातक में—

सर्वानिमानतिवलः स्फुरदंशुजालो लग्नस्थितः प्रशमयेत्सुरराजमन्त्री ।
एको वहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि भक्त्या प्रयुक्त इव शूलधरप्रणामः ॥
लग्नाधिपोऽतिवलवानशुभैरदृष्टः केन्द्रस्थितैः शुभखगैरवलोक्यमानः ।
मृत्युं विधूय विदधाति सुदीर्घमायुः सार्धं गुणैर्वहुभिरूर्जितया च लक्ष्म्या ॥
लग्नादष्टमवर्त्यपि गुरुबुधशुक्रद्रेष्काणगश्चन्द्रः ।
मृत्युं प्राप्तमपि नरं परिरक्षत्येव निर्व्याजम् ॥
चन्द्रः सम्पूर्णतनुः सौम्यर्क्षगतः शुभेक्षितश्चापि ।
प्रकरोति रिष्टभङ्गं विशेषतः शुक्रसन्दृष्टः ॥
बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रमागतो बलवान् ।
यद्यपि क्रूरसहायः सद्योऽरिष्टस्य भङ्गाय ॥
रिपुभवनगतोऽपि शशी गुरुसितचन्द्रात्मजद्दकाणस्थः ।
अगद इव भोगिदष्टं परिरक्षत्येव निर्व्याजम् ॥
सौम्यद्वयान्तरगतः सम्पूर्णः स्निग्धमण्डलः शशभृत् ।
निःशेषरिष्टहंता भुजङ्गलोकस्य गरुड इव ॥
शशभृति पूर्णशरीरे शुक्ले पक्षे निशाभवे काले ।
रिपुनिधनस्थेऽरिष्टं प्रभवति नैवात्र जातस्य ॥
प्रस्फुरितकिरणजाले स्निग्धामलमण्डले वलोपेते ।
सुरमन्त्रिणि केन्द्रगते सर्वारिष्टं शमं याति ॥
सौम्यभवनोपयाताः सौम्यांशकसौम्यद्दकाणस्थाः ।
गुरुचन्द्रकाव्यशशिजाः सर्वेऽरिष्टस्य हन्तारः ॥
चन्द्राध्यासितराशेरधिपः केन्द्रे शुभग्रहो वापि ।
प्रशमयति रिष्टयोगं पापानि यथा हरिस्मरणम् ॥
पापा यदि शुभवर्गे सौम्यैर्दृष्टाः शुभांशवर्गस्थैः ।
निघ्नन्ति तदारिष्टं पतिं विरक्ता यथा युवतिः ॥
राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्यैर्निरीक्षितः सम्यक् ।
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तूलसंघातम् ॥
शीर्षोदयेषु राशिषु सर्वे गगनाऽधिवासिनः सूतौ ।
प्रकृतिस्थैश्चारिष्टं विलीयते घृतमिवाग्निस्थम् ॥
तत्काले यदि विजयी शुभग्रहः शुभनिरीक्षितोऽवश्यम् ।
नाशयति सर्वरिष्टं मारुत इव पादपान्प्रबलः ॥
सत्रैगगनभ्रमणैर्दृष्टश्चन्द्रो विनाशयति रिष्टम् । आपूर्यमाणमूर्तिर्यथा नृपः स्वं नयेद् द्वेषी ॥

दीप्यमान किरण से युक्त केवल एक वली बृहस्पति लग्न में बैठा हो तो सम्पूर्ण अरिष्टों को नाश कर देता है,

जिस तरह भक्ति पूर्वक एक भी प्रणाम शिव जी को करने से सम्पूर्ण घोर पापों का नाश होता है ।

लग्न के स्वामी पापग्रहों से न देखा जाता हो और केन्द्र में स्थित शुभग्रहों से देखा जाता हो तो अरिष्टजन्य मृत्यु को नाश करके बहुत गुणों के और उत्तरोत्तर बढ़ने वाली लक्ष्मी के साथ दीर्घायु करता है।

जन्म लग्न से अष्टम स्थान में वर्तमान भी चन्द्रमा यदि बुध, बृहस्पति या शुक्र के द्रेष्काण में स्थित हो तो अरिष्टजन्यमृत्यु में गये हुये जातक की भी सब प्रकार से रक्षा करता है।

दो शुभग्रहों के मध्य में बैठा हुआ चन्द्रमा शुभग्रह की राशि में हो तो अरिष्टों को नाश करता है।

अगर उस पर शुक्र की दृष्टि हो तो विशेष कर के अरिष्टों को नाश करता है।

बुध, शुक्र और बृहस्पति इन में से कोई एक ग्रह भी बली हो कर केन्द्र में बैठा हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो शीघ्र अरिष्टों को नाश करता है।

अगर उक्त योग कारक ग्रह शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो फिर बात ही क्या।

चन्द्रमा लग्न से षष्ठ स्थान में हो कर बुध, बृहस्पति, शुक्र इन तीनों से किसी के द्रेष्काण में हो तो पूर्वोक्त अरिष्ट योगों में पड़े हुए जातक की रक्षा करता है।

जैसे साँप से डँसे हुए मनुष्यों की रक्षा गरुड़ करता है।

अगर पूर्ण चन्द्रमा दो शुभग्रहों के बीच में बैठा हो तो सम्पूर्ण अरिष्ट को नाश करता है, (जैसे गरुड़ साँप के समूहों को नाश करता है।)

अगर शुक्ल पक्ष की रात्रि में जन्म हो और पूर्ण चन्द्र लग्न से षष्ठ या अष्टम स्थान में हो तो जातक को पूर्वोक्त अरिष्ट नहीं होता है।

दीप्यमान किरणों से युक्त स्वच्छ विम्ब वली बृहस्पति केन्द्र में बैठा हो तो सब अरिष्ट नाश हो जाता है।

बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र और बुध ये चारो ग्रह शुभ राशि, शुभग्रह के नवांश या शुभग्रह के द्रेष्काण में हों तो अरिष्ट को नाश करते हैं।

चन्द्रमा जिस राशि में बैठा हो उस के स्वामी अथवा कोई शुभग्रह केन्द्र में हो तो पूर्वोक्त अरिष्ट योगों को नाश करते हैं,

जैसे भगवान् का स्मरण पापों को नाश करता है।

अरिष्ट योग करने वाला पापग्रह शुभग्रह के वर्ग में स्थित हो और शुभग्रह के वर्ग में बैठे हुए शुभग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट योगों को नाश करता है, जैसे विरक्ता स्त्री अपने पति को मार देती है।

लग्न से तृतीय, षष्ठ और एकादश में राहु हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तो सम्पूर्ण अरिष्टों को नाश कर देता है, जैसे रूई के समूहों को वायु नाश कर देता है।

जन्म समय में सब ग्रह शीर्षोदय राशियों (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ) में हों तो आग में पड़े हुए घृत की तरह सब अरिष्टों को नाश करता है।

जन्म काल में कोई शुभग्रह ग्रहों के साथ युद्ध में विजय पाया हो और अन्य शुभग्रहों से देखा जाता हो तो निश्चय कर के सब अरिष्टों को नाश कर देता है, जिस तरह प्रवल वायु वृक्षों को नाश कर देता है।

शुक्ल पक्ष की रात्रि में जन्म हो और चन्द्रमा पर शुभग्रह की दृष्टि हो तथा कृष्ण पक्ष के दिन में जन्म हो और चन्द्रमा पर पापग्रह की दृष्टि हो तो षष्ठ और अष्टम स्थान स्थित चन्द्रमा माता पिता की तरह जातक की रक्षा करता है।

अथायुर्दायाध्यायः सप्तमः

मयासुर, यवनाचार्य आदि के मत से ग्रहों की परमायु—

मययवनमणित्थशक्तिपूर्वैर्दिवसकरादिषु वत्सराः प्रदिष्टाः।
नवतिथिविषयाश्विभूतरुद्रैर्दशसहिता दशभिः स्वतुङ्गमेषु॥ १॥

मय नाम के राक्षस (जो सूर्य की कृपा से ज्यौतिष शास्त्र का ज्ञाता हुआ), यवनाचार्य, मणित्थ नाम के आचार्य, पराशर आदि आचार्यों ने सूर्यादि ग्रहों के अपने अपने परमोच्च स्थान में रहने पर क्रम से दशयुत, ९, १५, ५, २, ५, ११, १०, परमायु प्रमाण कहा है।

जैसे परमोच्च में सूर्य हो तो उन्नीस वर्ष, चन्द्रमा हो तो पच्चीस वर्ष, मङ्गल हो तो पन्द्रह वर्ष, बुध हो तो वारह वर्ष, बृहस्पति हो तो पन्द्रह वर्ष, शुक्र हो तो इक्कीस वर्ष और शनैश्चर हो तो वीस वर्ष परमायु कहा है॥ १॥

परम नीचस्थित ग्रहों के आयुर्दाय—

नीचेऽतोऽर्द्धं ह्रसति हि ततश्चान्तरस्थेऽनुपातो
होरात्वंशप्रतिममपरे राशितुल्यं वदन्ति॥
हित्वा वक्रं रिपुगृहगतैर्हीयते स्वत्रिभागः
सूर्योच्छिन्नद्युतिषु च दलं प्रोज्झ्य शुक्रार्कपुत्रौ॥ २॥

यदि सूर्य आदि ग्रह परम नीचस्थान में वैठे हों तो पूर्वोक्त परमायु के आधे देते हैं और आधे का नीच स्थित दोष से नाश होता है।

अर्थात् सूर्य परम नीच स्थान में वैठा हो तो नव वर्ष छै महीना, चन्द्रमा हो तो वारह वर्ष छै महीना, मङ्गल हो तो सात वर्ष छै महीना, बुध हो तो छै वर्ष, बृहस्पति हो तो सात वर्ष छै महीना, शुक्र हो तो दश वर्ष छै महीना और शनि हो तो दश

वर्ष आयुर्दाय देते हैं और सूर्यादिग्रहों के उक्त वर्ष समान नीचस्थितजन्यदोष से घट भी जाता है।

इस प्रकार उच्च और नीच में ग्रह हों तो उक्त वर्ष तुल्य आयुर्दाय जानना चाहिए, यदि उच्च, नीच दोनों के मध्य में स्थित हों तो उन का आयुर्दाय नीच और स्पष्ट ग्रह के अन्तर वा उच्च और स्पष्ट ग्रह के अन्तर पर से अनुपात से जानना चाहिए।

परन्तु नीच और स्पष्ट ग्रह के अन्तर पर से लाये हुए वर्षादि को नीच वर्षादि में जोड़ने से ग्रह के स्फुटायु वर्षादि होते हैं,।

और उच्च ग्रहान्तर पर से लाये हुए वर्षादि को उच्च वर्षादि में घटाने से स्फुटायु होता है।

लग्न नवांश तुल्य आयुर्दाय देता है। अर्थात् लग्न में जितने पूरे २ नवांश बीत गये हों उतने वर्ष और शेष का अनुपात से मासादि लाना चाहिये।

किसी आचार्य का मत है कि लग्न राशि तुल्य आयुर्दाय देता है।

अर्थात् लग्न में मेषादि से जितनी राशि बीत गई हों उतने वर्ष और अंशादि पर से अनुपात से आयुर्दाय लाना चाहिए।

यहाँ पर मणित्थ—

लग्नराशिसमाश्चाब्दा मासाद्यमनुपाततः। लग्नायुर्दायमिच्छन्ति होराशास्त्रविशारदाः॥

तथा सारावली में—

लग्नदत्तांशतुल्यः स्यादन्तरे चानुपाततः। तत्पतौ बलसंयुक्ते राशितुल्यं च भाधिपे॥

वक्रगति ग्रहों को छोड़ कर अन्य ग्रह यदि अपने शत्रु के घर में बैठे हों तो पूर्वोक्त रीति से आनीत आयुर्दाय के तृतीय भाग हर लेते हैं।

किन्तु जो ग्रह वक्री हो कर शत्रु के घर में गया हो वह अपने आयुर्दाय के त्रिभाग नहीं हरता है।

जैसे कहा भी है—

वक्रचारं विना त्र्यंशं शत्रुराशौ हरेद्ग्रहः।

इस तरह बहुत का मत है।

यहां पर किसी का मत है कि मङ्गल को छोड़ कर शत्रुगृह में गत ग्रह अपने आयुर्दाय में से तृतीय भाग हर लेता है।

जैसे बादरायण—

भूम्याः पुत्रं वर्जयित्वारिभस्था हन्युः स्वात्स्वादायुषस्ते त्रिभागम्।

शुक्र और शनैश्चर को छोड़ कर अन्यग्रह (मङ्गल, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति) सूर्य की किरण से अस्त हों तो अपने आयुर्दाय के आधे हर लेते हैं,

किन्तु शुक्र और शनैश्चर अस्त भी हों तो अपने आयुर्दाय के आधे नहीं हरते हैं॥ २॥

उच्चवर्षादिज्ञानचक्र—

ग्रह	उच्च राश्यादि	उच्च वर्षादि	नीच राश्यादि	नीच वर्षादि
सूर्य	००।१०	१९।००	६।१०	९।६
चन्द्र	१।३	२५।००	७।३	१२।६
मङ्गल	९।२८	१५।००	३।२८	७।६
बुध	५।१५	१२।००	११।१५	६।००
बृहस्पति	३।५	१५।००	९।५	७।६
शुक्र	११।२७	२१।००	५।२७	१०।६
शनि	६।२०	२०।००	००।२०	१०।००

उदाहरण—

जन्मकुण्डली

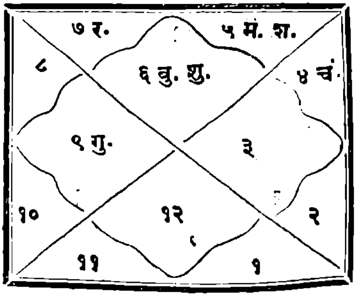

सूर्यादिस्फुटग्रह—

ग्रह	राश्यादि
सूर्य	६।२।९।४५
चन्द्र	३।१४।१८।२६
मङ्गल	४।२७।४९।५४
बुध	५।२१।३७।२१
गुरु	८।११।२५।१३
शुक्र	५।३।५६।४३
शनि	४।११।१५।१२
लग्न	५।२५।२३।५३

पूर्वोक्त उदाहरण की कुण्डली में राश्यादि स्पष्ट रवि=(६।२।९।४५), रविके उच्च राश्यादि = (००।१०।००।००) नीच राश्यादि = (६।१०।००।००),

यहाँ पर स्पष्ट रवि नीच के समीप है, अतः नीच के साथ रवि का अन्तर किया तो (६।१०।००।००)—(६।२।९।४५) = (००।७।५०।१५) हुआ,

इसको विकला जातीय करना है अतः ७ अंश को साठ से गुणा कर ५० कला जोड़ा तो कलात्मक = ७ × ६० + ५० = ४७० हुआ, फिर इसको साठ से गुणा कर विकला जोड़ा तो विकलात्मक = (४७० × ६० + १५ = २८२१५) हुआ ।

नीच और उच्च के अन्तर में ६ राशि हैं इनकी विकला बनाया तो

६ × ३० × ६० × ६० = ६४८००० हुआ ।

रवि के उच्च में परमायु १९ वर्ष हैं और नीच में इनके आधे तुल्य अर्थात् ९ वर्ष ६ महीना है,

अतः उच्च और नीच आयुर्दाय वर्षों को मास बना कर अन्तर किया तो

१९ × १२—९ × १२ + ६ = २२८—११४ = ११४ ।

अब अनुपात किया कि—

उच्च और नीच के अन्तर विकला में दोनों जगह के आयुर्दाय मासान्तर ११४ पाते हैं तो स्पष्ट रवि और नीच के अन्तर में क्या =

$\frac{११४ \times २८२१५}{६४८०००} = \frac{१९ \times २८२१५}{१०८०००} = \frac{१९ \times १८८१}{७२००} = \frac{१९ \times २०९}{८००} =$

$\frac{३९७१}{८००}$, भाग देने से लब्ध मास = ४,

शेष = $\frac{७७१}{८००}$ को तीस से गुणा किया तो दिनात्मक =

$\frac{७७१ \times ३०}{८००} = \frac{७७१ \times ३}{८०} = \frac{२३१३}{८०}$, भाग देने से लब्ध दिन = २८,

शेष = $\frac{७३}{८०}$ को साठ से गुणा किया तो दण्डात्मक = $\frac{७३ \times ६०}{८०} = \frac{७३ \times ३}{४} =$

$\frac{२१९}{४}$ भाग देने से लब्ध दण्ड = ५४,

शेष=$\frac{३}{४}$ को साठ से गुणा किया तो पल=$\frac{३ \times ६०}{४}$=३ × १५=४५ इतना हुआ,

अतः लब्ध मासादि = ४।२८।५४।४५

इसको नीच वर्षादि—(९।६।००।००।००)

में जोड़ा तो रवि का स्पष्टायुर्दाय = ९।१०।२८।५४।४५ हुआ ।

अन्य प्रकार से आयु का आनयन—

स्वोच्चशुद्धो ग्रहः शोध्यः षड्राश्यूनो भमण्डलात् ।
स्वपिण्डगुणितो भक्तो भादिमानेन वत्सराः ॥

अपने-अपने उच्च में ग्रह को घटा कर शेष छै राशि से अल्प हो तो उसको १२ में घटाना चाहिए ।

अगर छै राशि के तुल्य या उससे अधिक हो तो उसी का ग्रहण करना चाहिए।

अब उसको अपने पिण्ड (उच्चगतवर्ष) से गुणा कर अपने २ मान का भाग देने से जो फल मिले वह वर्षादि आयुर्दाय हो जायगा।

यहाँ पर उदाहरण—

जैसे उच्चराश्यादि ००।१०।००।०० को
स्पष्ट रवि राश्यादि ६।२।९।४५ में घटाया तो
शेष = (६।२।९।४५)-(००।१०।००।००) =
५।२२।९।४५,
यह छै राशि से अल्प है अतः बारह राशि में घटाया तो शेष =
१२—(५।२२।९।४५) = ६।७।५०।१५ हुआ,
इसको उच्च के परमायु वर्ष १९ से गुणा किया तो
इतना ११४।१३३।९५०।२८५ हुआ,
इसको सठिया कर एक जातीय किया तो
११८।२८।५४।४५ इतना हुआ,
राशि के स्थान में बारह का भाग दिया तो वर्षादि रवि का आयुर्दाय =
९।१०।२८।५४।४९ हुआ।

चन्द्र का उदाहरण—

स्पष्ट चन्द्र राश्यादि = ३।१४।१८।२६,
उच्च राश्यादि = १।३।००।००,
नीच राश्यादि = ७।३।००।००,
यहाँ पर स्पष्ट चन्द्रमा उच्च के आगे और समीप में है,
अतः स्पष्ट चन्द्र राश्यादि में उच्च को घटा कर शेष =
(३।१४।१८।१६)—(१।३।००।००) =
२।११।१८।२६, को विकला जातीय किया तो २५६७०६ हुआ,
अब पूर्ववत् अनुपात किया—

छै लाख अड़तालीस हजार विकला (६४८०००) में चन्द्रमा के उच्च, नीच स्थित मासात्मक आयुर्दायान्तर १५० पाते हैं तो स्पष्ट चन्द्र और उच्च के विकलान्तर में क्या =

$\frac{१५०\times२५६७०६}{६४८०००} = \frac{२५६७०६}{४३२०} = \frac{१२८३५३}{२१६०}$, भाग देने से लब्ध मास = ५९,
शेष = $\frac{९१३}{२१६०}$ को तीस से गुणा किया तो दिनात्मक =
$\frac{९१३\times३०}{२१६०} = \frac{९१३}{७२}$ भाग देने से लब्ध दिन = १२,
शेष = $\frac{४९}{७२}$ को साठ से गुणा किया तो दण्डात्मक = $\frac{४९\times६०}{७२} = \frac{४९\times५}{६} =$

$\frac{३४५}{६}$, भाग देने से लब्ध दण्ड = ४०,

शेष = $\frac{५}{६}$ को साठ से गुणा किया तो पल = $\frac{५ \times ६०}{६}$ = ५ × १० = ५० इतना हुआ ।

अतः लब्ध मासादि = ५९।१२।४०।५०, मास स्थान में बारह का भाग देने से लब्ध वर्षादि = ४।११।१२।४०।५०,

इसको उच्च वर्षादि में घटाया तो स्पष्ट चन्द्रमा के आयुर्दाय वर्षादि =

(२५।००।००।००।००)—(४।११।१२।४०।५०) =

(२०।००।१७।१९।१०) हुआ ।

यहां पर भी लघु उपाय से आनयन करते हैं

जैसे स्पष्ट चन्द्र में उच्च को घटा कर

शेष = (३।१४।१८।२६)—(१।३।००।००) = (२।११।१८।२६) हुआ,

यह छै राशि से अल्प है, अतः इसको बारह राशि में घटा कर

शेष = १२—(२।११।१८।२६) = (९।१८।४१।३४) को परमायु प्रमाण २५ से गुणा किया तो

२२५।४५०।१०२५।८५० हुआ,

इसको सठिया कर एक जातीय किया तो २४०।१७।१९।१० हुआ,

अब राशि के स्थान में बारह का भाग दिया तो वर्षादि

स्पष्ट चन्द्रमा की आयु = २०।००।१७।१९।१०, हुआ ।

मङ्गल का उदाहरण—

राश्यादि स्पष्ट मङ्गल = ४।२२।४९।५४, उच्च राश्यादि = ९।२८।००।००,

नीच राश्यादि = ३।२८।००।००, यहां नीच के समीप और आगे स्पष्ट मङ्गल के होने के कारण स्पष्ट मङ्गल में नीच राश्यादि को घटा कर

शेष = (४।२२।४९।५४)—(३।२८।००।००) = (००।२४।४९।५४)

मङ्गल के उच्च नीच परमायु वर्ष को मासात्मक बना कर अन्तर किया तो ९० हुआ, अब पूर्ववत् अनुपात किया तो ऐसा हुआ,

$\frac{९० \times ८९३९५}{६४८०००} = \frac{८९३९५}{७२००} = \frac{१४८९९}{१२००}$

भाग देने से लब्ध मास = १२,

शेष = $\frac{४९९}{१२००}$, को तीस से गुणा किया तो दिनात्मक =

$\frac{४९९ \times ३०}{१२००} = \frac{४९९}{४०}$ भाग देने से लब्ध दिन = १२,

शेष = $\frac{१९}{४०}$, को साठ से गुणा किया तो दण्डात्मक =

$\frac{१९ \times ६०}{४०} = \frac{१९ \times ३}{२} = \frac{५७}{२}$ भाग देने से लब्ध = दण्ड २८,

शेष = $\frac{१}{२}$ को साठ से गुणा किया तो पला = $\frac{६०}{२}$ = ३०, हुआ,

अतः लब्ध मासादि = १२।१२।२८।३० मास के स्थान में

बारह का भाग देने से लब्ध वर्षादि = १।००।१२।२८।३० हुआ

इसको नीच वर्षादि ७।६।००।००।००, में जोड़ा तो स्पष्ट मङ्गल का

वर्षादि आयुर्दाय = ८।६।१२।२८।३० हुआ।

यहां पर भी लघु प्रकार से आनयन कहते हैं।

जैसे स्पष्ट मङ्गल राश्यादि में उच्च राश्यादि को घटाया तो

शेष = (४।२२।४९।५४)—(९।२८।००।००) = (६।२४।४९।५४) हुआ,

यह छे राशि से ज्यादा है इस लिये बारह में नहीं घटाया।

अब इस शेष (६।२४।४९।५४) को मङ्गल के उच्च परमायु वर्ष से गुणा किया तो ९०।३६०।७३५।८१० हुआ,

इस को सठिया कर एक जातीय किया तो १०२।१२।२८।३० हुआ,

राशि के स्थान में बारह का भाग दिया तो

मङ्गल का वर्षादि स्पष्ट आयुर्दाय = ८।६।१२।२८।३० हुआ।

बुध का उदाहरण—

राश्यादि स्पष्ट बुध = ५।२१।३७।२१,

उच्च राश्यादि = ५।१५।००।००, नीच राश्यादि = ११।१५।००।००

यहाँ स्पष्ट मङ्गल उच्च के समीप और उस से आगे भी है अतः स्पष्ट बुध में उच्च राश्यादि को घटाया तो।

शेष = (५।२१।३७।२१)—(५।१५।००।००)—(००।६।३७।२१)

इस को विकला जातीय बनाया तो २३८४१ हुआ,

अब पूर्ववत् अनुपात किया कि भचक्रार्धविकला में बुध के उच्च नीच वर्षान्तर छे पाते हैं तो स्पष्ट बुध और उच्च के अन्तर विकला में क्या =

$\frac{२३८४१ \times ६}{६४८०००} = \frac{२३८४१}{१०८०००}$,

इस में भाग नहीं लगेगा, अतः १२ से गुणा कर मासात्मक बनाया तो

$\frac{२३८४१ \times १२}{१०८०००} = \frac{२३८४१}{९०००}$ भाग देने से लब्ध मास = २,

शेष = $\frac{५८४१}{९०००}$ को तीस से गुणा कर दिनात्मक बनाया तो

$\frac{५८४१ \times ३०}{९०००} = \frac{५८४१}{३००}$ भाग देने से लब्ध दिन = १९,

शेष = $\frac{१४१}{३००}$ को साठ से गुणा किया तो दण्डात्मक = $\frac{१४१ \times ६०}{३००} = \frac{१४१}{५}$

भाग देने से लब्ध दण्ड = २८, शेष = $\frac{१}{५}$ को साठ से गुणा किया तो

पल = $\frac{१ \times ६०}{५}$ = १ × १२ = १२ हुआ

अतः लब्ध मासादि = २।११।२८।१२ को
परमोच्चायु वर्ष १२ में घटाया तो
शेष स्पष्ट बुध की आयु = १२—(२।११।२८।१२)
११।९।१०।३१।४८ इतनी आई ।

अथवा लघु प्रकार से आयु का आनयन—

स्पष्ट बुध राश्यादि ५।२१।३७।२१ में
उच्च राश्यादि ५।१५।००।०० को घटाया तो शेष =
(५।२१।३७।२१)—(५।१५।००।००) = ००।६।३७।२१ हुआ,
यह छै राशि से अल्प है अतः १२ राशि में घटाया तो शेष =
१२—(००।६।३७।२१) = ११।२३।२२।३९ हुआ,
इस को परमायु वर्ष १२ से गुणा किया तो १३२।२७६।२६४।४६८ इतना हुआ ।
इस को सठिया कर एक जातीय बनाया तो १४१।१०।३१।४८ हुआ ।
अब राशि के स्थान में बारह का भाग दिया तो
वर्षादि बुध का स्पष्ट आयुर्दाय =
११।९।१०।३१।४८ आया ।

बृहस्पति का उदाहरण—

राश्यादि स्पष्ट बृहस्पति = ८।११।२५।१३,
उच्च राश्यादि = ३।५।००।००,
नीच राश्यादि = ९।५।००।००,
यहां स्पष्ट बृहस्पति नीच के समीप और पीछे है अतः नीच में स्पष्ट बृहस्पति को घटाया तो शेष
(९।५।००।००)—(८।११।२५।१३) =
(००।२३।३४।४७) इतना हुआ
इस को विकलात्मक बनाया तो ८४८८७ इतना हुआ ।
उच्च और नीच आयुर्दाय का मास बना कर अन्तर किया तो ९० हुआ,
अब पूर्ववत् अनुपात किया तो
$\frac{९० \times ८४८८७}{६४८०००} = \frac{८४८८७}{७२००}$ हुआ, भाग देने लब्ध मास = ११,
शेष = $\frac{५६८७}{७२००}$, इस को तीस से गुणा किया तो
दिनात्मक = $\frac{५६८७ \times ३०}{७२००} = \frac{५६८७}{२४०}$ यहां भाग देने से लब्ध दिना = २३,
शेष = $\frac{१६७}{२४०}$ को साठ से गुणा किया तो दण्डात्मक = $\frac{१६७ \times ६०}{२४०} = \frac{१६७}{४}$,
यहां पर भाग देने से लब्ध दण्ड = ४१,
शेष = $\frac{३}{४}$, को साठ से गुणा किया तो पला = $\frac{३ \times ६०}{४}$ = ३ × १५=४५ हुआ।

अतः लब्ध मासादि = १।२३।४१।४५ को नीच वर्षादि में जोड़ा तो स्पष्ट गुरु का आयुर्दाय = ८।५।२३।४१।४५ इतना हुआ।

अब सुलभ प्रकार से आयु का आनयन करते हैं।

जैसे स्पष्ट बृहस्पति के राश्यादि में उच्च राश्यादि को घटाया तो

शेष = (८।११।२५।१३—(३।५।००।००) =

५।६।२५।१३,

यह छै राशि से अल्प है अतः वारह में घटाया तो

शेष = १२—(५।६।२५।१३) = ६।२३।३४।४७ इतना हुआ।

इसको बृहस्पति के परमायु वर्ष १५ से गुणा किया तो ९०।३४५।५१०।७०५ इतना हुआ, इसको सठिया कर एक जातीय किया तो १०१।२३।४१।४५ इतना हुआ। इसके राशि स्थान में वारह का भाग दिया तो

वर्षादि बृहस्पति का स्पष्टायु = ८।५।२३।४१।४५ इतना आया।

अब शुक्र का उदाहरण लिखते हैं—

राश्यादि स्पष्ट शुक्र = ५।३।५६।४६,

उच्च राश्यादि = ११।२७।००।००,

नीच राश्यादि = ५।२७।००।००, यहाँ पर स्पष्ट शुक्र नीच के आसन्न और उस से पीछे है, अतः नीच राश्यादि में शुक्र को घटा कर

शेष = (५।२७।००।००)—(५।३।५६।४६) =

(००।२३।३।२४) इतना हुआ।

इसको विकलात्मक बनाया तो ८२९९४ इतना हुआ।

शुक्र के नीचोच्चवर्षान्तर का मासात्मक बनाया तो

१० × १२ + ६ = १२६, हुआ।

अब पूर्ववत् अनुपात किया तो

$\frac{१२६\times८२९९४}{६४८०००} = \frac{७\times८२९९४}{३६०००} = \frac{७\times४१४९७}{१८०००} = \frac{२९०४७९}{१८०००}$,

भाग देने से लब्ध मास = १६,

शेष = $\frac{२४७९}{१८०००}$ को तीस से गुणा किया तो

दिनात्मक = $\frac{२४७९\times३०}{१८०००} = \frac{२४७९}{६००}$ भाग देने से लब्ध दिन = ४,

शेष = $\frac{७९}{६००}$ को साठ से गुणा किया तो दण्डात्मक = $\frac{७९\times६०}{६००} = \frac{७९}{१०}$ हुआ,

भाग देने से लब्ध दण्ड = ४,

शेष = $\frac{९}{१०}$ को साठ से गुणा किया तो पल = ५४ इतना हुआ,

अतः लब्ध मासादि = १६।४।७।५४,
बारह से भाग देने से वर्षादि = १।४।४।७।५४ को
नीच वर्षादि १०।६ में युत किया तो
स्पष्ट शुक्र का आयुर्दाय ११।१०।४।७।५४ इतना सिद्ध हुआ।
अब प्रकारान्तर से शुक्र का आयुर्दाय लाते हैं,
जैसे स्पष्ट शुक्र में उच्च राश्यादि को घटा कर
शेष = (५।३।५६।४६)-(११।२७।००।००) =
(५।६।५६।४६) इतना हुआ,
यह छे राशि से अल्प है, अतः बारह में घटाया तो १२-(५।६।५६।४६)=
६।२३।३।१४, इतना हुआ।
इसको शुक्र के उच्च आयुर्दाय वर्ष से गुणा किया तो १२६।४८३।६३।२९४ इतना हुआ,
इसको सठिया कर एक जातीय किया तो १४२।४।७।५४ हुआ
इसके राशि स्थान में बारह का भाग दिया तो
वर्षादि स्पष्ट शुक्र के आयुर्दाय = ११।१०।४।७।५४ इतना हुआ।

अब शनैश्चर का विचार करते हैं।

राश्यादि स्पष्ट शनैश्चर = ४।११।१५।१२,
उच्च राश्यादि = ६।२०।००।००,
नीच राश्यादि ००।२०।००।००,
यहाँ शनैश्चर को उच्चासन्न होने के कारण उच्च राश्यादि में घटा कर
शेष = (६।२०।००।००)-(४।११।१५।१२) =
२।८।४४।४८, इतना हुआ।
इसको विकला जातीय किया तो २४७४८८ इतना हुआ।
यहाँ पर उच्चानीच वर्षान्तर = १०, अतः पूर्ववत् अनुपात किया तो
$\frac{१०×२४७४८८}{६४८०००} = \frac{२४७४८८}{६४८००} = \frac{७७३४}{२०२५}$, हुआ
यहाँ पर भाग देने से लब्ध वर्ष = ३,
शेष = $\frac{१६५९}{२०२५}$ को बारह से गुणा किया तो मासात्मक = $\frac{१६५९×१२}{२०२५} =$
$\frac{१६५९×४}{६७५} = \frac{५५३×४}{२२५} = \frac{२२१२}{२२५}$
भाग देने से लब्ध मास = ९,
शेष = $\frac{१८७}{२२५}$ को तीस से गुणा किया तो $\frac{१८७×३०}{२२५} = \frac{१८७×२}{१५} = \frac{३७४}{१५}$
भाग देने से लब्ध दिन=२४, शेष=$\frac{१४}{१५}$ को साठ से गुणा किया तो दण्ड=
$\frac{१४×६०}{१५}$ = १४ × ४ = ५६ इतना आया।

अतः लब्ध वर्षादि = ३।९।२४।५६ को
परमोच्चवर्षों (२०) में घटाया तो शेष
स्पष्ट शनि का आयुर्दाय = २०-(३।९।२४।५६) = १६।२।५।४ इतना सिद्ध हुआ।
अब द्वितीय प्रकार से आनयन करते हैं
स्पष्ट शनि के राश्यादि में उच्च राश्यादि शोधन किया तो शेष =
(४।११।१५।१२)—(६।२०।००।००) =
(९।२१।१५।१२) इतना हुआ।

इसको शनि के परमायु प्रमाण २० से गुणा किया तो १८०।४२०।३००।२४० इतना हुआ।

सठिया कर एक जातीय किया तो १९४।५।४।०० इतना हुआ।
इसके राशि स्थान में बारह का भाग दिया तो
स्पष्ट शनि के आयुर्दाय = १६।२।५।४।०० इतना सिद्ध हुआ।

अब लग्नायु का आनयन करते हैं—

जैसे पूर्वोक्त उदाहरण में
राश्यादि लग्न = ५।२५।३३।५३ इतना है।
इसमें सिंह राशि के सात नवांश खण्डा बीत गये हैं।
अतः लग्नायु सात वर्ष सिद्ध हुए। शेष अष्टम खण्डों के भुक्तांश = (२५°।३३′।५३″)—(२३°।२०) = २°।१३′।५३″ इतना है,

इसको विकलात्मक बनाया तो ८०३३″ हुआ।
प्रत्येक नवांश खण्डे में १२००० विकला रहती हैं।

अतः अनुपात किया कि बारह हजार विकला में एक वर्ष लग्नायु पाते हैं तो इस भुक्त विकला (८०३३) में क्या = $\frac{१ \times ८०३३}{१२०००} = \frac{८०३३}{१२०००}$

यहां भाग नहीं लगेगा अतः मासात्मक बनाने के लिये बारह से गुणा किया तो
$\frac{८०३३ \times १२}{१२०००} = \frac{८०३३}{१०००}$ इतना हुआ,

यहां पर भाग देने से लब्ध मास = ८, शेष = $\frac{३३}{१०००}$ को दिनात्मक बनाने के लिए तीस से गुणा किया तो $\frac{३३ \times ३०}{१०००} = \frac{३३ \times ३}{१००} = \frac{९९}{१००}$, भाग नहीं लगा अतः

शेष = $\frac{९९}{१००}$ को साठ से गुणा किया = $\frac{९९ \times ६०}{१००} = \frac{९९ \times ३}{५} = \frac{२९७}{५}$ भाग देने से लब्ध दण्ड = ५९, शेष $\frac{२}{५}$ को साठ से गुणा किया तो पला $\frac{२ \times ६०}{५} =$ २ × १२ = २४, इतना हुआ।

अतः लब्ध मासादि = ८।०।५९।२४ को पूर्वागत अंश तुल्य वर्ष जोड़ा तो

लग्नायु = ७।८।०।५९।२४ हुआ ।

जिनका मत है कि लग्न राशि समान वर्ष देता है, उनके मत में ४ वर्ष राशि तुल्य आया शेष अंशादि (२५।३३।५३) को विकलात्मक बनाया तो ९२०३३ इतना हुआ।

एक राशि में विकला मान १०८००० इतने होते हैं, अतः अनुपात किया कि एक लाख आठ हजार विकला में एक वर्ष पाते हैं तो लग्न में सिंह राशि के भुक्त विकला (९२०३३) में क्या =

$\frac{१ \times ९२०३३}{१०८०००} = \frac{९२०३३}{१०८०००}$

यहां भाग नहीं लगता अतः वारह से गुणा किया तो

मासात्मक = $\frac{९२०३३ \times १२}{१०८०००} = \frac{९२०३३}{९०००}$

भाग देने से लब्ध मास = १०, शेष = $\frac{२०३३}{९०००}$ को तीस से गुणा किया तो

दिनात्मक = $\frac{२०३३ \times ३०}{९०००} = \frac{२०३३}{३००}$ हुआ, इसमें भाग देने से लब्ध दिन = ६,

शेष = $\frac{२३३}{३००}$ को साठ से गुणा किया तो

दण्डात्मक = $\frac{२३३ \times ६०}{३००} = \frac{२३३}{५}$ भाग देने से लब्ध दण्ड = ४६,

शेष = $\frac{३}{५}$ को साठ से गुणा किया तो पला = $\frac{३ \times ६०}{५}$ = २ × १२ = २४ इतना हुआ।

अतः लब्ध मासादि = १०।६।४६।२४ में राशि तुल्य वर्ष जोड़ा तो

लग्नायु वर्षादि = ४।१०।६।४६।२४ इतना सिद्ध हुआ ॥ २ ॥

प्रसङ्गवश ग्रहों के कालांश जानने का प्रकार—

दस्रेन्दवः शैलभुवश्च शक्रा रुद्राः खचन्द्रास्तिथयः क्रमेण ।
चन्द्रादितः काललवा निरुक्ता ज्ञशुक्रयोर्वक्रगयोर्द्विहीना ॥

चन्द्र के १२, मङ्गल के १७, बुध के १४, बृहस्पति के ११, शुक्र के १० और शनि के १५ कलांश होते हैं,

अर्थात् अस्त के बाद सूर्य से १२ अंश अन्तर पर होने से चन्द्रमा उदित होते हैं। इसी तरह मङ्गलादिकों को भी जानना । इसका नाम कालांश है ।

पूर्वश्लोकोक्तानुसार वक्री को छोड़ कर शत्रु गृह में स्थित ग्रह का पूर्वानीत आयु का तृतीयांश और अस्त गत ग्रह का आधा नाश कहा गया है ।

एवं 'सर्वार्धत्रिचरणपञ्चषष्ठभागा' इत्यादि वक्ष्यमाण श्लोकानुसार चक्रार्ध हानि भी कही गई है ।

अतः इस तरह के विचार में प्रथम रवि का विचार, रवि शुक्र के गृह (तुला) में है । वह रवि का सम है, अतः पूर्वानीत आयु ही रवि की

स्पष्टायु = (९।१०।२८।५४।४५) हुई ।

ग्रह	वर्षाद्यायु
रवि	९।१०।२८।५४।४५
चन्द्र	२०।००।१७।१९।१०
मङ्गल	८।६।१२।२८।३०
बुध	११।९।१०।३१।४८
गुरु	८।५।२३।४१।४५
शुक्र	११।१०।४।७।५४
शनि	१६।२।५।४।००
लग्न	४।१०।६।४६।२४
योग	९१।५।१८।५६।६

ग्रह	स्पष्टायु वर्षादि
रवि	९।१०।२८।५४।४५
चन्द्र	१०।००।०८।३९।३५
मङ्गल	००।००।००।००।००
बुध	५।१०।२०।१५।५४
गुरु	८।५।२३।४१।४५
शुक्र	७।१०।२२।२९।३६
शनि	००।००।००।००।००
लग्न	४।१०।६।४६।२४
योग	४७।००।२०।४७।५९

चन्द्रमा स्वगृही (कर्क) का होकर लग्न से एकादश में बैठा है और चन्द्र पापग्रह भी है, अतः पूर्वानीत आयु=(२०।००।१७।१९।१०) का आधा=(१०।००।८।३९।३५) का नाश होगा।

अतः चन्द्र की स्पष्टायु=(१०।००।८।३९।३५) हुई।

मङ्गल अतिमित्र (रवि) के गृह(सिंह) में हो कर लग्न से व्ययस्थान में है, पापग्रह है, अतः पूर्वानीत सब आयु=(८।६।१२।२८।३०) का नाश करेगा।

अतः मङ्गल का स्पष्टायु=००।००।००।००।०० हुई।

बुध स्वगृही (कन्या) का होकर अस्त है, अतः पूर्वानीत आयु=

(११।९।१०।३१।४८) का आधा=(५।१०।२०।१५।५४) का नाश करेगा,

अतः बुध की स्पष्टायु=(५।१०।२०।१५।५४)।

गुरु स्वगृही है और अस्त वर्जित है अतः पूर्वानीत आयु ही स्पष्टायु=(८।५।२३।४१।४५) हुई।

शुक्र अति शत्रु (बुध) के गृह (कन्या) में है, अतः पूर्वानीत आयु (११।१०।४।७।५४) का तृतीयांश=(३।११।११।३८।१८) का नाश करेगा।

अतः शुक्र की स्पष्टायु=(७।१०।२२।२९।३६),

शनि सम (रवि) के गृह से हो कर लग्न से व्यय स्थान में है, पापग्रह है अतः पूर्वानीत सब आयु (१६।२।५।४।००) का नाश करेगा।

अतः शनि का स्फुटायु=(००।००।००।००)।

लग्न की पूर्वानीत आयु ही स्फुटायु=(४।१०।६।४६।२४) है।

आयुर्दाय के चक्र पात से हानि—

सर्वार्द्धत्रिचरणपञ्चषष्ठभागाः क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम्।
सत्स्वर्द्धं ह्रसति तथैकराशिगानामेकोंशं हरति बली तथाह सत्यः॥३॥

पापग्रह द्वादश स्थान से विलोम करके छे भावों में स्थित हों तो क्रम से पूर्वा-

नीत अपने-अपने आयुर्दाय का सम्पूर्ण, अर्ध, तृतीयांश, चतुर्थांश, पञ्चमांश और षष्ठांश नाश कर देते हैं।

जैसे द्वादश में बैठा हुआ पापग्रह अपने आयुर्दाय का सम्पूर्ण भाग, एकादश में अर्धभाग, दशम में तृतीयांश, नवम में चतुर्थांश, अष्टम में पञ्चमांश और सप्तम में षष्ठांश नाश कर देता है।

यदि इस तरह शुभग्रह बैठा हो तो इसका अर्द्धभाग नाश कर देता है।

जैसे शुभग्रह द्वादश में बैठा हो तो अर्धभाग, एकादश में बैठा हो तो चतुर्थांश, दशम में स्थित हो तो षष्ठांश, नवम में हो तो अष्टमांश, अष्टम में हो तो दशमांश, सप्तम में हो तो द्वादशांश आयुर्दाय का नाश कर देता है।

अगर उक्त स्थानों में एक ग्रह से ज्यादा ग्रह हों तो उन में जो बलवान् ग्रह हो वही अपने आयुर्दाय के उक्त भाग को नाश कर देता है, अन्य नहीं।

इसी तरह सत्याचार्य का भी मत है॥

उनका प्रमाण—

एकादशोत्क्रमात्सप्तमादिति प्राह हरणकर्माणि।
एकर्क्षगेषु वीर्याधिकः स्वभागं हरेदेकः॥
अर्धं तृतीयभागं चतुर्थकं पञ्चमं च षष्ठं च।
आयुः पिण्डात्पापा हरन्ति सौम्यास्तथार्द्धानि॥
द्वादशसंस्थः पापः स्वदायं शोभनस्तदर्द्धं तु।
अपहरति सर्वमायुर्यथा च योगस्तमपि वक्ष्ये॥
एकर्क्षोपगतानां यो भवति बलाधिको विशेषेण।
क्षपयति यथोक्तमंशं स एव नान्योऽपि तत्रस्थः॥ ३॥

आयुर्दाय के विशेष संस्कार—

सार्द्धोदितोदितनवांशहतात्समस्ता-
द्भागोष्टयुक्तशतसङ्ख्यमुपैति नाशम्।
क्रूरे विलग्नसहिते विधिना त्वनेन
सौम्येक्षिते दलमतः प्रलयं प्रयाति॥ ४॥

अगर पापग्रह लग्न में बैठा हो तो लग्न के जितने नवांश भुक्त हुए हों वे उदित नवांश कहे जाते हैं। जिस नवांश में जन्म हो उसका जितना भुक्त हो उस पर से त्रैराशिक से जो फल मिले उसको उदित नवांश में युक्त करने से जो हो वह सार्धो-दित नवांश होता है। उसको सम्पूर्ण आयुर्दाय से गुणा करने से जो फल मिले उसका १०८ वां भाग सम्पूर्ण आयुर्दाय में घटावे, यदि लग्न में स्थित पापग्रह के

ऊपर किसी शुभग्रह की दृष्टि हो तो उस लब्ध फल का आधा घटाने से आयुर्दाय स्पष्ट होता है।

वास्तव में तो एक राशि में नव नवांश होते हैं, अतः बारह राशियों में एक सौ आठ नवांश हुए। उनमें से लग्न के वर्तमान नवांश पर्य्यन्त जितने नवांश हों उनको कलात्मक बनाकर उससे प्रत्येक ग्रह के दशा वर्ष को अलग २ गुण कर इक्कीस हजार छै सौ का भाग देने से लब्ध वर्ष, मास आदि जो हों उनको उसी ग्रह के दशा वर्ष में घटाने से उस ग्रह का आयुर्दाय स्पष्ट हो जायगा।

इसी तरह लग्न आदि सब ग्रहों का आयुर्दाय स्पष्ट करना चाहिए।

कोई आचार्य इस तरह अर्थ करते हैं,

जैसे सब ग्रहों के आयुर्दाय योग को सार्धोदित नवांश से गुणा कर १०८ का भाग देने से जो फल मिले उसको सम्पूर्ण पिण्ड में घटावे।

अगर लग्न में शुभग्रह बैठा हो तो उस फल का आधा घटावे, शेष जो हो वह समस्त ग्रहों की दशा होती है। अन्तर दशा की गणना से सब ग्रहों के दशा वर्षादि ग्रहण करे।

जैसे गुरु की दशा निकालनी है, तो पूर्वानीत गुरु की दशा से समस्त ग्रह दशा पिण्ड को गुणा कर गुणन फल में १२० वर्ष ५ दिन के भाग देने से जो फल मिलेगा वह गुरु की दशा होगी। इसी तरह सब ग्रहों की दशा होगी।

अगर लग्न में बहुत शुभग्रह, पापग्रह हों तो लग्न के उदित अंश के निकटवर्ती पापग्रह हों तो यह संस्कार करना चाहिए।

सारावली में—

लग्नांशलिप्तिका हत्वा प्रत्येकं विहगायुषा।
भाज्या मण्डललिप्ताभिर्लब्धं वर्षादि शोधयेत्॥
स्वायुषो लग्नगे क्रूरे सौम्यदृष्टे च तद्दलम्।

और कहा है—

लग्नं ग्रहोनकं षड्भादूनकं यद्यसौ हरः। आयुः पिण्डं भजेत्तेन लब्धं वर्षादि शोधयेत्॥
रूपाद्यदोनो हारः स्याद्रूपाच्छुद्धेन ताडयेत्। रूपेण विभजेल्लब्धं तदेवायुः स्फुटं भवेत्॥

वादरायण का प्रमाण—

सूर्याङ्गारकशनीनामेकस्मिंल्लँग्नगे भवति हानिः।
विधिना त्वनेन सौम्येक्षिते दलं पातयेल्लब्धम्।

अतः यहाँ पर पापग्रह से क्षीण चन्द्र का ग्रहण करना चाहिए॥ ४॥

उदाहरण—

श्रीमन्नृपतीन्द्रविक्रमसम्वत्सरे = १९८४, शालिवाहनशके = १८४९, सन १३३५ साल, मार्गशुक्लतृतीयायां घट्यादिमानम् = (३०।२८) तदुपरि चतुर्थी, मूलनक्षत्रे

घट्यादिमानम्=(११।५८) तदुपरि पूर्वाषाढनक्षत्रम् ।—शूलयोगे घट्यादिमानम्=(३६।५३) तदुपरि गण्डयोगः, रविवासरे श्रीसूर्यभुक्तवृश्चिकांशकाद्याः=(११।२६।४६), तत्र श्रीसूर्योदयाद्गतेष्टघट्यः=(५७।२), दिनमानम्=(२६।१९), मिश्रमानम्=(४३।११), मिश्रेष्टान्तरधनम्=(२।१३।५१), तात्कालिकोऽर्कः=(७।११।४०।४०), अयनांशाः=(२१।२५।४५), प्रथमलग्नं राश्यादि=(६।२०।५३।२१) भयातम्=(४५।४), भभोगः=(६२।९), अस्मिन्समये कस्यचिज्जन्म जातम् । आङ्ग्लीय-दिवसाद्यम्=(२७—११—१९२७ ई०) ।

जन्माङ्गकुण्डली

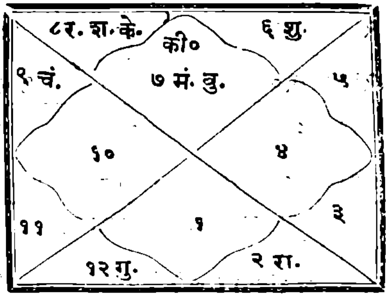

सलग्नस्फुटग्रहाः सगतिकाः—

रवि	७।११।४०।४०	गति	६०।५७
चन्द्र	८।२३।००।०५	गति	
मङ्गल	६।२८।५३।४	गति	४१।५
बुध	६।२२।४।१३	गति	५४।५२
गुरु	११।१।३०।२२	गति	१।२
शुक्र	५।२५।३०।३९	गति	६४।१९
शनि	७।१५।४९।११	गति	७।३०
लग्न	६।२०।५३।२१	गति	× ×
राहु	१।२८।३७।३।५०	गति	३।११
केतु	७।२८।३७।३।५०	गति	३।११

आयुर्दाय चक्र—

रवि	१४।४।१।५२।४०
चन्द्र	१५।११।२०।२५
मङ्गल	११।३।१३।११।००
बुध	१०।९।५।९।२४
गुरु	९।१०।७।३५।३०
शुक्र	१०।६।२२।१८।२१
शनि	१८।६।२३।३६।२०
लग्न	६।३।६।१।४८
योग	९७।७।९।४५।८

अस्तादि संस्कृत आयुर्दायचक्र—

रवि	१४।४।१।५२।४०
चन्द्र	१५।११।२०।२५
मङ्गल	५।७।२९।३५।३०
बुध	१०।९।५।९।२४
गुरु	९।१०।७।३५।३०
शुक्र	५।३।११।८।१०
शनि	९।३।११।४८।१०
लग्न	६।३।६।१।४८
योग	७७।४।२५।१३।१७

इस उदाहरण में लग्न में पापग्रह (मङ्गल) बैठा है,
अतः लग्न (६।२०।५३।२१) के—

वर्तमान नवांश संख्या (७) से साधित आयुर्दाय =
(७७।४।२५।१३।१७) को गुणा कर =
(५३९।२८।१७५।९१।११९) =
(५४०।३।२६।३२।५९), इसमें
१०८ का भाग देने से लब्ध वर्षादि =
(५।०।१।४।५९),

इसको संपूर्ण आयुर्दाय में घटाना है, पर यहाँ लग्न के ऊपर शुभग्रह (गुरु) की दृष्टि होने के कारण आधा ही घटाया,

अतः शेष = (७७।४।२५।१३।१७)—(२।६।०।३२।२९)=(७४।१०।२४।४०।४८), यही मय, यवन आदि के मत से स्फुटायु हुई।

अथवा प्रत्येक ग्रह के आयुर्दाय को अलग २ सात से गुणा कर १०८ का भाग देने से जो लब्ध हो उसको अपने २ आयुर्दाय में घटा कर योग करने से पूर्वतुल्य ही होती है ॥ ४ ॥

उपपत्ति—

जब ग्रह अपने परमोच्च स्थान में स्थित रहता है, उस समय उच्चग्रहान्तर बारह राशियाँ होती हैं। एक राशि में नवांश संख्या नव होती है, अतः बारह राशियों में नवांश संख्या = १२ × ९ = १०८ हुई।

तथा उच्च स्थान में स्थित ग्रह की परम आयु होती है,

अतः अनुपात किया कि १०८ सम उच्चग्रहान्तर नवांश संख्या में परम आयु पाते हैं तो इष्ट नवांश में क्या =

$$\frac{\text{परमायु} \times \text{इष्टनवांश}}{१०८} =$$

लब्ध इष्ट नवांश सम्बन्धी परमायु में ह्रास आया।

फिर अनुपात किया कि परमायु में पूर्वानीत आयु तुल्य हानि तो इष्टआयु में क्या=

$$\frac{\text{परमायु} \times \text{इष्टनवांश} \times \text{इष्टायु}}{१०८ \times \text{परमायु}} =$$

$$\frac{\text{इष्टनवांश} \times \text{इष्टायु}}{१०८}$$, लब्ध इष्टायु सम्बन्धी हानि

अथवा—

$$\frac{\text{इष्टनवांश} \times \text{इष्टायु}}{१०८} =$$

$$\frac{\frac{\text{इष्टनवांशकला}}{२००} \times \text{इष्टायु}}{\frac{२१६००}{२००}} =$$

$$\frac{\text{इष्टनवांशकला} \times \text{इष्टायु}}{२१६००}$$, इससे

लग्नांशलिप्तिकां हत्वा प्रत्येकं विहगायुषा।
भाज्या मण्डललिप्ताभिर्लब्धं वर्षादि शोधयेत्॥
स्वायुषो लग्नगे क्रूरे सौम्यदृष्टे च तद्दलम्॥

यह सारावली में कथित पद्य उपपन्न होता है ॥ ४ ॥

मनुष्य आदि का परमायुर्दाय—

समाः षष्टिर्द्विघ्नी मनुजकरिणां पञ्च च निशा
हयानां द्वात्रिंशत् खरकरभयोः पञ्चककृतिः।
विरूपा साप्यायुर्वृषमहिषयोर्द्वादश शुनां
स्मृतं छागादीनां दशकसहिता षट् च परमम्॥

मनुष्य और हाथी की १२० वर्ष ५ दिन परमायु होती है। घोड़े की ३२ वर्ष, गदहा और ऊँट की २५ वर्ष, बैल और भैंस की २४, कूकुर आदि नख वाले जीवों की १२ वर्ष, बकरी, भेंड़, हरिन आदि की १६ वर्ष परम आयु होती है।

आयुर्दाय लाने का प्रकार—

घोड़े आदि जिस किसी जीवों का आयुर्दाय जानना हो तो वहां मनुष्य की तरह गणित से स्फुट आयुर्दाय लाकर त्रैराशिक से स्पष्ट आयुर्दाय जानना चाहिए।

जैसे घोड़े का आयुर्दाय लाना है तो मनुष्य की तरह आयुर्दाय लाकर उसको अपने परमायु वर्ष (३२) से गुणा कर एक सौ वीस वर्ष पांच दिन का भाग देने से जो लब्धि आवेगी वही घोड़े की स्पष्टायु होगी ॥ ५ ॥

परम आयुर्दाय योग—

अनिमिषपरमांशके विलग्ने शशितनये गवि पञ्चवर्गलिप्ते।
भवति हि परमायुषः प्रमाणं यदि सहिताः सकलाः स्वतुङ्गभेषु ॥ ६ ॥

मीन राशि लग्न में हो, उस में अन्तिम नवांश (मीन राशि के नवांश) का उदय हो, बुध वृष राशि के पच्चीस कला पर हो और शेष सब ग्रह अपने अपने उच्च में स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न जातक की परम आयु (एक सौ वीस वर्ष पांच दिन की) होती है।

पूर्व कथित गणित से भी यही आयु आती है।

उदाहरण—

जैसे बुध अपने परम नीच स्थान (११।१५।००) को छोड़ कर आगे वृष में पच्चीस कला पर है,

अतः बुध के राश्यादि मान = १।०।२५,

इस में परम नीच (११।१५।००) को घटाया तो शेष राश्यादि = १।१५।२५ हुआ,

इस को कलात्मक बनाया तो २७२५ हुआ। अब अनुपात किया कि १०८०० कलाओं के भोग करने में परम नीच वर्ष छै पाते हैं तो इन कलाओं (२७२५) में क्या =

$$\frac{६ \times २७२५}{१०८००} = \frac{२७२५}{१८००} = \frac{५४५}{३६०} = \frac{१०९}{७२},$$

भाग देने से वर्ष १ आया, शेष ३७ को बारह से गुणा किया तो ४४४ हुआ।

इस में ७२ का भाग दिया तो लब्ध मास = ६,

शेष = १२ रहा, इस को तीस से गुणा किया तो ३६० हुआ, इसमें ७२ का भाग दिया तो लब्ध दिन = ५ आया।

अतः लब्ध वर्षादि = १।६।५,

इस को बुध के परम नीच वर्ष छै में जोड़ दिया तो स्पष्टायु = ७।६।५ हुई।

मङ्गल लग्न से एकादश में स्थित है,

अतः उसके परम आयुर्दाय १५ वर्ष की अर्ध हानि करने से स्पष्टायुर्दाय = ७।६।० हुआ।

शनि लग्न से अष्टम स्थान में स्थित है, अतः उस के परम आयुर्दाय (२०) के पञ्चमांश (४ वर्ष) हानि करने से शेष आयुर्दाय = १६ रहा ।

सब ग्रहों के आयुर्दाय वर्ष का स्थापन—

सूर्य = १९,
चन्द्र = २५,
मङ्गल = ७।६,
बुध = ७।६।५,
बृहस्पति = १५,
शुक्र = २१,
शनैश्चर = १६,

और लग्न के नव नवांश मुक्त हैं, अतः लग्न की आयु ९ वर्ष हुई ।

इन सबों का योग = १२०।००।५, अतः परमायु आई ॥

ग्रह	वर्षादि स्फुटायु
रवि	१९।००।००।००।००
चन्द्र	२५।००।००।००।००
मङ्गल	७।०६।००।००।००
बुध	७।०६।०५।००।००
गुरु	१५।००।००।००।००
शुक्र	२१।००।००।००।००
शनि	१६।००।००।००।००
लग्न	९।००।००।००।००
योग	१२०।००।०५।००।००

यहाँ रवि के अपने उच्च (मेष) में होने से बुध अपने उच्च (कन्या) में नहीं हो सकते अथवा बुध के अपने उच्च में होने पर रवि अपने उच्च में नहीं हो सकते हैं ।

अतः छै ग्रहों के अपने २ उच्च में और बुध के वृष में होने पर यह योग प्रदर्शित किया है ।

जब रवि अपने परम उच्च स्थान (मेष के दश अंश) पर होंगे तब बुध वृष के चार अंश पर हो सकते हैं । क्योंकि उस समय रवि का परम शीघ्र फल ऋण और बुध का परम फल धन होने से दोनों ग्रहों का अन्तर चौबीस अंश हो सकता है । ऐसी स्थिति में बुध की वर्षादि स्फुटायु = (७।७।१८) होगी ।

जैसे बुध राश्यादि = (१।४) में उस के नीच राश्यादि = (११।१५) को घटा कर शेष = (१।१९) को कलात्मक बनाया तो = (२९४०) हुआ ।

अब भगणार्ध कला (१०८००) में छै वर्ष पाते हैं तो बुध की कला २९४० में क्या ? इस अनुपात से लब्ध वर्षादि =

$$\frac{६ \times २९४०}{१०८००} = \frac{१४७}{९०} = (१।७।१८) \text{ आया ।}$$

इस में नीच वर्ष (६) जोड़ा तो

बुध की स्फुटायु = (७।७।१८) हुई ।

इस में पूर्वानीत अन्य ग्रहों के आयुर्दाय को जोड़ा तो वर्षादि आयु=(१२०। ११।१८) हुई।

यह पूर्वसाधित आयु से १ मास १२ दिन अधिक आई। पूर्व साधित बुध की आयु (७।६।५) है।

यह बुध के वृष के २५ कला पर रहने से ही सिद्ध होता है ॥ ६ ॥

तात्कालिकस्पष्टग्रहचक्र-

सूर्य	००।९।००।००
चन्द्र	१।२।००।००
मङ्गल	९।२७।००।००
बुध	१।००।२५।००
गुरु	३।४।००।००
शुक्र	११।२६।००।००
शनि	६।१९।००।००
ल :	११।२९।५९।००

जन्माङ्ग

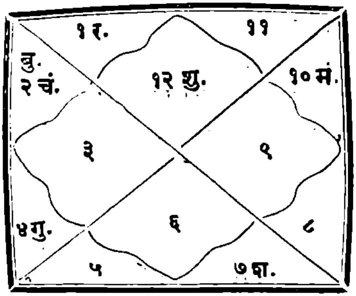

अन्यमत से आयुर्दाय में दोष—

आयुर्दायं विष्णुगुप्तोऽपि चैवं देवस्वामी सिद्धसेनश्च चक्रे।
दोषश्चैषां जायतेऽष्टावरिष्टं हित्वा नायुर्विंशतेः स्यादधस्तात् ॥ ७ ॥

इसी तरह मय, यवन, मणित्थ, पराशर आदि आचार्यों से कहे हुए आयुर्दाय को विष्णुगुप्त, देवस्वामी और सिद्धिसेन ने कहा है।

किन्तु इन अनेक आचार्यों से कहे हुए आयुर्दाय में एक यह दोष आता है कि वीस वर्ष से अल्प यह आयुर्दाय नहीं आता और जन्म से आठ वर्ष तक वालारिष्ट कहा गया है।

अतः आठ के वाद वीस के भीतर किसी का भी आयुर्दाय न आवेगा, पर आठ से बाद वीस वर्ष के अन्दर लाखों प्रतिदिन मरते देखे जाते हैं।

यह एक महान् दोष है।

विष्णुगुप्त का पद्य—

परमोच्चगतैः सर्वैर्मीने मीनांशसंस्थिते।
सौम्ये च वृषगे जातः परमायुः स जीवति ॥

देवस्वामी—

सूर्याद्यैरुच्चगतैर्मीने मीनांशसंस्थिते लग्ने ।
सौम्ये वृषभं याते जातः परमायुराप्नोति ॥

सिद्धसेन—

मीने परमांशगते सौम्ये पञ्चवर्गलिप्तास्थे ।
सर्वैः परमोच्चगतैर्जातः परमायुराप्नोति ॥ ७ ॥

अब यहाँ आठ वर्ष के बाद बीस वर्ष के अन्दर आयु दिखाने के लिए भट्टोत्पल का उदाहरण—

जन्म कुण्डली

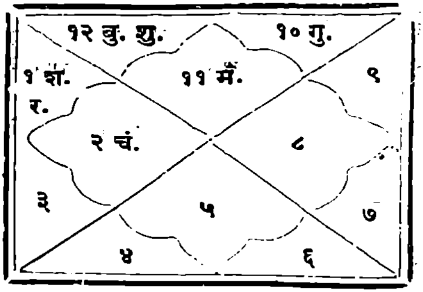

तात्कालिकस्फुटग्रह—

ग्रह	राश्यादिमान—
रवि	००।१०।००।००
चन्द्र	१।३।००।००
मङ्गल	१०।२८।००।००
बुध	११।१५।००।००
गुरु	९।५।००।००
शुक्र	११।२७।००।००
शनि	००।२०।००।००
लग्न	१०।००।१।००

यहाँ लग्न राश्यादि में (१०।०।१) में अंश शून्य है, अतः वर्षादि लग्नायु= ००।००।००००।०० हुई ।

राश्यादि स्पष्ट मङ्गल=(१०।२८) में इस के उच्च राश्यादि=(९।२८) को घटा कर शेष=१ राशि की कला किया तो १८०० हुई ।

नीच स्थान में मङ्गल की मासात्मक आयु=९० है ।

अतः उच्चनीचान्तर कला=(१०८००) में ९० मास तो उच्चग्रहान्तरकला= १८०० में क्या, इस अनुपात से लब्ध मासात्मक आयु=

$$\frac{९०\times१८००}{१०८००} = \frac{९०}{६} = १५ ।$$

अतः वर्षादि आयु=१।३ हुई । इस को उच्च वर्ष (१५) में घटाने से मङ्गल की आयु=१३।९।००,

गुरु अपने नीच में होकर लग्न से द्वादश भाव में बैठा है, अतः नीचस्थानीय वर्षादि आयु = (७।६) में

'सर्वार्धत्रिचरणपञ्चषष्ठभागाः' इत्यादि पूर्वोक्त नियमानुसार चक्रार्ध पात करने से—

गुरु की वर्षादि आयु = (३।९) हुई।

सूर्य, चन्द्र और शुक्र उच्च में हैं,

अतः सूर्यायु = १९,

चन्द्रायु = २५,

शुक्रायु = २१।

तथा बुध और शनि नीच में हैं,

अतः बुधायु = ६,

और शनि की आयु = १० हुई।

सबका योग = ९८ वर्ष ६ मास हुआ।

अब यहाँ लग्न में पापग्रह (मङ्गल) के होने के कारण लग्न की भुक्त नवांश संख्या = १० × ९ = ९० में कुम्भ की अर्धोदित नवांश संख्या मिलाने से सार्धोदित-नवांश संख्या = ९१ हुई।

इससे पूर्व साधित वर्षादि आयु (९८।६) को गुणा कर १०८ का भाग देने से लब्ध वर्षादि आयु =

$$\frac{९१ \times (९८।६)}{१०८} = \frac{(८९६३।६)}{१०८} =$$

(८२।११।२८।२०),

इसको पूर्वानीत आयु में घटाने से

स्फुटायु = (९८।६)—(८२।११।२८।२०) =

(१५।६।१।४०) अतः वराहमिहिर का 'नायुर्विंशतेः स्यादधस्तात्'

यह कहना असङ्गत सिद्ध हुआ।

इसलिये भटोत्पल का कहना है कि यह श्लोक वराहमिहिर का नहीं है। किन्तु लेखक, अध्यापक और अध्येता के दोष से प्रक्षिप्त हो गया है ॥ ७ ॥

पूर्णायु योग में चक्रवर्तित्व मानने वाले के मत में प्रत्यक्ष दोष—

यस्मिन्योगे पूर्णमायुः प्रदिष्टं तस्मिन्प्रोक्तं चक्रवर्तित्वमन्यैः।
प्रत्यक्षोऽयं तेषु दोषः परोऽपि जीवन्त्यायुःपूर्णमर्थैर्विनापि ॥ ८ ॥

जिस योग में पूर्णायु प्रमाण कहा गया है, उस योग में छै ग्रहों के उच्च में होने के कारण दूसरे आचार्यों ने चक्रवर्तित्व (राजाधिराजत्व) योग कहा है।

किन्तु उन सबों के मत में यह एक दूसरा प्रत्यक्ष दोष है, क्योंकि धन से बिलकुल रहित मनुष्य भी पूर्णायु पर्यन्त जीते देखे जाते हैं।

यहाँ इसको असङ्गत सिद्ध करने के लिये भटोत्पन्न का उदाहरण—

कुण्डली—

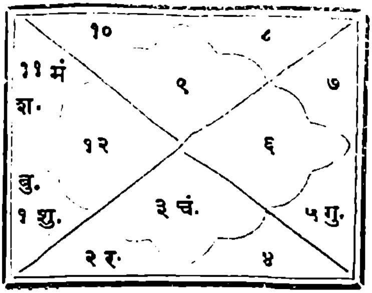

तात्कालिक स्फुट ग्रह—

ग्रह	राश्यादिमान—
रवि	१।१०।००।००
चन्द्र	२।३।००।००
मङ्गल	१०।२८।००।००
बुध	००।१५।००।००
गुरु	४।५।००।००
शुक्र	००।२७।२०।००
शनि	१०।२०।००।००
लग्न	८।२९।५९।५९

पूर्वदर्शित प्रकारसे स्फुटायुचक्र—

ग्रह	वर्षादि आयु
रवि	१७।५।००।००।००
चन्द्र	१९।१।५।००।००
मङ्गल	१३।९।००।००।००
बुध	७।००।००।००।००
गुरु	१२।००।११।१५।००
शुक्र	१९।२।२६।३०।००
शनि	१३।४।००।००।००
लग्न	९।००।००।००।००
योग	११०।१०।१२।४५।००

इस तरह योगायुर्दाय = ११०।१०।१२।४५।०० सिद्ध होता है। तथा 'हित्वार्क सुनफाऽनफा' इत्यादि चन्द्रयोगाध्याय ३ श्लोक के अनुसार केमद्रुम (दारिद्र्य) योग भी सिद्ध होता है। इसलिये दारिद्र्य योग में पूर्णायु सिद्ध हुआ। अतः मय, यवन आदि आचार्य का कहना असङ्गत है ॥ ८ ॥

जीवशर्मा और सत्याचार्य के मत से आयुर्दाय—

स्वमतेन किलाह जीवशर्मा ग्रहदायं परमायुषः स्वरांशम् ।
ग्रहभुक्तनवांशराशितुल्यं बहुसाम्यं समुपैति सत्यवाक्यम् ॥ ९ ॥

जीवशर्मा नाम आचार्य ने अपने मत से परमायु (१२० वर्ष ५ दिन) का

सप्तमांश (१७ वर्ष १ मास २२ दिन ८ घड़ी ३४ पल) के बराबर उच्च स्थान में स्थित ग्रहों का आयुर्दाय कहा है। यह सर्वमान्य नहीं है।

ग्रह के जितने नवांश भुक्त हों उतनी राशि तुल्य ग्रहों का आयुर्दाय होता है, इस तरह सत्याचार्य का मत बहुसम्मत है।

जीवशर्मा का वचन—सप्तदशैको द्वियमौ वसवो वेदाग्नयो ग्रहेन्द्राणाम्।

वर्षाद्युच्चस्थानां नीचस्थानामतोऽर्धं स्यात्॥
मध्येऽनुपाततः स्यादानयनं शेषमत्र यत्किञ्चित्।
पिण्डायुप इव कार्यं तत्सर्वं गणिततत्त्वज्ञैः॥
स्वोच्चशुद्धो ग्रहः शोध्यः षड्राश्यूनो भमण्डलात्।
तद्भागाः कुभिषड्भोगिहता वेदाभ्रसायकैः।
भक्ता दिनादि यल्लब्धं तदायुर्जीवशर्मजम्॥

उच्च स्थित ग्रहों की वर्षादि आयु = (१७।१।२२।८।३४) इतनी है।
नीच स्थित ग्रहों की आयु इस का आधा = (८।६।२६।४।१४) है।
मध्य में अनुपात से लाकर पूर्ववत् स्पष्टायु साधन करना चाहिए।

अर्थात् यदि ग्रह चक्र के उत्तरार्ध में हो तो 'सर्वार्धत्रिचरणपञ्चषष्ठभागा' इत्यादि प्रकार से और शत्रु राशिस्थित, अस्तङ्गत तथा लग्न में पापग्रह हो तो 'सार्धोदितोदितनवांशहता' इत्यादि प्रकार से अयुर्दाय को स्पष्ट करना चाहिये।

अनुपात के प्रकार—

ग्रह, उच्च इन दोनों का अन्तर छै राशि से अधिक हो तो उसी के छै राशि से अल्प हो तो वारह में घटा कर शेष को अंशात्मक बनाना चाहिए। उस अंश को ८६४१ से गुणा कर ५०४ का भाग देने से जो दिनादि फल मिले वह ग्रह का आयुर्दाय होता है।

उदाहरण—

जन्माङ्गकुण्डली

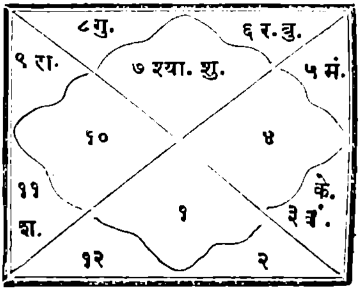

तात्कालिकस्फुटग्रह—

रवि	५।२०।१३।२८	गति	५९।१४
चन्द्र	३।११।१४।००	गति	८२६।५२
मङ्गल	४।१३।३।५८	गति	३७।५६
बुध	५।६।७।५६	गति	१२।००
गुरु	७।२७।११।४६	गति	८।२७
शुक्र	६।१८।२।१०	गति	७३।१९
शनि	१०।२२।१७।५२	गति	४।४०
राहु	८।७।९।२६	गति	३।११
केतु	२।७।९।२६	गति	३।११

स्पष्ट सूर्य राश्यादि = (५।२०।१३।२८) को अपने उच्च (०।१०) में घटाने, से शेष = (००।१०)—(५।२०।१३।२८) = (६।१९।४६।३२), यह छे राशि से ज्यादा है,

अतः इसको अंशात्मक बनाया तो = (१९९।४६।३२) हुआ।

इसको ८६४१ से गुणा किया तो ८६४१ (१९९।४६।३२) =

(१७१९५५९।४०२०९४।२७६५१२), एक जातीय किया तो=(१७२६२६०।३४।३१) इतना हुआ।

इसके प्रथम खण्ड में ५०४ का भाग देने से लब्ध दिन = ३४२५,

शेष ६० को ६० से गुणा करने से ३६०० इतना हुआ, इसमें चौंतीस जोड़ कर फिर ५०४ से भाग देने से =

$\frac{३६००+३४}{५०४} = \frac{३६३४}{५०४}$ = लब्ध घटी ७,

शेष = १०६ को फिर साठ से गुणा कर गुणन फल में ३१ जोड़ कर ५०४ का भाग देने से =

$\frac{१०६ \times ६०+३१}{५०४} = \frac{६३६०+३१}{५०४} = \frac{६३९१}{५०४}$ = लब्ध पला = १२,

$\frac{६३९१}{५०४}$ = लब्ध पला = १२,

शेष = २४३, 'अर्धाधिके रूपं ग्राह्यम्' इस नियम से पला १३ ग्रहण किया,

अतः लब्ध दिनादि = (३४२५।७।१३),

दिन में तीस का भाग देने से लब्ध मासादि = (११४।५।७।१३),

मास में १२ का भाग देने से लब्ध वर्षादि = (९।६।५।७।१३), सूर्य की आयु हुई।

रवि बुध के घर (कन्या) में है, वह रवि का शत्रु है अतः पूर्वानीत आयु में अपना तृतीयांश ३।२।१४।२।२४ घटाकर

शेष=(६।४।३।२४।४९) इतना हुआ।

रवि को लग्न से द्वादश में होने के कारण पूर्वानीत सब आयुर्दाय का नाश करेगा, क्योंकि पापग्रह है।

अतः रवि की स्पष्टायु शून्य हुई।

एवं गणितागत चन्द्र की वर्षादि आयु=(१५।३।२०।५५।२४),

किन्तु चन्द्र लग्न से नवम भाव में बैठा है अतः इसका

चतुर्थांश=(३।९।२७।४३।५१) घटाने से

चन्द्र की स्पष्टायु=(११।५।२३।११।३३),

गणितागत मङ्गल की वर्षादि आयु=(९।३।१४।२२।३९),

किन्तु मङ्गल लग्न से एकादश में है अतः साधित आयु का

आधा=(४।७।२२।११।१९।३०) नाश करेगा

ग्रहों के आयुश्चक्र—

ग्रह	वर्षादि आयु
रवि	००।००।००।००।००
चन्द्र	११।५।२३।११।३३
मङ्गल	४।७।२२।११।१९।३०
बुध	००।००।००।००।००
गुरु	१०।८।१४।१२।४७
शुक्र	९।६।२६।४३।२६
शनि	११।३।२५।२२।१
लग्न	६।६।१९।५८।४८
योग	५३।११।११।००।२४।३०

अतः कुज की स्फुटायु=(४।७।२२।११।१९।३०)

गणितागत बुध की आयु=(१६।८।०।१५।५४),

किन्तु रवि के साथ होकर बुध लग्न से व्यय-स्थान में है अतः सब आयु का नाश हो गया।

अतः स्पष्ट बुधायु शून्य हुई।

गणितागत गुरु की वर्षादि आयु=(१०।४।१४।१२।४७) इसमें कुछ विशेषता न होने के कारण यही स्पष्टायु हुई।

गणितागत शुक्र की वर्षादि आयु=(९।६।२६।४३।२६) इस की भी यही स्पष्टायु हुई॥

गणितागत शनि की वर्षादि आयु=(११।३।२५।२२।१) इसमें भी कुछ विशेषता न होने के कारण यही स्फुटायु हुई।

पूर्व कथित युक्ति से लग्नायु=(६।६।१९।५८।४८)

इसकी उपपत्ति—

पठित परमायुःप्रमाण (१२० वर्ष ५ दिन) को दिनात्मक बनाकर सात का भाग देने से दिनात्मक उच्चस्थित ग्रह का आयुःप्रमाण=

$\frac{\text{१२०}\times\text{१२}\times\text{३०}+\text{५}}{\text{७}} = \frac{\text{४३२००}+\text{५}}{\text{७}} = \frac{\text{४३२०५}}{\text{७}}$ ।

यहां अनुपात किया कि उच्चस्थित ग्रह में (उच्चग्रहान्तर बारह राशि के अंश ३६० में) $\frac{४३२०५}{७}$ इतना आयुर्दाय पाते हैं तो तात्कालिक उच्चग्रहान्तर में क्या लब्ध दिनादि ग्रहायु प्रमाण=

$$\frac{\frac{४३२०५}{७} + \text{उ. ग्र. अं.}}{३६०} = \frac{८६४१ \times \text{उ. ग्र. अं.}}{७ \times ७२} = \frac{८६४१ \times \text{उ. ग्र. अं.}}{५०४}।$$

यहां उच्चस्थानीय आयुर्दाय के वश अनुपात से ग्रहायुर्दाय लाने के कारण उच्च और ग्रह दोनों का अन्तर जो ज्यादा हो उसका ग्रहण करना ठीक ही है।

इससे जीवशर्मा के आयु का आनयन सब उपपन्न हुआ ॥ ९ ॥

सत्याचार्य के मत से आयुःसाधन प्रकार—

सत्योक्ते ग्रहमिष्टं लिप्तीकृत्वा शतद्वयेनाप्तम्।
मण्डलभागविशुद्धेऽब्दाः स्युः शेषात्तु मासाद्याः ॥ १० ॥

अब सत्याचार्य के मत से आयुःसाधन प्रकार को कहते हैं।

कलात्मक ग्रह बनाकर उसमें दो सौ का भाग देने से जो लब्धि आवे वह यदि बारह से ज्यादा हो तो उसमें बारह का भाग देकर जो शेष बचे उतने वर्ष और शेष पर से मास, दिन आदि का साधन करना चाहिए।

इस तरह ग्रह की वर्षादि आयु सिद्ध हो जायगी ॥ १० ॥

इसकी उपपत्ति

एक राशि में नव नवांश होते हैं, अतः कलात्मक एक नवांश का मान=

$\frac{१८००}{९} = २००$।

अब तात्कालिक ग्रह की भुक्त नवांश संख्या जानने के लिये उसको कलात्मक बनाकर अनुपात किया कि २०० कला में नवांश संख्या एक पाते हैं तो ग्रह कला में क्या =

$$\frac{\text{ग्रहकला}}{२००} = \text{लब्धभुक्तनवांश संख्या} + \frac{\text{शे}}{२००}।$$

भुक्त नवांशराशि के समान वर्षग्रहण करने के कारण तथा राशि संख्या बारह ही होने के कारण लब्ध भुक्त नवांश संख्या में बारह का भाग देना उचित ही है।

वर्षावशेष $= \frac{\text{शेषकला}}{२००}$ को बारह से गुणाकर मासात्मक बनाकर उसमें दो सौ का भाग देने से लब्ध मास आवेगा।

फिर मासावशेष को तीस से गुणा करने से दिनात्मक होगा, उसमें दो सौ का भाग देने से लब्ध दिन होगा।

फिर दिन शेष को ६० से गुणा कर दो सौ का भाग देने से लब्ध घटी, फिर घटी शेष को ६० से गुणा कर पलादि साधन करना चाहिये ॥ १० ॥

सत्याचार्य के मत से आनीत आयु का संस्कार—

स्वतुङ्गवक्रोपगतैस्त्रिसंगुणं द्विरुत्तमस्वांशकभत्रिभागगैः ।
इयान्विशेषस्तु भदत्तभाषिते समानमन्यत्प्रथमेऽप्युदीरितम् ॥११॥

सत्याचार्य के मत से आयुर्दाय लाकर जो ग्रह अपने उच्चस्थान में बैठा हो या वक्री हो उसके आयुर्दाय को त्रिगुणित कर देना चाहिए ।

तथा जो ग्रह अपने वर्गोत्तम नवांश में, अपने नवांश में या अपने द्रेष्काण में हो उसके आयुर्दाय को द्विगुणित कर देना चाहिए ।

अन्य आचार्यों की अपेक्षा यह क्रिया सत्याचार्य के मत में विशेष है । और क्रिया मय, यवन आदि आचार्यों के समान समझना चाहिए ।

अर्थात् शत्रु गृह में स्थित ग्रह का तृतीयांश हानि, अस्तङ्गत ग्रह की आधी हानि और चक्रार्ध हानि ये सब समान ही हैं ।

जैसे मय, यवन आदि के आयुर्दाय में किया गया है वैसे यहाँ पर भी करना चाहिए ॥ ११ ॥

लग्नायुर्दाय में विशेषता—

किन्त्वत्र भांशप्रतिमं ददाति वीर्यान्विता राशिसमं च होरा ।
क्रूरोदये चापचयः स नात्र कार्यं च नाब्दैः प्रथमोपदिष्टैः ॥१२॥

मेषादि से आरम्भ करके लग्न में जितनी नवांश संख्या भुक्त हुई हों उतने वर्ष और शेष अंश आदि पर से लब्ध मासादि के तुल्य लग्न का आयुर्दाय होता है ।

यदि लग्न बली हो अर्थात् अपने स्वामी या बुध, गुरु से युत दृष्ट हो तो मेषादि से भुक्त राशि तुल्य वर्ष और शेष अंशादि पर से जो मासादि हो उतनी आयु और देती है ।

तथा पाप ग्रह लग्न में होने से 'सार्धोदितोदितनवांशहता' इत्यादि प्रकार से जो मय, यवन आदि आचार्यों के मत से आयुर्दाय में ह्रास कहा गया है वह सत्याचार्य के मत से नहीं करना चाहिए ।

तथा पूर्व कथित से भी यहाँ नहीं करना चाहिए । अर्थात् 'नवतिथि विषयाश्वि-भूत' इत्यादि से या 'ग्रहदायं परमायुषः स्वरांशम्' इससे कथित वर्षों द्वारा सत्याचार्य के मत से लग्नायुर्दाय नहीं लाना चाहिये, यही इनके मत में विशेषता है ।

उदाहरण—

श्रीमन्नृपतीन्द्रविक्रमसम्वत्सरे = १९९५, शालिवाहनशके = १८६०, सन् = १३४६, साल, फाल्गुनकृष्णतृतीयायां घट्यादिमानम्=(१।५१) तदुपरि चतुर्थी, उत्तरफाल्गुनी-

नक्षत्रे घट्यादिमानम् = (४२।४९), सुकर्मायोगे घट्यादिमानम् = (३५।४२), विष्टिकरणे घट्यादिमानम् = (१।५१), तदुत्परि ववकरणम्, मङ्गलवासरे श्रीसूर्यभुक्तमकरांशकाद्याः=(२५।६।५१), तत्र श्रीमन्मार्तण्डमण्डलार्धोदयाद्गतेष्टघट्यः=(२६।८), दिनमानम् = (२७।१८), मिश्रमानम् = (४३।४०) ।

मिश्रेष्टान्तरार्णम् = (११७।३२) ।

तात्कालिकोऽर्कः = (९।२४।४९।१३) ।

अयनांशाः = (२१।३५।५१) ।

प्रथमलग्नं राश्यादि = (३।१८।५३।४२) ।

दिवापश्चिमनतम् = (१२।२९), उन्नतम् = (१७।३१) ।

भयातम् = (४०।२४) भभोगः = (५७।५) ।

आङ्ग्लीयदिवसम् = (७-२-१९३९ ई०) अस्मिन् समये मत्स्नेहिनः कस्यचिच्छ्र्यादिनामार्णविभूषितस्य जन्म जातम् ।

रवि	९।२४।४९।१३	गति	६०।५४
चन्द्र	५।६।६।११	गति	
मङ्गल	७।१०।५३।५	गति	३५।४३
बुध	९।२१।३।२१	गति	१०८।७
गुरु	१०।१६।१३।२६	गति	१३।२८
शुक्र	८।७।५६।११	गति	६५।११
शनि	११।१९।२२।२९	गति	४।५१
लग्न	३।१८।५३।४२	×	×
केतु	००।२२।१७।४८	गति	३।११
गति	६।२२।१७।४८	गति	३।११

जन्म कुण्डली—

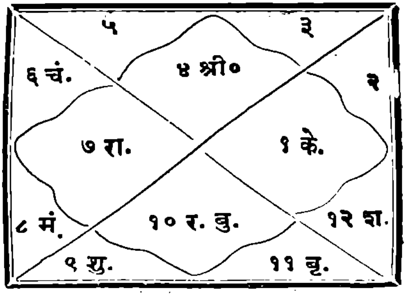

यहां पर स्पष्ट सूर्य=(९।२४।४९।१३) की कला=(१७६८९।१३) में २०० का भाग देने से लब्धि=८८, बारह से अधिक है,

अतः बारह का भाग देने से शेष = ४, वर्ष हुए ।

वर्ष शेष = (८९।१३) को बारह से गुणा करने से गुणन फल = (१०६८।१५६) का एक जातीय करने से (१०७०।३६) इतना हुआ ।

इसमें २०० का भाग देने से लब्धि मास = ५,
शेष = (७०।३६) को ३० से गुणा कर दो सौ का भाग देने से
$\frac{(७०।३६)३०}{२००} = \frac{(२१००।१०८०)}{२००} = \frac{२११८'०}{२००}$ = लब्धि दिन = १०,
शेष = ११८।० को ६० से गुणा कर दो सौ का भाग देने से =
$\frac{६०\times(११८०)}{२००} = \frac{३(११८'०)}{१०} = \frac{३\times५९}{५} = \frac{१७७}{५}$ = लब्धि घटी = ३५,
शेष = $\frac{२}{५}$ को साठ से गुणा करने से =
$\frac{२\times६०}{५}$ = २ × १२ = २४ = पला ।
इस तरह सूर्य के वर्षादि आयुर्दाय = (४।५।१०।३५।२४),
स्पष्ट चन्द्र = (५।६।६।११) की कला = (९३६६।११) में दो सौ का भाग देने से=
$\frac{(९३६६।११)}{२००}$,
लब्धि = ४६ में १२ का भाग दिया तो शेष = १० वर्ष हुए।
वर्ष शेष = $\frac{१६६।११}{२००}$, को बारह से गुणा कर भाग देने से =
$\frac{१२(१६६।११)}{२००}$
$\frac{३(१६६।११)}{५०} = \frac{(४९८।३३)}{५०}$, लब्धि मास = ९,
शेष = $\frac{(४८।३३)}{५०}$ को ३० से गुणा कर भाग देने से =
$\frac{३०(४८।३३)}{५०} = \frac{३(४८।३३)}{५} =$
$\frac{(१४४।९९)}{५} = \frac{(१४५।३९)}{५}$, लब्धि दिन = २९,
शेष विकलात्मक = $\frac{३९}{५}$ को कलात्मक बनाकर =
$\frac{३९}{६०\times५}$ साठ से गुणा करने से $\frac{३९}{५}$ इतना हुआ, भाग देने से लब्धि घटी=७,
शेष=$\frac{४}{५}$ को साठ से गुणा कर भाग देने से=$\frac{६०\times४}{५}$=१२ × ४=४८=लब्धपला,
अतः वर्षादि चन्द्र आयुर्दाय = १०।९।२९।७।४८,

स्पष्ट मङ्गल = (७।१०।५३।५) की कला १३२५३।५ में दो सौ का भाग देकर लब्धि (६६) में बारह का भाग देने से शेष = ६ वर्ष हुए।

वर्षावशेष को बारह से गुणा कर भाग देने से =
$१२\frac{(५३।५)}{२००} = \frac{३(५३।५)}{५०} =$
$\frac{(१५९।१५)}{५०}$, लब्ध मास = ३,
मासावशेष को तीस से गुणा कर भाग देने से =
$\frac{(९।१५)३०}{५०} = \frac{(९।१५)३}{५} =$
$\frac{(२७।४५)}{५}$, लब्धि दिन = ५,

फिर दिनावशेष को ६० से गुणा कर भाग देने से = $\frac{६०(२।४५)}{५}$ = १२ (२।४५) = (२४।५४०) = ३३।००, घटी पला,

अतः कुजायु = (६।२।५।३३।००)

स्पष्ट बुध = (९।२१।३।२१) को कला = (१७४६३।२१) में दो सौ का भाग देकर लब्धि = ८७ में बारह का भाग देने से शेष = ३, वर्ष हुए,

वर्षावशेष को १२ से गुणा कर हर का भाग देने से = $\frac{(६३।२१)१२}{२००}$ = $\frac{(६३।२१)३}{५०}$ = $\frac{(१८९।६३)}{५०}$ = $\frac{१९०।३०}{५०}$, लब्ध मास = ३,

मासावशेष = $\frac{(४०।३२)}{५०}$ को तीस से गुणा कर हर का भाग देने से = $\frac{(४०।३२)३०}{५०}$ = $\frac{(४०।३२)३}{५}$ = $\frac{१२०।९६}{५}$, लब्ध दिन = २४,

दिनावशेष = $\frac{१}{५}$ विकलात्मक है, अतः कमलात्मक करके साठ गुणा कर भाग देने से = $\frac{१×६०}{६०×५}$ = $\frac{१}{५}$, लब्ध घटी = १,

शेष = $\frac{४}{५}$ को साठ गुणाकर भाग देने से लब्ध पला = $\frac{४×६०}{५}$ = ४८ ।

अतः वर्षादि बुधायु = (३।३।२४।१।४८)

स्पष्ट गुरु = (१०।१६।१३।४६) की कला = (१८९७३।४६) में दो सौ का भाग देकर लब्धि = ९४ में १२ का भाग देने से शेष = १० वर्ष हुए,

वर्षावशेष = (१७३।४६) को बारह से गुणा कर हर का भाग देने से शेष = $\frac{१२(१७३।४६)}{२००}$ = $\frac{३(१७३।४६)}{५०}$ = $\frac{(५१९।१३८)}{५०}$ = $\frac{(५२१।१८)}{५०}$ लब्धि मास = १०,

मास शेष = $\frac{(२१।१८)}{५०}$ को ३० से गुणा कर हर का भाग देने से = $\frac{३०(२१।१८)}{५०}$ = $\frac{३(२१।१८)}{५}$ = $\frac{(६३।५४)}{५}$, लब्धि दिन = १२,

दिन शेष = $\frac{३।५४}{५}$ को साठ से गुणा कर हर का भाग देने से = $\frac{६०(३।५४)}{५}$ = १२ (३।५४) = (३६।६४८) = (४६।४८) = क्रम से घटी पला आई ।

अतः गुरु की आयु = (१।१०।१२।४६।४८)

स्पष्ट शुक्र = (८।८।५६।११) की कला = (१४८७६।११) में दो सौ का भाग देकर लब्धि = ७४ में १२ का भाग देने से शेष = २, वर्ष हुए ।

वर्ष शेष = $\frac{७६।११}{२००}$ को १२ से गुणा कर हर का भाग देने से = $\frac{१२(७६।११)}{२००}$ = $\frac{३(७६।११)}{५०}$ = $\frac{(२२८।३३)}{५०}$, लब्धि मास = ४,

मास शेष = $\frac{(२८।३३)}{५०}$ को तीस से गुणा कर हर का भाग देने से = $\frac{३०(२८।३३)}{५०}$ = $\frac{३(२८।३३)}{५}$ = $\frac{(८४।९९)}{५}$ = $\frac{(८५।३९)}{५}$, लब्धि दिन = १७,

शेष को कलात्मक बनाया तो $\frac{\frac{३९}{६०}}{५}$ = $\frac{३९}{६०×५}$ इसको साठ से गुणा कर

हर का भाग देने से = $\frac{३९+६०}{६०\times५}$ = $\frac{३९}{५}$, लब्धि घटी = ७, शेष $\frac{४}{५}$ को साठ से गुणा कर हर का भाग देने से पला = ४८ ।

अतः शुक्रायु = (२।४।१७।७।४८) ।

स्पष्ट शनि = (११।१९।२२।१९) की कला = (२०९६२।१९) में दो सौ का भाग देकर लब्धि = १०४ में १२ का भाग देने से शेष = ८, वर्ष हुए ।

वर्षावशेष = $\frac{(१६२।१९)}{२००}$ को १२ से गुणा कर हर का भाग देने से =
$\frac{१२(१६२।१९)}{२००}$ = $\frac{३(१६२।१९)}{५०}$ = $\frac{४८६।५७}{५०}$, लब्धि मास = ९,

शेष = $\frac{(३६।५७)}{५०}$ को तीस से गुणा कर हर का भाग देने से =
$\frac{३०(३६।५७)}{५०}$ = $\frac{३(३६।५७)}{५०}$ = $\frac{(१०८।१७१)}{५}$ = $\frac{(११०।५१)}{५}$ लब्धिदिन=२२,
शेष = $\frac{५१}{५}$ को कलात्मक बना कर साठ से गुणा किया तो = $\frac{५१\times६०}{६०\times५}$ = $\frac{५१}{५}$,
हर का भाग देने से लब्धि घटी=१०, शेष $\frac{१}{५}$ को साठ से गुणा कर हर का भाग देने से पला= $\frac{१\times६०}{५}$ = १२ ।

अतः शनि की आयु = (८।९।२२।१०)

एवं लग्न = ३।१८।५३।४२) की कला में = (६५३३।४२) में २०० का भाग देकर लब्धि = ३२ में १२ का भाम देने से शेष = ८ वर्ष हुए ।

वर्षावशेष = (१३३।४२) को १२ से गुणा कर दो सौ का भाग देने से =
$\frac{१२(१३३।४२)}{२००}$ = $\frac{३(१३३।४२)}{५०}$ = $\frac{(३९९।१२६)}{५०}$ = $\frac{(४०१।६)}{५०}$ लब्धि मास=८,
शेष = $\frac{(१।६)}{५०}$ को तीस से गुणा कर हर का भाग देने से =
$\frac{३०(१।६)}{५०}$ = $\frac{३(१।६)}{५}$ = $\frac{(३।१८)}{५}$ लब्धि दिन = ०,
शेष $\frac{३।१८}{५}$ को साठ से गुणा कर हर का भाग देने लब्धि घटी पला क्रम से—
$\frac{६०(३।१८)}{५}$ = १२(३।१८) (३६।२१६ = ३९।३६ ।

अतः लग्नायु वर्षादि = (८।८।०।३९।३६),

परञ्च सूर्य तात्कालिक सम (शनि) के गृह (मकर) में स्थित होकर लग्न से सप्तम में बैठा है,

अतः साधित आयुर्दाय में षष्ठांश = (०।८।२६।४५।५४) हानि करने से आयु = (४।५।१०।३४।२४)-(।०।८।२६।४५।५४।) = (३।८।१३।४९।३०) हुई ।

तथा यह अपने नवांश में बैठा है अतः साधित आयुर्दाय द्विगुणित करने से स्फुटायु = ७।४।२७।३९।००,

चन्द्र और मङ्गल का पूर्वानीत आयुर्दाय स्पष्ट रहा क्योंकि उक्त विशेषता कुछ भी नहीं है ।

बुध लग्न से ७ में है अतः पूर्वायुर्दाय =

(३।३।२४।१४४) का षष्ठांश=०।६।१९।०।१८, घटाने से शेष आयु=२।९।५।११।३०,
अस्तङ्गत होने के कारण इसका आधा नाश करने से शेष=११४।१७।३०।४५,

परञ्च बुध अपने द्रेष्काण में है, अतः इसको दूना करने से

बुध की स्फुटायु=(२।९।५।११।३०)

गुरु तात्कालिक मित्र (शनि) के गृह (कुम्भ) में बैठ कर लग्न से अष्टम में पड़ता है।

ग्रह	वर्षादि आयु
रवि	७।४।२७।३१।००
चन्द्र	१०।९।२९।७।४८
मङ्गल	६।३।५।३३।००
बुध	२।९।५।११।३०
गुरु	९।९।५।१२।६
शुक्र	२।४।१७।७।४८
शनि	६।७।९।७।३९
लग्न	८।८।०।३९।३६
योग	५४।८।९।२८।२७

अतः साधित आयु (१०।१०।५।४६।४८) के पञ्चमांश=(२।२।११९।२४) के

आधे=(१।१।०।३४।४२) की

हानि करने से=(९।९।५।१२।६) आयु

यही स्पष्टायु हुई।

शुक्र में कोई विशेषता नहीं है अतः पूर्व साधित आयु ही स्पष्ट हुई=(२।४।१७।७।४८)।

शनि गुरु के घर (मीन) होकर लग्न से नवम में हैं,

अतः पूर्व साधित आयु=(८।९।२२।१०।१२) का चतुर्थांश=२।२।१३।२।३३ नाश करने से।

शनि की स्पष्ट आयु=६।७।९।७।३९,

सब का योग करने से जातक की आयु=(५४।८।९।२८।२७)॥ १२॥

सत्याचार्य का मत सर्वश्रेष्ठ और उसमें अनुचित क्रिया करने वालों के ऊपर आक्षेप—

सत्योपदेशो वरमत्र किन्तु कुर्वन्त्ययोग्यं बहुवर्गणाभिः।
आचार्यकत्वं च बहुघ्नताया कं तु यद्भूरि तदेव कार्यम्॥ १३॥

वराहमिहिर का कथन है कि मयादि, जीवशर्मा, सत्याचार्य इन तीनों में सत्याचार्य का मत श्रेष्ठ है।

किन्तु बहुत लोग इन के मत से लाई हुई आयु में भी बहुवर्गणा के द्वारा ('स्वतुङ्गवक्रोपगतैः' इत्यादि से प्राप्त गुणन को बार बार करके, अयोग्य (अनुचित) कर डालते हैं।

आचार्यकत्व (आचार्यत्व=पाण्डित्य) तो यही है कि बहुत गुणनता प्राप्त होने पर जो ज्यादा हो उसीका ग्रहण करे।

इसका यह आशय है कि जो ग्रह वक्री होकर उच्च का हो सत्याचार्य के मत से उस ग्रह की आयु लाकर उसको 'स्वतुङ्गवक्रोपगतैः' इत्यादि प्रकार से वक्री

और उच्चगत होने के कारण दो बार त्रिगुणित नहीं करना चाहिए। किन्तु ऐसी स्थिति में साधित आयु को एक ही बार त्रिगुणित करना ठीक है।

इसी तरह जो ग्रह अपने नवांश, अपने द्रेष्काण या अपने वर्गोत्तम नवांश का होकर उच्चगत या वक्री हो ऐसी स्थिति में द्विगुणत्व, त्रिगुणत्व प्राप्त होने पर भी त्रिगुणत्व ही करना ठीक है।

एवं तृतीयांश और अर्ध दोनों साथ प्राप्त होने पर केवल अर्ध ही करना ठीक है ॥ १३ ॥

अमित आयु का योग

गुरुशशिसहिते कुलीरलग्ने शशितनये भृगुजे च केन्द्रयाते।
भवरिपुसहजोपगैश्च शेषैरमितमिहायुरनुक्रमाद्विना स्यात् ॥१४॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके आयुर्दायाध्यायः सप्तमः ॥७॥

बृहस्पति, चन्द्र इन दोनों से युत कर्क लग्न हो, बुध और शुक्र केन्द्र (१,४,७, १०) में हो,

शेष ग्रह (रवि, मङ्गल, शनि) लग्न से एकादश, षष्ठ, तृतीय इन स्थानों में स्थित हों तो,

गणित प्रकार से आई हुई आयु को छोड़कर उस जातक की अमित (प्रमाण वर्जित) आयु होती है ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायामायुर्दायाध्यायः सप्तमः।

अथ दशान्तर्दशाध्यायोऽष्टमः।

लग्नसहित ग्रहों के दशाक्रम—

उदयरविशशाङ्कप्राणिकेन्द्रादिसंस्थाः
प्रथमवयसि मध्येऽन्त्ये च दद्युः फलानि।
न हि न फलविपाकः केन्द्रसंस्थाद्यभावे
भवति हि फलपक्तिः पूर्वमापोक्लिमेऽपि ॥ १ ॥

लग्न, रवि, चन्द्र इन तीनों में जो अधिक बलवान् हो पहले उनकी दशा होती है। फिर उसके बाद जो चार केन्द्र स्थान हों उनमें स्थित ग्रहों की दशा होती है।

फिर उसके बाद मध्य समय में प्रथम दशाप्रद से पणफर स्थित ग्रहों की दशा होती है ।

उसके बाद अन्त काल में प्रथम दशाप्रद से आपोक्लिम में स्थित ग्रहों की दशा होती है ।

अगर केन्द्र या पणफर में ग्रहाभाव हो तो प्रथम और मध्य वयस में फल नहीं होता है । किन्तु इस स्थिति में अन्त समय में आपोक्लिम स्थान स्थित ग्रहों की ही दशा होती है ॥ १ ॥

उदाहरण—

श्रीमन्नृपतीन्द्रविक्रमसम्वत्सरे = १९९३, शालिवाहनशके = १८५८, सन = १३४४ साल, आश्विनकृष्णसप्तम्यां घट्यादिमानम् = (१४।३२), आर्द्रानक्षत्रे घट्यादिमानम् = (३८।५४), परिघयोगे घट्यादिमानम् = (४९।१४), ववकरणे घट्यादिमानम् = (१४।३२),

बुधवासरे श्रीसूर्यभुक्तकन्यांशकाद्याः = (२०।५५।४१), तत्र श्रीमन्मार्तण्डमण्डलार्धोदयाद्गतेष्टघट्यः = (२।११),

दिनमानम्=(२९।१०), मिश्रमानम्=(४४।४१), मिश्रेष्टान्तरधनम्=(२।१७।३०), तात्कालिकोऽर्कः = (५।२०।१३।२८), अयनांशाः = (२१।२३।४४), प्रथमलग्नं राश्यादि = (६।१।५१।६), भयातम् = (२१।२०), भभोगः = (५८।३), आङ्ग्लीयदिवसम् = (७-१०-१९३६ ई०) अस्मिन् समये मत्स्नेहिनः कस्यचिच्छ्यादिनामार्णसम्वलितस्य जन्म जातम् ।

जन्म कुण्डली—

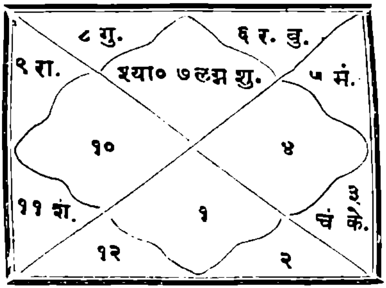

तात्कालिक स्फुटग्रह सगतिक—

रवि	५।२०।१३।२८	गति	५९।१४
चन्द्र	२।११।३४।००	गति	८२६।५२
मङ्गल	४।१३।३।५८	गति	३७।५६
बुध	५।६।७।५६	गति	१२।००
गुरु	७।२७।११।४६	गति	८।२७
शुक्र	८।१८।२।१०	गति	७३।११
शनि	१०।२२।१७।५२	गति	४।४०
राहु	८।७।९।२६	गति	३।११
केतु	२।७।९।२६	गति	३।११

इस कुण्डली में लग्न, रवि, चन्द्र इन तीनों में लग्न के स्वामी शुक्र स्वगृही का होकर लग्न में बैठा है, रवि नीचासन्न में है, चन्द्रमा उच्चासन्न का होकर अतिमित्र के घर में बैठा है।

एवं बल का विचार करने से सबसे बली लग्न ही होता है। अतः सबसे पहले दशा लग्न की होगी उसके केन्द्र में केवल शुक्र बैठा है, अतः लग्न के बाद शुक्र की दशा हुई।

इसके लग्न से पणफर में गुरु, शनि, मङ्गल ये तीन ग्रह हैं, इनमें सबसे बली गुरु है, क्योंकि अतिमित्र के गृह में होकर अपने नवांश में है अतः शुक्र के बाद गुरु की दशा हुई।

इसके बाद अतिमित्र के नवांश और अतिमित्र के गृह में स्थित मङ्गल की दशा हुई।

तदनन्तर शनि की दशा होगी।

इसके बाद लग्न से आपोक्लिम में स्थित चन्द्र, रवि, बुध ये तीन ग्रह हैं।

इनमें बुध उच्च में होने के कारण बली हुआ, अतः इसके बाद बुध की, उसके बाद उच्चासन्न में स्थित चन्द्र बली है, अतः बुध की दशा के अनन्तर चन्द्र की दशा होगी, इसके बाद नीचासन्न में स्थित रवि की दशा सिद्ध हुई।

अतः क्रम से दशापति लग्न, शुक्र, गुरु, मङ्गल, शनि, चन्द्र और रवि हुए।

यथा यवनेश्वर–निशाकरादित्यविलग्नमध्ये तत्कालयोगादधिकं बलं यः ।

विभर्ति तस्यादिदशेष्यते सा शेषास्ततः शेषबलक्रमेण ॥
पूर्वं तु केन्द्रोपगताः फलन्ति मध्ये वयः पाणफरं निविष्टाः ।
आपोक्लिमस्थाः फलदा वयोऽन्त्ये यथाबलं स्वं समुपैति पूर्वम् ॥

तथा लघुजातक—लग्नार्कशशांकानां यो बलवांस्तद्दशा भवेत्प्रथमा ।

तत्केन्द्रपणफरापोक्लिमोपगानां बलाच्छेषाः ॥ १ ॥

दशावर्ष प्रमाण—

आयुः कृतं ये न हि यत्तदेव कल्प्या दशा सा प्रबलस्य पूर्वम् ।
साम्ये बहूनां बहुवर्षदस्य तेषां च साम्ये प्रथमोदितस्य ॥ २ ॥

पूर्व कथित प्रकार से जिस ग्रह की जितनी आयुर्दाय संख्या हो, उस ग्रह की उतनी दशा होती है । यह दशा भी बल के अनुसार होती है । अर्थात् सबसे बली ग्रह की दशा प्रथम होती है ।

अगर दो, तीन आदि ग्रहों में बल की समता हो तो उनमें जिसके अधिक वर्ष हों उसकी दशा प्रथम होती है ।

अगर वर्ष में भी समता हो तो सूर्य के निकट वश जिसका प्रथम उदय हुआ हो उसकी दशा प्रथम होती है ।

यहाँ पर गार्गि का वचन—

बली लग्नेन्दुसूर्याणां दशामाद्यां प्रयच्छति ।
तस्मात्ततः प्रयच्छन्ति केन्द्रादिस्थाः क्रमेण तु ॥
तत्रापि बलिनः पूर्वं तत्साम्ये बहुदायकाः ।
तत्साम्येऽपि प्रयच्छन्ति ये पूर्वं रविविच्युता ॥ २ ॥

अथायुर्दशाचक्र—

लग्न	६।६।१९।५८।४८	सम्वत्	२०००	सूर्य	०।१०।१२।२६
शुक्र	९।६।२६।४३।५६	,,	२००९	सूर्य	७।६।५६।२२
गुरु	१०।४।१४।१२।४७	,,	२०१९	सूर्य	११।२१।९।९
मङ्गल	४।७।२२।११।१९	,,	२०२४	सूर्य	७।१३।२०।२८
शनि	११।३।२५।२२।१	,,	२०३५	सूर्य	११।८।४२।२९
बुध	००।००।००।००	,,	२०३५	सूर्य	११।८।४२।२९
चन्द्र	११।५।२३।११।३३	,,	२०४६	सूर्य	५।१।५४।२
रवि	००।००।००।००।००	,,	२०४७	सूर्य	५।१।५४।२

अब अन्तर्दशा प्रकार—

> एकर्क्षगोऽर्द्धमपहृत्य ददाति तु स्वं
> त्र्यंशं त्रिकोणगृहगः स्मरगः स्वरांशम्।
> पादं फलस्य चतुरस्रगतः सहोरा-
> स्त्वेवं परस्परगताः परिपाचयन्ति ॥ ३ ॥

अब अन्तर्दशा के ज्ञान के प्रकार को कहते हैं, दशापति के साथ में जितने ग्रह हों उनमें सबसे बलवान् जो ग्रह हो वह दशापति के आयुर्दाय के आधे का अन्तर्दशाधिप होता है।

इसके बाद नवम, पञ्चम इन दोनों स्थानों में स्थित ग्रहों में जो बलवान् हो वह दशापति के आयुर्दाय के तृतीयांश का अन्तर्दशाधिप होता है।

इसके बाद दशाधीश से सप्तम स्थान में स्थित ग्रहों में बलवान् ग्रह दशाधीश के आयुर्दाय के सप्तमांश का अन्तर्दशाधिप होता है।

इसी तरह चतुर्थ, अष्टम, इन दोनों स्थानों में स्थित ग्रहों में बलवान् ग्रह चतुर्थांश का अधिप होता है।

इस तरह लग्न सहित सब ग्रह प्रत्येक की दशा में अपनी २ अन्तर्दशा का स्थान ग्रहण करके तत्काल में अपना २ फल देते हैं।

तथा स्वल्पजातकमें—

> एकर्क्षगोऽर्धं त्र्यंशं त्रिकोणयोः सप्तमे तु सप्तांशम्।
> चतुरस्रयोस्तु पादं पाचयति गतो ग्रहः स्वगुणैः ॥

तथा भगवान् गार्गि—

> एकर्क्षेऽवस्थितश्चार्धं त्रिभागं तु त्रिकोणगः।
> सप्तमस्थः स्मरांशं तु पादं तु चतुरष्टगः ॥
> लग्नेन सहिताः सर्वे ह्यन्योन्यफलदायकाः।

एवं यवनेश्वर—

> कालोऽर्धभागैकगृहाश्रितस्य तदर्धभागं लभते चतुर्थे।
> त्रिभागभागी च त्रिकोणसंस्थस्तदर्धभाक् स्याच्च पृथक् त्रिकोणे ॥
> स्यात्सप्तमे सप्तमभागभागी स्थितो ग्रहश्चारवशाद्ग्रहस्य।

इस तरह सर्वत्र एक वचन का ही निर्देश किया गया है अतः त्रिकोण आदि में स्थित ग्रहों में एक ही ग्रह पाचक होता है।

तथा सत्याचार्य—

> अर्धं तृतीयमर्धात्तथार्द्धं स्वाच्च सप्तमं भागम् ।
> एकर्क्षनवमपञ्चमचतुर्थनिधनाद्यसप्तानाम् ॥

दद्युर्ग्रहा ग्रहाणां स्वदशास्वन्तर्दशाख्यानाम् ।
फलकालोन्मिश्रविविधं क्रमेण भेद्याश्च तेऽप्येवम् ॥
एकर्क्षगेषु बलवान् भागहरो मित्रतो रिपोर्वापि ।
मित्रे च पुष्टफलं तस्मिन् काले रिपुर्नैवम् ॥

तथा यम—

एकर्क्षोपगतानां यो भवति बलाधिको विशेषेण ।
एकः स एव हर्ता नान्ये तत्र स्थिता विहगाः ॥

एक स्थान में अनेक ग्रह बैठे हों तो उनमें जो सबसे ज्यादा बलवान् हो केवल एक वही ग्रह अपने अंश का पाचक होता है इस से यह स्पष्ट हो गया कि जहाँ पर दशापति से प्रथम, चतुर्थ, पञ्चम, सप्तम, अष्टम और नवम इन स्थानों में कोई ग्रह न हों तो उस ग्रह की दशा के अन्तर्गत अन्य ग्रह की अन्दर्दशा न होगी, किन्तु वही ग्रह अन्तर्दशाधिप भी होता है ॥ ३ ॥

उदाहरण—

लग्न की दशा में अन्तर्दशा लानी है, तो लग्न में लग्न का $\frac{1}{1}$ पाचक हुआ ।

लग्न के साथ केवल एक शुक्र है इसलिये शुक्र आधा ($\frac{1}{2}$) का पाचक हुआ ।

लग्न से पञ्चम में शनि और नवम में चन्द्रमा है, इनमें शनि बली है, इसलिये शनि तृतीयांश ($\frac{1}{3}$) का पाचक हुआ ।

तथा लग्न से सप्तम, चतुर्थ, अष्टम इन तीनों में ग्रह नहीं है, अतः यहाँ का पाचक कोई नहीं हुआ ।

इस तरह लग्न की दशा में लग्न ($\frac{1}{1}$), शुक्र ($\frac{1}{2}$), शनि ($\frac{1}{3}$) अन्तर्दशा पाचक हुए ।

अन्तर्दशा वर्ष लाने का प्रकार—

स्थानान्यथैतानि सवर्णयित्वा सर्वाण्यधश्छेदविवर्जितानि ।
दशाब्दपिण्डे गुणका यथांशं छेदस्तदैक्येन दशाप्रभेदः ॥ ४ ॥

पूर्व कथित प्रकार से लाये हुए अन्तर्दशा पाचक भागों को सवर्णन (अन्योन्यहाराभिहतौ हरांशौ' इत्यादि पाटीगणितोक्त प्रकार से समच्छेद) करने से नीचे जो छेद हों उनको त्याग देना;

तथा ऊपर जो अलग-अलग अंश हों उनको अपने-अपने दशा वर्ष के गुणक और सब अंशों के योग को भाजक कल्पना करके अन्तर्दशा साधन करना चाहिए ।

अर्थात् पूर्वसाधित दशा वर्ष को अपने-अपने गुणक से गुणा कर भाजक से भाग देने से अन्तर्दशा। वर्षा.द साधन करना चाहिए ॥ ४ ॥

उदाहरण—

पूर्वसाधित अन्तर्दशा पाचक भाग

ग्रह	लग्न	शुक्र	शनि
अंश	१	१	१
छेद	१	२	३

अन्योन्यहाराभिहतौ इत्यादि प्रकार से समच्छेद करने से

ग्रह	लग्न	शुक्र	शनि
अंश	६	३	२
छेद	६	६	६

अपना २ अंश गुणक और सबों का योग ६+३+२= ११=भाजक कल्पना करने से—

ग्रह	लग्न	शुक्र	शनि
गुणक	६	३	२
भाजक	११	११	११

अधश्छेदों को त्याग देने से—

ग्रह	लग्न	शुक्र	शनि
अंश	६	३	२

अब लग्न की दशा (६।६।१९।५८।४८) को अपने गुणक (६) से गुणा करके ६(६।६।१९।५८।४८)=(३६।३६।११४।३४८।२८८)=
(३९।३।२९।५२।४८) इसमें भाजक (११) का भाग देने से वर्षादि लग्न की अन्तर्दशा=(३।६।२७।१५।४२),

लग्न की दशा को शुक्र के गुणक तीन से गुणा करके=
३ (६।६।१९।५८।४८)=(१८।१८।५७।१७४।१४४)
(१९।७।२९।५४।२४), इसमें भाजक (११) का भाग देने से वर्षादि शुक्र की अन्तर्दशा=(१।९।१३।३७।३९),

फिर लग्न की दशा को शनि के गुणक दो से गुणा करके=२ (६।६।१९।५८।४८)=
(१२।१२।३८।११६।९६)=(१३।१।९।५७।३६), इसमें भाजक (११) का भाग देने से लब्ध वर्षादि शनि की अन्तर्दशा=(१।२।९।५।१४)

ग्रह	दशावर्षादि	सम्वत्	सूर्यराश्यादि
लग्न	३।६।२७।१५।४२	१९९७	०।१७।२९।२०
गुरु	१।९।१३।३७।३९	१९९८	१०।१।७।११
शनि	१।२।९।५।१४	२०००	०।१०।१२।२५

इस तरह शुक्र आदि के दशा में भी अन्तर्दशा लानी चाहिए।

स्थानादिबलक्रम से दशा की संज्ञा और फल—

सम्यग्बलिनः स्वतुङ्गभागे सम्पूर्णा बलवर्जितस्य रिक्ता ।
नीचांशगतस्य शत्रुभागे ज्ञेयाऽनिष्टफला दशा प्रसूतौ ॥ ५ ॥

जन्मकाल में जो ग्रह पूर्व कथित स्थानादि चारों बल से युक्त हो और अपने परमोच्च स्थान में बैठा हो तो उस ग्रह की सम्पूर्णा नाम की दशा होती है ।

यह सम्पूर्ण दशा सब शुभ कामों को देनेवाली होती है ।

तथा जो ग्रह स्थानादि बलों से रहित हो, अपने परमनीच स्थान में हो या शत्रु राशि या नवांश में हो तो उस ग्रह की दशा रिक्ता नाम की होती है ।

यह दशा सब तरह से अशुभ फल देने वाली होती है ।

यहाँ पर भगवान् गार्गि—

सर्वैर्बलैरुपेतस्य परमोच्चगतस्य वै । सम्पूर्णा सा दशा ज्ञेया धनारोग्यविवर्धिनी ॥
सर्वैर्बलैर्विहीनस्य नीचराशिगतस्य च । रिक्तानामदशा ज्ञेया व्याध्यनर्थविवर्धिनी ॥

ग्रहों के बल अनेक तरह से लाये जाते हैं किन्तु इस ग्रन्थ में चार बल (स्थान बल, चेष्टाबल, कालबल, दिग्बल) कहे गये हैं । जो ग्रह इन सब बलों से युक्त हो वह बली कहलाता है और जो चारो बलों से हीन हो वह निर्बल कहलाता है इसके मध्य में तारतम्य से बल जानना चाहिए ॥

भगवान् गार्गि

स्वोच्चराशिगतस्याथ किञ्चिद्बलयुतस्य वै । पूर्णा नाम दशा ज्ञेया धनवृद्धिकरी शुभा ॥
यः स्यात्परमनीचस्थस्तथा चारिनवांशके । तस्यानिष्टफला नाम व्याध्यनर्थविवर्धिनी ॥

दशान्तर्दशा के संज्ञान्तर—

भ्रष्टस्य तुङ्गादवरोहिसञ्ज्ञा मध्या भवेत्सा सुहृदुच्चभागे ।
आरोहिणी निम्नपरिच्युतस्य नीचारिभांशेष्वधमा भवेत्सा ॥ ६ ॥

जो ग्रह अपने परमोच्च भाग से आगे और नीच से पीछे छे राशियों में कहीं स्थित हो उस ग्रह की दशा अवरोहिणी नाम की होती है । यह अशुभ फल को देनेवाली होती है । अगर ग्रह मित्र के राशि, मित्र के नवांश, अपनी उच्च राशि या अपने नवांश में हो तो वह अवरोहिणी दशा मध्यम फल देनेवाली होती है ।

अगर ग्रह अपने परमनीच से आगे और उच्च से पीछे छे राशियों में कहीं स्थित हो तो उसकी दशा आरोहिणी कहलाती है । वह शुभ फल देने वाली होती है, अगर ग्रह नीच राशि के नवांश या शत्रु राशि के नवांश में हो तो वही आरोहिणी दशा अशुभ फल देने वाली होती है ॥ ६ ॥

यहाँ पर भगवान् गार्गि का वचन—

उच्चनीचान्तरस्थस्य दशा स्यादवरोहिणी ।

तस्यामल्पमवाप्नोति फलं क्लेशाच्छुभं नरः ॥
मित्रोच्चारमांशकस्थस्य मध्या मध्यफला तु सा ।
नीचोच्चमध्यगस्योक्ता श्रेष्ठा चारोहिणी दशा ॥
सैवाधमाख्या भवति नीचराश्यंशगस्य तु ।
अवरोहिणी चेदधमा भवेत्कष्टफला तदा ॥
आरोहिणी मध्यफला सम्पूर्णा परिकीर्तिता ।

दशाओं के नामान्तर और फल—

नीचारिभांशे समवस्थितस्य शस्ते गृहे मिश्रफला प्रदिष्टा ।
सञ्ज्ञानुरूपाणि फलान्यथैषां दशासु वक्ष्यामि यथोपयोगम् ॥ ७ ॥

जो ग्रह प्रशस्त राशि (उच्चराशि, मूलत्रिकोण राशि, अपनी राशि और मित्र की राशि) में स्थित होकर नीच राशि या शत्रु राशि के नवांश में बैठा हो तो उसकी मिश्रफला नाम की दशा होती है, इसका फल भी मिश्रित (अशुभ, शुभ फलों का मिश्रित) फल होता है ॥ ७ ॥

भगवान् गार्गि—

उच्चनीचान्तरस्थस्य दशा स्यादवरोहिणी ।
तस्यामल्पमवाप्नोति फलं क्लेशाच्छुभं नरः ॥
मित्रोच्चारमांशकस्थस्य मध्या मध्यफला हि सा ।
नीचोच्चमध्यगस्योक्ता श्रेष्ठा चारोहिणी दशा ॥
सैवाधमाख्या भवति नीचराश्यंशगस्य तु ।

लग्न की शुभाशुभ दशा—

उभयेऽधममध्यपूजिता द्रेष्काणेश्चरभेषु चोत्क्रमात् ।
अशुभेष्टसमाः स्थिरे क्रमाद्धोरायाः परिकल्पिता दशा ॥ ८ ॥

द्विस्वभाव राशि लग्न में हो तो द्रेष्काण के क्रम से अधम, मध्यम और उत्तम लग्न की दशा होती है ।

जैसे लग्न में प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो अधम, द्वितीय द्रेष्काण हो तो मध्यम और तृतीय द्रेष्काण हो तो उत्तम फल देने वाली लग्न की दशा होती है ।

अगर चर राशि लग्न में हो तो इसका उलटा फल देती है ।

जैसे प्रथम द्रेष्काण में उत्तम, द्वितीय द्रेष्काण में मध्यम और तृतीय द्रेष्काण में अधम फल देती है ।

यदि लग्न में स्थिर राशि हो तो प्रथम द्रेष्काण में अशुभ, द्वितीय द्रेष्काण में उत्तम और तृतीय द्रेष्काण में मध्यम फल देने वाली दशा होती है ॥ ८ ॥

स्वाभाविक ग्रहदशा समय—

एकं द्वौ नव विंशतिर्धृतिकृती पञ्चाशदेषां क्रमा-
च्चन्द्रारेन्दुजशुक्रजीवदिनकृद्दिवाकरीणां समाः।
स्वैः स्वैः पुष्टफला निसर्गजनितैः पक्तिर्दशाया क्रमा-
दन्ते लग्नदशा शुभेति यवना नेच्छन्ति केचित्तथा ॥ ६ ॥

जन्म समय से आरम्भ कर एक वर्ष तक चन्द्रमा का, उसके बाद दो वर्ष तक मङ्गल का, उसके बाद नव वर्ष तक बुध का, उसके बाद बीस वर्ष तक शुक्र का, उसके बाद अट्ठारह वर्ष तक गुरु का, उसके बाद बीस वर्ष तक सूर्य का और उसके बाद पचास वर्ष तक शनि का नैसर्गिक दशा काल होता है। इन सबों का योग करने से १२० वर्ष होते हैं।

ये नैसर्गिक दशा के स्वामी बली होकर उपचय स्थान में बैठे हों तो दशा फल शुभ देते हैं।

अगर निर्बल होकर अनुपचय में (उपचय भिन्न स्थान में) हों तो अशुभ फल देते हैं।

तथा च यवनेश्वर—

स्तन्योपभोगः शशिनो वयः स्वं भौमस्य विद्याद्दशनानुजन्म।
बौधं तु शिक्षाप्रदकालमाहुरामैथुनेच्छाकुलितप्रवृत्तिः॥
शौक्रं युवत्वं गृहपूर्वदृष्टमामध्यमाद्देवगुरोर्वदन्ति।
रवेर्वयोर्द्धपरमन्यदस्मात्सौरेर्जरादुर्भगकालमाहुः ॥

इससे ज्यादा जिसका आयुर्दाय हो उसको शनि के बाद से आरम्भ कर आयु समाप्ति पर्य्यन्त लग्न की दशा होती है। इस दशा को यवनाचार्य प्रभृति शुभ कहते हैं, किन्तु अन्य आचार्य द्रेष्काण वश शुभ-अशुभ दोनों मानते हैं।

किसी का मत है कि जब परमायु प्रमाण एक सौ बीस वर्ष पाँच रोज ही कहा गया है तो ग्रहों की दशा ही इसके लिये पर्य्याप्त है, अन्तः लग्न की दशा प्राप्त ही नहीं हो सकती।

पर ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि सत्याचार्य आदि के मत से आयु आनयन करने से दो सौ वर्ष से भी ज्यादा आयु आती है।

तथा प्रत्यक्ष में देखते भी हैं कि एक सौ बीस वर्ष से ज्यादा कितने जीते हैं।

ऐसे लोगों को आखिर में लग्न की दशा समझनी चाहिए।

यहाँ लोगों की शंका निवारण के लिये एक सौ बीस वर्ष से ज्यादा आयु का उदाहरण दिखाते हैं।

जैसे किसी मनुष्य का जन्म मीन लग्न और मीन ही के नवांश में हो, और सब ग्रह अपने-अपने उच्च में अथवा वक्री होकर किसी राशि में मीन राशि के नवांश

में हों। पर सूर्य न वक्री हो सकता और न अपने उच्च में होकर मीन के नवांश में हो सकता अतः वह अपनी उच्च राशि के अन्तिम नवांश (धनु के नवांश) में हो,

तथा लग्न अपने स्वामी और गुरु, बुध से युत दृष्ट हो, एवं सब ग्रह चक्र के पूर्वार्ध में ही बैठे हों तो ऐसी स्थिति में सत्याचार्य के मत से सूर्य का आयुर्दाय ९ को त्रिगुणित करने से स्पष्टायु = २७, हुई।

अन्य ग्रहों को वक्री होकर उच्च में रहने के कारण बारह वर्ष के त्रिगुणित = १२ × ३ = ३६, वर्ष स्पष्टायु होगी।

लग्न को मीन के नवांश में होने के कारण १२ वर्ष, किन्तु लग्न को बल युत होने के कारण राशि तुल्य वर्ष और देगा, अतः स्पष्ट लग्नायु = २४।

सब का योग करने से योग फल =

र. चं. मं. बु. गु. शु. श. ल.

२७ + ३६ + ३६ + ३६ + ३६ + ३६ + ३६ + २४ =

२६७ आया। अतः अन्त में लग्न की दशा होती है यह कहना ठीक है।

यहाँ पर सत्याचार्य का वचन—

एकाब्दिकः शशी ऽ्याब्दिकः कुजो द्वादशाब्दिकः सौम्यः।
द्वात्रिंशद्भृगुपुत्रो गुरुस्तु कथितः शतस्यार्द्धम्॥
सप्तत्यब्दः सूर्यो विंशत्यधिकः शनैश्चरोऽब्दशतः।
वयसोऽन्तराणि चैषां स्वदशा नैसर्गिकः कालः॥
स्वं स्वं वयसः सदृशं ग्रहः समासाद्य देहिनां कालम्।
रक्षणपोषणचेष्टस्वभावदाः स्युर्यथासंख्यम्॥

श्रुतिकीर्ति का वचन—

अन्ते लग्नदशा शुभेति यवना नैतद्बहूनां मतम्।
तस्मिन् हीनबले यतोऽन्त्यसमये सा स्यादतो नेष्यते॥

अर्थ—स्पष्ट है।

दशारम्भ कालिक लग्न और ग्रह के वश शुभाशुभ फल—

पाकस्वामिनि लग्नगे सुहृदि वा वर्गेऽस्य सौम्येऽपि वा
प्रारब्धा शुभदा दशा त्रिदशषड्लाभेषु वा पापके॥
मित्रोच्चोपचयत्रिकोणमदने पाकेश्वरस्य स्थिति-
श्चन्द्रः सत्फलबोधनानि कुरुते पापानि चातोऽन्यथा॥ १०॥

दशा के स्वामी लग्न में बैठा हो, अथवा दशास्वामी के मित्र लग्न में हो, अथवा दशापति या उसके मित्र के वर्ग लग्न में हो, अथवा शुभग्रह या शुभग्रह के वर्ग लग्न में हो अथवा दशा के स्वामी लग्न तृतीय, षष्ठ, दशम या एकादश स्थान में हो तो इस तरह के समय में आरम्भ हुई दशा शुभ फल देने वाली होती है

गोचर वश चन्द्र दशापति के मित्र राशि, उच्च राशि या दशाधीश से उपचय स्थान (३, ६, १०, ११) में जब आता है तब शुभ फल देता है। अन्यथा अशुभ फल देता है, अर्थात् दशापति के शत्रु राशि, नीच राशि उपचय से भिन्न स्थान में चन्द्रमा हो तो अशुभ फल देता है ॥

काल ज्ञान सौर, सावन, चन्द्र, नाक्षत्र ये चार तरह से होते हैं,
सूर्य के एक-एक अंश भोग करने से सौर बनता है,
एक-एक तिथि के भोग से चन्द्र बनता है,
सूर्योदय से सूर्योदय पर्य्यन्त एक-एक सावन बनता है।
चन्द्रमा के एक नक्षत्र भोग करने से नाक्षत्र बनता है।

किसी का वचन—

राश्यंशभोगोऽहोरात्रः सौरश्चान्द्रमसस्तिथिः।
चन्द्रनक्षत्रभोगस्तु नाक्षत्रः परिकीर्तितः॥
स सावनो ग्रहाणामुदयादुदयावधि।
नाक्षत्रमाने मासः स्यात्सप्तविंशतिवासराः।
शेषमानेषु निर्दिष्टो मासस्त्रिंशदिनात्मकः।

इस तरह चार काल विभाग होते हैं, इनमें दशा वर्षादि सावन मान से ही ग्रहण करना चाहिए।

यथा भगवान् गार्गि का वचन—

आयुर्दायविभागश्च प्रायश्चित्तक्रियास्तथा।
सावनेनैव कर्तव्याः सत्राणामप्युपासनम् ॥ १० ॥

दशा के आरम्भ काल में चन्द्रवश शुभाशुभ—

प्रारब्धा हिमगौ दशास्वगृहगे मानार्थसौख्यावहा
कौजे दूषयति स्त्रियं बुधगृहे विद्यासुहृद्वित्तदाः।
दुर्गारण्यपथालये कृषिकरी सिहे सितर्क्षेऽन्नदा
कुस्त्रीदा मृगकुम्भयोगुरुगृहे मानार्थसौख्यावहा ॥ ११ ॥

जिस समय में दशा का प्रारम्भ हो उस समय में कर्क राशि में चन्द्रमा बैठा हो तो उस दशा में सम्मान, धन और सुख होता है।

मङ्गल के घर (मेष या वृश्चिक) में हो तो स्त्री को दूषित करता है, अर्थात् उसकी स्त्री को किसी चाल का कष्ट हो या अपवाद हो।

बुध के घर (मिथुन या कन्या) में चन्द्रमा बैठा हो तो उस समय में दुर्ग, जङ्गल, मार्ग और घर में खेती करने से बहुत लाभ होता है।

शुक्र के घर (वृष या तुला) में चन्द्रमा बैठा हो तो दुष्ट स्त्री का साथ होता है।

गुरु राशि (धनु या मीन) में चन्द्रमा बैठा हो तो मान, धन और सुख मिलता है ॥ ११ ॥

सूर्य के शुभाशुभ दशाफल—

सौर्यो स्वनखदन्तचर्मकनककौर्याध्वभूपाहवै-
स्तैक्ष्ण्यं धैर्यमजस्रमुद्यमरतिः ख्यातिः प्रतापोन्नतिः ।
भार्यापुत्रधनारिशस्त्रहुतभुग्भूपोद्भवा व्यापद-
स्त्यागी पापरतिः स्वभृत्यकलहो हृत्कोडपीडामया ॥ १२ ॥

शुभ स्थान में स्थित सूर्य की दशा में नख (सुगन्धि द्रव्य या व्याघ्रनख आदि), दन्त (हाथी के दाँत आदि), चर्म (मृग, व्याघ्र आदि का चर्म), सुवर्ण, क्रूरकर्म, मार्ग, राजा और युद्ध से धन का लाभ होता है।

एवं अन्तःकरण में कठोरता, धैर्य, सर्वदा उद्योग में स्नेह, कीर्ति और प्रताप की वृद्धि होती है।

अशुभ स्थान में स्थित सूर्य की दशा में स्त्री, पुत्र, धन, शत्रु, शस्त्र, अग्नि और राजा से नाना प्रकार की विपत्ति होती है।

तथा अधिक खर्च, पाप कर्म से स्नेह, अपने भृत्यों के साथ झगड़ा और हृदय और पेट में पीडा से रोग होता है।

अगर सूर्य शुभ, पाप दोनों से सम्बन्ध रखता हो तो मिश्रित फल समझना चाहिये।

चन्द्रमा के शुभाशुभ दशा फल—

इन्दोः प्राप्य दशां फलानि लभते मन्त्रद्विजात्युद्भवा-
नीक्षुक्षीरविकारवस्त्रकुसुमक्रीडातिलान्नश्रमैः ।
निद्रालस्यमृदुद्विजामररतिः स्त्रीजन्म मेधाविता
कीर्त्यर्थोपचयक्षयौ च बलिभिर्वैरं स्वपक्षेण च ॥ १३ ॥

चन्द्रमा की दशा काल में मन्त्र के द्वारा (आगम, निगमोक्त मन्त्र के द्वारा) तथा ब्राह्मणों के द्वारा लाभ, गुड़, चीनी, दूध, दही, घृत, वस्त्र, पुष्प, जुआ आदि खेल, तिल, अन्न और श्रम से शुभ फल मिलता है।

अशुभ स्थान स्थित चन्द्रमा के दशा काल में निद्रा आलस्य, दया, देव ब्राह्मण में भक्ति, कन्या का जन्म, बुद्धि की वृद्धि, यश-धन की वृद्धि तथा क्षय, बली शत्रु और अपने जनों से बैर होता है ॥ १३ ॥

मङ्गल की दशा में शुभाशुभ फल—

भौमस्यारिविमर्दभूपसहजक्षित्याविकाजैर्धनं
प्रद्वेषः सुतदारमित्रसहजैर्विद्वद्गुरुद्वेष्टृता ।

तृष्णासृग्ज्वरपित्तभङ्गजनिता रोगाः परस्त्रीकृताः
प्रीतिः पापरतैरधर्मनिरतिः पारुष्यतैक्ष्ण्यानि च ॥ १४ ॥

शुभ स्थान में स्थित मङ्गल की दशा में शत्रुओं की पराजय, राजा, सहोदर, भूमि, भेड़, बकरे आदि से धन मिलता है।

अशुभ स्थान में स्थित मङ्गल की दशा में पुत्र, मित्र, स्त्री, सहोदर इन सबों से द्वेष, पण्डित तथा गुरुजनों में अभक्ति, तृष्णा, रुधिर के कोप से ज्वर, पित्ताधिक्य, अङ्गों के भङ्ग आदि से रोग, परस्त्री से प्रेम, पापियों में भक्ति, अधर्म के मार्ग में प्रवृत्ति, कठोर वाणी और कठोर स्वभाव होता है।

बुध की दशा में शुभाशुभ फल—

बौध्यां दौत्यसुहृद्गुरुद्विजधनं विद्वत्प्रशंसा यशो
युक्तिद्रव्यसुवर्णवेसरमहीसौभाग्यसौख्याप्तयः ।
हास्योपासनकौशलं मतिचयो धर्मक्रियासिद्धयः
पारुष्यं श्रमबन्धमानसशुचः पीडा च धातुत्रयात् ॥ १५ ॥

शुभ स्थान में स्थित बुध की दशा में दूत कर्म, मित्र, गुरुजन, ब्राह्मण इन सबों से धन का लाभ, पण्डितों के द्वारा प्रशंसा, सुयश, कांसा, पित्तल आदि धातु, सोना, घोड़ा, जमीन, सौभाग्य और सुख की प्राप्ति होती है।

हास्य तथा उपासना (सेवा) में कुशलता, बुद्धि की वृद्धि और धर्म कार्य में सिद्धि होती है।

अशुभ स्थान में स्थित मङ्गल की दशा में कठोर वचन, परिश्रम, बन्धन, मन में दुःख और कफ, पित्त, वात इन तीनों से पीड़ा होती है ॥ १५ ॥

गुरु की दशा में शुभाशुभ फल—

जैव्यां मानगुणोदयो मतिचयः कान्तिः प्रतापोन्नति-
र्माहात्म्योद्यममन्त्रनीतिनृपतिस्वाध्यायमन्त्रैर्धनम् ।
हेमाश्वात्मजकुञ्जराम्बरचयः प्रीतिश्च सद्भूमिपैः
सूक्ष्मोहाद्गहनश्रमः श्रवणरुग्वैरं विधर्माश्रितैः ॥ १६ ॥

शुभ स्थान में स्थित गुरु की दशा में सम्मान, गुणों की वृद्धि, बुद्धि की वृद्धि, सुन्दर कान्ति, पराक्रम से उन्नति, माहात्म्य (परोपकारित्व), उद्योग, मन्त्र (विचार), नीति, राजा और स्वाध्याय (पाठ आदि) इन सबों के द्वारा धन का लाभ होता है।

सोना, वस्त्र, घोड़ा, हाथी और पुत्र इन सबों की वृद्धि तथा राजा से प्रीति होती है।

अशुभ स्थान स्थित गुरु की दशा में सूक्ष्म वस्तु के विचार करने से परिश्रम, कर्णरोग और पापियों से प्रीति होती है ॥ १६ ॥

शुक्र की दशा में शुभाशुभ फल—

शौक्रयां गीतरतिप्रमोदसुरभिद्रव्यान्नपानाम्बर-
स्त्रीरत्नद्युतिमन्मथोपकरणज्ञानेष्टमित्रागमाः ।
कौशल्यं क्रयविक्रये कृषिनिधिप्राप्तिर्धनस्यागमो
वृन्दोर्वीशनिषादधर्मरहितैर्वैरं शुचः स्नेहतः ॥ १७ ॥

शुभ स्थान में स्थित शुक्र की दशा में गान में स्नेह, आनन्द, सुगन्धित द्रव्य में अभिलाषा, सुन्दर भोजन, पीने की वस्तु, वस्त्र, स्त्री, रत्न, कान्ति, विलास के सामान, ज्ञान और मित्र जनों से समागम होता है।

तथा क्रय विक्रय में चतुरता, खेती से लाभ और गड़े हुए धन की प्राप्ति होती है।

अशुभ स्थान में स्थित शुक्र की दशा में जनों के समूह, राजा, निषाद (भिल्ल आदि) पापियों के साथ शत्रुता, पापियों से प्रेम करने से दुःख होता है ॥ १७ ॥

शनि की दशा में शुभाशुभ फल—

सौरीं प्राप्य खरोष्ट्रपक्षिमहिषीवृद्धाङ्गनावाप्तयः
श्रेणीग्रामपुराधिकारजनिता पूजा कुधान्यागमः ।
श्लेष्मेर्ष्यानिलकोपमोहमलिनव्यापत्तितन्द्राश्रमान्
भृत्यापत्यकलत्रभर्त्सनमपि प्राप्नोति च व्यङ्गताम् ॥ १८ ॥

शुभ स्थान में स्थित शनि की दशा में गदहा, ऊँट, पक्षी, भैंस, वृद्धा स्त्री का सङ्ग, जनों के समूह, गाँव, नगर (शहर) के अधिकार से सम्मान और निन्दित अन्न की प्राप्ति होती है।

अशुभ स्थान में स्थित शनि की दशा में कफ, ईर्ष्या, वातव्याधि, मूर्छा, मालिन्य से विपत्ति, तन्द्रा, श्रम, नौकर, सन्तान, स्त्री इन सबों से अनादर और अङ्गभङ्ग होता है ॥ १८ ॥

शुभाशुभ फल के समय विभाग—

दशासु शस्तासु शुभानि कुर्वन्त्यनिष्टसञ्ज्ञास्वशुभानि चैवम् ।
मिश्रासु मिश्राणि दशाफलानि होरा फलं लग्नपतेः समानम् ॥१६॥

पूर्वोक्त ग्रहों के दशा फल जो कहे गये हैं, उनमें ग्रह अपनी शुभ दशा में शुभ फल और अशुभ दशा में अशुभ फल देता है तथा शुभ, अशुभ दोनों से मिश्रित दशा में मिश्रित फल देता है।

इसी तरह लग्नेश की स्थिति वश लग्न दशा का शुभाशुभ फल समझना चाहिए। अर्थात् लग्नेश शुभ स्थान में हो तो शुभ फल, अशुभ स्थान में हो तो अशुभ फल और मिश्रित स्थान में हो तो मिश्रित फल लग्न दशा का समझना चाहिए ॥ १९ ॥

यहाँ पर सत्याचार्य—

जन्मन्युपचयभवनेषु संस्थिताः सन्यगाः सुमूर्तिधराः ।
श्रेष्ठं फलं विदध्युर्ग्रहाः क्रमात्स्वां दशां प्राप्य ॥
अन्यैर्निहिता रूक्षाल्पमूर्तयो ह्यपचयर्क्षसंस्थाश्च ।
स्वदशाभिहतं नेष्टं ग्रहाः प्रयच्छन्ति लोकेषु ॥

तथा सारावली में—

प्रवेशे बलवान् खेटः शुभैर्वा सन्निरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो मृत्युकृन्न भवेत्तदा ॥
अन्तर्दशाधिनाथस्य विबलस्य दशा यदा ।
विबला स्यात्तदा भंगो न बाध्या तस्य च ध्रुवम् ॥
युद्धे च विजयी तस्मिन् ग्रहयोगे शुभे यदि ।
दशायां न भवेत्कष्टं स्वोच्चादिषु च सस्थिते ॥ २० ॥

सामान्य रूप से दशाओं का फल—

सञ्ज्ञाध्याये यस्य यद्द्रव्यमुक्तं कर्माजीवे यश्च यस्योपदिष्टः ।
भावस्थानालोकयोगोद्भवं च तत्तत्सर्वं तस्य योज्यं दशायाम् ॥२०॥

संज्ञाध्याय में जिस ग्रह का जो द्रव्य (वर्णास्ताम्रसितातिरक्त इत्यादि से) कहा गया है तथा वक्ष्यमाण कर्माजीवाध्याय में जिस ग्रह की जो वृत्ति कही जायगी । एवं भाव, स्थान सम्बन्धी दृष्टि, योग से उत्पन्न जो फल कहे जायेंगे वे सब उस ग्रह की दशा में जानना चाहिए ।

अर्थात् ग्रहों की शुभ दशा में फलों की प्राप्ति और अशुभ दशा में उन फलों की हानि समझनी चाहिए ॥ २० ॥

अज्ञात जन्म समयवालों की ग्रह दशा जानने का प्रकार—

छायां महाभूतकृतां च सर्वेऽभिव्यञ्जयन्ति स्वदशामवाप्य ।
कम्ब्वग्निवाय्वम्बरजान्गुणांश्च नासास्यदृक्त्वक्छ्रवणानुमेयान् ॥२१॥

जिस मनुष्य की जन्म दशा ज्ञात नहीं है उसकी कान्ति देखकर दशा जानने के प्रकार को कहते हैं । सब ग्रह अपनी-अपनी दशा में अपने-अपने महाभूत (संज्ञाध्याय में कथित तत्त्व) सम्बन्धी छाया (कान्ति) को प्राणियों के शरीर में प्रकट करता है ।

तथा नाक, मुख, दृष्टि, त्वचा और कान से ग्रहण लायक क्रम से पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के गुण को भी अपनी-अपनी दशा में प्रकट करता है ।

जैसे पृथ्वी तत्त्व का गुण गन्ध है, वह नाक से प्रकट होता है ।

जलतत्त्व का गुण रस है, वह जिह्वा से प्रकट होता है ।

अग्नि तत्त्व का गुण रूप है, वह दृष्टि से प्रकट करता है ।

वायुतत्त्व का गुण स्पर्श है, वह त्वचा से अनुमेय है।

आकाशतत्त्व का गुण शब्द है, वह कान से अनुमेय है।

अतः रवि और मंगल अपनी दशा में अग्नि की कान्ति, बुध भूमि की कान्ति, बृहस्पति आकाश की कान्ति, शुक्र और चन्द्रमा जल की कान्ति, शनैश्चर वायु की कान्ति को प्राणियों के शरीर में प्रकट करता है।

जैसे अग्नि की कान्ति रूप को, भूमि की कान्ति गन्ध को, आकाश की कान्ति शब्द को, जल की कान्ति रस को, वायु की कान्ति स्पर्श को प्रकाशित करती है।

भाव यह है कि शुभ स्थान में स्थित रवि और मंगल की दशा, अन्तर्दशा में स्वयं कान्तिमान् और सुन्दर-सुन्दर रूपों का दर्शन भी होता है।

अशुभ स्थानस्थित रवि और मंगल की दशा में स्वयं कान्तिहीन और कुत्सित रूप का दर्शन होता है।

शुभ स्थान में स्थित बुध की दशा में शरीर में सुगन्धि और सुगन्धि द्रव्य का लाभ होता है।

अशुभ स्थान में स्थित बुध की दशा में शरीर में दुर्गन्धि और कुत्सित गन्ध युक्त द्रव्य की प्राप्ति होती है।

शुभ स्थानस्थित गुरु की दशा में स्वयं मधुर बोलने वाला और गान आदि श्रवण सुख होता है।

अशुभ स्थान स्थित गुरु की दशा में स्वयं कटु बोलने वाला और कटु भाषण सुनने वाला होता है।

शुभ स्थानस्थित चन्द्र और शुक्र की दशा में अनेक प्रकार के रस युक्त भोजन मिलते हैं।

अशुभ स्थान स्थित चंद्र और शुक्र की दशा में खराब भोजन से दुःख मिलता है।

शुभ स्थानस्थित शनि की महादशा में इष्ट जनों के (स्त्री, पुत्र, मित्र आदि जनों के) स्पर्श से सुख मिलता है।

अशुभ स्थानस्थित शनि की दशा में कुत्सित जनों के स्पर्श से दुःख मिलता है।

जिसकी जन्मपत्री हो उसको ग्रह दशा काल में इन फलों को कहना चाहिए।

जिसकी पत्री न हो उसकी स्थिति जैसी हो उस तरह की स्थितिवाली ग्रह की दशा जाननी चाहिए।

विशेषलक्षण—

छायाशुभाशुभफलानि निवेदयन्ती लक्ष्या मनुष्यपशुपक्षिषु लक्षणज्ञैः।
तेजो गुणान्बहिरपि प्रविकाशयन्ती दीपप्रभास्फटिकरत्नघटस्थितेव॥
स्निग्धद्विजत्वङ्नखरोमकेशा छाया समुत्था च महीसमुत्था।
तुष्ट्यर्थलाभाभ्युदयान् करोति धर्मस्य चाहन्यहनि प्रवृद्धिम्॥

स्निग्धा सिता च हरिता नयनाभिरामा सौभाग्यमार्दवसुखाभ्युदयान् करोति ।
सर्वार्थसिद्धिजननी जननीव चाप्या छायाफलं तनुभृतां शुभमाददाति ॥
चण्डाधृष्या पद्महेमाग्निवर्णा युक्तं तेजोविक्रमैः सप्रतापैः ।
आग्नेयीति प्राणिनां स्याज्जयाय क्षिप्रं सिद्धिं वाञ्छितार्थस्य धत्ते ॥
मलिनपरुषकृष्णा पापगन्धानिलोत्था जनयति वधबन्धं व्याध्यनर्थार्थनाशम् ।
स्फटिकसदृशरूपा भाग्ययुक्ताऽभ्युदारा निधिरिव गगनोत्था श्रेयसां स्वच्छवर्णा ॥२१॥

दशा जानने का विशेष प्रकार—

शुभफलददशायां तादृगेवान्तरात्मा
बहु जनयति पुंसां सौख्यमर्थागमं च ।
कथितफलविपाकैस्तर्कयेद्वर्तमानां
परिणमति फलाप्तिः स्वप्नचिन्तास्ववीर्यैः ॥ २२ ॥

शुभ फल देने वाले ग्रहों की दशा में उसके समान अन्तरात्मा (जीवात्मा) होकर मनुष्यों को सब तरह के सुख और धन का लाभ कराते हैं ।

विना जन्मपत्री देखे दशा का ज्ञान—

जिस ग्रह के जो फल कहे गये हैं, उन फलों को भोगते हुए को देखकर वर्तमान दशा का अनुमान करना चाहिए । अर्थात् उस समय में तत्फलप्रद ग्रह की दशा उसको कहनी चाहिए ।

तथा जो ग्रह निर्बल रहता है वह अपनी दशा अन्तर्दशा में शुभाशुभ फल को स्वप्न या चिन्ता में प्राप्त कराता है ॥ २२ ॥

एक या भिन्न ग्रह के फल विरोध में फल का नियम—

एकग्रहस्य सदृशे फलयोर्विरोधे
नाशं वदेद्यदधिकं परिपच्यते तत् ।
नान्यो ग्रहः सदृशमन्यफलं हिनस्ति
स्वां स्वां दशामुपगताः सुफलप्रदाः स्युः ॥२३॥

इति वराहमिहिरकृते बृहज्जातके दशान्तर्दशाध्यायोऽष्टमः ॥ ८ ॥

अगर किसी एक ही ग्रह के दिये हुए शुभ, अशुभ दोनों फल समान हों तो उनका नाश होता है, अर्थात् उसका न तो शुभ ही फल और न तो अशुभ ही फल होता है ।

जैसे कोई ग्रह इस तरह की शुभ स्थिति में है जिससे कि राज्य देने वाला होता है । लेकिन वही दूसरी तरह से राज्य हरण करने वाला हो तो ऐसी स्थिति में न तो राज्य मिलेगा और न राज्य हरण होगा ऐसा फल जानना चाहिए ।

यदि शुभ, अशुभ दोनों फल में न्यूनाधिक हो तो जो अधिक हो वही फल होता है।

अर्थात् किसी एक ग्रह की अनेक तरह से शुभफल-दातृत्व शक्ति हो और किसी एक तरह से अशुभफल-दातृत्व शक्ति आवे तो शुभ फल ही देता है।

जैसे कोई एक ग्रह दो, तीन,······आदि तरह से राज्यप्रद हो और वही एक तरह से राज्यहर्ता हो तो वह ग्रह राज्यप्रद ही होगा।

परञ्च कोई ग्रह अपने तुल्य फल देने वाले अन्य ग्रह के फल को नाश नहीं करता है। किन्तु अपनी-अपनी दशा काल में अपना-अपना फल देता है।

जैसे कोई एक ग्रह राज्य देने वाला है और दूसरा, राज्य हरण करने वाला है तो ग्रह अपनी अपनी दशा में अपना अपना फल देगा, अर्थात् राज्य देने वाला ग्रह अपनी दशा में राज्य देगा और दूसरा अपनी दशा काल में राज्य हरण करेगा ऐसा जानना चाहिए॥ २३॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां दशान्तर्दशाध्यायोऽष्टमः।

अथाष्टकवर्गाध्यायो नवमः

सूर्य के अष्टकवर्गाङ्क—

स्वादर्कः प्रथमायबन्धुनिधनद्व्याज्ञातपो धूनगो
वक्रात्स्वादिव तद्वदेव रविजाच्छुक्रात्स्मरान्त्यारिषु।
जीवाद्धर्मसुतायशत्रुषु दशत्र्यायारिगः शीतगो-
रेष्वेवान्त्यतपःसुतेषु च बुधाल्लग्नात्सबन्ध्वन्त्यगः॥ १॥

सूर्य आदि सात ग्रह लग्न ये आठ स्थान अष्टक वर्ग में लिए जाते हैं।

ग्रह गोचरवश प्रत्येक राशि से जो शुभ अशुभ फल देते हैं, उसका विचार अष्टक वर्ग से किया जाता है। जन्म समय में जो ग्रह जिस स्थान में रहता है वही अपना स्थान है।

शुभ स्थान में बिन्दु और अशुभ स्थान में रेखा रखनी चाहिए।

सूर्य का अपने स्थान, मङ्गल युत स्थान और शनैश्चर स्थान से १,११,४,८,२,१०,९,७ इन स्थानों में गोचर का फल शुभ होता है। शुक्र से ७,१२,६, बृहस्पति से ९,५,११, ६, चन्द्रमा से १०,३,११,६, बुध से १०,३,११,६,१२,९,५, और लग्न से १०,३,११,६,४,१२, इन स्थानों में गोचर का फल शुभ देते हैं।

उक्त स्थानों से अनुक्त स्थान में गोचर का फल अशुभ देते हैं॥

रवि के शुभ अष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न
	१	३	१	३	५	६	१	३
	२	६	२	५	६	७	२	४
	४	१०	४	६	९	१२	४	६
शुभ	७	११	७	९	१	०	७	१०
अङ्क	८	०	८	१०	०	०	८	११
	९	०	९	११	०	०	९	१२
	१०	०	१०	१२	०	०	१०	०
	११	०	११	०	०	०	११	०

रवि के अशुभ अष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न
	३	१	३	१	१	१	३	१
	५	२	५	२	२	२	५	२
	६	४	६	४	३	३	६	५
अशुभ	१२	५	१२	७	४	४	१२	७
अङ्क	०	७	०	८	७	५	०	८
	०	८	०	०	८	८	०	९
	०	९	०	०	१०	९	०	०
	०	१२	०	०	१२	१०	०	०
	०	०	०	०	०	११	०	०

चन्द्र के अष्टक वर्गाङ्क—

लग्नात्षट्त्रिदशायगः सधनधीधर्म्मेषु चाराच्छशी
स्वात्सास्तादिषु साष्टसप्तसु रवेः षट्त्र्यायधीस्थो यमात्।
धीत्र्यायाष्टमकण्टकेषु शशिजाज्जीवाद् व्ययायाष्टगः
केन्द्रस्थश्च सितात्तु धर्मसुखधीत्र्यायास्पदानङ्गगः ॥ २ ॥

लग्न से ६,३,१०,११ मङ्गल से ६,३,१०,११,२,५,९ स्वस्थान से ६,३,१०,११,७,१ सूर्य से ६,३,१०,११,८,७ शनि से ६,३,११,५ बुध से ५,३,११,८,१,४,७,१० बृहस्पति से १२,११,८,१,४,७,१० और शुक्र से ९,४,५,३,११,१०, ७,

इन स्थानों में चन्द्रमा गोचर का फल शुभ देते हैं, उक्त स्थान से अनुक्त स्थान में होने से अशुभ फल देते हैं ॥ २ ॥

चन्द्र के शुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि
	१	२	१	१	३	३	३	३
	३	३	३	४	४	५	६	६
	६	५	४	७	५	६	१०	७
शुभ	७	६	५	८	७	११	११	८
अङ्क	१०	९	७	१०	९	०	०	१०
	११	१०	८	११	१०	०	०	११
	०	११	१०	१२	११	०	०	०
	०	०	११	०	०	०	०	०

चन्द्र के अशुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि
	२	१	२	२	१	१	१	१
	४	४	६	३	२	२	२	२
	५	७	९	५	६	४	४	४
अशुभ	८	८	१२	६	८	७	५	५
अङ्क	९	१२	०	९	१२	८	७	९
	१२	०	०	०	०	९	८	१२
	०	०	०	०	०	१०	९	०
	०	०	०	०	०	१२	१२	०

मङ्गल के अष्टक वर्गाङ्क—

षक्रस्तूपचयेष्विनात्सतनयेष्वाद्याधिकेषूदया-

च्चन्द्राद्दिग्विफलेषु केन्द्रनिधनप्राप्त्यर्थगः स्वाच्छुभः ।

धर्मायाष्टमकेन्द्रगोऽर्कतनयाज्ज्ञात्षट्त्रिधीलाभगः

शुक्रात्षड्व्ययलाभमृत्युषु गुरोः कर्मान्त्यलाभारिषु ॥ ३ ॥

सूर्य से ३,६,१०,११,५ लग्न से ३,६,१०,११,१ चन्द्रमा से ३,६,११ अपने स्थान से १,४,७,१०,८,११,२ शनि से ९,११,८,१,४,७,१० बुध से ६,३,५,११ शुक्र से ६,१२, ११,८ और बृहस्पति से १०,१२,११,६

इन स्थानों में मङ्गल गोचर का फल शुभ देते हैं। उक्त स्थान से अनुक्त स्थान में अशुभ फल देते हैं ॥ ३ ॥

मङ्गल के शुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र
	१	३	६	६	१	१	३	३
	२	५	१०	८	४	३	५	६
	४	६	११	११	७	६	६	११
शुभ	७	११	१२	१२	८	१०	१०	०
अङ्क	८	०	०	०	९	११	११	०
	१०	०	०	०	१०	०	०	०
	११	०	०	०	११	०	०	०
	०	०	०	०	०	०	०	०

मङ्गल के अशुभ अष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	सूर्य	चन्द्र
	३	१	१	१	२	२	१	१
	५	२	२	२	३	४	२	२
	६	४	३	३	५	५	४	४
अशुभ	९	७	४	४	६	७	७	५
अङ्क	१२	८	५	५	१२	८	८	७
	०	९	७	७	०	९	९	८
	०	१०	८	९	०	१२	१२	०
	०	१२	९	१०	०	०	०	१०
	०	०	०	०	०	०	०	१२

बुध के अष्टक वर्गाङ्क—

द्व्याद्यायाष्टतपःसुखेषु भृगुजात्सन्त्यात्मजेष्विन्दुजः
साज्ञास्तेषु यमारयोर्व्ययरिपुप्राप्त्यष्टगो वाक्पतेः ।
धर्मायारिसुतव्ययेषु सवितुः स्वात्साद्यकर्मत्रिगः
षट्स्वायाष्टसुखास्पदेषु हिमगोः साद्येषु लग्नाच्छुभः ॥ ४ ॥

शुक्र से २,१,११,८,९,४,३,५ शनि से २,१,११,८,९,४,१० मङ्गल से २,१,११,८,९,४,१०,७ बृहस्पति से १२,६,११,८ सूर्य से ९,११,६,५,१२ अपने स्थान से ९,११,६,५,१२,१,१०,३ चन्द्रमा से ६,२,११,८,४,१० और लग्न से ६,२,११,८,४,१०,१ इन स्थानों में बुध गोचर का फल शुभ देते हैं। उक्त स्थान से अनुक्त स्थान में अशुभ फल देते हैं ॥ ४ ॥

बुध के शुभ अष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल
	१	६	१	१	१	५	२	१
	३	८	२	२	२	६	४	२
	५	११	३	४	४	९	६	४
शुभ	६	१२	४	७	६	११	८	७
स्थान	९	०	५	८	८	१२	१०	८
	१०	०	८	९	१०	०	११	९
	११	०	९	१०	११	०	०	१०
	१२	०	११	११	०	०	०	११

बुध के अशुभ अष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल
अशुभ स्थान	२	१	६	३	३	१	१	३
	४	२	७	५	५	२	३	५
	७	३	१०	६	७	३	५	६
	८	४	१२	१२	९	४	७	१२
	०	५	०	०	१२	७	९	०
	०	७	०	०	०	८	१२	०
	०	९	०	०	०	१०	०	०
	०	१०	०	०	०	०	०	०

बृहस्पति के अष्टकवर्गाङ्क—

दिक्स्वाद्याष्टमदायबन्धुषु कुजात् स्वात्सत्रिगेष्वङ्गिराः
सूर्य्यात्सत्रिनवेषु धीस्वनवदिग्लाभारिगो भार्गवात् ।
जायायार्थनवात्मजेषु हिमगोर्मन्दात्त्रिषड्धीव्यये
दिग्धीषट्स्वसुखायपूर्वनवगो ज्ञात्सस्मरश्चोदयात् ॥ ५ ॥

मङ्गल से १०,२,१,८,७,११,४ अपने स्थान से १०,२,१,८,७,११,४,३,४ सूर्य से १०,२,१,८,७,११,४,३,९ शुक्र से ५,२,९,१० ११,६ चन्द्रमा से ७,११,२,९,५ शनैश्चर से ३,६,५,१२ बुध से १०,५,६,२,४,११,१,९ और लग्न से १०,५,६,२,४,११,१,९,७

इन स्थानों में बृहस्पति गोचर का फल शुभ देते हैं, उक्त स्थान से अनुक्त स्थान में अशुभ फल देते हैं ॥ ५ ॥

गुरु के शुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध
शुभ स्थान	१	२	३	१	१	२	१	१
	२	५	५	२	२	५	२	२
	३	६	६	४	३	७	४	४
	४	९	१२	५	४	९	७	५
	७	१०	०	६	७	११	८	६
	८	११	०	७	८	०	१०	९
	१०	०	०	९	९	०	११	१०
	११	०	०	१०	१०	०	०	११
	०	०	०	११	११	०	०	०

गुरु के अशुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध
अशुभ स्थान	५	१	१	३	५	१	३	३
	६	३	२	८	६	३	५	७
	९	४	४	१२	१२	४	६	८
	१२	७	७	०	०	६	९	१२
	०	८	८	०	०	८	१२	०
	०	१२	९	०	०	१०	०	०
	०	०	१०	०	०	१२	०	०
	०	०	११	०	०	०	०	०

शुक्र के अष्टकवर्गाङ्क—

लग्नादासुतलाभरन्ध्रनवगः सान्त्यः शशाङ्कात्सितः
स्वात्साज्ञेषु सुखत्रिधीनवदशच्छिद्राप्तिगः सूर्य्यजात् ।
रन्ध्रायव्ययगो रवेर्नवदशप्राप्त्यष्टधीस्थो गुरो-
र्ज्ञाद्धीत्र्यायनवारिगस्त्रिनवषट्पुत्राय सान्त्यः कुजात् ॥ ६ ॥

लग्न से १,२,३,४,५,११,८,९ चन्द्रमा से १,२,३,४,५,११,८,९,१२ अपने स्थान से १,२,३,४,५,११,८,९,१० शनि से ४,३,५,९,१०,८,११ सूर्य से ८,११,१२ बृहस्पति से ९,१०,११,८,५ बुध से ५,३,११,९,६ और मङ्गल से ३,६,६,५,११,१२

इन स्थानों में शुक्र गोचर का फल शुभ देते हैं, उक्त स्थान से अनुक्त स्थान में अशुभ फल देते हैं ॥ ६ ॥ शुक्र के शुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु
शुभ स्थान	१	३	१	८	१	३	३	५
	२	४	२	११	२	५	५	८
	३	५	३	१२	३	६	६	९
	४	८	४	०	४	९	९	१०
	५	९	५	०	५	११	११	११
	८	१०	८	०	८	१२	०	०
	९	११	९	०	९	०	०	०
	१०	०	११	०	११	०	०	०
	११	०	०	०	१२	०	०	०

शुक्र के अशुभ अष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	शुक्र	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु
अशुभ स्थान	६	१	६	१	६	१	१	१
	७	२	७	२	७	२	२	२
	१२	६	१०	३	१०	४	४	३
	०	७	१२	४	०	७	७	४
	०	१२	०	५	०	८	८	६
	०	०	०	६	०	१०	१०	७
	०	०	०	७	०	०	१२	१२
	०	०	०	९	०	०	०	०
	०	०	०	१०	०	०	०	०

शनि के अष्टकवर्गाङ्क—

मन्दः स्वात्त्रिसुतायशत्रुषु शुभः साज्ञान्त्यगो भूमिजा-
त्केन्द्रायाष्ट्रधनेष्विनादुपचयेष्वाद्ये सुखे चोदयात् ।
धर्मायारिदशान्त्यमृत्युषु बुधाच्चन्द्रात्त्रिषड्लाभगः
षष्ठायान्त्यगतः सितात्सुरगुरोः प्राप्त्यन्त्यधीशत्रुषु ॥ ७ ॥

अपने स्थान से ३, ५, ११, ६ मङ्गल से ३, ५, ११, ६, १०, १२ सूर्य से १, ४, ७, १०, ११, ८, २ लग्न से ३, ६, १०, ११, १, ४ बुध से ९, ११, ६, १०, १२, ८ चन्द्रमा से ३, ६, ११ शुक्र से ६, ११, १२ और बृहस्पति से ११, १२, ५, ६,

इन स्थानों में शनि गोचर का फल शुभ देते हैं, अनुक्त स्थान में अशुभ फल देते हैं ॥ ७ ॥

शनि के शुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र
शुभ स्थान	३	१	१	३	३	६	५	६
	५	३	२	६	५	८	६	११
	६	४	४	११	६	९	११	१२
	११	६	७	०	१०	१०	१२	०
	०	१०	८	०	११	११	०	०
	०	११	१०	०	१२	१२	०	०
	०	०	११	०	०	०	०	०
	०	०	०	०	०	०	०	०

शनि के अशुभ अष्टकवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	शनि	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र
	१	२	३	१	१	१	१	१
	२	५	५	२	२	२	२	२
अशुभ	४	७	६	४	४	३	३	३
स्थान	७	८	९	५	७	४	४	४
	८	९	१२	७	८	५	७	५
	९	१२	०	८	९	७	८	७
	१०	०	०	९	०	०	९	८
	१२	०	०	१०	०	०	१०	९
	०	०	०	१२	०	०	०	१०

इति निगदितमिष्टं नेष्टमन्यद्विशेषादधिकफलविपाकं जन्मभात्तत्र दद्युः।
उपचयगृहमित्रस्वोच्चगैः पुष्टमिष्टं त्वपचयगृहनीचारातिगैर्नेष्टसम्पत् ॥८॥

इति वराहमिहिरकृते बृहज्जातकेऽष्टकवर्गाध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

सूर्य आदि ग्रहों के उक्त सब स्थान शुभ और शेष स्थान अशुभ हैं।

जन्म राशि से प्रत्येक राशि में शुभ, अशुभ स्थानों का अन्तर करने से शुभ शेष बचे तो शुभ फल अशुभ शेष बचे तो अशुभ फल जानना चाहिये।

अर्थात् प्रत्येक ग्रह के उक्त स्थान (शुभ स्थान) में बिन्दु, अनुक्त स्थान (अशुभ स्थान) में रेखा देकर फल का विचार करें।

जैसे यदि आठों बिन्दु हों तो पूर्ण शुभ फल, रेखाएँ हों तो पूर्ण अशुभ फल, शुभ, अशुभ दोनों स्थान बराबर हों तो फल शून्य और न्यूनाधिक हो तो अनुमान से फल जानना चाहिए।

इस तरह लाये हुए शुभ स्थान, जन्मलग्न या जन्मकालिक चन्द्र राशि से तृतीय, षष्ठ, दशम, एकादश, अपने मित्र का स्थान, अपने स्थान या उच्च स्थान में पड़े तो पूर्ण शुभ फल देता है।

यदि १, २, ४, ५, ७, ८, ९, १२, अपने नीच स्थान या अपने शत्रु स्थान में पड़े तो पूर्ण शुभ फल नहीं देता है ॥ ८ ॥

ग्रन्थान्तर से एकादि विन्दु का फल—

क्लेशोऽर्थहानिर्व्यसनं समत्वं शश्वत्सुखं नित्यधनागमश्च।
सम्पत्प्रवृद्धिर्विपुलामलश्रीरेकादिविन्दोः फलमामनन्ति ॥

क्लेश १, धन की हानि २, दुःख ३, समान ४ (न अच्छा न बुरा), नित्य सुख ५, धन का आगम ६, सम्पत्ति की वृद्धि ७ और निष्कलङ्क लक्ष्मी ८ ये एकादि विन्दु के फल हैं ॥

जन्माङ्गम्—

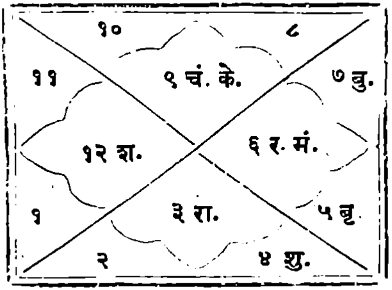

इस कुण्डली के अष्टकवर्ग से रवि का शुभ, अशुभ स्थान का ज्ञान करना है तो 'स्वादर्क' इत्यादि रीति से—रविकी अष्टवर्ग कुण्डली—

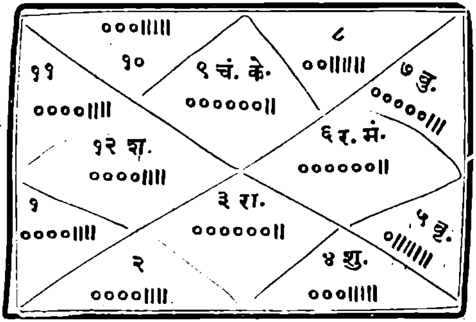

यहाँ पर सूर्य के अष्टवर्ग कुण्डली में मेष राशि में चार विन्दु हैं अतः गोचर वश मेष राशि में आने से सूर्य इस कुण्डलीवाले के लिए मध्यम फलदायक होंगे, एवं वृष में मध्यम, मिथुन में नित्य धन का आगम इत्यादि समझना चाहिए, इसी तरह सब ग्रहों की अष्टवर्ग में कुण्डली देख कर फल का विचार करे।

चन्द्र की अष्टवर्ग कुण्डली—

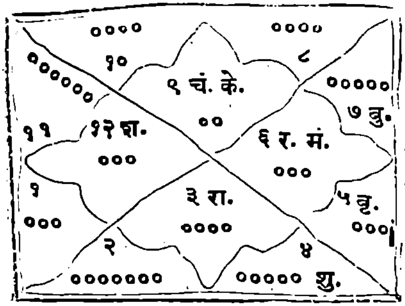

मङ्गल की अष्टवर्ग कुण्डली—

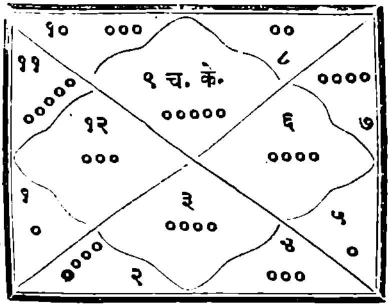

बुध की अष्टवर्ग कुण्डली—

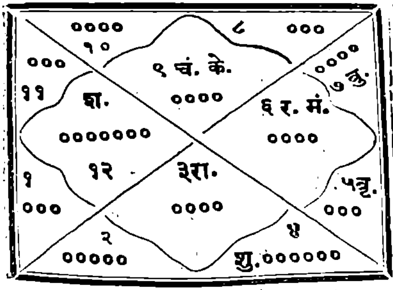

गुरु की अष्टवर्ग कुण्डली—

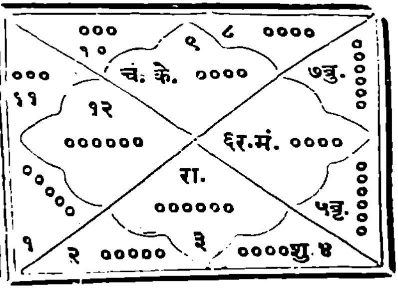

शुक्र की अष्टवर्ग कुण्डली—

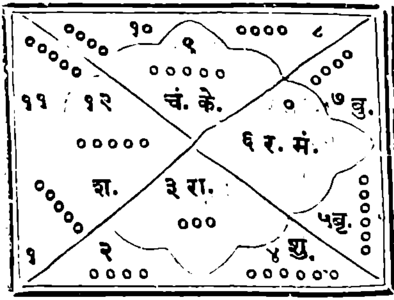

शनि की अष्टवर्ग कुण्डली—

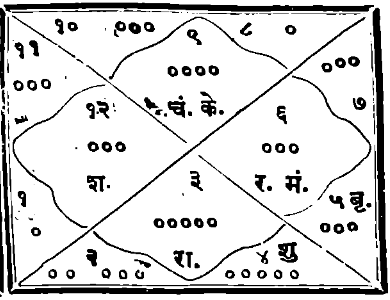

अन्यथान्तर से लग्न के शुभाष्टवर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
शुभ स्थान	३	३	३	१	१	१	१	१
	६	४	६	३	२	२	२	२
	१०	६	१०	६	४	४	३	४
	११	१०	११	१०	६	५	४	६
	०	११	०	११	८	६	५	१०
	०	१२	०	०	१०	७	८	११
	०	०	०	०	११	९	९	०
	०	०	४	०	०	१०	११	०
	०	०	०	०	०	११	०	०

लग्न के अशुभ अष्टक वर्गाङ्क चक्र—

ग्रह	लग्न	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
अशुभ स्थान	१	१	१	२	३	३	६	३
	२	२	२	४	५	८	७	५
	४	५	४	५	७	११	१०	७
	५	७	५	७	९	१२	१२	८
	७	८	७	८	१२	०	०	९
	८	९	८	९	०	०	०	१२
	९	०	९	१२	०	०	०	०
	१०	०	१२	०	०	०	०	०

लग्नाष्टवर्गकुण्डली

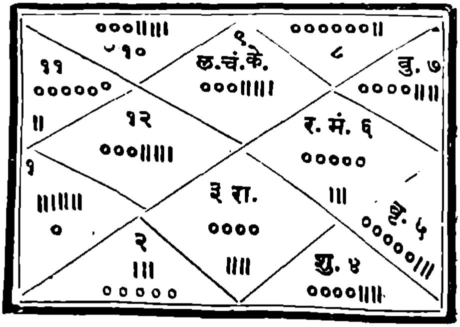

संयोगाष्टवर्ग का फल—

त्रिंशाधिकफला ये तु राशयस्ते शुभावहाः ।
त्रिंशान्तं पञ्चविंशादि राशयो मध्यमाः स्मृताः ॥
अतः क्षीणफला निन्द्या अनुपातात्तु तत्क्रमः ॥

लग्न युत सूर्य आदि प्रत्येक ग्रहों के मेषादि प्रत्येक राशियों के शुभ अष्टवर्गाङ्कों का योग करना, जिस राशि में ३० से अधिक विन्दु हों वह शुभ, २५ से ३० तक मध्यम और उससे न्यून अशुभ होता है ।

ग्रन्थान्तर में अष्टवर्ग शुद्धि—

अष्टवर्गविशुद्धेषु गुरुशीतांशुभानुषु । व्रतोद्वाहौ च कर्त्तव्यौ गोचरे न कदाचन ॥

अष्टवर्ग में शुद्ध बृहस्पति, सूर्य और चन्द्र हों तो उपनयन और विवाह करना चाहिए ॥

शुभ संयोगाष्टवर्गाङ्क चक्र—

शुभ संयोगाष्टकवर्गाङ्क चक्र—

	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
मेष	४	३	१	३	५	५	१	१	२३
वृष	४	७	४	५	५	४	५	५	३९
मिथुन	६	४	४	४	६	३	५	४	३६
कर्क	३	५	३	६	४	६	५	४	३६
सिंह	१	३	१	४	६	६	३	५	२९
कन्या	६	३	४	५	४	१	३	६	३१
तुला	५	५	४	६	६	४	३	४	३७
वृश्चिक	२	४	२	३	४	४	१	६	२६
धनु	६	२	५	४	४	५	४	३	३३
मकर	३	४	३	४	३	४	३	३	२७
कुम्भ	४	६	५	३	३	५	३	६	३५
मीन	५	३	३	७	६	५	३	३	३५

संयोगाष्टवर्ग कुण्डली

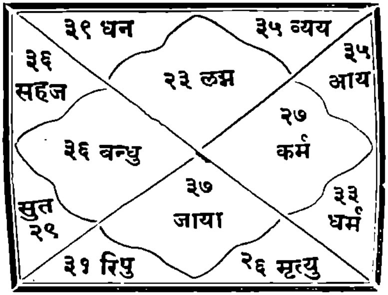

इस कुण्डली में मेष मध्यम, वृष शुभ, मिथुन शुभ, कर्क मध्यम, सिंह शुभ, कन्या मध्यम, तुला शुभ, वृश्चिक शुभ, धनु अशुभ, मकर शुभ, कुम्भ शुभ और मीन शुभ है।

रवि के अष्टवर्ग का फल—

लग्नं गते दिनकरे रिपुनीचभागे जातः कृशानुयुगविन्दुयुते च रोगी।
बाणादिविन्दुसहितोदयगे दिनेशे स्वोच्चेऽथवा निजगृहे नृपतिश्चिरायुः॥
केन्द्रत्रिकोणोपगते दिनेशे षट्पञ्चसप्ताष्टकविन्दुवर्गे।
रुद्रामलानीलचलाब्दकेषु जातस्य वा तज्जनकस्य मृत्युः॥
शोध्यावशिष्टद्वयविन्दुयाते केन्द्रस्थिते सेन्दुशनीन्दुसूनौ।
भानौ दशाब्दात्परतः समृद्धां तातस्य राज्यश्रियमाहुरार्याः॥

शत्रु, नीच या अपने नवांश में स्थित हो कर सूर्य लग्न में तीन या चार विन्दु से युक्त हो तो जातक रोगी होता है। अपने उच्च या अपने गृह में स्थित हो कर सूर्य लग्न में पाँच छै इत्यादि विन्दु से युत हो तो जातक दीर्घायु राजा होता है। केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो कर सूर्य छै, पाँच, सात या आठ विन्दु से युक्त हो तो क्रम से २२, ३५, ३०, ३६ वर्षों में जातक के पिता की मृत्यु होती है।

शुभ, अशुभ (विन्दु, रेखा) दोनों के अन्तर करने से केन्द्र में स्थित चन्द्रमा, शनि, बुध या सूर्य हो तो दश वर्ष के अनन्तर उसके पिता को बहुत सम्पत्ति मिलती है।

चन्द्र का फल—

शून्यागारं तरणिशशिनोरष्टवर्गे तदीयो-
मासो राशिः सकलशुभदे कर्मणि त्याज्य आहुः॥
यस्मात्तस्य शशिनि तनुगे सैकलोकाक्षिविन्दौ।
सप्तत्रिंशच्छरदि मरणं द्वित्रिखेटान्विते च॥
केन्द्रत्रिकोणोपगते शशाङ्के नीचारिगे वृद्धिकलाविहीने।
विन्दुद्विके वा यदि सत्रिविन्दौ तद्भावनाशं कथयन्ति तज्ज्ञाः॥
वेदादिविन्दुयुतकोणचतुष्टये वा लाभे विधौ बलयुते यदि भाववृद्धिः।
विन्द्वष्टके शशिनि केन्द्रगते तु जाता विद्यायशोधनबलप्रबला नरेन्द्राः॥

सूर्य, चन्द्र दोनों के अष्टक वर्ग में जिस राशि में विन्दु हो उस राशिसम्बन्धी सूर्य के मास और चन्द्र राशि में शुभ कर्म नहीं करना। यदि लग्न में स्थित हो कर चन्द्रमा एक, तीन या दो विन्दु से युत हो तो यक्ष्मा रोग से पीडित हो कर आलसी होता है।

यदि लग्न में १, ३, या २ विन्दु-युत चन्द्रमा दो या तीन ग्रह से युत हो तो ३७ वर्ष की अवस्था में जातक का मरण होता है।

त्रिकोण या केन्द्र में स्थित हो कर चन्द्रमा नीच या शत्रु राशि में या क्षीणवली हो, दो या तीन विन्दु से युत हो तो उसके आश्रित भाव का नाश होता है। ऐसा पण्डितों ने कहा है।

यदि वा त्रिकोण, केन्द्र या एकादश में स्थित हो कर वली चन्द्रमा ४,५,६,७, या ८ विन्दु से युत हो तो उस भाव की वृद्धि करता है।

अगर केन्द्र में स्थित हो कर चन्द्रमा आठ विन्दु से युत हो तो विद्या, धन, यश और वल से युत राजा होता है॥

मङ्गल का फल—

स्वोच्चस्वके गुरुसुखोदयमानयाते विन्द्वष्टके च सति कोटिधनप्रभुः स्यात्।
चापाजसिंहमृगकीटविलग्नकस्थे भौमे चतुष्टयकलोपगते च राजा॥
विन्द्वष्टके धरणिजेऽतिलघुक्षितीशो मानेऽथवा तनुगते च महापतिः स्यात्।
जातोऽवनीशकुलजो यदि देहनाथः स्वोच्चस्वराशिसहिते नृपचक्रवर्ती॥

अपने उच्च राशि या अपने गृह में स्थित हो कर मङ्गल ८ विन्दु से युत चतुर्थ, लग्न या दशम में स्थित हो तो करोड़पति होता है। यदि धन, मेष, सिंह, मकर या कर्क लग्न में स्थित हो कर मङ्गल चार विन्दु से युत हो तो राजा होता है।

यदि दशम या लग्न में स्थित हो कर मङ्गल आठ बिन्दु से युत हो तो एक छोटा राजा होता है। उक्त योग में होते हुए चन्द्रमा उच्च या अपने राशि का हो तो राजकुल में उत्पन्न जातक चक्रवर्ती राजा होता है॥

बुध का फल—

केन्द्रत्रिकोणे वसुविन्दुके ज्ञे जातीयविद्याधिकभोगशाली।
स्वोच्चादिगैकद्वितयत्रिबिन्दौ तद्भाववृद्धिर्न च भावहानिः॥
विन्द्वाधिक्यं यत्तदागारमासे विद्यारम्भः सर्वविद्याकरः स्यात्।
गोचारेण ज्ञस्य शून्यालयस्थे मन्दे बन्धुज्ञातिसम्पद्विनाशः॥

केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो कर बुध आठ विन्दु से युत हो तो अपने जाति की विद्या पाकर अधिक भोग करने वाला होता है। यदि एक, दो या तीन बिन्दु से युत बुध अपने उच्चादि में स्थित हो कर जिस भाव में स्थित हो उस की वृद्धि होती है, हानि नहीं।

जिस राशि में बिन्दु ज्यादा हो उस राशिसम्बन्धी मास में विद्यारम्भ करने से जातक सब विद्या का अधिकारी होता है।

गोचरवश बुध के शून्य घर में शनि पड़े तो भाई और सम्बन्धियों का नाश होता है।

गुरु का फल—

जीवाष्टवर्गाधिकविन्दुराशौ लग्ने निषेकं कुरुते सुतार्थी।
तद्राशिदिग्भागगृहस्थितानि गोवित्तयानानि बहूनि च स्युः॥
जीवाष्टवर्गलघुविन्दुगृहोपयाते भानौ कृताखिलशुभानि विनाशितानि।
पञ्चादिविन्दुकरिपुव्ययरन्ध्रगेज्ये जातश्चिरायुरतिवित्तजितारिकः स्यात्॥
षड्विन्दुके वाहनवित्तलाभः सपञ्चविन्दौ जयशीलवन्तः।
ससप्तविन्दौ सह लक्ष्मणेन जीवे बहुस्त्रीधनपुत्रवन्तः॥
स्वोच्चेऽथवा निजगृहे वसुविन्दुयुक्ते केन्द्रस्थिते सुरगुरौ गुरुभावगे वा।
नीचारिभावमपहाय विमूढराशौ जातः स्वकीययशसा पृथिवीपतिः स्यात्॥
यदा महीदेवकुलप्रजातास्तदीययोगे नरपालतुल्याः।
कृतातिपुण्यप्रभवप्रसिद्धबुद्धिप्रतापादिगुणाभिरामाः॥

बृहस्पति के अष्टवर्ग में अधिक बिन्दु युत जो हो उसी के लग्न में पुत्रार्थी गर्भाधान करे।

तथा अधिक बिन्दु युत राशि की दिशा वाले घर में उस जातक को बहुत गाय, धन, सवारी होता है।

बृहस्पति के अष्टवर्ग में अल्प बिन्दु युत राशि में सूर्य बैठा हो तो सब को विनाश करता है। षष्ठ, द्वादश या अष्टम में स्थित हो कर बृहस्पति पाँच बिन्दु से युत हो तो जातक दीर्घायु, बहुत धनी और शत्रु को जीतने वाला होता है।

छै बिन्दु युत वाहन और धन से युत होता है, पाँच बिन्दु से युत हो तो विजयी होता है।

अगर सात बिन्दु युत बृहस्पति चन्द्रमा से युत हो तो जातक बहुत स्त्री, धन, पुत्र वाला होता है।

आठ बिन्दु से युत बृहस्पति उच्च या अपने नीच या शत्रु राशि को छोड़कर उदित राशि में स्थित होकर केन्द्र या नवम में हो तो अपने यश से राजा के समान होता है, राजकुल में उत्पन्न हो तो पुण्य के प्रभाव से प्रसिद्ध बुद्धि, प्रतापी और उत्तम गुणयुक्त होता है।

शुक्र का फल—

साष्टविन्दुफलकोणकेन्द्रगे भार्गवे तु बलवाहनाधिपः।
आयुरन्तमविनाशभोगवान् वित्तरत्नविभुरद्रिविन्दुके॥

नीचास्तरिष्फनिधनोपगते तु काव्ये पूर्वोदितक्षितिपयोगविनाशनं स्यात्।
शुक्रेऽल्पबिन्दुयुतमन्दिरदिग्विभागे स्त्रीवश्यहेतुशयनीयगृहं प्रशस्तम्॥

त्रिकोण या केन्द्र में स्थित हो कर शुक्र आठ विन्दु से युत हो तो जातक बल और वाहन का स्वामी होता है। सात बिन्दु युत हो तो आयु के अन्त तक नाश रहित भोग वाला और धन, रत्नों का स्वामी होता है।

नीच राशि में स्थित हो कर शुक्र अस्त, द्वादश और अष्टम स्थान में हो तो पूर्वोक्त राजयोग का विनाश होता है। जिस राशि में अल्प विन्दु युत शुक्र स्थित हो उस राशि की दिशा में स्त्री के लिये सोने का घर बनाना अच्छा है॥

शनि का फल—

कोणस्य शून्यतरराशिगते तु मन्दे जातस्य मृत्युफलमाशुधनक्षयो वा।
एकद्विलोकयुगबिन्दुयुते च केन्द्रे मुक्ते स्वतुङ्गभवने रविजेऽल्पमायुः॥
षट्पञ्चबिन्दुसहिते तनुगे बलाढ्ये जन्मादिदुःखबहुलं धननाशमेति।
मन्दे शरादिफलनीचसपत्नभावे जातश्चिरायुरतिशोभनवर्गकेन्द्रौ॥
मूढारिनीचगृहगे शरवेदबिन्दौ दास्युष्ट्रवित्तसहितास्तनये तनुस्थे।
सौरेऽष्टबिन्दुगणिते परमन्त्रतन्त्रग्रामाधिपास्तु गिरिबिन्दुगृहे धनाढ्यः॥

यदि अपने अष्टवर्ग में शनि अपनी राशि में स्थित हो तो जातक की मृत्यु शीघ्र और धन नाश होता है।

एक, दो, तीन या चार बिन्दु से युक्त शनि केन्द्र में उच्च का न हो तो अल्पायु होता है।

यदि बली हो कर शनि लग्न में छे या पांच बिन्दु से युत हो तो जातक को जन्म से ही दुःख और धन नाश होता है।

अगर नीच या शत्रु भाव में स्थित हो कर शनि पांच, छै इत्यादि विन्दु से युत हो और चन्द्रमा शुभ वर्ग में हो तो जातक दीर्घायु होता है।

यदि ५ या ४ विन्दु से युत शनि अस्त, शत्रु राशि या नीच में हो तो दास का काम करने वाला और ऊँट धन से युत होता है। आठ बिन्दु से युत शनि पञ्चम या तनु भाव में स्थित हो तो उत्कृष्ट तन्त्र के समूह को जानने वाला होता है।

सात विन्दु युत हो तो धनाढय होता है।

इति बृहज्जातके 'विमला' भाषाटीकायामष्टकवर्गाध्यायो नवमः

अथ कर्माजीवाध्यायो दशमः।

जातक को किस से धन की प्राप्ति होगी—

अर्थाप्तिः पितृपितृपत्निशत्रुमित्रभ्रातृस्त्रीभृतकजनाद्दिवाकराद्यैः।
होरेन्द्वोर्दशमगतैर्विकल्पनीया मेन्द्वर्कास्पदपतिगांशनाथवृत्त्या॥ १॥

लग्न और चन्द्र से दशम स्थान में रवि आदि स्थित हों तो पिता, माता आदि के द्वारा धन की प्राप्ति होती है। जैसे रवि हो तो पिता से, चन्द्रमा हो तो माता से, मङ्गल हो तो शत्रु से, बुध हो तो मित्र से, बृहस्पति हो तो भाई से, शुक्र हो तो स्त्री से और शनैश्चर स्थित हो तो भृत्य से धन की प्राप्ति होती है।

लग्न, चन्द्र दोनों से दशम में एक २ या अधिक ग्रह बैठे हों तो उन उन ग्रहों की अन्तर्दशा में उक्त वृत्ति द्वारा धन की प्राप्ति होती है।

अगर लग्न और चन्द्र दोनों से दशम स्थान में कोई ग्रह नहीं हो तो कौन अर्थप्रद होगा इस पर कहते हैं कि लग्न, चन्द्र और सूर्य से दशम स्थान का हो स्वामी वह जिस राशि के नवांश में हो उस के स्वामी की वृत्ति के द्वारा धनप्राप्ति होती है।

किसी टीकाकार का मत है कि लग्न, चन्द्र दोनों से दो या अनेक ग्रह स्थित हों तो उन सबों में जो बली हो उस की वृत्ति से धन की प्राप्ति कहनी चाहिए। परन्तु ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं है, क्योंकि इस ग्रन्थ में बल का आनयन नहीं किया गया है, अतः सब से धन की प्राप्ति कहनी चाहिए। एक पुरुष को अपने जीवन में अनेक तरह से धन की प्राप्ति देखी जाती है।

तथा भगवान् गार्गि का वचन—

उदयाच्छशिनो वापि ये ग्रहा दशमस्थिताः।
ते सर्वेऽर्थप्रदा ज्ञेयाः स्वदशासु यथोदिताः॥
लग्नार्करात्रिनाथेभ्यो दशमाधिपतिर्ग्रहः।
यस्मिन्नवांशे तत्काले वर्तते तस्य योऽधिपः॥
तद्वृत्या प्रवदेद्वित्तं जातस्य बहवो यदा।
भवन्ति वित्तदास्तेऽपि स्वदशासु विनिश्चितम्॥

नवांश पति की वृत्ति—

अर्कांशे तृणकनकोर्णभेषजाद्यैश्चन्द्रांशे कृषिजलजाङ्गनाश्रयाच्च।
धात्वग्निप्रहरणसाहसैः कुजांशे सौम्यांशे लिपिगणितादिकाव्यशिल्पैः॥

लग्न, चन्द्र और सूर्य से दशम स्थान का स्वामी जिस नवांश में हो उस का स्वामी रवि हो तो तृण, सुवर्ण, ऊन और औषध से धन की प्राप्ति होती है, चन्द्रमा हो तो खेती करने से, जलज (मोती, शंख आदि) के बेचने से और स्त्री के आश्रय से धन की प्राप्ति होती है। मङ्गल हो तो धातु (सोना, चाँदी आदि) के बेचने से, अग्नि, प्रहरण (खड्ग, चक्र, कुन्त आदि) से और साहस से धन की प्राप्ति होती है। बुध हो तो लेख, गणित, कविता और चित्रनिर्माण से धन की प्राप्ति होती है॥ २॥

जीवांशे द्विजविबुधाकरादिधर्मैः काव्यांशे मणिरजतादिगोमहिष्यैः।
सौरांशे श्रमवधभारनीचशिल्पैः कर्मेशाध्युषितनवांशकर्मसिद्धिः॥३॥

बृहस्पति हो तो ब्राह्मण, देवता, खानि और धर्म के द्वारा धन की प्राप्ति होती है।
शुक्र हो तो मणि, चाँदी, गौ और भैंस के द्वारा धन की प्राप्ति होती है।
शनैश्चर हो तो श्रम, वध, भारवहन, निन्दित कर्म और चित्रकारी के द्वारा धन की प्राप्ति होती है।

जन्म लग्न से दशम स्थान का स्वामी गोचरवश जिस नवांश में स्थित हो उस का जो स्वामी हो उसकी पूर्व कथित वृत्ति के अनुसार मनुष्य की जीविका चलती है।

यहाँ किसी का मत है कि 'कर्मेशाध्युषितसमानकर्मसिद्धिः' ऐसा पाठ ठीक है अर्थात् दशमेश जिस राशि में हो उसके स्वामी के वृत्ति के अनुसार जीविका चलती है। परञ्च वह ठीक नहीं है।

यहाँ पर भगवान् गार्गि—

लग्नकर्माधिपो यस्मिन्नवांशे वर्तते ग्रहः।
चारक्रमेण तत्तुल्यां कर्मणां सिद्धिमादिशेत् ॥ ३ ॥

धनागम के ज्ञान—

मित्रारिस्वगृहगतैर्ग्रहैस्ततोऽर्थास्तुङ्गस्थे बलिनि च भास्करे स्ववीर्यात् ।
आयस्थैरुदयधनाश्रितैश्च सौम्यैः संचिन्त्यं बलसहितैरनेकधा स्वम् ॥४॥
इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके कर्माजीवो नाम दशमोऽध्यायः॥१०॥

जन्म काल में लग्न, चन्द्रमा दोनों से दशम में स्थित ग्रह, उसके अभाव में लग्न, चन्द्रमा और सूर्य से दशमेश जिस राशि के नवांश में हो उसका जो स्वामी ग्रह, वह मित्र के स्थान में हो तो अपनी अन्तर्दशा में मित्र के द्वारा, शत्रु की राशि में हो तो शत्रु के द्वारा और अपने गृह में हो तो अपने ही स्थान के द्वारा धन की प्राप्ति होती है। कथित योग में योगकर्ता सूर्य बली हो कर अपने उच्च स्थान में हो तो जातक अपने बाहुबल से धन पैदा करता है।

अगर शुभग्रह बली हो कर एकादश, लग्न और द्वितीय में बैठा हो तो जातक अनेक तरह से धन पैदा करता है।

यहाँ भगवान् गार्गि का वचन—

धनदा जन्मसमये मित्रारिस्वगृहोपगाः। यस्य तस्य धनं दद्युर्मित्रारिस्वगृहोद्भवम् ॥
धनदो भास्करो यस्य तुङ्गे बलसमन्वितः।
भवेज्जन्मनि यस्य स्याद्वित्तमात्मोद्यमार्जितम् ॥
लाभार्थलग्नगैः सौम्यैर्येन येनैव कर्मणा।
धनार्जनं प्रार्थयते तेनायत्नात्समश्नुते ॥ ४ ॥

इति बृहज्जातके 'विमला' भाषाटीकायां कर्माजीवाध्यायो दशमः।

अथ राजयोगाध्याय एकादशः

यवनाचार्य और जीवशर्मा के मत से राजयोग—

प्राहुर्यवनाः स्वतुङ्गगैः क्रूरैः क्रूरमतिर्महीपतिः।
क्रूरैस्तु न जीवशर्मणः पक्षे क्षित्यधिपः प्रजायते ॥ १ ॥

जिसके जन्म समय में एक से अधिक पापग्रह अपने उच्च स्थान में हों तो पापमति वाला राजा होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि एक से ज्यादा शुभ ग्रह अपने उच्च स्थान में हों तो धर्मबुद्धि वाला राजा होता है। पापग्रह, शुभग्रह दोनों अपने उच्च स्थान में हों तो मध्यम बुद्धि वाला राजा होता है। यह यवनाचार्य का मत है।

यहाँ जीवशर्मा का मत है कि पापग्रह अपने उच्च स्थान में हो तो राजा नहीं होता किन्तु धनी होता है।

जीवशर्मा के वचन—

पापैरुच्चगतैर्जाता न भवन्ति नृपा नराः।
किन्तु वित्तान्वितास्ते स्युः क्रोधिनः कलहप्रियाः ॥ १ ॥

बत्तीस प्रकार के राजयोग—

वक्रार्कजार्कगुरुभिः सकलैस्त्रिभिश्च
स्वोच्चेषु षोडश नृपाः कथितैकलग्ने।
द्व्येकाश्रितेषु च तथैकतमे विलग्ने
स्वक्षेत्रगे शशिनि षोडश भूमिपाः स्युः ॥ २ ॥

मङ्गल, शनि, सूर्य, गुरु ये चार ग्रह अपने उच्च राशि में हों और उनमें से कोई एक लग्न में हो तो चार प्रकार के राजयोग होते हैं।

जैसे लग्न में हो कर मङ्गल मकर का, शनि तुला का, रवि मेष का और बृहस्पति कर्क का हो तो एक योग १।

शनि लग्न का होकर तुला का, मङ्गल मकर का, रवि मेष का और बृहस्पति कर्क का हो तो दूसरा राजयोग २।

रवि मेष का हो कर लग्न में हो, मङ्गल मकर का, शनि तुला का, बृहस्पति कर्क का हो तो तीसरा राजयोग ३।

बृहस्पति लग्न का हो कर कर्क में हो, मङ्गल मकर का, शनि तुला का और रवि मेष का हो तो चौथा राजयोग होता है ४।

इन चार ग्रहों में से तीन उच्च में हों और उन तीनों में से कोई एक लग्न का हो कर उच्च में हो तो बारह प्रकार के राजयोग होते हैं।

जैसे सूर्य मेष का, बृहस्पति कर्क का और शनैश्चर तुला का हो, शेष ग्रह कहीं हों इस स्थिति में मेष लग्न हो तो पहला, कर्क हो तो दूसरा, तुला हो तो तीसरा राजयोग होता है।

सूर्य मेष का, बृहस्पति कर्क का और मङ्गल मकर का हो और शेष ग्रह कहीं हों, इस स्थिति में मेष लग्न हो तो पहला, कर्क लग्न हो तो दूसरा और मकर लग्न हो तो तीसरा राजयोग होता है।

एवं सूर्य मेष का, मङ्गल मकर का और शनैश्चर तुला का हो शेष ग्रह कहीं हों तो मेष लग्न में पहला, मकर लग्न में दूसरा, तुला लग्न में तीसरा राजयोग होता है।

इसी तरह मकर का मङ्गल, कर्क का बृहस्पति और शनैश्चर तुला का हो शेष ग्रह कहीं हों इस स्थिति में मकर लग्न हो तो पहला, कर्क हो तो दूसरा, सिंह हो तो तीसरा राजयोग होता है। इस प्रकार १२ राजयोग होते हैं, पूर्व के चार और ये बारह मिलकर सोलह राजयोग हुए।

पूर्वोक्त चार ग्रहों में से दो ही ग्रह उच्च के हों, उन में से कोई एक लग्न का हो कर उच्च का हो और चन्द्रमा अपने घर में बैठा हो तो बारह तरह के राजयोग होते हैं।

जैसे लग्न का सूर्य मेष का, मङ्गल मकर का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो पहला। लग्न का मङ्गल मकर का, सूर्य मेष का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो दूसरा। लग्न का सूर्य मेष का, शनि तुला का और चन्द्रमा स्वक्षेत्र का हो तो तीसरा। लग्न का शनि तुला का, मेष का सूर्य और चन्द्रमा अपने घर का हो तो चौथा। लग्न का सूर्य मेष का, बृहस्पति कर्क का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो पांचवां। लग्न का बृहस्पति कर्क का, सूर्य मेष का और चन्द्रमा स्वगृह का हो तो छठा। लग्न का मङ्गल मकर का, शनि तुला का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो सातवां। लग्न का शनि तुला का, मङ्गल मकर का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो आठवां। लग्न का मङ्गल मकर का, बृहस्पति कर्क का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो नवमां। लग्न का बृहस्पति कर्क का, मङ्गल मकर का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो दशवां। लग्न का शनि तुला का, बृहस्पति कर्क का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो ग्यारहवां। लग्न का बृहस्पति कर्क का, शनि तुला का और चन्द्रमा अपने घर का हो तो बारहवां राजयोग होता है।

पूर्वोक्त सोलह और ये बारह मिलकर २८ राजयोग हुए।

तथा पूर्वोक्त चार ग्रहों में से एक ग्रह लग्न का हो कर उच्च का हो और चन्द्रमा अपने घर का हो तो चार प्रकार के राजयोग होते हैं।

जैसे मकर लग्न का मङ्गल और स्वगृह का चन्द्रमा हो तो पहला, तुला लग्न

का शनि और अपने घर का चन्द्रमा हो तो दूसरा, मेष लग्न का सूर्य और स्वक्षेत्र का चन्द्रमा हो तो तीसरा, कर्क लग्न का गुरु और स्वक्षेत्र का चन्द्रमा हो तो चौथा राजयोग होता है।

एवं पहले के अट्ठाईस और ये चार मिलकर बत्तीस राजयोग हुए ॥ २ ॥

चवालिस राजयोग—

वर्गोत्तमगते लग्ने चन्द्रे वा चन्द्रवर्जितैः ।
चतुराद्यैर्ग्रहैर्दृष्टे नृपा द्वाविंशतिः स्मृताः ॥ ३ ॥

लग्न वर्गोत्तम में हो और इस को चन्द्रमा से भिन्न चार, पांच या छै ग्रह देखते हों तो बाईस प्रकार के राजयोग होते हैं।

जैसे वर्गोत्तम गत लग्न को सूर्य, मङ्गल, बुध और बृहस्पति देखते हों तो पहला,
सूर्य, मङ्गल, बुध और शुक्र देखते हों तो दूसरा,
सूर्य, मङ्गल, बुध और शनि देखते हों तो तीसरा,
सूर्य, मङ्गल, बृहस्पति और शुक्र देखते हों तो चौथा,
सूर्य, मङ्गल, बृहस्पति और शनैश्वर देखते हों तो पांचवां,
सूर्य, मङ्गल, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो छठा,
सूर्य, बुध, बृहस्पति और शुक्र की दृष्टि हो तो सातवां,
सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनैश्वर देखते हों तो आठवां,
सूर्य, बुध, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो नवमां,
सूर्य, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो दशवां,
मङ्गल, बुध, बृहस्पति और शुक्र देखते हों तो ग्यारहवां,
मङ्गल, बुध, बृहस्पति और शनैश्वर देखते हों तो बारहवां,
मङ्गल, बुध, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो तेरहवां,
मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो चौदहवां,
बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो पन्द्रहवां राजयोग होता है। इस तरह चार ग्रह के वश पन्द्रह विकल्प होते हैं।

अब पांच ग्रह के विकल्प से दिखाते हैं।

वर्गोत्तमगत लग्न को सूर्य, मङ्गल, बुध, बृहस्पति और शुक्र देखते हों तो पहला,
सूर्य, मङ्गल, बुध, बृहस्पति और शनैश्वर देखते हों तो दूसरा,
सूर्य, मङ्गल, बुध, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो तीसरा,
सूर्य, मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो चौथा,
सूर्य, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो पांचवां,
मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्वर देखते हों तो छठा,

इस तरह पाँच ग्रह के छे विकल्प होते हैं। पूर्वोक्त पन्द्रह और ये छे मिल कर इक्कीस हुए।

एवं वर्गोत्तम में गत लग्न को सूर्य, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर देखते हों तो एक राजयोग होता है। मिलकर बाईस हुए।

इसी तरह वर्गोत्तम में गत चन्द्रमा के ऊपर चार, पाँच और छे ग्रहों की दृष्टि हो तो बाईस प्रकार के राजयोग होते हैं। इस तरह सब मिल चवालिस राजयोग हुए ॥ ३ ॥

पाँच प्रकार के राजयोग—

यमे कुम्भेऽर्केऽजे गवि शशिनि तैरेव तनुगै-
र्नृयुक्सिंहालिस्थैः शशिजगुरुवक्रैर्नृपतयः।
यमेन्दू तुङ्गेऽङ्गे सवितृशशिजौ षष्ठभवने
तुलाजेन्दुक्षेत्रैः ससितकुजजीवैश्च नरपौ ॥ ४ ॥

शनैश्चर कुम्भ में, सूर्य मेष में और चन्द्रमा वृष में हो, इन तीनों राशियों में से कोई एक लग्न भी हो तथा बुध, गुरु और मङ्गल क्रम से मिथुन, सिंह और वृश्चिक में हों तो तीन प्रकार के राजयोग होते हैं।

जैसे—शनैश्चर कुम्भ में, सूर्य मेष में, चन्द्रमा वृष में, बुध मिथुन में, बृहस्पति सिंह में और मङ्गल वृश्चिक में हो तो इस स्थिति में कुम्भ लग्न हो तो प्रथम, मेष लग्न हो तो द्वितीय, वृष लग्न हो तो तृतीय राजयोग होता है।

एवं शनैश्चर और चन्द्रमा अपने उच्च स्थान में हो कर दोनों में से कोई एक लग्न का भी हो, सूर्य और बुध कन्या में, शुक्र, मङ्गल और गुरु क्रम से तुला, मेष और कर्क में स्थित हों तो दो प्रकार के राजयोग होते हैं।

जैसे तुला में शनैश्चर, वृष में चन्द्रमा, कन्या में सूर्य और बुध, तुला में शुक्र, मेष में मङ्गल, कर्क में बृहस्पति हो तो इस स्थिति में तुला लग्न हो तो प्रथम और वृष लग्न हो तो द्वितीय राजयोग होता है।

इस तरह मिल कर पाँच राजयोग हुए ॥ ४ ॥

तीन प्रकार के राजयोग—

कुजे तुङ्गेऽर्केन्द्वोर्धनुषि यमलग्ने च कुपतिः
पतिर्भूमेश्चान्यः क्षितिसुतविलग्ने सशशिनि।
सचन्द्रे सौरेऽस्ते सुरपतिगुरौ चापधरगे
स्वतुङ्गस्थे भानावुदयमुपजाते क्षितिपतिः ॥ ५ ॥

मङ्गल अपने उच्च स्थान में, सूर्य, चन्द्रमा ये दोनों धनु राशि में और शनैश्चर लग्न का हो कर मकर में हो तो उत्पन्न जातक राजा होता है।

यहाँ पर कोई टीकाकार 'यमलग्ने' इसका अर्थ जिस किसी राशि में स्थित शनैश्चर लग्न में हो इस तरह करते हैं।

कोई शनैश्चर की राशि (मकर या कुम्भ) लग्न में हो ऐसा अर्थ करते हैं। पर ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं है।

यतः बादरायण—

लग्ने सौरस्तुङ्गे भौमश्चन्द्रादित्यौ चापप्राप्तौ। इति।

तथा माण्डव्य—

आदित्यश्च निशाकरश्च भवतो वागीशराशौ यदा
सार्द्धं भास्करिणा स्ववीर्यसहितः प्राप्तो मृगे मङ्गलः।
प्राप्नोति प्रभवं तदा स सुकृती क्ष्मापालचूडामणि-
स्त्रस्यन्ति प्रतिपन्थिनो रणमुखे यस्मात् कृतान्तादिव॥

मङ्गल सहित चन्द्रमा मकर लग्न में और सूर्य धनु राशि में स्थित हो तो जातक राजा होता है।

यहाँ पर बादरायण—

भानुश्चापे सेन्दुर्भौमस्तुङ्गप्राप्तो लग्ने वा स्यात्। इति।

सप्तम राशि में चन्द्रमा और शनैश्चर, धनु में बृहस्पति, लग्न का सूर्य, अपने उच्च स्थान (मेष) में हो तो राजा होता है। इस तरह तीन राजयोग हुए॥ ५॥

दो प्रकार के राजयोग—

वृषे सेन्दौ लग्ने सवितृगुरुतीक्ष्णांशुतनयैः
सुहृज्जायाखस्थैर्भवति नियमान्मानवपतिः।
मृगे मन्दे लग्ने सहजरिपुधर्मव्ययगतैः
शशाङ्काद्यैः ख्यातः पृथुगुणयशाः पुङ्गवपतिः॥ ६॥

चन्द्रमा वृष में हो कर लग्न का हो तथा सूर्य, बृहस्पति, शनैश्चर क्रम से सिंह, तुला, कुम्भ में स्थित हों तो जातक अवश्य करके राजा होता है।

एवं शनैश्चर मकर का हो कर लग्न में हो तथा चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, गुरु, क्रम से मिथुन, कन्या, धनु, मीन में स्थित हों तो जातक बड़े गुण-यश वाला राजा होता है।

माण्डव्य—

मृगे लग्ने सौरस्तिमियुगगतः शीतकिरणः
कुजे युग्मे नार्यां शशभृतसुतश्चापधरगः।
गुरुर्दैत्येज्यार्कावभिमतगतौ चारवशतः
प्रसूतौ यस्यासौ भवति नरपः शक्रसदृशः॥ ६॥

तीन प्रकार के राजयोग—

हृये सेन्दौ जीवे मृगमुखगते भूमितनये
स्वतुङ्गस्थौ लग्ने भृगुजशशिजावत्र नृपती ।
सुतस्थौ वक्रार्कौ गुरुशशिसिताश्चापि हिबुके
बुधे कन्यालग्ने भवति हि नृपोऽन्योपि गुणवान् ॥ ७ ॥

चन्द्रमा के साथ हो कर बृहस्पति धनु राशि में, मङ्गल मकर के पूर्वार्ध में और शुक्र, बुध दोनों अपने उच्च स्थान (मीन, कन्या) में हों तो इस स्थिति में मीन लग्न हो तो पहला, कन्या लग्न हो तो दूसरा राजयोग होता है।

बुध कन्या लग्न में मङ्गल, शनि पञ्चम (मकर) में, बृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्र चतुर्थ (धनु) में हों तो जातक गुणवान् राजा होता है। पूर्वोक्त दो मिल कर तीन राजयोग हुए ॥ ७ ॥

पुनः तीन प्रकार के राजयोग—

झषे सेन्दौ लग्ने घटमृगमृगेन्द्रेषु सहितै-
र्यमारार्कैर्योऽभूत्स खलु मनुजः शास्ति वसुधाम् ।
अजे सारे मूर्तौ शशिगृहगते चामरगुरौ
सुरेज्ये वा लग्ने धरणिपतिरन्योपि गुणवान् ॥ ८ ॥

लग्न में हो कर चन्द्रमा मीन राशि में, शनैश्चर कुम्भ राशि में, मङ्गल मकर में और सूर्य सिंह में हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक पृथ्वी का शासनकर्ता होता है।

मेष राशि में स्थित हो कर मङ्गल लग्न में, बृहस्पति कर्क राशि में हो तो जातक राजा होता है।

कर्क राशि में स्थित हो कर गुरु लग्न में और मङ्गल मेष राशि में हो तो जातक राजा होता है।

पुनः एक प्रकार का राजयोग—

कर्किणि लग्ने तत्स्थे जीवे चन्द्रसितज्ञैरायप्राप्तैः ।
मेषगतेऽर्के जातं विन्द्याद्विक्रमयुक्तं पृथ्वीनाथम् ॥ ९ ॥

कर्क राशि लग्न हो, उसी में गुरु बैठा हो, चन्द्रमा, शुक्र और बुध एकादश (वृष) में हों तथा सूर्य मेष में हो तो जातक पराक्रमी राजा होता है ॥ ९ ॥

पुनः एक प्रकार का राजयोग—

मृगमुखेऽर्कतनयस्तनुसंस्थः क्रियकुलीरहरयोऽधिपयुक्ताः ।
मिथुनतौलिसहितौ बुधशुक्रौ यदि ततः पृथुयशाः पृथिवीशः ॥ १० ॥

शनैश्चर लग्न में स्थित हो कर मकर के पूर्वार्ध में, मङ्गल मेष में, चन्द्रमा कर्क

में, सूर्य सिंह में, बुध मिथुन में और शुक्र तुला में हो तो जातक बड़ा यशस्वी राजा होता है ॥ १० ॥

पुनः राजयोग—

स्वोच्चसंस्थे बुधे लग्ने भृगौ मेषूरणाश्रिते ।
सजीवेऽस्ते निशानाथे राजा मन्दारयोः सुते ॥ ११ ॥

बुध लग्न में स्थित हो कर अपने उच्च (कन्या) में, शुक्र दशम स्थान (मिथुन) में, बृहस्पति के साथ चन्द्रमा सप्तम (मीन) में और शनैश्चर, मङ्गल ये दोनों पञ्चम (मकर) में स्थित हों तो जातक राजा होता है ॥ ११ ॥

पूर्वोक्त और वक्ष्यमाण राजयोगों में विशेष विचार—

अपि खलकुलजाता मानवा राज्यभाजः
किमुत नृपकुलोत्थाः प्रोक्तभूपालयोगैः ।
नृपतिकुलसमुत्थाः पार्थिवा वक्ष्यमाणै-
र्भवति नृपतितुल्यस्तेषु भूपालपुत्रः ॥ १२ ॥

पूर्वोक्त सब राजयोगों में उत्पन्न नीच जाति का भी जातक राजा होता है, तब राजवंश के जातक की क्या बात, अर्थात् वह निश्चय करके राजा होता है ।

तथा आगे प्रतिपादित राजयोगों में उत्पन्न राजकुल का जातक ही राजा होता है, अन्य कुल का जातक राजा के समान होता है, किन्तु राजा नहीं होता है ॥ १२ ॥

राजयोग—

उच्चस्वत्रिकोणगैर्बलिष्ठैस्त्र्याद्यैर्भूपतिवंशजा नरेन्द्राः ।
पञ्चादिभिरन्यवंशजाता हीनैर्वित्तयुता न भूमिपालाः ॥ १३ ॥

तीन या चार ग्रह बली हो कर अपने उच्च या मूल त्रिकोण में हों तो राजवंश में उत्पन्न जातक राजा होता है ।

अगर पांच, छै या सात ग्रह बली हो कर अपने उच्च या मूलत्रिकोण के हों तो नीच कुल में उत्पन्न जातक भी राजा होता है ।

इससे अल्प अर्थात् तीन चार ग्रह बली हो कर उच्च या मूल त्रिकोण के हों तो राजा नहीं किन्तु धनवान् होता है ॥ १३ ॥

पुनः राजयोग—

लेखास्थेऽर्केऽजेन्दौ लग्ने भौमे स्वोच्चे कुम्भे मन्दे ।
चापप्राप्ते जीवे राज्ञः पुत्रं विन्द्यात्पृथ्वीनाथम् ॥ १४ ॥

सूर्य, चन्द्र दोनों मेष लग्न में, मङ्गल अपने उच्च स्थान में, शनैश्चर कुम्भ में और बृहस्पति धनु राशि में हो तो इस योग में उत्पन्न राजकुल का जातक राजा होता है ।

कोई 'लेखास्थे' के स्थान में 'लेयस्थे' ऐसा पाठ करता है, अर्थात् पूर्वोक्त योग में सिंह का सूर्य हो तो राजा होता है। ऐसा अर्थ करने से भी कोई विरोध नहीं होता ॥ १४ ॥

पुनः राजयोग—

स्वर्क्षे शुक्रे पातालस्थे धर्मस्थानं प्राप्ते चन्द्रे ।
दुश्चिक्याङ्कप्राप्तिप्राप्तैः शेषैर्जातः स्वामी भूमेः ॥ १५ ॥

अपनी राशि में स्थित हो कर शुक्र जन्म लग्न से चतुर्थ में, चन्द्रमा नवम में और शेष ग्रह (मङ्गल, बुध, गुरु, सूर्य, शनि) तृतीय, लग्न और एकादश स्थान में हों तो इस योग में उत्पन्न राजवंश का जातक राजा होता है ॥ १५ ॥

पुनः राजयोग—

सौम्ये वीर्ययुते तनुयुक्ते वीर्याढ्ये च शुभे शुभयाते ।
धर्मार्थोपचयेष्वथ शेषैर्धर्मात्मा नृपजः पृथिवीशः ॥ १६ ॥

बलवान् बुध लग्न में, शुभग्रह (गुरु या शुक्र) नवम में और शेष ग्रह नवम, द्वितीय, तृतीय, षष्ठ, दशम, एकादश इन स्थानों में स्थित हों तो जातक राजा का पुत्र हो तो धर्मात्मा राजा होता है। कहीं पर 'शुभयाते' के स्थान में 'सुखयाते' ऐसा पाठान्तर है। अर्थ-चतुर्थ स्थान में शुभ ग्रह हों यह है ॥ १६ ॥

पुनः दो प्रकार के राजयोग—

वृषोदये मूर्तिधनारिलाभगैः शशाङ्कजीवार्कसुतापरैर्नृपः ।
सुखे गुरौ खे शशितीक्ष्णदीधितौ यमोदये लाभगतैर्नृपोऽपरः ॥१७॥

वृष लग्न हो और चन्द्रमा, बृहस्पति, शनि, शेष ग्रह क्रम से लग्न, द्वितीय, षष्ठ, एकादश इन स्थानों में स्थित हों तो जातक राजा का पुत्र हो तो राजा होता है।

बृहस्पति चतुर्थ में, चन्द्रमा, सूर्य दोनों दशम में, शनैश्चर लग्न में और शेष ग्रह एकादश में हो तो राजा का पुत्र राजा और दूसरा धनी होता है ॥ १७ ॥

पुनः दो प्रकार के राजयोग—

मेषूरणायतनुगाः शशिमन्दजीवा-
ज्ञारौ धने सितरवी हिबुके नरेन्द्रः ।
वक्रासितौ शशिसुरेज्यसितार्कसौम्या-
होरासुखास्तशुभखाप्तिगताः प्रजेशाः ॥ १८ ॥

चन्द्रमा दशम स्थान में, शनैश्चर एकादश में, बृहस्पति लग्न में, बुध, मङ्गल दोनों द्वितीय स्थान में और शुक्र, सूर्य, दोनों चतुर्थ में हो तो जातक राजा का पुत्र हो तो राजा होता है।

मङ्गल, शनैश्चर दोनों लग्न में, चन्द्रमा चतुर्थ में, बृहस्पति सप्तम में, शुक्र नवम

में, सूर्य दशम में और बुध एकादश में हो तो राजकुल में उत्पन्न जातक राजा होता है। यदि अन्य कुल में उत्पन्न हो तो धनी होता है ॥ १८ ॥

राज्यप्राप्ति का समय—

कर्मलग्नयुतपाकदशायां राज्यलब्धिरथवा प्रबलस्य।
शत्रुनीचगृहजातदशायां छिद्रसंश्रयदशा परिकल्प्या ॥ १६ ॥

राजयोगकारक ग्रहों में जो ग्रह दशम या लग्न में बैठा हो उस की दशा अन्तर्दशा में राज्य लाभ होता है। अगर दशम, लग्न इन दोनों स्थानों में राजयोगकारक ग्रह हों तो उनमें जो बली हो उसकी दशा, अन्तर्दशा में राज्य लाभ होता है। यदि उक्त दोनों स्थानों में बहुत राजयोग कारक ग्रह हों तो उनमें जो सब से बली हो उसकी दशा, अन्तर्दशा में राज्य लाभ होता है। उक्त दोनों स्थानों में कोई ग्रह न हो तो राजयोग कारक ग्रहों में जो सबसे अधिक बली हो उसकी दशा, अन्तर्दशा में राज्य लाभ होता है।

राज्यलब्धिकारक ग्रह की अन्तर्दशा सब ग्रह की दशा में आवेगी उनमें कब राज्य लाभ होगा इस पर विचार यह करना चाहिए कि राज्य लाभ कराने वाला ग्रह गोचरवश जिस अन्तर्दशा में अति बली हो उसी अन्तर्दशा में राज्य लाभ होता है।

जो बली ग्रह शत्रु स्थान या नीच स्थान में स्थित हो उसकी दशा, अन्तर्दशा छिद्रसंज्ञक है। इस छिद्रसंज्ञक दशा, अन्तर्दशा में प्राप्त राज्य का नाश होता है।

यदि निर्बल ग्रह शत्रु स्थान या नीच स्थान में स्थित हो उसकी दशा, अन्तर्दशा संश्रयसंज्ञक है, इस दशा, अन्तर्दशा में प्राप्त राज्य का नाश होता है, किन्तु देवता, राजा इत्यादि के आश्रय से पुनः प्राप्त हो जाता है ॥ १९ ॥

यात्रा में—

अरिकोपहतदशायां जन्मोदयनाथशत्रुपाके च।
स्वदशेशकारकदशा संश्रयणीयो नरेन्द्रः ॥

तथा भगवान् गार्गि—

लग्नगः कर्मगो वा स्यादथवा प्रबलोऽपि यः।
स स्यात्स्वान्तर्दशाकाले राज्यदः प्रबलो यदा ॥
नीचारिगृहसंस्थस्य दशायां प्रबलस्य च।
च्युतिर्बलविहीनस्य तन्मोक्षः परसंश्रयात् ॥

भोगी और भिल्ल, चोरों के स्वामी का योग—

गुरुसितबुधलग्ने सप्तमस्थेऽर्कपुत्रे
वियति दिवसनाथे भोगिनां जन्म विन्द्यात्।

शुभबलयुतकेन्द्रैः क्रूरभस्थैश्च पापै-
र्व्रजति शबरदस्युस्वामितामर्थभाक् च ॥ २० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके राजयोगाऽध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

बृहस्पति, शुक्र, बुध ये तीनों लग्न में, शनैश्चर सप्तम में और सूर्य दशम में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक भोगी होता है।

कोई 'गुरुसितबुधलग्ने' इस का अर्थ—बृहस्पति की राशि (धन, मीन) शुक्र की राशि (वृष, तुला) या बुध की राशि (मिथुन, कन्या) लग्न में हो—ऐसा करते हैं। क्यों कि दशम में सूर्य के रहने पर बुध, शुक्र लग्न में नहीं हो सकते। अतः वरामिहिराचार्य 'पूर्वशास्त्रानुसारेणायं योगः कृतः' ऐसे कहे हैं। यहां पर भगवान् गार्गि के मत से प्रथम अर्थ ही ठीक आता है।

जैसे उन का वचन—

जीवज्ञभार्गवैर्लग्ने　सप्तमस्थेऽर्कनन्दने ।
दशमस्थे रवौ जातो भोगवान् पुरुषो भवेत् ॥

शुभग्रहों की राशि केन्द्र में हों और पापग्रह पाप राशियों में हों तो भिल्ल, चोरों का स्वामी, धनी और भोगी होता है।

कोई 'शुभबलयुतकेन्द्रैः' इस का बली शुभग्रह केन्द्र में हो ऐसा अर्थ करते हैं, किन्तु वह ठीक नहीं है।

यतः भगवान् गार्गिः—

पापक्षेत्रगतैः पापैः केन्द्रस्थैः सौम्यराशिभिः ।
सबलैर्यस्य जन्म स्यात्स्यादसौ दस्युनायकः ॥ २० ॥

इति बृहज्जातके 'विमला' हिन्दीटीकायां राजयोगाध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

अथ ग्रन्थान्तरादाकृष्य राजयोगानाह—

नभश्चराः पञ्च निजोच्चसंस्था यस्य प्रसूतौ स तु सार्वभौमः ।
त्रयः स्वतुङ्गादिगताः स राजा राजात्मजोऽन्यस्य सुतोऽत्र मंत्री ॥

जिस जातक के पांच ग्रह उच्च के हों वह चक्रवर्ती राजा होता है। जिस के तीन ग्रह उच्च के हों तो भी वह मनुष्य राजा होता है। इस योग में राजा के घर में उत्पन्न लड़का ही राजा होता है, अगर राजवंश में उत्पन्न न हो तो वह मनुष्य मंत्री होता है।

अन्यच्च—दिनाधिराजे मृगराजसंस्थे नक्रे सवक्रे कलशेऽर्कसूनौ ।
पाठीरलग्ने शशिना समेते महीपतेर्जन्म महौजसः स्यात् ॥

अगर सिंह में रवि हो, मकर में मंगल हो, कुम्भ में शनि हो, मीन में चन्द्रमा हो तो जातक बड़ा तेजस्वी राजा होता है।

अन्यच्च—द्वन्द्वे दैत्यगुरौ निशाकरसुते मूर्तौ स्वतुङ्गे स्थिते।
नक्रे वक्रशनैश्चरे च शफरे चन्द्रामरेज्यौ स्थितौ॥
योगोऽयं प्रभवेत्प्रसूतिसमये यस्यावनीशो महान्।

जिस के जन्मकाल में मिथुन का शुक्र हो, उच्च का बुध लग्न में बैठा हो, वक्री शनैश्चर मकर राशि में हो, मीन में चन्द्रमा और बृहस्पति हो वह मनुष्य बड़ा भारी राजा होता है।

अन्यच्च—तुङ्गस्थितौ शुक्रबुधौ विलग्ने नक्रे च वक्रे धनुषीज्यचन्द्रौ।
प्रसूतिकाले नियतौ भवेतामाखण्डलो भूमितलेऽपि संस्थः॥

जिस के उच्च का बुध और शुक्र लग्न में हो, मङ्गल मकर का हो, बृहस्पति और चन्द्रमा धनु में हो तो वह मनुष्य पृथ्वीतल में इन्द्र के समान होता है।

अन्यच्च—सिंहोदयेऽर्कस्त्वजगो मृगाङ्कः शनैश्चरः कुम्भधरे सुरेज्यः।
धनुर्धरे चेन्मकरे महीजो राजाधिराजो मनुजो भवेत्सः॥

जिस के लग्न का रवि सिंह में हो, चन्द्रमा मेष में हो, शनि कुम्भ में हो, बृहस्पति धनु में हो, मकर में मङ्गल हो तो वह राजा होता है।

अन्यच्च—वाचस्पतिः स्वोच्चगतो विलग्ने मेषे दिनेशः शनिशुक्रसौम्याः।
लाभालयस्थाः किल भूमिपालं तं भूतलस्याभरणं गृणन्ति॥

स्पष्ट है—

अन्यच्च—पश्येन्मृगाङ्कात्मजमिन्द्रमन्त्री विचित्रसम्पन्नृपतिं करोति।
नक्षत्रनाथोप्यधिमित्रभागे शुक्रेण दृष्टो नृपतिं करोति॥

जिस की जन्म कुण्डली में बुध को बृहस्पति देखे तो वह मनुष्य विचित्र सम्पत्ति वाला राजा होता है। चन्द्रमा अधिमित्र के घर में बैठा हो, शुक्र उस को देखता हो तो भी वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—स्वोच्चे मूर्तिगतेऽमृतांशुतनये नक्रे सवक्रे शनौ।
चापे वागधिपेन्दुभार्गवयुते स्याज्जन्म भूमीपतेः॥

अगर लग्न में उच्च का बुध हो, वक्री शनि मकर राशि का हो, बृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्र मीन में हों तो जातक राजा होता है।

अन्यच्च—प्रसूतिकाले मदने धने च व्यये विलग्ने यदि सन्ति खेटाः।
ते छत्रयोगं जनयन्ति तस्य प्राक्पुण्यपाकाभ्युदयो हि यस्य॥

जिस के जन्म काल में सप्तम, द्वितीय, द्वादश और लग्न इन स्थानों में सब ग्रह हों तो उसको छत्रयोग होता है। यह छत्रयोग पूर्वजन्मार्जित पुण्य के बल से होता है।

अन्यच्च—कन्यालग्नगते बुधे च विबुधामात्ये च जायास्थिते।

भौमार्को सहजेऽर्कजोऽरिभवनेऽम्बुस्थे भृगोर्नन्दने ।
राजा स्यात्…………………………………॥

जिस के जन्म काल में बुध कन्या लग्न में हो, बृहस्पति सप्तम में हो, मंगल और रवि तृतीय में हो, शनि छठे भवन में हो और शुक्र चतुर्थ में हो तो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—मेषे दिनेशः शशिना समेतो यस्य प्रसूतौ स तु भूपतिः स्यात् ।
स्वतुङ्गगेहायगतौ सितेज्यौ केन्द्रत्रिकोणे कुरुतश्च भूपम् ॥

जिस के जन्म काल में चन्द्रमा सहित सूर्य मेष में हो वह मनुष्य राजा होता है, जिस के शुक्र और बृहस्पति अपने-अपने उच्च के हो कर केन्द्र (१।४।७।१०) वा त्रिकोण (९।५) में हो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—मीने निशाकरः पूर्णः सर्वग्रहनिरीक्षितः ।
सार्वभौमं नरं कुर्य्यादिन्द्रतुल्यपराक्रमम् ॥

जिस के जन्म काल में मीन राशि का पूर्ण बली चन्द्रमा हो, शेष सब ग्रहों की उस पर दृष्टि हो तो वह मनुष्य सार्वभौम होता है और उस का पराक्रम इन्द्र के समान होता है।

अन्यच्च—स्वोच्चे स्थितः सोमसुतः ससोमः कुर्यान्नरं मागधदेशराजम् ।
जन्माधिपो जन्मविलग्नपो वा केन्द्रे बली नीचकुलेऽपि भूपम् ॥
कुर्यादुदारं सुतरां पवित्रं किमत्र चित्रं क्षितिपालपुत्रम् ।

जिस के जन्म काल में उच्च का बुध चन्द्रमा के साथ बैठा हो वह मनुष्य मगध देश का राजा होता है। जिस के जन्म राशि का स्वामी अथवा जन्म लग्न का स्वामी वक्री हो कर केन्द्र में हो तो नीच कुल में उत्पन्न मनुष्य भी उदार और पवित्र आचरण वाला राजा होता है। अगर राजपुत्र राजा हो तो इस में आश्चर्य की क्या बात है।

अन्यच्च—मृगराशिं परित्यज्य स्थितो लग्ने बृहस्पतिः ।
करोति पृथिवीनाथं मत्तेभपरिवारितम् ॥

जिस के जन्म काल में लग्न में मकर राशि को छोड़ कर अन्य किसी राशि में बृहस्पति बैठा हो तो वह मनुष्य राजा होता है। उस के दरवाजे पर बड़े-बड़े मस्त हाथी बँधे रहते हैं।

अन्यच्च—मीनोदये दानवराजपूज्यश्चन्द्रामरेज्यौ भवने कुलीरे ।
मेषेऽर्कभौमौ नृपतिः किल स्यादाखण्डलेनापि तुलां प्रयाति ॥

जिस के जन्म लग्न स्थान में मीनराशि का शुक्र बैठा हो, चन्द्रमा और बृहस्पति कर्क में हो सूर्य और मंगल मेष में हो तो वह मनुष्य इन्द्र के समान राजा होता है।

अन्यच्च—मेषे गतो मूर्तिगतः प्रसूतौ बृहस्पतिश्चास्तगतः कलावान् ।

रसातले व्योमगतः सितश्चेन्महीपतिर्गीतदिगन्तकीर्तिः ॥

जिस के जन्म काल में मेष राशि का बृहस्पति लग्न में हो, चन्द्रमा सप्तम में हो, चतुर्थ वा दशम स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य दिगन्त कीर्ति वाला राजा होता है।

अन्यच्च—एकोऽपि शस्तः शुभदः स्वतुङ्गे केन्द्रे पतङ्गो बलवान् प्रदृष्टः ।

सुतस्थितेनामरपूजितेन चेन्मानवो मानवनायकः स्यात् ॥

जिस के जन्म काल में एक भी शुभग्रह उच्च का हो तथा केन्द्र में स्थित बलवान् सूर्य के ऊपर पंचम स्थान स्थित बृहस्पति की दृष्टि हो तो वह मनुष्य मनुष्यों का नायक (राजा) होता है ।

अन्यच्च—सुरासुरेज्यस्थितदृष्टिरिन्दुः स्वोच्चे स्थितो भूमिपतिं करोति ।

विलोकयन्तः परिपूर्णचन्द्रं शुक्रज्ञजीवा जनयन्ति भूपम् ॥

जिस के जन्म काल में चन्द्रमा उच्च का हो उस को बृहस्पति और शुक्र देखते हों तो राजा होता है । अगर पूर्ण चन्द्र को शुक्र, बुध और बृहस्पति देखते हों तो भी राजा होता है ।

अन्यच्च—छायासुतो नक्रविलग्नयातश्चास्ते प्रसूतौ यदि पुष्पवन्तौ ।

लाभे कुजो वै भृगुजोऽष्टमस्थः स्याद्भूपतिर्भूपकुलप्रसूतः ॥

जिस के जन्म काल में मकर लग्न में शनैश्चर बैठा हो, सूर्य और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हों, मंगल एकादश में हों और शुक्र अष्टम स्थान में हो तो राजा के वंश में उत्पन्न जातक राजा होता है ।

अन्यच्च—सुरासुरेज्यौ भवतश्चतुर्थेऽत्यर्थं समर्थः पृथिवीपतिः स्यात् ।

कर्कस्थितो देवगुरुः सचन्द्रः काश्मीरदेशाधिपतिं करोति ॥

जिस के जन्म काल में शुक्र और बृहस्पति चतुर्थ में हों तो वह मनुष्य राजा होता है । अगर चन्द्रमा सहित बृहस्पति कर्क राशि का हो तो वह मनुष्य काश्मीर देश का राजा होता है ।

अन्यच्च—दृश्यते युज्यते वापि चन्द्रजेन बृहस्पतिः ।

शिरसा शासनं तस्य धारयन्ति महीभृतः ॥

जिस के जन्म काल में बृहस्पति, बुध से दृष्ट या युत हो तो उस की आज्ञा को राजा लोग शिर से धारण करते हैं ।

अन्यच्च—गुरुः कुलीरोपगतः प्रसूतौ स्मराम्बुखस्था भृगुमन्दभौमाः ।

तद्यानकाले जलधेर्जलानि भेरीनिनादोच्छलनं प्रयान्ति ॥

जिस के जन्म काल में बृहस्पति कर्क का हो, शुक्र, शनि और मंगल क्रम से सप्तम, चतुर्थ और दशम स्थान में हों तो उस के यात्रा समय में समुद्र के जल भी उछल उठते हैं ।

अन्यच्च—धनस्थिताः सौम्यसितामरेज्या मन्दारचन्द्रा यदि सप्तमस्थाः ।

यस्य प्रसूतौ स तु भूपतिः स्यादरातिदन्तिक्षतिसिंह एव ॥

जिसके जन्म काल में बुध, शुक्र और बृहस्पति धन स्थान में हों, शनि, मंगल और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो वह मनुष्य राजा होता है और शत्रु रूप हाथी को नाश करने में सिंह के समान होता है।

अन्यच्च—सिंहे कमलिनीभर्ता कुलीरस्थो निशापतिः।
दृष्टौ द्वावपि जीवेन पार्थिवं कुरुतस्तदा ॥

जिसके जन्म काल में सिंह राशि में सूर्य हो, चन्द्रमा कर्क राशि का हो, इन दोनों के ऊपर बृहस्पति की दृष्टि हो तो वह राजा होता है।

अन्यच्च—बुधः कर्कटमारूढो वाक्पतिश्च धनुर्द्धरे।
रविभूसुतदृष्टौ तौ कुरुतः पृथिवीपतिम् ॥

जिस के जन्म काल में कर्क का बुध और धन का बृहस्पति हो, इन दोनों के ऊपर सूर्य और मंगल की दृष्टि हो तो वह राजा होता है।

अन्यच्च—वृषे शशी लग्नगतोऽम्बुसप्तखस्था रवीज्यार्कसुता भवन्ति।
तद्दण्डयात्रासु रजोऽन्धकाराद्दिनेऽपि रात्रिः कुरुते प्रवेशम् ॥

जिस के जन्म काल में चन्द्रमा वृष का होकर लग्न में हो, चतुर्थ, सप्तम, दशम, स्थानों में क्रमशः रवि, बृहस्पति, शनि हों तो वह राजा होता है। जब उस की सवारी निकलती है तब इतनी धूल उड़ती है कि दिन में भी रात्रि के समान अन्धकार हो जाता है।

अन्यच्च—उदग्वशिष्ठो भृगुजश्च पश्चात् प्राग्वाक्पतिर्दक्षिणतस्त्वगस्त्यः।
प्रसूतिकाले स भवेदिलाया नाथो हि पाथोनिधिमेखलायाः ॥

जिस के जन्म काल में उत्तर में वशिष्ठ हो, पश्चिम में शुक्र हो, पूर्व में बृहस्पति हो और दक्षिण में अगस्त्य हो वह मनुष्य समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का स्वामी होता है।

अन्यच्च—गुर्विन्दुसौम्यास्फुजितश्च यस्य मूर्तित्रिधर्मायगता भवन्ति।
मृगेऽर्कसूनुस्तनुगोऽत्र नूनमेकातपत्रां स भुनक्ति धात्रीम् ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध और शुक्र क्रम से लग्न, तृतीय, नवम और एकादश स्थान में हों, शनि लग्न में मकर राशि का हो तो वह मनुष्य चक्रवर्ती राजा होता है।

अन्यच्च—लग्नं लग्नपतिर्बलान्वितवपुः केन्द्रत्रिकोणे शिवे
प्रच्छायानविवाहजन्मतिलके कुर्यान्नृपालं ध्रुवम्।
सच्छीलं विभवान्वितं गतरुजं मुक्तातपत्रान्वितं
जातं निम्नकुलेऽपि भूतिसहितं शंसन्ति गर्गादयः ॥

अगर लग्नेश बलवान् हो कर केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में बैठ कर लग्न को देखता हो तो प्रश्न, यात्रा, विवाह, जन्म अथवा राजतिलक में मनुष्य को राजा

बनाता है और वह मनुष्य अच्छे स्वभाव वाला, धन से युक्त, रोग से रहित, मोती लगे छत्र से युक्त होता है। यद्यपि नीच कुल में भी जन्म हो तथापि वह सम्पत्ति युक्त होता है।

अन्यच्च—कलाकलापाधिकृताधिशीलचन्द्रो भवेज्जन्मनि केन्द्रवर्ती।
विहाय लग्नं कुरुते नृपालं लीलाविलासाकलितारिवृन्दम् ॥

जिस के जन्म काल में बलवान् चन्द्रमा लग्न को छोड़ कर केन्द्र में हो वह मनुष्य राजा होता है और शत्रुओं के समूह को जीतता है।

अन्यच्च—लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रस्त्रिकोणे जीवभास्करौ।
कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगस्तदा भवेत् ॥

जिस के जन्म काल में लग्न में शनि और चन्द्रमा हो, त्रिकोण में बृहस्पति और सूर्य हो दशम में मंगल हो तो राजयोग होता है।

अन्यच्च—केन्द्रगः सुरगुरुः सशशाङ्को यस्य जन्मनि च भार्गवदृष्टः।
भूपतिर्भवति सोऽतुलकीर्तिर्नीचगो यदि न कश्चिदिह स्यात् ॥

जिस के जन्म काल में चन्द्रमा सहित बृहस्पति केन्द्र में हो, उस के ऊपर शुक्र की दृष्टि हो और कोई ग्रह नीच का न हो तो वह मनुष्य अतुल कीर्तिवाला राजा होता है।

अन्यच्च—भौमः पश्यति जीवं जीवेन निरीक्षितो महीसूनुः।
मन्त्री परोपकारी देवैरपि सुपूजितो बालः ॥

जिस के जन्म काल में मंगल, बृहस्पति को देखे और मङ्गल पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो वह मनुष्य मन्त्री परोपकारी और देवता से भी पूजित होता है।

अन्यच्च—केन्द्रे विलग्ननाथः श्रेष्ठबलो मानवाधिपं कुरुते।
सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टे लग्ने भवेन्महीपालः ॥

जिस के जन्म काल में लग्नेश बली हो कर केन्द्र स्थान में बैठा हो वह मनुष्य राजा होता है। अगर सब ग्रह लग्न को देखते हों तो भी राजा होता है।

अन्यच्च—जीवो बुधो भृगुसुतोऽथ निशाकरो वा धर्मे विशुद्धतनवः स्फुरदंशुजालाः।
मित्रैर्निरीक्षितयुता यदि सूतिकाले कुर्वन्ति देवसदृशं नृपतिं महान्तम् ॥

जिस के जन्म काल में चेष्टाबल युक्त बृहस्पति, बुध, शुक्र और चन्द्रमा धर्म स्थान में हों और मित्र ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हों तो वह मनुष्य बड़ा प्रतापी राजा होता है।

अन्यच्च—मेषस्थौ भानुभौमौ वृषशशिभृगुजौ भौममन्दौ मृगस्थौ
कन्यायां रौहिणेयो रविशशिदमनः कर्कटे जीवचन्द्रौ।
मीनस्थौ शुक्रजीवौ तुलशनिभृगुजौ जन्मगे राहुसौम्यौ
यो योगेष्वेषु जातः स भवति मनुजो भूमिपालो धनी वा ॥

सूर्य और मङ्गल मेष में हों, वृष राशि में चन्द्रमा और शुक्र हों, मकर राशि में मङ्गल और शनि हों, कन्या में बुध और राहु हों, कर्क राशि में बृहस्पति और चन्द्रमा हों, मीन राशि में शुक्र और बृहस्पति हों, तुला राशि में शनि और शुक्र हों, मिथुन में राहु और बुध हों, इन योगों में जो जातक पैदा होता है वह राजा अथवा धनी होता है।

अन्यच्च—एक एव ग्रहः स्वर्क्षे वर्गोत्तमगतो यदि।
बलवान्मित्रसंदृष्टः करोति स महीभृतम्॥

जिस के जन्म काल में एक भी ग्रह अपने घर का अथवा अपने वर्गोत्तम का हो तो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—मूर्तौ वा पञ्चमस्थाने यदा जीवो भवेत्तदा।
दशमे चन्द्रमा वापि राज्याध्यक्षस्तदा भवेत्॥

जिस के जन्म काल में लग्न अथवा पञ्चम स्थान में बृहस्पति हो, दशम स्थान में चन्द्रमा हो तो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—आकाशमन्दिरगतस्तनुपः स्वगेहे कुर्यान्नरं नृपतिचक्रवरैः सुसेव्यम्।

जिसके जन्म काल में लग्नेश दशम स्थान में अपने घर का हो उस मनुष्य की सेवा राजा लोग करते हैं।

अन्यच्च—नीचस्थितो जन्मनि यो ग्रहः स्यात्तद्राशिनाथश्च तदुच्चनाथः।
भवेत्त्रिकोणे यदि केन्द्रवर्ती राजा भवेद्धार्मिक-चक्रवर्ती॥

जिस के जन्म काल में जो ग्रह नीच का हो उस राशि का जो स्वामी, उस का जो उच्च स्थान, उस उच्च का जो स्वामी हो वह अगर त्रिकोण में अथवा केन्द्र में हो तो वह मनुष्य चक्रवर्ती राजा होता है।

अन्यच्च-सुकृतनिलयनाथे केन्द्रगे जन्मलग्नात्प्रभवति यदि योगः सार्वभौमाभिधानः।
बहुतरगुणपूर्णो बुद्धिमान्दानशीलो भवति नृपतिसेव्यो धार्मिको भूपभूपः॥

जिस के जन्म काल में भाग्यस्थान का स्वामी जन्म लग्न से केन्द्र स्थान में स्थित हो तो सार्वभौम राजा होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य बहुत गुण से पूर्ण, बुद्धिमान, दानी, धर्मात्मा तथा राजाओं का भी राजा होता है।

अन्यच्च—शफरीयुगले चन्द्रः कर्कटे च बृहस्पतिः।
शुक्रः कुम्भे भवेद्राजा गजवाजिसमृद्धिभाक्॥

जिस के जन्म काल में मीन अथवा मिथुन राशि में चन्द्रमा, कर्क में बृहस्पति और कुम्भ में शुक्र हो तो वह मनुष्य हाथी, घोड़ा और नाना प्रकार के धन से युक्त राजा होता है।

अन्यच्च—मर्त्यानां जन्मकाले विबुधपतिगुरुर्दानवेशस्य मन्त्री
स्वस्थो मूलत्रिकोणे दिनकररहिते संयुते तुङ्गराशौ।

पुत्रे पातालल्ग्ने मनसिजनिलये धर्मकर्मायकोशे
ज्ञानामोदप्रयुक्तः स भवति मनुजो भूपमान्यो धनाढ्यः॥

जिस के जन्म काल में बृहस्पति और शुक्र अपने घर में हो, मूल त्रिकोण में हों सूर्य रहित हो, उच्च राशि में हो, पञ्चम, चतुर्थ, प्रथम, सप्तम, नवम, दशम, एकादश, द्वितीय स्थानों में हो तो राजमान्य, धन, विद्या तथा आनन्द से युक्त होता है।

अन्यच्च—उपचयगृहसंस्थो जन्मतो यस्य चन्द्रः।
स भवति नरनाथः शक्रतुल्यो बलेन॥

जिस के जन्म काल में चन्द्रमा उपचय गृह (३, ६, १०, ११) में स्थित हो वह मनुष्य राजा होता है और बल में इन्द्र के समान होता है।

अन्यच्च-गुरुसितबुधलग्ने सप्तमस्थेऽर्कपुत्रे वियति दिवसनाथे भोगिनां जन्म विद्यात्।

जिस के बृहस्पति, शुक्र तथा बुध लग्न में, सप्तम स्थान में शनि और दशम स्थान में सूर्य हो तो भोग करने वाला होता है।

अन्यच्च—दिवौकसांपतेर्मन्त्री कुर्यात्पश्यन्बुधं नृपम्।

जिस के जन्म काल में बृहस्पति बुध को देखता हो वह मनुष्य राजा का मन्त्री होता है।

अन्यच्च—केन्द्रे विलग्ननाथः श्रेष्ठबलो मानवाधिपं कुरुते।

बलवान् लग्न का स्वामी केन्द्र में हो तो राजा होता है।

अन्यच्च—धने व्यये तथा लग्ने सप्तमे च यदा ग्रहाः।
छत्रयोगस्तदा ज्ञेयो वंश्यानां नायको भवेत्॥

अगर सब ग्रह द्वितीय, द्वादश, लग्न और सप्तम इन चार स्थानों में हों तो छत्र योग होता है, इस योग में उत्पन्न मनुष्य अपने कुल में श्रेष्ठ होता है।

अन्यच्च—लग्नात्षष्ठ उताष्टमे यदि शुभाः पापैरयुक्तेक्षिताः।
मन्त्री दण्डपतिः क्षितेरधिपतिर्नेता बहूनां पतिः॥

लग्न से षष्ठ और अष्टम स्थान में शुभग्रह हों तथा पापग्रह से युक्त या दृष्ट न हों तो मन्त्री या राजा या सेनापति होता है।

अन्यच्च—यदि भवति च केन्द्री यामिनीनाथ एव
प्रददति प्रियभार्यां पुत्रिणीं वा सुरूपाम्।
धनकनकसमृद्धिं माणिकं हीररत्नं
रचयति मृगनाभेश्चन्दनैश्चर्चिताङ्गम्॥

अगर केवल एक चन्द्रमा केन्द्रवर्ती हो तो प्रिया, पुत्रवती और सुन्दर रूपवाली भार्या मिलती है। धन, सुवर्ण, हीरा, मणि, रत्नों की समृद्धि होती है। सदा कस्तूरी मिश्रित चन्दन से शोभित शरीर रहता है।

अन्यच्च—विद्यास्थाने यदा सौम्यः कर्कस्थाने च चन्द्रमाः।

धर्मस्थाने यदा जीवो राजयोगस्तदा भवेत् ॥

अगर पञ्चम स्थान में बुध, कर्क राशि में चन्द्रमा, धन स्थान में बृहस्पति हो तो राजयोग होता है।

अन्यच्च—धनुर्मीनतुलामेषमृगकुम्भोदये शनौ।
चार्वङ्गो नृपतिर्विद्वान् पुरग्रामाग्रणीर्भवेत् ॥

धनु, मीन, तुला, मेष, मकर या कुम्भ का शनि लग्न में हो तो अच्छे शरीर वाला, पण्डित और पुर-ग्राम वासियों में अग्रगण्य होता है।

अन्यच्च—स्वक्षेत्रस्थो यदा जीवो बुधः सौरिश्च चेद्भवेत्।
तस्य जातस्य दीर्घायुः सम्पदश्च पदे पदे ॥

अगर बृहस्पति, बुध और शनैश्चर स्वक्षेत्रस्थ हों तो उस मनुष्य की दीर्घायु कहना चाहिये, और पद पद में सम्पत्ति मिलती है।

अन्यच्च—आदौ जीवः शनिश्चान्ते ग्रहा मध्ये निरन्तरम्।
राजयोगं विजानीयादिति गर्गेण भाषितम् ॥

जिस के जन्म काल में आदि में बृहस्पति, अन्त में शनि, और मध्य में शेष ग्रह निरन्तर हों तो उस को राजयोग होता है। ऐसा गर्ग मुनि का कथन है।

अन्यच्च—एकोऽपि केन्द्रभवने नवपञ्चमे वा भास्वन्मयूखविमलीकृतदिग्विभागः।
निःशेषदोषमपहृत्य शुभप्रसूतं दीर्घायुषं विगतरोगभयं करोति ॥

जिस के जन्म काल में एक भी बलवान् तेजस्वी ग्रह केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तो सम्पूर्ण दोषों को नाश करके दीर्घायु और रोग रहित करता है।

अन्यच्च—दिव्यस्त्रीवरकाञ्चनाम्बरयुतः पाण्डित्यलक्ष्मीमयः
शश्वत्कौतुकगीतनृत्यरसता व्यापारदीक्षागुरुः।
पुत्रभ्रातृजनान्वितः स्थिरमतिः सत्कर्मप्रीत्यन्वितो
जीवे केन्द्रगते भवेन्निजसुखी सत्कर्मकारी नरः ॥

जिस के जन्म काल में बृहस्पति केन्द्र में हो वह मनुष्य दिव्य स्त्री, सुवर्ण, वस्त्र पाण्डित्य और लक्ष्मी से युक्त होता है। सर्वदा कौतुक, गीत, नृत्य, रसिकता, व्यापार और दीक्षा में प्रवीण होता है। पुत्र और भाइयों से युक्त, स्थिरमति, सत्कर्म में प्रीति करने वाला तथा अपने पराक्रम से सुखी होता है।

अन्यच्च—मृगपतिवृषकन्याकर्कटस्थश्च राहुर्भवति विपुललक्ष्मी राजराज्याधिपो वा।
हयगजनरनौकामेदिनीबुद्धियुक्तः स भवति कुलदीपो राहुतुङ्गे नराणाम् ॥

जिसके जन्म काल में मकर, वृष, कन्या अथवा कर्क का राहु हो तो वह मनुष्य बड़ा लक्ष्मीवान् अथवा राज्य का स्वामी, हाथी, घोड़ा, भृत्य, नौका, पृथ्वी और बुद्धि से युक्त होता है। और कुल में दीपक होता है, इस योग को राहुतुङ्ग योग कहते हैं।

अन्यच्च—एकः शुक्रो जननसमये लाभसंस्थे च केन्द्रे
जातो वै जन्मराशौ यदि सहजगतः प्राप्यते वा त्रिकोणे।
विद्याविज्ञानयुक्तो भवति नरपतिर्विश्वविख्यातकीर्ति-
र्दानी मानी च शूरो बहुगुणसहितः सद्गजैः सेव्यमानः॥

जिस के जन्म समय में केवल शुक्र एकादश, केन्द्र, जन्म, पराक्रम अथवा त्रिकोण में हो तो वह मनुष्य विद्या, विज्ञान से युक्त, संसार में प्रसिद्ध, राजा, दानी, मानी, शूर, बहुत गुणों से युक्त और सुन्दर हाथियों से युक्त होता है।

अन्यच्च—दशमे बुधसूर्यौ च भौमराहू च षष्ठगौ।
राजयोगेऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत्॥

जिस के जन्म काल में बुध और सूर्य दशम में, मङ्गल और राहु षष्ठ में हो तो राजयोग होता है। इस योग में जो जातक उत्पन्न होता है वह पुरुषों का नायक होता है।

अन्यच्च—धनवान् प्राज्ञः शूरो मन्त्री वा दण्डनायकः पुरुषः।
दशमस्थे रवितनये वृन्दपुरग्रामनेता स्यात्॥

जिस के जन्म काल में दशम स्थान में शनि हो वह मनुष्य धनवान्, पण्डित, शूर, मन्त्री, दण्डनायक अथवा नगर और ग्राम का नेता होता है।

अन्यच्च—चन्द्रः पश्येद्यदादित्यं बुधः पश्येन्निशापतिम्।
अस्मिन् योगे तु यो जातः स भवेद्वसुधाधिपः॥

जिसके जन्म काल में चन्द्रमा की सूर्य पर, बुध की चन्द्रमा पर दृष्टि हो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—लग्नपो धनपश्चैव धनभावस्थितो यदि।
तदा कोटिमितं द्रव्यं करोति नरमन्दिरे॥

जिस के जन्म काल में लग्नेश और धनेश दोनों धन भाव में स्थित हो वह मनुष्य करोड़पति होता है।

अन्यच्च—महीसुतः केन्द्रसमाश्रितो बली रवीन्दुवाचस्पतिभिर्निरीक्षितः।
....भवेन्नृपेन्द्रः॥

जिस के जन्म काल में मङ्गल बलवान् हो कर केन्द्र में बैठा हो, सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति उस को देखते हों तो राजा होता है।

अन्यच्च—कृत्तिका-रेवती-स्वाती-पुष्ये स्थायी भृगोः सुतः। नृपं करोति...॥

जिस के जन्म काल में कृत्तिका, रेवती, स्वाती या पुष्य नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—शत्रुस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने शशी भवेत्।
गृहमध्ये स जातश्च विख्यातः कुलदीपकः॥

जिस के जन्म काल में शत्रु स्थान में बृहस्पति और लाभ स्थान में चन्द्रमा हो तो वह जातक अपने घर में विख्यात और कुल में दीप के समान होता है ।

अन्यच्च—तुलामीनमेषे वृषे दैत्यपुत्रो भवेद्राजमान्यः कलाकौतुकी च ।
अपत्यत्रयं तच्चिरं जीवितञ्च .... ॥

जिस के जन्म काल में तुला, मीन, मेष अथवा वृष में शुक्र हो तो वह मनुष्य राजमान्य, कला में निपुण और चिरजीवी होता है तथा उस को तीन सन्तानें होती हैं।

अन्यच्च—तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नस्थोऽपि शनैश्वरः ।
करोति भूभुजां नाथं मत्तेभपरिवारितम् ॥

जिस के तुला, धन अथवा मीन राशि का शनैश्वर लग्न में बैठा हो वह मनुष्य राजा होता है और उस के यहाँ मत्त हाथी बँधे रहते हैं ।

अन्यच्च—एक एव सुरराजपुरोधाः केन्द्रगोऽथ नवपञ्चमगो वा ।
लाभगो भवति यस्य विलग्ने शेषखेचरबलैरबलैः किम् ॥

जिस के जन्म काल में एक बृहस्पति केन्द्र, नवम, पञ्चम, लाभस्थान अथवा लग्न में हो शेष ग्रह बल रहित भी हों तो कुछ भी नहीं कर सकते हैं ।

अन्यच्च—लाभे त्रिकोणे यदि शीतरश्मिः करोत्यवश्यं क्षितिपालतुल्यम् ।

जिस के जन्म काल में चन्द्रमा एकादश अथवा त्रिकोण (५, ९) में बैठा हो वह राजा के समान होता है ।

अन्यच्च—सहजस्थो यदा जीवो मृत्युस्थाने यदा सितः ।
निरन्तरं ग्रहा मध्ये राजा भवति निश्चितम् ॥

जिस के जन्म काल में बृहस्पति तृतीय में, शुक्र अष्टम स्थान में, शेष ग्रह निरन्तर मध्यम में हों तो वह निश्चय करके राजा होता है ।

अन्यच्च—किं कुर्वन्ति ग्रहाः सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
मत्तमातङ्गयूथानां भिनत्त्येकोऽपि केशरी ॥

अगर केन्द्र में बृहस्पति हो और शेष ग्रह निन्दित जगह में भी हों तो कुछ भी खराबी नहीं कर सकते हैं । जैसे अकेला सिंह सैकड़ों मत्त हाथियों के झुण्डों का नाश करता है ।

अन्यच्च—क्षेत्राधिपसंदृष्टे शशिनि नृपस्तत्सुहृद्भिरपि धनवान् ।

चन्द्रमा जिस घर में बैठा हो उस के स्वामी अगर उस को देखें तो मनुष्य राजा होता है अगर उस के मित्र उस को देखें तो धनवान् होता है ।

अन्यच्च—लग्ने यस्य बुधो नास्ति केन्द्रे नास्ति बृहस्पतिः ।
दशमेऽङ्गारको नास्ति स जातः किं करिष्यति ॥

जिस के बुध लग्न में न हो, केन्द्र में बृहस्पति न हो, दशम में मङ्गल न हो वह जातक इस संसार में क्या कर सकता है, अर्थात् कुछ भी नहीं कर सकता ।

अन्यच्च—वनेऽपि मित्राणि भवन्ति तेषां येषां गुरुर्मित्रनिकेतस्थः ।

जिस मनुष्य के जन्म काल में बृहस्पति अपने मित्र के घर में बैठा हो उस को वन में भ। मित्र मिल जाते हैं ।

अन्यच्च—चतुर्ग्रहैरेकगतैश्च संस्थैर्धीधर्मदुश्चिक्यतनुस्थितैर्वा ।
दासीषु जातः क्षितिपालतुल्यो भवेन्नरो भूपतिरत्नकोशी ॥

जिस के पञ्चम, नवम, तृतीय अथवा लग्न में चार ग्रह बैठे हों तो वह मनुष्य यद्यपि दासी का पुत्र हो तथापि राजा वा राजा का खजाञ्ची होता है ।

अन्यच्च—स्वर्क्षस्वत्रिकोणगैस्त्र्याद्यैर्भूपतिवंशजा नरेन्द्राः ।

अगर तीन अथवा उस से अधिक ग्रह स्वक्षेत्री अथवा अपने मूल त्रिकोण के हों तो राजवंश में उत्पन्न मनुष्य राजा होता है ।

अन्यच्च—चतुर्थं स्वामिना दृष्टं तन्मित्रेण च पार्वति ।
लग्नं वापि यदा यस्य तस्य सम्पद्भवेद् ध्रुवम् ॥

जिस के जन्म काल में चतुर्थ वा लग्न अपने स्वामी अथवा अपने मित्र से देखा जाता हो वह मनुष्य अवश्य सम्पत्तिशाली होता है ।

अन्यच्च—कामाजकन्यारिपुरन्ध्रसंस्थः केन्द्रत्रिकोणव्ययगश्च राहुः ।
कामी च शूरो बलवान् स भोगी गजाश्वछत्रीबहुपुत्रता च ॥

जिस के जन्म काल में मिथुन, मेष अथवा कन्या राशि का राहु षष्ठ, अष्टम केन्द्र, त्रिकोण अथवा द्वादश में बैठा हो वह मनुष्य कामी, शूर, बलवान्, भोगी, हाथी, घोड़े और छत्र वाला तथा बहुत पुत्र वाला होता है ।

अन्यच्च—मृगपतिवृषकन्याकर्कटस्थश्च राहुर्भवति विपुललक्ष्मी राजराज्याधिपो वा ।

जिस के जन्म समय में मकर, वृष, कन्या अथवा कर्क का राहु हो, वह मनुष्य बड़ा लक्ष्मीवान् होता है अथवा उस को राज्य मिलता है ।

अन्यच्च—बुधभार्गवजीवानामेकोऽपि यदि केन्द्रगः ।
पुमाञ्जातः स दीर्घायुर्गुणवान् राजवल्लभः ॥

जिस के जन्म काल में बुध, शुक्र और बृहस्पति इन तीनों में से एक भी केन्द्र में हो तो जातक दीर्घायु, गुणवान् और राजप्रिय होता है ।

यानयोगमाह—शुक्रचन्द्रयोर्मिथो दृष्टयोः सिंहस्थयोर्वा यानवन्तः ।

शुक्र और चन्द्रमा में परस्पर दृष्टि हो तो जातक सवारी वाला होता है अथवा शुक्र, चन्द्रमा दोनों में एक से दूसरा तृतीय में अर्थात् शुक्र से चन्द्रमा तृतीय में हो या चन्द्रमा से शुक्र तृतीय में हो तो जातक सवारी वाला होता है ।

अन्यच्च—कर्किणि लग्ने जीवे मृगलाञ्छने तथा लाभे।
मेषेऽर्के लाभगते बुधशुक्रौ जायते भूपः॥

जिस के लग्न में कर्क राशि का बृहस्पति हो, चन्द्रमा लाभ स्थान में बैठा हो, मेष का सूर्य हो, लाभ स्थान में बुध और शुक्र भी हो तो राजा होता है।

अन्यच्च—बुधादित्यसमायोगे धार्मिकश्च विचक्षणः।
धनी बहुसुतो ज्ञेयो भृत्ययुक्तो जितेन्द्रियः॥

जिस के जन्म काल में बुध और सूर्य साथ बैठा हो तो धर्मात्मा, पण्डित, धनवान्, बहुत पुत्रवाला, भृत्यों से युक्त तथा जितेन्द्रिय होता है।

अथ सिंहासनयोगमाह—षष्ठाष्टमे द्वादशे च द्वितीये च यदा ग्रहाः।
सिंहासनाख्यो योगोऽयं राजा सिंहासने भवेत्॥

जब षष्ठ, अष्टम, द्वादश और द्वितीय इन चार स्थानों में सब ग्रह पड़ें तो सिंहासन नाम का योग होता है, इस योग में उत्पन्न जातक राजा होता है।

अन्यच्च—उषःकालेऽभिजित्काले गोधूल्यां वा महानिशि।
अत्र गोपालजातोऽपि राजा भवति निश्चितम्॥

जिस मनुष्य का जन्म उषःकाल अथवा अभिजित् काल अथवा गोधूलि काल अथवा महानिशा में हो तो वह मनुष्य ग्वाले का पुत्र भी हो तथापि राजा होता है।

अन्यच्च—त्रिकोणे सप्तमे लग्ने भवन्ति च यदा ग्रहाः।
हंसयोगं विजानीयात्स्ववंशस्य च पालकः॥

अगर त्रिकोण, सप्तम और लग्न में सब ग्रह बैठे हों तो हंस योग होता है। इस योग में उत्पन्न हुआ मनुष्य अपने वंश का पालन करने वाला होता है।

अन्यच्च—लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रगः।
तस्य पुंसश्च दीर्घायुः स पुमान्राजवल्लभः॥

जिस के लग्नेश अथवा बृहस्पति अथवा शुक्र अगर केन्द्र स्थान में स्थित हो तो मनुष्य दीर्घायु और राजप्रिय होता है।

अन्यच्च—चतुर्ग्रहा एकगताः पापाः सौम्या भवन्ति हि।
भ्रातृधीधर्मलग्नार्थे राजयोगो भवेदयम्॥

अगर तृतीय, पञ्चम, नवम, लग्न अथवा धन स्थान में एकत्र चार पापग्रह या शुभग्रह हों तो राजयोग होता है।

अन्यच्च—चतुःसागरगे चन्द्रे कोणे चैव दिवाकरः।
अपि दासकुले जातो राजा भवति निश्चितम्॥

जिस मनुष्य के केन्द्र में चन्द्रमा, त्रिकोण में सूर्य हो तो दास कुल में उत्पन्न भी निश्चय करके राजा होता है।

[लग्नतश्चान्यतो वापि क्रमेण पतिता ग्रहाः।
एकावली समाख्यातो महाराजो भवेन्नरः॥]

जिस का जन्म समय रात्रि में हो चन्द्रमा अपने मित्र के नवांश में स्थित हो शुक्र पर उस की दृष्टि हो तो मनुष्य राजा होता है। अगर दिन में जन्म हो चन्द्रमा अपने नवांश या अधिमित्र के नवांश में हो उस पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो भी राजा होता है।

अन्यच्च—केन्द्रत्रिकोणेषु भवन्ति सौम्या दुश्चिक्यलाभारिगताश्च पापाः।
यस्य प्रयाणेऽप्यथ जन्मकाले ध्रुवं भवेत्तस्य महीपतित्वम्॥

जिस के जन्म काल या यात्रा के समय में केन्द्र अथवा त्रिकोण में शुभग्रह हों, ३, ६, ११ इन स्थानों में पापग्रह हों उस को अवश्य राज्य मिलता है।

अन्यच्च—मीने बृहस्पतिः शुक्रश्चन्द्रमाश्च यदा भवेत्।
तस्य जातस्य राज्यं स्यात् पत्नी च बहुपुत्रिणी॥

बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा मीन का हो तो जातक को राज्य मिलता है और उस की स्त्री बहुत पुत्र पैदा करती है।

अन्यच्च—नीचस्थिता जन्मनि ये ग्रहेन्द्राः स्वोच्चस्थिता राजसमानभाग्यः।
उच्चस्थिताश्चेदपि नीचभागा ग्रहा न कुर्वन्ति तथैव भाग्यम्॥

जन्म काल में नीच स्थित ग्रह अपने उच्च के नवांश में हो तो वे राजा के समान भाग्य करते हैं। अगर उच्च स्थित ग्रह अपने नीच के नवांश में हो तो वे अच्छा भाग्य नहीं करते हैं।

अन्यच्च—उच्चस्थानगताः सौम्याः केन्द्रस्थाने भवन्ति चेत्।
ध्रुवं राज्यं भवेत्तस्य यदि नीचसुतो भवेद्॥

अगर उच्च स्थान स्थित शुभग्रह केन्द्र स्थान में हों तो नीच जाति का लड़का भी निश्चय करके राज्य पाता है।

अन्यच्च—यदि पश्यति दानवार्चितं वचसामधिपस्तदा नृपतिः।

जिस के जन्म काल में बृहस्पति शुक्र को देखता हो वह मनुष्य राजा होता है।

अन्यच्च—शुक्रो यस्य बुधो यस्य यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः।
दशमेऽङ्गारको यस्य स जातः कुलदीपकः॥

जिस के केन्द्र में शुक्र, बुध और बृहस्पति हों, मङ्गल दशम में हो तो जातक कुल में दीपक होता है।

इति बृहज्जातके 'विमला' भाषाटीकायां राजयोगाध्याय एकादशः।

अथ नाभसयोगाध्यायो द्वादशः।

इस अध्याय में योगों की संख्या—

नवदिग्वसवस्त्रिकाग्निवेदैर्गुणिता द्वित्रिचतुर्विकल्पजाः स्युः।
यवनैस्त्रिगुणा हि षट्शती सा कथिता विस्तरतोऽत्र तत्समासतः॥१॥

नाभस योगों के चार विकल्प होते हैं। जैसे आकृति योग = प्रथम विकल्प। आकृति योग, संख्या योग = द्वितीय विकल्प। आकृति योग, संख्या योग, आश्रय योग = तृतीय विकल्प। आकृति योग, संख्या योग, आश्रय योग, दल योग = चतुर्थ विकल्प। इन में आकृति योग = २०, संख्या योग = ७, आश्रय योग = ३, दल योग = २, सब मिल कर बत्तीस भेद होते हैं।

नव, दश, आठ को क्रम से तीन, तीन, चार से गुणा करने पर सत्ताईस, तीस, बत्तीस भेद क्रम से आकृति आदि योगों को परस्पर बदलने से होते हैं।

इन में द्विविकल्प के (आकृति के संख्या के साथ बदलने से) सत्ताईस, त्रिविकल्प के (आकृति, संख्या, आश्रय इन तीनों को आपस में बदलने से) तीस, चतुर्विकल्प के (आकृति, संख्या, आश्रय, दल इन चारों को आपस में बदलने से) बत्तीस भेद होते हैं।

इन योगों को यवनाचार्य विस्तार पूर्वक अठारह सौ भेद कहे हैं। यहां पर बराहमिहिराचार्य संक्षेप से बत्तीस योग कहे हैं, क्योंकि यवनाचार्योक्त अठारह सौ योगों का फल इन बत्तीस योगों के अन्तर्गत हो जाता है ॥ १ ॥

आश्रय योग ३ और दलयोग २—

रज्जुर्मुशलं नलश्चराद्यैः सत्याश्चाश्रयजाञ्जगाद योगान् ।
केन्द्रैः सदसद्युतैर्दलाख्यौ स्रक्सर्पौ कथितौ पराशरेण ॥ २ ॥

सूर्य आदि सातों ग्रह एक, दो, तीन या चारों चर राशि में स्थित हों तो रज्जु। एक, दो, तीन या चारों स्थिर राशि में सब ग्रह हों तो मुसल। एक, दो, तीन या चारों द्विःस्वभाव राशि में सब ग्रह हों तो नल नाम का योग होता है। इन तीनों आश्रय योगों को सत्याचार्य ने कहा है।

रज्जु योग—

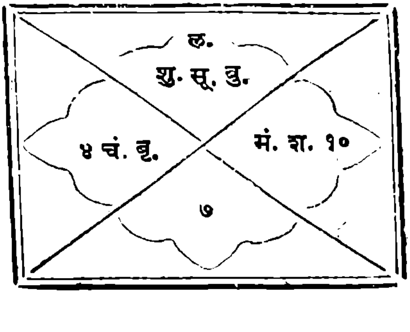

मुसल योग

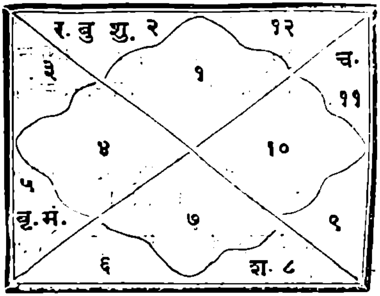

नल योग—

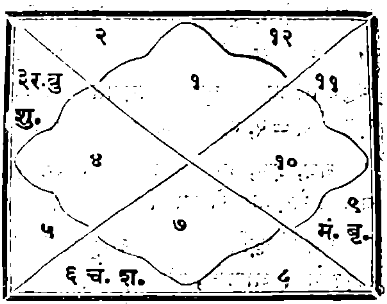

यहाँ पर सत्याचार्य—

सर्वे चरेषु राशिषु यदा स्थिता योगमाह तं रज्जुम् ।
अनयप्रियस्य सततं विदेशवासार्थयुक्तस्य ॥
सर्वे स्थिरेषु राशिषु यदा स्थिता मुसलमाह सं योगम् ।
जन्मनि कर्मकराणां युक्तानामर्थमानाभ्याम् ॥
द्विशरीरेषु नल इति योगो हीनातिरिक्तदेहानाम् ।
निपुणानां पुरुषाणां धनसञ्चयभोगिनां भवति ॥

यहाँ किसी का व्याख्यान ऐसा है—

चारों चर राशियों में सब ग्रह हों तो रज्जु, चारों स्थिर राशियों में सब ग्रह हों तो मुसल, चारों द्विःस्वभाव राशियों में सब ग्रह हों तो नल योग होता है।

किन्तु ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं है।

यतः भगवान् गार्गि—

एको द्वौ वा त्रयः सर्वे चरा युक्ता यदा ग्रहैः ।
चरयोगस्तदा रज्जुः शीर्ष्याणां जन्मदो भवेत ॥
स्थिराश्चेन्मुशलं नाम मानिनां जन्मकृन्नृणाम् ।
द्विःस्वभावो नलाख्यस्तु धनिनां परिकीर्तितः ॥

दल योग दो प्रकार के कहते है—

केन्द्र शुभग्रह और अशुभग्रह से युत क्रम से माला नाम का दल योग और सर्प नाम का दल योग होता है। जैसे चारों केन्द्रों में से किसी तीन केन्द्रों में शुभग्रह (बुध, गुरु, शुक्र) अलग-अलग स्थित हों तो माला नाम का योग और पापग्रह (सूर्य, मङ्गल, शनैश्चर) अलग-अलग स्थित हों तो सर्प योग होता है।

यहां पर भगवान् गार्गि—

त्रिकेन्द्रगैर्यमाराकैः सर्पो दुःखितजन्मदः ।
भोगिजन्मप्रदा माला तद्वज्जीवसितेन्दुजैः ॥

तथा बादरायण—

केन्द्रेष्वपापेषु सितज्ञजीवैः केन्द्रत्रिसंस्थैः कथयन्ति मालाम् ।
सर्पस्त्वसौम्यैश्च यमारसूर्यैर्योगाविमौ द्वौ कथितौ दलाख्यौ ॥

तथा मणित्थः—

केन्द्रत्रयगैः पापैः सौम्यैर्वा दलसंज्ञितौ ।
द्वौ योगौ सर्पमालाख्यौ विनष्टेष्टफलप्रदौ ॥ २ ॥

माला योग—

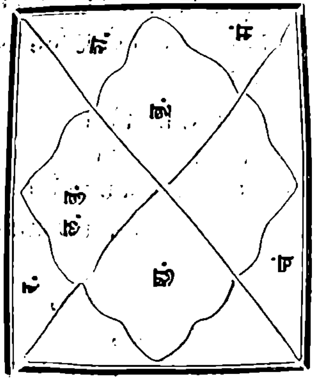

सर्प योग—

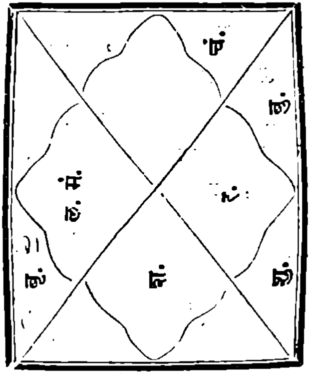

योगों की समता और कुछ फलविचार—

योगा व्रजन्त्याश्रयजाः समत्वं यवाब्जवज्राण्डजगोलकाद्यैः ।
केन्द्रोपगैः प्रोक्तफलौ दलाख्यावित्याहुरन्ये न पृथक्फलौ तौ ॥ ३ ॥

यव, अब्ज (कमल), वज्र, अण्डज (विहङ्ग), गोलक, गदा और शकट इन आकृति योगों के तथा गोलक, युग, शूल और केदार इन संख्या योगों के समान रज्जु, मुशल, नल ये आश्रय योग होते हैं, और फल भी समान ही होता है। अतः अन्य आचार्यों ने इन आश्रय योगों को पृथक् नहीं कहा है।

केन्द्र में शुभग्रह के होने से शुभ फल और पापग्रह के रहने से अशुभ फल होता है इस तरह अन्य आचार्यों के फलादेश से माला और सर्प नाम के दल योग की उक्ति हो जाती है किन्तु उन्होंने नाम लेकर नहीं कहा है।

वराहमिहिराचार्य ने तो नाम लेकर कहा है। इस का कारण यह है कि पराशर

आदि का कथन है कि नाभस योगाध्याय में कथित अन्य योगों की तरह दल योग भी सम्पूर्ण दशा में फलप्रद होता है। अतः इस अध्याय में पाठ करना ठीक है।

अन्यथा केन्द्रस्थित ग्रह के समान अपनी दशा में ही इसका फल जाना जाता॥

गदा आदिक आकृति योग—

आसन्नकेन्द्रभवनद्वयगैर्गदाख्यस्तन्वस्तगेषु शकटं विहगः खबन्ध्वोः।
शृङ्गाटकं नवमपञ्चमलग्नसंस्थैर्लग्नान्यगैर्हलमिति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः॥४॥

समीप के दो केन्द्र स्थानों में सब ग्रह स्थित हों तो गदा नामक योग होता है। इस में चार विकल्प होते हैं॥

जैसे लग्न और चतुर्थ में सब ग्रह स्थित हों तो प्रथम, चतुर्थ और सप्तम में सब ग्रह स्थित हों तो द्वितीय, सप्तम और दशम में सब ग्रह स्थित हों तो तृतीय, दशम और लग्न में सब ग्रह स्थित हों तो चतुर्थ विकल्प होता है।

लग्न और सप्तम में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो शकट योग होता है।

दशम और चतुर्थ में सब ग्रह स्थित हों तो विहग योग होता है।

नवम, पञ्चम और लग्न में सब ग्रह स्थित हों तो शृङ्गाटक योग होता है।

तथा लग्न को छोड़कर त्रिकोण स्थान में सब ग्रह स्थित हों तो हल नाम का योग होता है। इसमें तीन विकल्प हैं।

जैसे द्वितीय, षष्ठ और दशम स्थानों में सब ग्रह हों तो प्रथम विकल्प,

तृतीय, सप्तम और एकादश में सब ग्रह हों तो द्वितीय विकल्प,

चतुर्थ, अष्टम और द्वादश में सब ग्रह हों तो तृतीय विकल्प हल योग का होता है॥४॥

गदा योग—

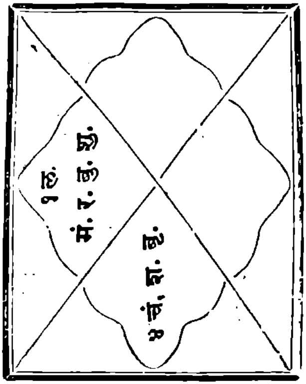

शकट योग—

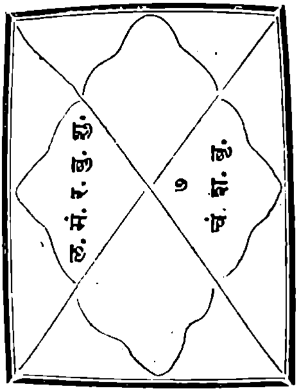

विहग योग—

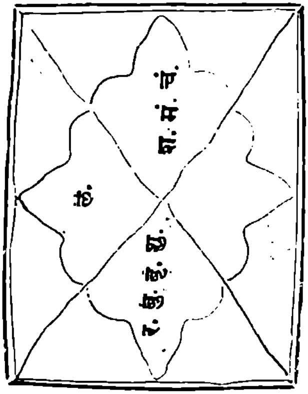

शृङ्गाटक योग—

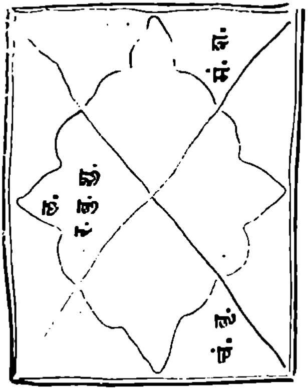

हल योग—

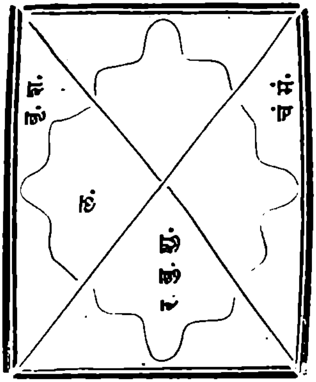

वज्र आदि योग—

शकटाण्डजवच्छुभाशुभैर्वज्रं तद्विपरीतगैर्यवः ।
कमलं तु विमिश्रसंस्थितैर्वापी तद्यदि केन्द्रबाह्यतः ॥ ५ ॥

पूर्वकथित शकट योग के समान शुभग्रह और अण्डज योग के समान पापग्रह हो तो वज्र योग होता है। अर्थात् लग्न, सप्तम में शुभग्रह और चतुर्थ, दशम में पापग्रह हो तो वज्र योग होता है।

इस से उलटे शुभग्रह और पापग्रह स्थित हों तो यव योग होता है। अर्थात् लग्न, सप्तम में पापग्रह और चतुर्थ, दशम में शुभग्रह हों तो यह योग होता है।

सब शुभग्रह और पापग्रह चारों केन्द्रों में स्थित हों तो कमल योग होता है।

यदि शुभग्रह और पापग्रह केन्द्र स्थानों में न स्थित होकर पणफर तथा आपोक्लिम में स्थित हों तो वापीसंज्ञक योग होता है ॥ ५ ॥

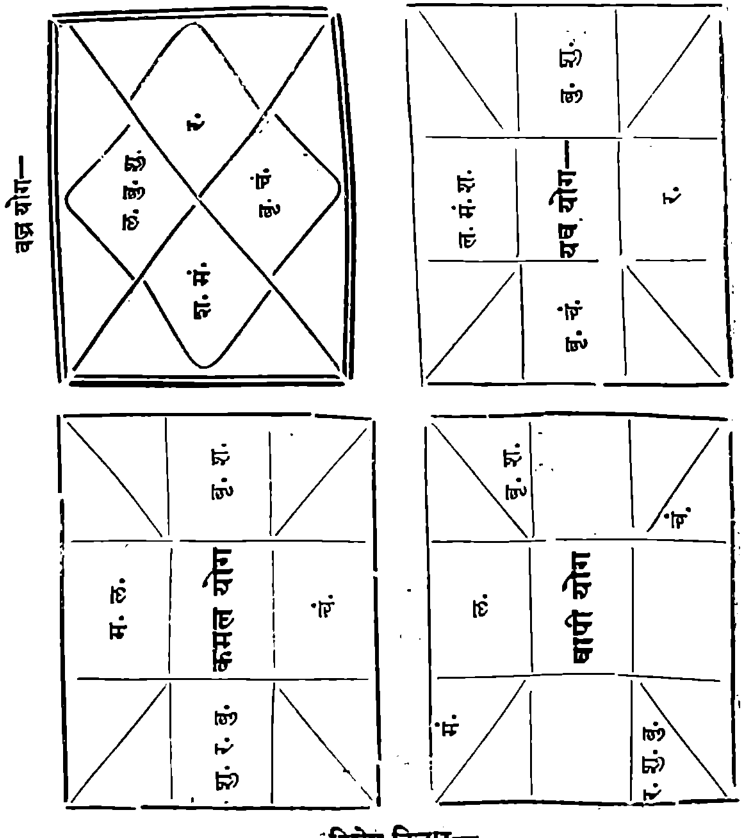

विशेष विचार—

पूर्वशास्त्रानुसारेण मया वज्रादयः कृताः ।
चतुर्थभवने सूर्याज्ज्ञसितौ भवतः कथम् ॥ ६ ॥

ग्रन्थकार का कथन है कि मय, यवन, मणित्थ आदि आचार्यों के कथनानुसार मैंने वज्र आदि योग कहा है। क्योंकि इन योगों के होने में प्रत्यक्ष दोष यह है—

जैसे लग्न, सप्तम इन दोनों में शुभग्रह और चतुर्थ, दशम इन दोनों में पापग्रह

हों तो वज्र योग होता है। ग्रहों में सूर्य पापग्रह और बुध, शुक्र, शुभग्रह, सूर्य से चतुर्थ स्थान में बुध, शुक्र कदापि नहीं होते हैं। क्यों कि तीनों का मध्यम बराबर है, फल के वश एक राशि से ज्यादा अन्तर नहीं होता है, अतः वज्र आदि योगों का होना असम्भव है ॥ ६ ॥

यूप आदि योगों का कथन—

कण्टकादिप्रवृत्तैस्तु चतुर्गृहगतैर्ग्रहैः।
यूपेषुशक्तिदण्डाख्या होराद्यैः कण्टकैः क्रमात् ॥ ७ ॥

केन्द्र के आदि (लग्न) से आरम्भ कर चार-चार स्थानों में सब ग्रह हों तो क्रम से यूप, इषु, शक्ति, दण्ड ये चार योग होते हैं।

जैसे लग्न से चतुर्थ भाव पर्य्यन्त सब ग्रह हों तो यूप, चतुर्थ से सप्तम तक सब ग्रह हों तो इषु, सप्तम से दशम तक सब ग्रह हों तो शक्ति, दशम से लग्न तक सब ग्रह हों तो दण्ड योग होता है ॥ ७ ॥

यूप योग—

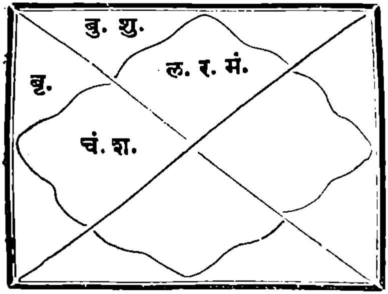

इषु योग—

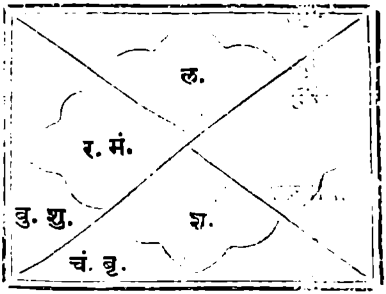

शक्ति योग—

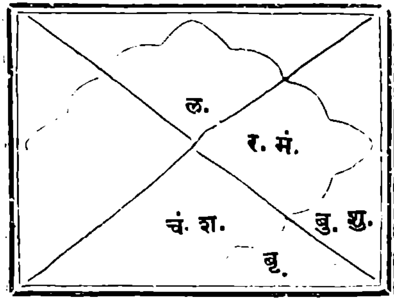

दण्ड योग—

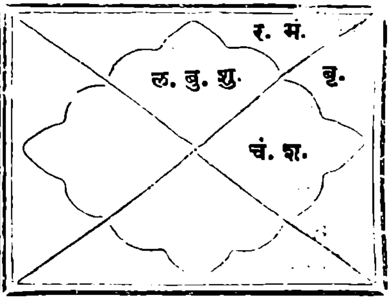

नौका, कूट, छत्र, चाप और अर्ध चन्द्रयोग—

नौकूटच्छत्रचापानि तद्वत्सप्तर्क्षसंस्थितैः।
अर्द्धचन्द्रस्तु नावाद्यैः प्रोक्तस्त्वन्यर्क्षसंस्थितैः॥ ८ ॥

केन्द्र आदि (लग्न) से आरम्भ करके सात सात स्थानों में सब ग्रह पड़े तो क्रम से नौका, कूट, छत्र, चाप ये चार योग होते हैं।

जैसे लग्न से सप्तम भाव पर्यन्त प्रत्येक भावों में एक-एक ग्रह स्थित हों तो नौका योग। चतुर्थ से दशम भाव पर्यन्त सातों स्थानों में सातों ग्रह हों तो कूट योग। सप्तम से लेकर लग्न पर्य्यन्त सातों स्थानों में सातों ग्रह हों तो छत्र योग और दशम से लेकर चतुर्थ भाव पर्य्यन्त सातों भावों में सातों ग्रह हों तो चाप योग होता है।

इस (केन्द्र) से भिन्न सात स्थानों में सातों ग्रह हों तो आठ प्रकार का अर्द्धचन्द्र नाम का योग होता है।

जैसे दूसरे स्थान से लेकर अष्टम स्थान पर्य्यन्त प्रत्येक स्थानों में सातों ग्रह एक-एक कर के हों तो प्रथम।

तृतीय भाव से लेकर नवम भाव पर्य्यन्त सातों भावों में एक-एक कर के सातों ग्रह बैठे हों तो द्वितीय।

पञ्चम स्थान से लेकर एकादश स्थान पर्य्यन्त प्रत्येक भावों में एक-एक कर के सातों ग्रह स्थित हों तो तृतीय।

षष्ठ भाव से द्वादश भाव पर्य्यन्त प्रत्येक भावों में एक-एक कर के सातों ग्रह स्थित हों तो चतुर्थ।

अष्टम भाव से लेकर द्वितीय भाव पर्य्यन्त सातों भावों से एक-एक कर के सातों ग्रह स्थित हों तो पञ्चम।

नवम भाव से लेकर तृतीय भाव पर्य्यन्त सातों भावों में एक-एक कर के सातों ग्रह हों तो षष्ठ।

एकादश भाव से लेकर पञ्चम भाव पर्य्यन्त सातों भावों में एक-एक कर के सातों ग्रह हों तो सप्तम।

द्वादश से लेकर षष्ठ भाव पर्य्यन्त सातों भावों में एक-एक कर के सातों ग्रह स्थित हों तो अष्टम अर्द्धचन्द्र योग होता है॥ ८॥

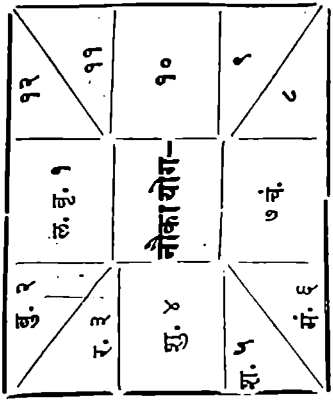

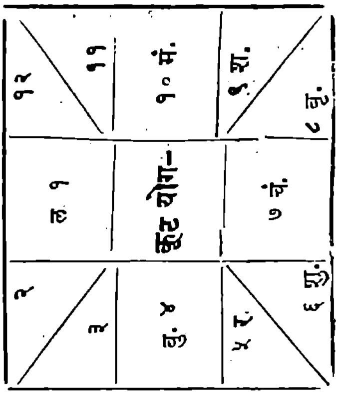

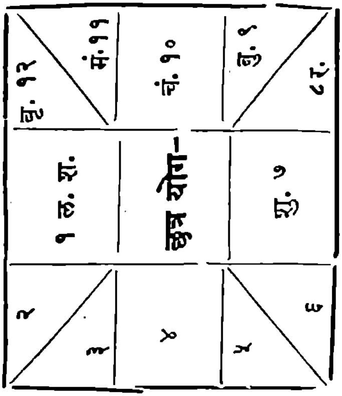

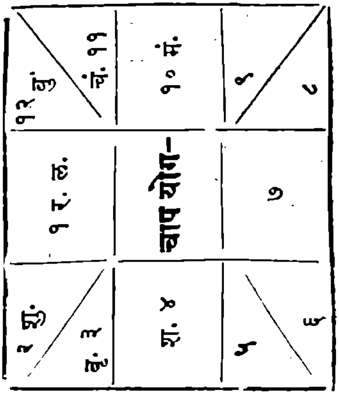

समुद्र और चक्र योग—

एकान्तरगतैरर्थात्समुद्रः षड्ग्रहाश्रितैः ।

विलग्नादिस्थितैश्चक्रमित्याकृतिजसंग्रहः ॥ ६ ॥

द्वितीय स्थान से लेकर बीच-बीच में एक-एक स्थान छोड़कर अन्य छै स्थानों (२, ४, ६, ८, १०, १२ इन स्थानों) में सूर्य आदि सातों ग्रह हों तो समुद्र योग होता है ।

इसी तरह लग्न से लेकर बीच में एक-एक स्थान छोड़कर अन्य छै स्थानों

(१, ३, ५, ७, ९, ११ इन स्थानों) में सूर्य आदि सातों ग्रह हों तो चक्र योग होता है।

इस तरह वराहमिहिराचार्य आकृति योग का भेद दिखाये हैं ॥ ९ ॥

मं. २	ल. १	श. १२	११
३	समुद्र योग		चं. १०
र.शु.४			९
५	बु. ६	७	बृ. ८

२	ल.मं.१.	११	श. ११
र.बु.३	चक्र योग		१०
४			बृ. ९
शु. ५	६	चं. ७	८

संख्या योग—

संख्यायोगाः स्युः सप्तसप्तर्क्षसंस्थैरेकापायाद्वल्लकी दामिनी च।
पाशः केदारः शूलयोगो युगं च गोलश्चान्यान्पूर्वमुक्तान्विहाय ॥१०॥

सूर्य आदि सातों ग्रह जिस किसी सात स्थानों में हों तो वल्लकी योग, सातों ग्रह जिस किसी छे स्थानों में हों तो दामिनी योग, सातों ग्रह जिस किसी पाँच स्थानों में स्थित हों तो पाश योग, सातों ग्रह जिस किसी चार स्थानों में हों तो केदार योग, सातों ग्रह जिस किसी तीन स्थानों में स्थित हों तो शूल योग, सातों ग्रह जिस किसी दो स्थानों में स्थित हों तो युग योग और सातों ग्रह जिस किसी एक स्थान में स्थित हों तो गोल योग होता है।

पूर्वकथित अन्य योगों को छोड़कर ये योग होते हैं। अर्थात् पूर्वकथित योगों के मध्य में किसी योग के समान इन संख्या योगों में से कोई हो तो पूर्वकथित योग ही मानना चाहिए, संख्या योग नहीं, क्योंकि ऐसी कुण्डली में पूर्वकथित योग का फल ही घटता है संख्या योग का नहीं ॥ १० ॥

आश्रय और दल योग का फल—

ईर्ष्युर्विदेशनिरतोऽध्वरुचिश्च रज्ज्वां
मानी धनी च मुशले बहुकृत्यशक्तः।
व्यङ्गः स्थिराढ्यनिपुणो नलजः स्रगुत्थो
भोगान्वितो भुजगजो बहुदुःखभाक्स्यात् ॥ ११ ॥

रज्जु योग में उत्पन्न जातक ईर्ष्यावान् (दूसरे की भलाई देखकर सन्ताप करने वाला), परदेश में रहने वाला और मार्ग चलने में अभिरुचि रखने वाला होता है।

मुसल योग में उत्पन्न जातक अभिमानी, धनवान् और बहुत काम करने वाला होता है ।

नल योग में उत्पन्न जातक अङ्गहीन, दृढ निश्चयवाला, धनवान् और चतुर होता है ।

माला योग में उत्पन्न जातक भोगी होता है ।

तथा सर्प योग में उत्पन्न जातक बहुत दुःख भोगनेवाला होता है ॥ ११ ॥

विशेष फल विचार—

आश्रययोगास्तु विफला भवन्त्यन्यैर्विमिश्रिताः ।
मिश्रा यैस्ते फलं दद्युरमिश्राः स्वफलप्रदाः ॥ १२ ॥

यदि आश्रय योग अन्य यव आदि योगों से मिश्रित हों तो आश्रय योगों का फल नहीं होकर केवल यव आदि योगों का ही फल होता है ।

अगर अन्य यव आदि योगों से आश्रय योग मिश्रित हो तो अपना फल देता है ॥ १२ ॥

गदा आदि योगों का फल—

यज्वार्थभाक्सततमर्थरुचिर्गदायां तद्वृत्तिभुक्छकटजः सरुजः कुदारः ।
दूतोऽटनः कलहकृद्विहगे प्रदिष्टः शृङ्गाटके चिरसुखी कृषिकृद्धलाख्ये ॥१३॥

गदा योग में उत्पन्न जातक यज्ञ करने वाला, धन भोगने वाला और सदा धन कमाने वाला होता है ।

शकट योग में उत्पन्न जातक गाड़ी से जीविका करने वाला, रोग से युत और निन्दित स्त्री वाला होता है ।

विहग योग में उत्पन्न जातक दूत का काम करने वाला, नित्य चलने वाला और झगड़ा करने वाला होता है ।

शृङ्गाटक योग में उत्पन्न जातक बहुत काल तक सुखी होता है तथा हल योग में उत्पन्न जातक खेती करने वाला होता है ।

यहाँ भगवान् गार्गि—

लग्नपञ्चमधर्मस्थैर्योगः शृङ्गाटको मतः ।
वयोऽन्ते सुखिनां जन्म तत्र स्यात्स्वादुभाषिणाम् ॥ १३ ॥

वज्र आदि योगों का फल—

वज्रेऽन्त्यपूर्वसुखिनः सुभगोऽतिशूरो
वीर्यान्वितोऽप्यथ यवे सुखितो वयोऽन्तः ।
विख्यातकीर्त्यमितसौख्यगुणश्च पद्मे
वाप्यां तनुस्थिरसुखो निधिकृन्न दाता ॥ १४ ॥

वज्र योग में उत्पन्न जातक प्रथम तथा अन्त्य अवस्था में सुखी, सबका प्यारा और अतिशय शूर होता है।

यव योग में उत्पन्न जातक पराक्रमी और मध्य अवस्था में सुखी होता है।

पद्म योग में उत्पन्न जातक विदित कीर्तिवाला, अतिशय सुखी और अतिशय गुणी होता है।

वापी योग में उत्पन्न जातक बहुत काल पर्य्यन्त अल्पसुख वाला, भूमि के अन्दर द्रव्य रखने वाला और कृपण होता है।

यूप आदि योगों का फल—

त्यागात्मवान् क्रतुवरैर्यजते च यूपे
हिंस्रोऽथ गुप्त्यधिकृतः शरकृच्छराख्ये।
नीचोऽलसः सुखधनैर्वियुतश्च शक्तौ
दण्डे प्रियैर्विरहितः पुरुषोऽन्त्यवृत्तिः॥ १५॥

यूप योग में उत्पन्न जातक दानी, अप्रमादी और श्रेष्ठ यज्ञ करनेवाला होता है।

शर योग में उत्पन्न जातक जीवों को मारने वाला, किसी जेलखाने का मालिक और शर बनाने वाला होता है।

शक्ति योग में उत्पन्न जातक नीच कर्म करने वाला, आलसी, सुखहीन और धन से हीन होता है।

दण्ड योग में उत्पन्न जातक पुत्र, स्त्री आदि से हीन और दास कर्म करने वाला होता है॥ १५॥

नौका आदि योगों का फल—

कीर्त्या युतश्चलसुखः कृपणश्च नौजः
कूटेऽनृतप्लवनबन्धनपश्च जातः।
छत्रोद्भवः स्वजनसौख्यकरोऽन्त्यसौख्यः
शूरश्च कार्मुकभवः प्रथमाऽन्त्यसौख्यः॥ १६॥

नौका योग में उत्पन्न जातक यशस्वी, कभी सुखी कभी दुःखी और कृपण होता है।

कूट योग में उत्पन्न जातक झूठ बोलने वाला और बन्धन स्थान का रक्षक होता है।

छत्र योग में उत्पन्न जातक अपने जनों को सुख देने वाला और वृद्धावस्था में सुखी होता है।

चाप योग में उत्पन्न जातक शूर, प्रथम, अन्त्य इन दोनों अवस्थाओं में सुख भोगने वाला होता है॥ १६॥

अर्द्धचन्द्र आदि योगों का फल—

अर्द्धेन्दुजः सुभग-कान्तवपुः प्रधान-
स्तोयालये नरपतिप्रतिमस्तु भोगी।
चक्रे नरेन्द्रमुकुटद्युतिरञ्जिताङ्घ्रि-
र्वीणोद्भवश्च निपुणः प्रियगीतनृत्यः॥ १७॥

अर्द्धचन्द्र योग में उत्पन्न जातक सब का प्रिय, सुन्दर शरीर वाला और सब जनों में श्रेष्ठ होता है।

समुद्र योग में उत्पन्न जातक राजा के समान और भोगी होता है।

चक्र योग में उत्पन्न जातक तप आदि करके राजाओं से पैर पुजाने वाला होता है।

इस तरह बीस आकृति योगों का फल वर्णन किया गया है।

अब संख्या योगों का फल—

वीणा योग में उत्पन्न जातक चतुर, नाच-गान में प्रेम रखनेवाला होता है॥१७॥

दामिनी आदि योगों का फल—

दाताऽन्यकार्यनिरतः पशुपश्च दाम्नि
पाशे धनार्जनविशीलसभृत्यबन्धुः।
केदारजः कृषिकरः सुबहूपयोज्यः
शूरः क्षती धनरुचिर्विधनश्च शूले॥ १८॥

दामिनी योग में उत्पन्न जातक दानी, परोपकारी और पशुओं को पालने वाला होता है।

पाश योग में उत्पन्न जातक निन्दित कर्म से धन उपार्जन करने वाला और अपने समान दास तथा बन्धुओं से युत होता है।

केदार योग में उत्पन्न जातक खेती करने वाला और अच्छी तरह बहुतों का उपकार करने वाला होता है।

शूल योग में उत्पन्न जातक शूर, क्षत शरीर वाला, धन में रुचि रखने वाला और निर्धन होता है॥ १८॥

युग आदि योग का फल—

धनविरहितः पाखण्डी वा युगे त्वथ गोलके
विधनमलिनो ज्ञानोपेतः कुशिल्प्यलसोऽटनः।
इति निगदिता योगाः सार्द्धं फलैरिह नाभसा
नियतफलदाश्चिन्त्या ह्येते समस्तदशास्वपि॥ १९॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके नाभसयोगाऽध्यायो द्वादशः॥१२॥

युग योग में उत्पन्न जातक धन से रहित और पाखण्डी (वेदों का निन्दक) होता है।

गोलक योग में उत्पन्न जातक दरिद्र, मलिन, अज्ञानी, निन्दनीय शिल्प करने वाला, आलसी और भ्रमण करने वाला होता है।

इस तरह फल के साथ नाभस योगों को कहा है। इन योगों का फल सब दशा, अन्तर्दशाओं में सब काल होता है।

इति बृहज्जातके 'विमला' नामक भाषाटीकायां नाभसयोगाध्यायो द्वादशः।

अथ चन्द्रयोगाध्यायस्त्रयोदशः

अधमसमवरिष्ठान्यर्ककेन्द्रादिसंस्थे
शशिनि विनयवित्तज्ञानधीनैपुणानि ॥
अहनि निशि च चन्द्रे स्वेऽधिमित्रांशके वा
सुरगुरुसितदृष्टे वित्तवान् स्यात्सुखी च ॥ १ ॥

जन्म समय में सूर्य जिस स्थान में हो उससे चन्द्रमा केन्द्र आदि (केन्द्र, पणफर, आपोक्लिम) में स्थित हो तो विनय, धन, शास्त्र का ज्ञान, बुद्धि और चतुरता क्रम से अधम, मध्यम और श्रेष्ठ होता है। अर्थात् सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र में हो तो नम्रता, धन, शास्त्र का ज्ञान, बुद्धि, चतुरता इन सबों से अधम (शून्य) होता है।

यदि सूर्य से चन्द्रमा पणफर में हो तो मध्यम होता है। आपोक्लिम में हो तो विनयादि श्रेष्ठ होता है।

यहाँ पर यवनेश्वर—

मूर्खान्दरिद्रांश्चपलान् विशीलांश्चन्द्रः प्रसूतेऽर्कचतुष्टयस्थः।
कुर्य्याद् द्वितीये धनिनां प्रसूतिमापोक्लिमस्थे कुलजाग्रजानाम् ॥

जिसका जन्म दिन में हो, चन्द्रमा जिस किसी राशि में स्थित होकर अपने या अपने अधिमित्र के नवमांश में हो और बृहस्पति से देखा जाता हो तो धनवान् और सुखी होता है।

यदि वा रात्रि में जन्म हो, चन्द्रमा अपने या अपने अधिमित्र के नवांश में हो और शुक्र से देखा जाता हो तो धनवान् और सुखी होता है।

यहाँ पर भगवान् गार्गि का वचन—

स्वांशेऽधिमित्रस्यांशे वा संस्थितो दिवसे शशी।
गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वितः॥
निश्येवं भृगुणा दृष्टः शशी जन्मनि शस्यते।
विपर्ययस्थे शीतांशौ जायन्तेऽल्पधना नराः॥ १ ॥

अधियोग नाम का योग—

सौम्यैः स्मरारिनिधनेष्वधियोग इन्दो-
स्तस्मिंश्च भूपसचिवक्षितिपालजन्म ।
सम्पन्नसौख्यविभवा हतशत्रवश्च
दीर्घायुषो विगतरोगभयाश्च जाताः ॥ २ ॥

चन्द्रमा से शुभग्रह (बुध, गुरु, शुक्र) सप्तम, षष्ठ, अष्टम इन तीनों स्थानों में अथवा इन में से दो में अथवा किसी एक ही स्थान में स्थित हो तो अधियोग नाम का योग होता है।

कोई उक्त तीनों शुभग्रह उक्त तीनों स्थान में हो तो अधियोग होता है, ऐसा अर्थ करते हैं, किन्तु ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं है।

यहां पर श्रुतकीर्ति नाम के आचार्य का वचन—

निधनं द्यूनं षष्ठं चन्द्रस्थानाद्यदा शुभैर्युक्तम् ।
अधियोगः स प्रोक्तो व्यासकृतौ सप्तधा पूर्वैः ॥

इस का अर्थ यह है कि चन्द्रमा से ८, ७, ६, इन स्थानों में शुभग्रह हों तो अधियोग सात प्रकार के होते हैं। जैसे सब शुभग्रह सप्तम स्थान में हों तो एक योग, षष्ठ में हों तो दूसरा योग, अष्टम में हों तो तीसरा योग, सप्तम और षष्ठ में हों तो चौथा योग, षष्ठ और अष्टम में हों तो पांचवां योग, सप्तम और अष्टम में हों तो छठा योग, षष्ठ, सप्तम और अष्टम तीनों में सब शुभग्रह हों तो सातवां योग ये सात प्रकार के अधियोग होते हैं।

इस अधियोग में जिस का जन्म हो वह सेनापति या मन्त्री या राजा होता है। अर्थात् शुभग्रह निर्बल हों तो सेनापति, मध्यबली हों तो मन्त्री और पूर्ण बली हों तो राजा होता है। तथा वे सेनापति, मन्त्री और राजा सब प्रकार के सुख, विभव से युत, शत्रुओं को मारने वाले, दीर्घायु और रोग से रहित होते हैं।

यहां पर बादरायण—

शशिनः सौम्याः षष्ठे द्यूने वा निधनसंस्थिता वा स्युः।
जातो नृपतिर्ज्ञेयो मन्त्री वा सैन्यनायको वापि ॥

किसी का मत है कि यह राजयोग है।

यथा सारावली में—

द्यूनं षष्ठमथाष्टमं शिशिरगोः प्राप्ताः समस्ताः शुभाः
क्रूराणां यदि गोचरे न पतिताः सूर्यालयाद्दूरतः।
भूपालः प्रभवेत्स यस्य जलधेर्वेलावनान्तोद्भवैः
सेनामत्तकरीन्द्रदानसलिलं भृङ्गैर्मुहुः पीयते ॥

तथा माण्डव्य का वचन—

अमित्रं यामित्रं निधनमथवा शीतरुचितो
गताः सर्वे सौम्यास्तमिह जनयेयुर्नरपतिम् ।
घृतेनैवासेकं गतवति विषादाश्रुपयसा
प्रतापाग्निर्यस्य ज्वलति हृदये शत्रुषु भृशम् ॥

यदि उक्त तीनों स्थानों में शुभग्रह, पापग्रह दोनों हों तो मध्यम फल होता है, तथा सब पापग्रह हों तो अशुभ फल होता है ।

यहां पर श्रुतकीर्ति का वचन—

षट्सप्तमाष्टमस्थैश्चन्द्रात्सौम्यैः शुभोऽधियोगः स्यात् ।
पापः पापैरेवं मिश्रैर्मिश्रस्तथैवोक्तः ॥ २ ॥

सुनफा, अनफा, दुरुधुरा और केमद्रुम योग—

हित्वार्कं सुनफानफादुरुधुराः स्वान्त्योभयस्थैर्ग्रहैः
शीतांशोः कथितोऽन्यथा तु बहुभिः केमद्रुमोन्यैस्त्वसौ ।
केन्द्रे शीतकरेऽथवा ग्रहयुते केमद्रुमो नेष्यते
केचित्केन्द्रनवांशकेष्वपि वदन्त्युक्तिः प्रसिद्धा न ते ॥ ३ ॥

चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में सूर्य को छोड़ कर अन्य भौमादि पञ्चग्रहों में से कोई एक ग्रह वर्तमान हो तो सुनफा नाम का योग होता है ।

एवं चन्द्रमा से द्वादश स्थान में भौमादि पञ्चग्रहों में से कोई ग्रह स्थित हो तो अनफा योग होता है ।

अगर चन्द्रमा से द्वितीय, द्वादश इन दोनों स्थान में ग्रह बैठे हों तो दुरधुरा योग होता है यदि द्वितीय, द्वादश दोनों में कोई ग्रह न हो तो केमद्रुम योग होता है । इस तरह सुनफा आदि योग बहुत आचार्यों के मत से सिद्ध होते हैं ।

किसी का मत है कि किसी अन्य ग्रह के साथ चन्द्रमा हो या जन्म लग्न से केन्द्र (१, ४, ७, १०) स्थान में स्थित हो तो केमद्रुम योग नहीं होता है ।

किसी का मत है कि चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में सूर्य को छोड़कर कोई ग्रह हो तो सुनफा, दशम में हो तो अनफा और चतुर्थ, दशम दोनों में सूर्य को छोड़ कर कोई ग्रह हो तो दुरुधुरा योग होता है । यदि चतुर्थ, दशम दोनों में कोई ग्रह न हो तो केमद्रुम योग होता है ।

इन योगों में सूर्य अन्य योगकारक ग्रह के साथ हो तो योगभङ्ग नहीं समझना चाहिए । परन्तु केवल सूर्य योगकारक नहीं हो सकता यह सिद्ध ही है ।

किसी का मत है कि जिस राशि के नवांश में चन्द्रमा स्थित हो उस नवांश स्थित राशि से द्वितीय राशि में सूर्य को छोड़ कर कोई ग्रह हो तो सुनफा, द्वादश में स्थित हो तो अनफा, दोनों में स्थित हो तो दुरुधुरा और दोनों में कोई भी ग्रह

स्थित न हो तो केमद्रुम योग होता है। किन्तु यह प्रसिद्ध नहीं है अर्थात् सर्वमान्य नहीं है।

लघुजातक में—

रविवर्ज्यं द्वादशगैरनफा चन्द्राद् द्वितीयगैः सुनफा।
उभयस्थितैर्दुरुधुरा केमद्रुमसंज्ञकोऽतोन्यः॥

तथा सत्याचार्य—

सुनफा त्वनफा योगौ दौरुधुरश्चन्द्रसंस्थितक्षेत्रात्।
प्राक्पृष्ठतो ग्रहेन्द्रैरुभयगतैस्तेषु रविवर्ज्यम्॥
केमद्रुमोऽत्र योगोऽन्यथा भवेद्यत्र गर्हितं जन्म॥

भगवान् गार्गि का वचन—

व्ययार्थकेन्द्रगश्चन्द्राद्विना भानुं न चेद् ग्रहाः।
कश्चित्स्याद्वा विना चन्द्रं लग्नात्केन्द्रगतोऽथवा॥
योगः केमद्रुमो नाम तदा स्यात्तत्र गर्हितः।
भवन्ति निन्दिताचारा दरिद्रापत्तिसंयुताः॥

तथा सारावली में—

सुनफानफादुरुधुराः क्रमेण योगा भवन्ति रविरहितैः।
वित्तान्त्योभयसंस्थैः कैरववनबान्धवाद्विहगैः॥
एते न यदा योगाः केन्द्रग्रहवर्जितः शशाङ्कश्च।
केमद्रुमोऽतिकष्टः शशिनि च सर्वग्रहादृष्टे॥

तथा श्रुतकीर्तिका वचन—

चन्द्राच्चतुर्थैः सुनफा दशमस्थितैः कीर्तितोऽनफा विहगैः।
उभयस्थितैर्दुरुधुरा केमद्रुमसंज्ञितोऽन्यथा योगः॥

तथा जीवशर्मा का वचन—

यद्राशिसंज्ञे शीतांशुर्नवांशे जन्मनि स्थितः।
तद्द्वितीयस्थितैर्योगः सुनफाख्यः प्रकीर्तितः॥
द्वादशैरनफा ज्ञेयो ग्रहैर्द्विद्वादशस्थितैः।
प्रोक्तो दुरुधुरायोगोऽन्यः केमद्रुमः स्मृतः॥ ३॥

पूर्वोक्त सुनफा आदि योगों का भेद—

त्रिंशत्सरूपाः सुनफानफाख्याः षष्टित्रयं दौरुधुरे प्रभेदाः।
इच्छाविकल्पैः क्रमशोऽभिनीय नीते निवृत्तिः पुनरन्यनीतिः॥ ४॥

सुनफा, अनफा इन दोनों योगों के एकतीस-एकतीस भेद होते हैं। दुरुधुरा का एक सौ अस्सी भेद होते हैं।

इन भेदों को स्फुट करने के लिए प्रकार—

जिस संख्या तक के भेद बनाना हो उस संख्या से लेकर एक तक उलटे अङ्क

लिखने चाहिए, फिर उन्हीं अङ्कों के नीचे एक आदि अङ्क क्रम से लिखने चाहिए। इस तरह अङ्कों की दो पङ्क्ति बनेगी, उनमें ऊपर के अङ्क भाज्य और नीचे के अङ्क भाजक कल्पना करना चाहिए। इस तरह पहले अङ्क के नीचे एक हर होने के कारण वही अङ्क सिद्ध होता है, उसको अलग रक्खे। फिर उससे अग्रिम भाज्य अङ्क को गुणकर उसके नीचे के भाजक अङ्क से भाग देवे, जो लब्धि मिले उसको पूर्वानीत सिद्ध अङ्क के आगे रक्खे। एवं अपने पिछले सिद्ध अङ्क से भाज्य को गुणा कर भाजक का भाग देने से जो सिद्ध अङ्क मिलता जाय उसको आगे-आगे रखते जाय, यह क्रिया तब तक करनी चाहिए जब तक उस पङ्क्ति का अन्त न हो। इस तरह एक आदि का भेद बन जाता है। जैसे अनफा योग में मङ्गल आदि पाँच ग्रह के वश भेद निकालना है तो पांच से लेकर एक पर्यन्त उलटे अङ्क स्थापन कर उनके नीचे एक आदि क्रम से अङ्क स्थापन करने से हुआ।

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

यहां पहला अङ्क ५ है, इससे पीछे कोई अङ्क नहीं है, और इसके नीचे हर एक है, इसका भाग दिया तो सिद्ध अङ्क ५ हुआ। ५ इससे अगले अङ्क ४ को गुणा किया तो २० हुआ, इसमें हर २ का भाग दिया तो दूसरा सिद्ध अङ्क १० हुआ। १० इससे अगले अङ्क ३ को गुणा किया तो ३० हुआ, इसमें हर तीन का भाग दिया तो लब्धि १० हुआ, इससे अगले अङ्क २ को गुण कर २०, चार का भाग दिया तो लब्धि ५, यह चौथा सिद्ध अङ्क हुआ। ५ इससे अगला अङ्क १ को गुणा कर ५ हर ५ का भाग दिया तो १ लब्धि आई यह पांचवां सिद्ध अङ्क हुआ। इस प्रकार एक आदि ग्रह के वश ५, १०, १०, ५, १ ये भेद हुए। सब का योग ३१ है। इसमें एक एक ग्रह के वश ५ भेद, दो-दो ग्रह के वश १०, तीन-तीन ग्रह के वश १०, चार-चार ग्रह के वश पांच और पांचों ग्रहों के वश १ भेद होता है।

जैसे चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में मङ्गल हो तो = १, बुध हो तो = २, बृहस्पति हो तो=३, शुक्र हो तो=४, शनि हो तो=५, यह एक-एक ग्रह के वश पांच भेद हुए।

एवं मङ्गल, बुध हो तो=१, मङ्गल, बृहस्पति हो तो = २, मङ्गल, शुक्र हो तो=३, मङ्गल, शनैश्चर हो तो = ४, बुध, बृहस्पति हो तो = ५, बुध, शुक्र हो तो = ६, बुध, शनैश्चर हो तो = ७, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ८, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ९ और शुक्र, शनैश्चर हो तो = १०, ये दो २ ग्रह के वश दश भेद हुए।

एवं मङ्गल, बुध, बृहस्पति हो तो=१, मङ्गल, बुध, शुक्र हो तो=२, मङ्गल, बुध, शनैश्चर हो तो = ३, मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ४, मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर

हो तो = ५, मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ६, बुध, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ७, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ८, बुध, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ९, और बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर हो तो = १०, ये तीन २ ग्रह के वश दश भेद हुए।

एवं मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र हो तो = १, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = २, मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ३, मङ्गल, बुध, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ४, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ५, ये चार-चार ग्रह के वश पांच भेद हुए।

एवं चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर हों तो एक भेद हुआ, सब मिल कर इकतीस भेद हुए।

इसी तरह चन्द्रमा से द्वादश स्थान में उक्त क्रम से ग्रहों के रहने से इकतीस भेद होते हैं।

इसी तरह द्वितीय और द्वादश स्थान में मङ्गलादि ग्रहों के रहने से एक सौ अस्सी दुरुधुरा के भेद होते हैं।

जैसे—मङ्गल दूसरे में, बुध बारहवें में हो तो=१, बुध दूसरे में, मङ्गल बारहवें में हो तो=२, मङ्गल दूसरे में, बृहस्पति बारहवें में हो तो=३, बृहस्पति दूसरे में, मङ्गल बारहवें में हो तो=४, मङ्गल दूसरे में, शुक्र बारहवें में हो तो=५, शुक्र दूसरे में, मङ्गल बारहवें में हो तो = ६, मङ्गल दूसरे में, शनैश्चर बारहवें में हो तो = ७, शनैश्चर दूसरे में, मङ्गल बारहवें में हो तो = ८, बुध दूसरे में, बृहस्पति बारहवें में हो तो = ९, बृहस्पति दूसरे में और बुध बारहवें में हो तो = १०, बुध दूसरे में, शुक्र बारहवें में हो तो = ११, शुक्र दूसरे में बुध बारहवें में हो तो = १२, बुध दूसरे में, शनैश्चर बारहवें में हो तो = १३, शनैश्चर दूसरे में, बुध बारहवें में हो तो = १४, बृहस्पति दूसरे में शुक्र बारहवें में हो तो = १५, शुक्र दूसरे में, बृहस्पति बारहवें में हो तो = १६, बृहस्पति दूसरे में, शनैश्चर बारहवें में हो तो = १७, शनैश्चर दूसरे में, बृहस्पति बारहवें में हो तो = १८, शुक्र दूसरे में, शनैश्चर बारहवें में हो तो = १९, शनैश्चर दूसरे में, शुक्र बारहवें में हो तो = २०, ये द्वितीय, द्वादश दोनों में एक-एक ग्रह के बीस २० भेद हुए।

एवं मंगल द्वितीय में, बुध बृहस्पति द्वादश में हो तो=१, बुध, बृहस्पति द्वितीय में, मङ्गल द्वादश में हो तो = २, मङ्गल द्वितीय में, बुध, शुक्र द्वादश में हो तो = ३, बुध, शुक्र द्वितीय में, मङ्गल द्वादश में हो तो = ४, मङ्गल द्वितीय में बुध, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ५, बुध, शनैश्चर द्वितीय में, मङ्गल द्वादश में हो तो = ६, मङ्गल द्वितीय में, बृहस्पति, शुक्र द्वादश में हो तो = ७, बृहस्पति, शुक्र द्वितीय में, मङ्गल द्वादश में हो तो = ८, मङ्गल द्वितीय में, बृहस्पति, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ९, बृहस्पति, शनैश्चर द्वितीय में, मङ्गल द्वादश में हो तो = १०, मङ्गल द्वितीय में, शुक्र, शनैश्चर द्वादश में हो तो=११, शुक्र, शनैश्चर द्वितीय में, मङ्गल द्वादश में हो तो=१०,

बुध द्वितीयमें, मङ्गल, बृहस्पति द्वादश में हो तो=१३, मङ्गल, बृहस्पति द्वितीय में, बुध द्वादशमें हो तो = १४, बुध द्वितीय में मङ्गल, शुक्र द्वादश में हो तो = १५, मङ्गल, शुक्र द्वितीय में बुध द्वादश में हो तो = १६, बुध द्वितीय में, मङ्गल, शनैश्चर द्वादश में हो तो = १७, मङ्गल, शनैश्चर द्वितीय में, बुध द्वादश में हो तो = १८, बुध द्वितीय में, बृहस्पति, शुक्र द्वादश में हो तो = १९, बृहस्पति, शुक्र द्वितीय में, बुध द्वादश में हो तो = २०, बुध द्वितीय में, बृहस्पति, शनैश्चर द्वादश में हो तो = २१, बृहस्पति, शनैश्चर द्वितीय में, बुध द्वादश में हो तो=२२, बुध द्वितीय में, शुक्र, शनैश्चर द्वादश में हो तो = २३, शुक्र, शनैश्चर द्वितीय में, बुध द्वादश में हो तो=२४, बृहस्पति द्वितीय में मङ्गल, बुध द्वादश में हो तो=२५, मङ्गल, बुध द्वितीय में, बृहस्पति द्वादश में हो तो = २६, बृहस्पति द्वितीय में, मङ्गल, शुक्र द्वादश में हो तो = २७, मङ्गल, शुक्र द्वितीय में, बृहस्पति द्वादश में हो तो = २८, बृहस्पति द्वितीय में, मङ्गल, शनैश्चर द्वादश में हो तो = २९, मङ्गल, शनैश्चर द्वितीय में, बृहस्पति द्वादश में हो तो=३०, बृहस्पति द्वितीय में, बुध, शुक्र, द्वादश में हो तो = ३१, बुध, शुक्र द्वितीय में बृहस्पति द्वादश में हो तो = ३२, बृहस्पति द्वितीय में, बुध, शनैश्चर द्वादश में हो तो=३३, बुध, शनैश्चर द्वितीय में, बृहस्पति द्वादश में हो तो=३४, बृहस्पति द्वितीय में, शुक्र, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ३५, शुक्र, शनैश्चर द्वितीय में, बृहस्पति द्वादश में हो तो = ३६, शुक्र द्वितीय में, मङ्गल, बुध द्वादश में हो तो ३७, मङ्गल, बुध द्वितीय में, शुक्र द्वादश में हो तो = ३८, शुक्र द्वितीय में, मङ्गल, बृहस्पति द्वादश में हो तो = ३९, मङ्गल, बृहस्पति द्वितीय में, शुक्र द्वादश में हो तो = ४०, शुक्र द्वितीय में, मङ्गल, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ४१, मङ्गल, शनैश्चर द्वितीय में, शुक्र द्वादश में हो तो=४२, शुक्र द्वितीय में, बुध, बृहस्पति द्वादश में हो तो=४३, बुध, बृहस्पति द्वितीय में, शुक्र द्वादश में हो तो = ४४, शुक्र द्वितीय में, बुध, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ४५, बुध, शनैश्चर द्वितीय में, शुक्र द्वादश में हो तो = ४६, शुक्र द्वितीय में, बृहस्पति, शनैश्चर द्वादश में हो तो=४७, बृहस्पति, शनैश्चर द्वितीय में, शुक्र द्वादश में हो तो = ४८, शनैश्चर द्वितीय में, मङ्गल, बुध द्वादश में हो तो = ४९, मङ्गल, बुध द्वितीय में, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ५०, शनैश्चर द्वितीय में, मङ्गल, बृहस्पति द्वादश में हो तो = ५१, मङ्गल, बृहस्पति द्वितीय में, शनैश्चर द्वादश में हो तो=५२, शनैश्चर द्वितीय में, मङ्गल, शुक्र द्वादश में हो तो = ५३, मङ्गल, शुक्र द्वितीय में, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ५४, शनैश्चर द्वितीय में, बुध, बृहस्पति द्वादश में हो तो = ५५, बुध, बृहस्पति द्वितीय में, शनैश्चर द्वादश में हो तो=५६, शनैश्चर द्वितीय में, बुध, शुक्र द्वादश में हो तो = ५७, बुध, शुक्र द्वितीय में, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ५८, शनैश्चर द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र द्वादश में हो तो = ५९, बृहस्पति, शुक्र द्वितीय में, शनैश्चर द्वादश में हो तो = ६० ।

द्वितीय में एक, द्वादश में दो, द्वादश में एक, द्वितीय में दो ग्रह के वश ये साठ भेद होते हैं।

एवं द्वितीय में मङ्गल, द्वादश में बुध, बृहस्पति, शुक्र हो तो = १, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में मङ्गल हो तो = २, द्वितीय में मङ्गल, द्वादश में बुध, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ३, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल हो तो = ४, द्वितीय में मङ्गल, द्वादश में बुध, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ५, द्वितीय में बुध, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल हो तो = ६, द्वितीय में मङ्गल, द्वादश में बृहस्पति शुक्र, शनैश्चर हो तो = ७, द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल हो तो = ८, द्वितीय में बुध, द्वादश में मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ९, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में बुध हो तो = १०, द्वितीय में बुध, द्वादश में मङ्गल बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ११, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में बुध हो तो = १२, द्वितीय में बुध, द्वादश में मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर हो तो = १३, द्वितीय में मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में बुध हो तो = १४, द्वितीय में बुध, द्वादश में गुरु, शुक्र, शनैश्चर हो तो = १५, द्वितीय में गुरु, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में बुध हो तो = १६, द्वितीय में बृहस्पति, द्वादश में मङ्गल, बुध, शुक्र हो तो = १७, द्वितीय में मङ्गल, बुध, शुक्र, द्वादश में बृहस्पति हो तो = १८, द्वितीय में बृहस्पति, द्वादश में मङ्गल, बुध, शनैश्चर हो तो = १९, द्वितीय में मङ्गल, बुध, शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति हो तो = २०, द्वितीय में बृहस्पति, द्वादश में मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर हो तो = २१, द्वितीय में मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति हो तो = २२, द्वितीय में बृहस्पति, द्वादश में बुध, शुक्र, शनैश्चर हो तो = २३, द्वितीय में बुध, शुक्र शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति हो तो = २४, द्वितीय में शुक्र, द्वादश में मङ्गल, बुध, बृहस्पति हो तो = २५, द्वितीय में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, द्वादश में शुक्र हो तो = २६, द्वितीय में शुक्र, द्वादश में मङ्गल, बुध, शनैश्चर हो तो = २७, द्वितीय में मङ्गल, बुध, शनैश्चर, द्वादश में शुक्र हो तो = २८, द्वितीय में शुक्र, द्वादश में मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = २९, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में शुक्र हो तो = ३०, द्वितीय में शुक्र, द्वादश में बुध, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ३१, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में शुक्र हो तो = ३२, द्वितीय में शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बुध, बृहस्पति हो तो = ३३, द्वितीय में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, द्वादश में शनैश्चर हो तो = ३४, द्वितीय में शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बुध, शुक्र हो तो = ३५, द्वितीय में मङ्गल, बुध, शुक्र, द्वादश में शनैश्चर हो तो = ३६, द्वितीय में शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ३७, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में शनैश्चर हो तो = ३८, द्वितीय में शनैश्चर, द्वादश में बुध, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ३९, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में शनैश्चर हो तो = ४०।

द्वितीय में एक, द्वादश में तीन, द्वादश में एक, द्वितीय में तीन ग्रह के वश ये चालिस भेद होते हैं।

एवं द्वितीय में मङ्गल, द्वादश में बुध, बृहस्पति शुक्र, शनैश्चर हो तो=१, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल हो तो = २, द्वितीय में बुध, द्वादश में मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ३, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में बुध हो तो = ४, द्वितीय में बृहस्पति, द्वादश में मङ्गल, बुध, शुक्र, शनैश्चर हो तो=५, द्वितीय में मङ्गल, बुध, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति हो तो = ६, द्वितीय में शुक्र, द्वादश में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ७, द्वितीय में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में शुक्र हो तो = ८, द्वितीय में शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ९, द्वितीय में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में शनैश्चर हो तो = १०।

द्वितीय में एक, द्वादश में चार, द्वादश में एक, द्वितीय में चार ग्रह के वश ये दश भेद होते हैं।

एवं द्वितीय में मङ्गल, बुध, द्वादश में बृहस्पति, शुक्र हो तो = १, द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में मङ्गल, बुध हो तो = २, द्वितीय में मङ्गल, बुध, द्वादश में बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ३, द्वितीय में बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बुध हो तो = ४, द्वितीय में मङ्गल, बुध, द्वादश में शुक्र, शनैश्चर हो तो = ५, द्वितीय में शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बुध हो तो=६, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, द्वादश में शुक्र, बुध हो तो=७, द्वितीय में शुक्र, बुध, द्वादश में मङ्गल, बृहस्पति हो तो=८, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, द्वादश में बुध, शनैश्चर हो तो = ९, द्वितीय में बुध, शनैश्चर, द्वादश में मङ्गल, बृहस्पति हो तो = १०, द्वितीय में मङ्गल, बृहस्पति, द्वादश में शुक्र, शनैश्चर हो तो = ११, द्वितीय में शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, बृहस्पति हो तो=१२, द्वितीय में मंगल, शुक्र, द्वादश में बुध, बृहस्पति हो तो=१३, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, द्वादश में मंगल, शुक्र हो तो = १४, द्वितीय में मंगल, शुक्र, द्वादश में बुध, शनैश्चर हो तो = १५, द्वितीय में बुध, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, शुक्र हो तो = १६, द्वितीय में मंगल, शुक्र, द्वादश में बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = १७, द्वितीय में बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, शुक्र हो तो=१८, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, द्वादश में मंगल, शनैश्चर हो तो=१९, द्वितीय में मंगल, शनैश्चर, द्वादश में बुध, बृहस्पति हो तो = २०, द्वितीय में मंगल, शनैश्चर, द्वादश में बुध, शुक्र हो तो = २१, द्वितीय में बुध, शुक्र, द्वादश में मंगल, शनैश्चर हो तो = २२, द्वितीय में मंगल, शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति, शुक्र हो तो = २३, द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में मंगल, शनैश्चर हो तो = २४, द्वितीय में बुध, बृहस्पति, द्वादश में शुक्र, शनैश्चर हो तो = २५, द्वितीय में शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में

बुध, बृहस्पति हो तो = २६, द्वितीय में बुध, शुक्र, द्वादश में बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = २७, द्वितीय में बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में बुध, शुक्र हो तो = २८, द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में बुध, शनैश्चर हो तो = २९, द्वितीय में बुध, शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति, शुक्र हो तो = ३० ।

द्वितीय में दो और द्वादश में दो ग्रह के वश ये तीस भेद होते हैं ।

एवं द्वितीय में मङ्गल, बुध, द्वादश में बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर हो तो = १,
द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, बुध हो तो = २,
द्वितीय में मंगल, बृहस्पति, द्वादश में बुध, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ३,
द्वितीय में बुध, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, बृहस्पति हो तो = ४,
द्वितीय में मंगल, शुक्र, द्वादश में बुध, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ५,
द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, शुक्र हो तो = ६,
द्वितीय में मंगल, शनैश्चर, द्वादश में बुध, बृहस्पति, शुक्र हो तो = ७,
द्वितीय में बुध, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में मंगल, शनैश्चर हो तो = ८,
द्वितीय में बुध, बृहस्पति, द्वादश में मंगल, शुक्र, शनैश्चर हो तो = ९,
द्वितीय में मंगल, शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में बुध, बृहस्पति हो तो = १०,
द्वितीय में बुध, शुक्र, द्वादश में मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = ११,
द्वितीय में मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में बुध, शुक्र हो तो = १२,
द्वितीय में बुध, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, बृहस्पति, शुक्र हो तो = १३,
द्वितीय में मंगल, बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में बुध, शनैश्चर हो तो = १४,
द्वितीय में बृहस्पति, शुक्र, द्वादश में मंगल, बुध, शनैश्चर हो तो = १५,
द्वितीय में मंगल, बुध, शनैश्चर, द्वादश में बृहस्पति, शुक्र हो तो = १६,
द्वितीय में बृहस्पति, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, बुध, शुक्र हो तो = १७,
द्वितीय में मंगल, बुध, शुक्र, द्वादश में बृहस्पति, शनैश्चर हो तो = १८,
द्वितीय में शुक्र, शनैश्चर, द्वादश में मंगल, बुध, बृहस्पति हो तो = १९,
द्वितीय में मंगल, बुध, बृहस्पति, द्वादश में शुक्र, शनैश्चर हो तो = २०,

द्वितीय में दो, द्वादश में तीन, द्वादश में दो, द्वितीय में तीन ग्रह के वश ये बीस भेद होते हैं ।

सब मिलकर एक सौ अस्सी दुरुधुरा के भेद हुए ॥ ४ ॥

सुनफा और अनफा योगों का फल—

स्वयमधिगतवित्तः पार्थिवस्तत्समो वा
भवति हि सुनफायां धीधनख्यातिमांश्च ।
प्रभुरगदशरीरः शीलवान् ख्यातकीर्ति-
विषयसुखसुवेषो निर्वृतश्चानफायाम् ॥ ५ ॥

सुनफा योग में उत्पन्न जातक अपने आप धन को उपार्जन करने वाला, राजा या राजा के समान, श्रेष्ठ बुद्धि वाला, धनी और यशस्वी होता है।

एवं अनफा योग में उत्पन्न जातक समर्थ, रोगरहित शरीर वाला, अच्छे स्वभाव वाला, यशस्वी, सांसारिक सुख से युत, सुन्दर शरीर वाला और सन्तुष्ट होता है॥५॥

दुरुधुरा और केमद्रुम योगों का फल—

उत्पन्नभोगसुखभुग्धनवाहनाढ्य-
स्त्यागान्वितो दुरुधुराप्रभवः सुभृत्यः।
केमद्रुमे मलिनदुःखितनीचनिस्वाः
प्रेष्याः खलाश्च नृपतेरपि वंशजाताः ॥ ६ ॥

दुरुधुरा योग में उत्पन्न जातक जहां कहीं जिस किसी तरह से उत्पन्न भोग के द्वारा सुख भोगने वाला, धन-वाहन से युत, दानी और सुन्दर भृत्य से युत होता है।

केमद्रुम योग में उत्पन्न जातक मलिन, दुःखित, नीच कर्म करने वाला, निर्धन, दास कर्म करने वाला और दुष्ट होता है।

इस योग में राजकुलोत्पन्न जातक भी कथित फल को पाते हैं अन्य की क्या बात अर्थात् अन्य वंश में उत्पन्न जातक तो पाता ही है ॥ ६ ॥

सुनफा आदि योगकारक भौमादि ग्रहों का फल—

प्रोत्साहशौर्यधनसाहसवान् महौजः
सौम्यः पटुः सुवचनो निपुणः कलासु।
जीवोऽर्थधर्म्मसुखभुङ् नृपपूजितश्च
कामी भृगुर्बहुधनो विषयोपभोक्ता ॥ ७ ॥

यदि उक्त योग करने वाला मंगल हो तो जातक उत्साही, संग्राम का प्रेमी, धनवान् और साहसी होता है।

योग करने वाला बुध हो तो जातक चतुर, मधुर वचन बोलने वाला और कलाओं में निपुण होता है।

यदि बृहस्पति योग करने वाला हो तो जातक धर्मी, सुखी और राजाओं से पूजित होता है।

अगर शुक्र योगकारक हो तो जातक कामी, बहुत धनी और विषयों को भोग करने वाला होता है ॥ ७ ॥

योगकारक शनि का फल—

परविभवपरिच्छदोपभोक्ता रवितनयो बहुकार्य्यकृद् गणेशः।
अशुभकृदुडुपोऽह्नि दृश्यमूर्तिर्गलिततनुश्च शुभोन्यथान्यदूह्यम् ॥ ८ ॥

शनि योगकारक हो तो जातक दूसरे के विभव (घर, कपड़ा, वाहन, परिवार) को

भोगने वाला, बहुत काम करने वाला और अनेक गणों का अधिप होता है। यह एक २ योगकारक ग्रह का फल कहा गया है। अगर दो, तीन आदि योगकारक ग्रह हों तो उन ग्रहों के फलों में तारतम्य करके फल कहना चाहिए।

यदि दिन में जन्म हो, चन्द्रमा दृश्यचक्रार्द्ध (सप्तम स्थान से लग्न पर्यन्त) में स्थित हो तो अशुभ फल और अदृश्यचक्रार्द्ध (लग्न से सप्तम पर्यन्त) में स्थित हो तो शुभ फल देता है।

एवं यदि रात में जन्म हो और चन्द्रमा दृश्यचक्रार्द्ध में स्थित हो तो शुभ फल और अदृश्यचक्रार्द्ध में हो तो अशुभ फल देता है ॥ ८ ॥

लग्न और चन्द्रमा से उपचय स्थान में स्थित शुभ ग्रहों का फल—

लग्नादतीव वसुमान् वसुमाञ्छशाङ्का-
त्सौम्यग्रहैरुपचयोपगतैः समस्तैः ।
द्वाभ्यां समोऽल्पवसुमांश्च तदूनताया-
मन्येष्वसत्स्वपि फलेष्विदमुत्कटेन ॥ ९ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके चन्द्रयोगाध्यायस्त्रयोदशः ॥ १३ ॥

जिस जातक के जन्म समय में लग्न से उपचय (३, ६, १०, ११) स्थानों में सब शुभ ग्रह बैठे हों तो वह बहुत धनी होता है।

अगर चन्द्रमा से उक्त स्थानों में सब शुभ ग्रह बैठे हो तो धनी होता है।

यदि शुभ ग्रहों में से कोई उक्त स्थानों में हों तो मध्यम धनी होता है।

तथा यदि एक ही शुभ ग्रह उक्त स्थानों में से किसी स्थान में हो तो अल्प धनी होता है।

यदि उक्त स्थानों में कोई भी शुभ ग्रह न हो तो जातक दरिद्र होता है। केमद्रुम आदि कुयोग होने पर भी उनका फल न होकर इन योगों का फल होता है, अर्थात् अन्य कुयोग के साथ इन योगों के रहने पर इन्हीं का फल होता है, अन्य कुयोगों का नहीं।

इति बृहज्जातके 'विमला' नामकभाषाटीकायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ द्विग्रहयोगाध्यायश्चतुर्दशः

सूर्य सहित चन्द्रादि ग्रहों का फल—

तिग्मांशुर्जनयत्युषेशसहितो यन्त्राश्मकारं नरं
भौमेनाघरतं बुधेन निपुणं धीकीर्तिसौख्यान्वितम् ।
क्रूरं वाक्पतिनान्यकार्यनिरतं शुक्रेण रङ्गायुधै-
र्लब्धस्वं रविजेन धातुकुशलं भाण्डप्रकारेषु वा ॥ १ ॥

जिस के जन्म समय में चन्द्रमा सूर्य युत हो तो यन्त्र और पत्थर की चीज बनाने वाला होता है।

बुध से सूर्य युत हो तो सब काम करने में चतुर, बुद्धिमान्, कीर्तिमान् और सुखी होता है।

बृहस्पति से सूर्य युत हो तो पाप बुद्धि वाला और दूसरे का काम करने वाला होता है।

शुक्र से युत सूर्य हो तो युद्ध और शस्त्र से धन पैदा करने वाला होता है।

शनि से युत सूर्य हो तो सोना, चांदी आदि धातु के कर्म में और वर्तन वनाने में चतुर होता है॥ १॥

कुजादि ग्रहों से युक्त चन्द्र का फल—

कूटस्त्र्यासवकुम्भपण्यमशिवं मातुः सवक्रः शशी
सज्ञः प्रश्रितवाक्यमर्थनिपुणं सौभाग्यकीर्त्यान्वितम्।
विक्रान्तं कुलमुख्यमस्थिरमतिं वित्तेश्वरं साङ्गिरा
वस्त्राणां ससितः क्रयादिकुशलं सार्किः पुनर्भूसुतम्॥ २॥

जिस के जन्म काल में मङ्गल से चन्द्रमा युत हो तो वाजार की चीज, स्त्री, मद्य और घड़ा वेचने वाला तथा माता को कष्ट देने वाला होता है।

बुध से युत चन्द्रमा हो तो प्रिय वोलने वाला, शब्दार्थ जानने में सूक्ष्मदृष्टि वाला और सब का प्रिय होने के कारण कीर्ति से युत होता है।

बृहस्पति से युत चन्द्रमा हो तो शत्रु को जीतने वाला, अपने कुल में प्रधान, चञ्चल वुद्धि वाला और धन का अधीश होता है।

शुक्र से युत चन्द्रमा हो तो वस्त्रों के क्रय-विक्रय में कुशल और वस्त्र सीना, सूत वनाना इत्यादि में भी कुशल होता है।

शनि से युत चन्द्रमा हो तो पुनर्भू (पहले के स्वामी को छोड़ कर दूसरे विवाह करने वाली) का लड़का होता है॥ २॥

पुनर्भू के लक्षण—

परिणीता पतिं हित्वा सवर्णं कामतः श्रयेत्।
अक्षता च क्षता वापि पुनर्भूः संस्कृता पुनः॥

बुधादि ग्रहों से युत मङ्गल का फल—

मूलादिस्नेहकूटैर्व्यवहरति वणिग्बाहुयोद्धा ससौम्ये
पुर्य्यध्यक्षः सजीवे भवति नरपतिः प्राप्तवित्तो द्विजो वा।
गोपो मल्लोऽथ दक्षः परयुवतिरतो द्यूतकृत्सासुरेज्ये
दुःखार्त्तोऽसत्यसन्धः ससवितृतनये भूमिजे निन्दितश्च॥ ३॥

जिस के जन्म काल में बुध से युत मङ्गल हो वह मूल, फल, पुष्प, तेल, अतर आदि

और बाजार की चीजों को बेचने वाला और मल्ल युद्ध में कुशल होता है ।

बृहस्पति से युत मंगल हो तो नगर का स्वामी, राजा या धन पाने वाला ब्राह्मण होता है ।

शुक्र से युत मंगल हो तो गौ पालने वाला, बाहु से युद्ध करने वाला, चतुर, पर-स्त्रियों में प्रेम रखने वाला और जुवारी होता है ।

शनि से युत मंगल हो तो दुःख से पीड़ित, मिथ्या बोलने वाला और निन्दित होता है ॥ ३ ॥

जीवादि ग्रहों से युत बुध का फल—

सौम्ये रङ्गचरो बृहस्पतियुते गीतप्रियो नृत्यवान्
वाग्मी भूगणपोसितेन मृदुना मायापटुर्लङ्घकः ।
सद्विद्यो धनदारवान् बहुगुणः शुक्रेण युक्ते गुरौ
ज्ञेयः श्मश्रुकरोऽसितेन घटकृज्जातोन्नकारोपि वा ॥ ४ ॥

जिस के जन्मकाल में बुध से युत बृहस्पति हो तो बाहुयुद्ध करने वाला, गान में स्नेह रखने वाला और स्वयं नाच जानने वाला होता है ।

शुक्र से युत बुध हो तो बोलने में चतुर, पृथ्वी और बहुत लोकों का मालिक होता है ।

शनैश्चर से युत बुध हो तो दूसरे को ठगने में चतुर और गुरुजन की आज्ञा को न मानने वाला होता है ।

अब शुक्रादि ग्रहों से युत बृहस्पति का फल—

शुक्र से युत बृहस्पति हो तो श्रेष्ठ, विद्वान्, धनवान्, स्त्री से युत और बहुत गुणों से युत होता है ।

शनैश्चर से युत बृहस्पति हो तो हजाम, कुम्हार या रसोइआ होता है ॥ ४ ॥

शुक्र, शनि का योगफल और त्रिग्रहयोग फल—

असितसितसमागमेऽल्पचक्षुर्युवतिसमाश्रयसम्प्रवृद्धवित्तः ।
भवति च लिपिपुस्तचित्रवेत्ता कथितफलैः परतो विकल्पनीयाः ॥ ५ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके द्विग्रहयोगाध्यायश्चतुर्दशः ॥ १४ ॥

जिस के जन्म काल में शनैश्चर से शुक्र युत हो वह थोड़ी दृष्टि वाला, स्त्री के आश्रय से धन की वृद्धि करने वाला, लिखने पढ़ने वाला और चित्र बनाने वाला होता है ।

यदि तीन ग्रहों का एक जगह में योग हो तो दो दो ग्रहों का अलग अलग फल पूर्वोक्त प्रकार से जान कर उन सब फलों को कहना चाहिए ।

जैसे किसी की जन्म कुण्डली में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल इन तीनों का एक जगह

योग है तो सूर्य, चन्द्रमा के योग फल, सूर्य, मंगल के योग फल, चन्द्र, मंगल के योग फल इन तीनों को कहना चाहिए।

इति बृहज्जातके 'विमला' नामकहिन्दीटीकायां द्विग्रहयोगाध्यायश्चतुर्दशः।

अथ प्रव्रज्यायोगाध्यायः पञ्चदशः

एकस्थैश्चतुरादिभिर्बलयुतैर्जाताः पृथग्वीर्यगैः
शाक्याजीविकभिक्षुवृद्धचरका निर्ग्रन्थवन्याशनाः।
माहेयज्ञगुरुक्षपाकरसितप्राभाकरीनैः क्रमा-
त्प्रव्रज्या वलिभिः समाः परजितैस्तत्स्वामिभिः प्रच्युतिः॥ १॥

जिस के जन्म काल में चार आदि (चार, पांच, छै, सात) ग्रह एक स्थान में बैठे हों तो प्रव्रज्या (संन्यास) योग होता है। परञ्च चार आदि ग्रहों में कोई एक बलवान् हो तो आगे कहा गया प्रव्रज्या योग होता है। दो ग्रह बलवान् हों तो दोनों ग्रहों के प्रव्रज्या योग होते हैं। यदि बहुत ग्रह बलवान् हों तो बहुत प्रव्रज्या योग होते हैं।

अब भौमादि प्रत्येक ग्रहों के वली होने पर अलग अलग प्रव्रज्या योग का फल—

जैसे मंगल बलवान् हो तो लाल वस्त्र धारण करने वाला, बुध बलवान् हो तो एक दण्ड को धारण करने वाला, बृहस्पति बलवान् हो तो भिक्षुक संन्यासी, चन्द्रमा वली हो तो वृद्ध (वृद्धश्रावक=कापालिक), शुक्र वली हो तो चक्र धारण करने वाला, शनैश्चर बलवान् हो तो नंगा संन्यासी और सूर्य बलवान् हो तो कन्द, फल आदि खाने वाला होता है।

अगर एकत्र स्थित चार आदि ग्रहों में कोई भी वलवान् न हो तो प्रव्रज्या योग नहीं होता है।

अगर प्रव्रज्या-योगकारक एक ग्रह युद्ध में पराजित हो तो उस के अन्तर्दशा में संन्यास ग्रहण कर के फिर छोड़ देता है। अगर प्रव्रज्या-योगकारक दो ग्रह हों तो प्रथम प्रव्रज्या-योगकारक ग्रह के अन्तर्दशा में प्रथम प्रव्रज्या को ग्रहण कर द्वितीय प्रव्रज्या-योगकारक ग्रह के अन्तर्दशा काल में उस को छोड़ कर द्वितीय का ग्रहण कर के फिर कुछ रोज बाद उसको भी छोड़ देता है। एवं तीन, चार आदि योगकारक ग्रह होने पर जानना चाहिए।

किन्तु योगकारक ग्रह किसी ग्रह से पराजित न हों तो, एक योगकारक ग्रह होने से उस के अन्तर्दशा में प्रव्रज्या ग्रहण कर उसी में जीवन भर रहता है। दो हों तो प्रथम के अन्तर्दशा में प्रथम को ग्रहण कर दूसरे के अन्तर्दशा में उस को त्याग कर द्वितीय को ग्रहण कर आजीवन रखता है।

एवं तीन, चार आदि योगकारक ग्रह होने पर जानना चाहिए।

यहाँ वंकालकाचार्य का वचन—

तावसिओ दिणणाहे चन्दे कावालिओ तहा भणिओ ।
रत्तवडो भूमिसुवे सोमसुवे एअदण्डीआ ।
देवगुरु शुक्रकोणे क्रमेण जई चरअ खवणाइ ।

योगकारक दिणणाह (सूर्य) हो तो तावसिओ (तापसिक), चन्द (चन्द्रमा) हो तो कावालिओ (कापालिक) भूमिसुव (मंगल) हो तो रत्तवडो (रक्तवस्त्र-धारी), सोमसुव (बुध) हो तो एअदण्डीआ (एकदण्डी), देवगुरु (बृहस्पति) शुक्र (शुक्र) कोण (शनैश्चर) योगकारक हों तो क्रम से जई (यती = संन्यासी) चरअ (चरक) खवणाइ (क्षपणक) होता है ।

फिर संहितान्तर में उन का वचन—

जलण हर सुगअ केसव सूई वह्मण्ण णग्ग मग्गेषु ।
दिक्खाणं णाअव्वा सूराइ गहा क्रमेण णाहगआ ॥

जलण (साग्निक), हर (ईश्वरभक्त), सुगअ (सुगत=बौद्ध), केसव (केशव-भक्त), सूई (श्रुतिमार्ग में गत), वह्मण्ण (वह्मभक्त = वाणप्रस्थ), मग्गेषु (मार्ग में) णग्ग (नग्न), दिक्खाण (दीक्षाज्ञाता) सूर्यादि ग्रह योगकारक हों तो क्रम से जानना चाहिए ।

तथा सत्याचार्य का वचन—

तेष्वधिकबली जीवस्त्रिदण्डिनं भार्गवश्चरकमुख्यम् ।
नग्नश्रवणं सौरो बुधस्तदा जीविकाचार्यम् ॥
वृद्धश्रावकमिन्दुर्दिवाकरस्तापसं तपोयुक्तम् ।
वक्रः शाक्यः श्रवणं चेत्राश्रयजं गुणाश्चैतान् ॥
वीर्योपेतेऽल्पतनावदीक्षिता भक्तिवादिनस्तेषाम् ।
अन्यैः पराजितश्चेत्प्रव्रज्या-प्रच्युतिं कुर्यात् ॥
यावन्तो वीर्ययुताः प्रव्रज्या भवन्ति तावन्त्यः ।
एकर्क्षगेषु नियमात्तेषामाद्या वलोपेतात् ॥

तथा स्वल्पजातक में—

चतुरादिभिरेकस्थैः प्रव्रज्यां स्वां ग्रहः करोति बली ।
वहुवीर्यैस्तावन्त्यः प्रथमा वीर्याधिकस्यैव ॥

अदीक्षितादि योग—

रविलुप्तकरैरदीक्षिता बलिभिस्तद्गतभक्तयो नराः ।
अभियाचितमात्रदीक्षिता निहतैरन्यनिरीक्षितैरपि ॥ २ ॥

यदि प्रव्रज्या-योगकारक ग्रह बली हों किन्तु सूर्य के किरण से अस्त हों तो

बिना मन्त्रोपदेश के साधु हो जाता है। किन्तु जिस प्रव्रज्या योग में जन्म हो उस प्रव्रज्या को ग्रहण करने वालों में भक्ति होती है।

अगर प्रव्रज्या योग करने वाले ग्रह दूसरे ग्रह से जीते गये हों या देखे जाते हों तो मनुष्य उक्त ग्रह-सम्बन्धी प्रव्रज्या योग की दीक्षा देने के लिये अपने गुरु योग्य साधुओं से प्रार्थना करता है किन्तु वे (गुरु) दीक्षा देने के लिये स्वीकार नहीं करते हैं।

यहाँ पर किसी का वचन—

दीक्षादानसमर्थो यो भवति तदा बलेन संयुक्तः।
तस्यैव दशाकाले दीक्षां लभते नरोऽवश्यम् ॥
यस्य च दीक्षा-च्यवनं तस्यैव दशावसाने स्यात्।
एवं जातककाले संचिन्त्य बलाबलं वाच्यम् ॥ २ ॥

अन्य प्रकार से प्रव्रज्या योग—

जन्मेशोऽन्यैर्यद्यदृष्टोऽर्कपुत्रं पश्यत्यार्किर्जन्मपं वा बलोनम्।
दीक्षां प्राप्नोत्यार्किद्रेष्काणसंस्थे भौमार्क्यंशे सौरदृष्टे च चन्द्रे ॥३॥

अन्य ग्रह से अदृष्ट चन्द्र-राशि के स्वामी (जन्म काल में चन्द्रमा जिस राशि में हो उस राशि के स्वामी) शनैश्चर को देखता हो तो राशी के स्वामी, शनैश्चर इन दोनों में जो बली हो उस की अन्तर्दशा काल में शनैश्चर-सम्बन्धी प्रव्रज्यायोग (नग्नता) को प्राप्त करता है।

अथवा बली शनैश्चर बलरहित चन्द्र-राशीश को देखता हो तो भी शनैश्चर-सम्बन्धी प्रव्रज्या को प्राप्त करता है।

वा अन्य ग्रह से अदृष्ट शनैश्चर से चन्द्रमा देखा जाता हो, शनैश्चर के द्रेष्काण में हो और मंगल या शनैश्चर के नवांश में हो तो भी शनैश्चर-सम्बन्धी प्रव्रज्या योग को ग्रहण करता है।

यहाँ पर किसी का वचन—

यस्येक्षतेऽर्कपुत्रं जन्मभनाथो ग्रहैर्न संदृष्टः।
तस्य हि दीक्षालाभो तद्बलयोगाद्दशाकाले ॥

तथा च—

शनिदृष्टे बलहीने जन्मनि नाथे वदेच्च निर्ग्रन्थम् ॥

तथा च—

सौरद्रेष्काणसंस्थो यदि भवति शशी तदंशसंस्थश्च।
वक्रांशे वा दृष्टः सौरेण तु सर्वदर्शनविमुक्तः ॥
निर्ग्रन्थसंज्ञक एते यतयोऽर्कपुत्रवीर्यानुसारेण।
जन्माधिपतिः पापैरपि निरीक्षितस्त्वेक ईक्षते सौरः ॥

शास्त्र बनाने का और तीर्थ करने का योग—

सुरगुरुशशिहोरास्वार्किदृष्टासु धर्मे
गुरुरथ नृपतीनां योगजस्तीर्थकृत्स्यात्।
नवमभवनसंस्थे मन्दगेऽन्यैरदृष्टे
भवति नरपयोगे दीक्षितः पार्थिवेन्द्रः ॥ ४ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके प्रव्रज्याध्यायः पञ्चदशः ॥ १५ ॥

बृहस्पति, चन्द्रमा, लग्न इन तीनों के ऊपर शनैश्चर की दृष्टि हो, बृहस्पति नवम स्थान में हो तो किसी राजयोग में उत्पन्न जातक राजा न हो कर तीर्थ करने वाला और शास्त्र करने वाला होता है।

कोई 'सुरगुरुशशिहोरासु' इसका बृहस्पति और चन्द्र की राशि (धनु, मीन, कर्क) लग्न में हो ऐसा अर्थ करते हैं, वह भी युक्त है।

यतः माण्डव्य—

गते मन्दालोकं गुरुशशिविलग्ने नवमगे, गुरौ निष्पद्यन्ते न इह नृपयोगे नृपतयः।
विजृम्भन्ते येषां लटहरचनारम्भसुभगा, जगत्यां ये विद्वद्गुणकथनपाखण्डसदृशाः॥

और भी कहा है—

गुरुशशिलग्नाद्दृष्टाः कोणेन तु नवमगो गुरुः।
नरनाथयोगजातः शास्त्रकरो भवति न च नृपः॥

तथा जिसके जन्म काल में नवम भवन में गत शनैश्चर किसी ग्रह से नहीं देखा जाता हो तो राजयोग में उत्पन्न जातक महाराज हो कर भी किसी संन्यासी के मन्त्र को ग्रहण कर साधु हो जाता है। अगर राजयोग न हो तो केवल प्रव्रज्या योग ही पाता है॥

कहा भी है—

नवमस्थाने सौरो यदि स्थितः सर्वदर्शनविमुक्तः।
नरनाथयोगजातो नृपोऽपि दीक्षान्वितो भवति॥
नृपयोगस्याभावे योगेऽस्मिन्दीक्षितो नरो जातः।
निःसन्दिग्धं प्रवदेद्योगस्यास्य प्रभावेण ॥ ४ ॥

इति बृहज्जातके 'विमला' नामकहिन्दीटीकायां प्रव्रज्यायोगाध्यायः पञ्चदशः।

अथ ऋक्षशीलाऽध्यायः षोडशः

अश्विनी और भरणी नक्षत्र में जन्म का फल—

प्रियभूषणः सुरूपः सुभगो दक्षोऽश्विनीषु मतिमांश्च।
कृतनिश्चयः सत्यपरो दक्षः सुखितश्च भरणीषु ॥ १ ॥

जिस मनुष्य का अश्विनी नक्षत्र में जन्म हो वह अलङ्कार का प्रेमी, सुन्दर, सबों का प्रिय, सब काम करने में चतुर और बुद्धिमान् होता है।

भरणी नक्षत्र में उत्पन्न जातक जिस कार्य का प्रारम्भ करे उसको सिद्ध करने वाला, सत्य बोलने वाला, निरोग, चतुर और सुखी होता है॥ १॥

कृत्तिका और रोहिणी नक्षत्र में जन्म का फल—

बहुभुक्परदाररतस्तेजस्वी कृत्तिकासु विख्यातः।
रोहिण्यां सत्यशुचिः प्रियंवदः स्थिरमतिः सुरूपश्च॥ २॥

कृत्तिका नक्षत्र में उत्पन्न जातक अधिक भोजन करने वाला, दूसरे की स्त्रियों के साथ रहने वाला, तेजस्वी (किसी का नहीं सहने वाला) और विख्यात होता है।

रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न जातक सत्य बोलने वाला, पवित्र, प्रिय बोलने वाला, स्थिर बुद्धि वाला और सुन्दर रूप वाला होता है॥ २॥

मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र में जन्म का फल—

चपलश्चतुरो भीरुः पटुरुत्साही धनी मृगे भोगी।
शठगर्वितः कृतघ्नो हिंस्रः पापश्च रौद्रर्क्षे॥ ३॥

मृगशिरा नक्षत्र में उत्पन्न जातक चञ्चल, चतुर, भय से पीड़ित, पटु, उत्साही, धनी और भोग करने वाला होता है।

आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न जातक शठ[1] (परोपकार से रहित), अभिमानी, दूसरे के कृत्यों का नाश करने वाला, जन्तुओं को वध करने वाला और पापी होता है॥ ३॥

पुनर्वसु नक्षत्र में जन्म का फल—

दान्तः सुखी सुशीलो दुर्मेधा रोगभाक् पिपासुश्च।
अल्पेन च सन्तुष्टः पुनर्वसौ जायते मनुजः॥ ४॥

पुनर्वसु नक्षत्र में उत्पन्न जातक इन्द्रियों को वश में रखने वाला, सुखी, सुन्दर स्वभाव वाला, दुर्बुद्धि, रोगी, तृषा से युत और थोड़े ही से प्रसन्न होने वाला होता है॥ ४॥

पुष्य और अश्लेषा नक्षत्र में जन्म का फल—

शान्तात्मा सुभगः पण्डितो धनी धर्मसंयुतः पुष्ये।
शठः सर्वभक्षः पापः कृतघ्नधूर्त्तश्च भौजङ्गे॥ ५॥

पुष्य नक्षत्र में उत्पन्न जातक शान्त प्रकृति वाला, सबों का प्रिय, पण्डित, धनी और धर्म से युत होता है।

अश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न जातक शठ, खाद्य और अखाद्य सबों को खाने वाला,

---

(१) शठ का लक्षण—
मनसा वचसा यश्च दृश्यते कार्यतत्परः। कर्मणा विपरीतश्च स शठः सद्भिरुच्यते॥

पापी, अन्य के कृत्यों को नाश करने वाला और धूर्त होता है ॥ ५ ॥

मघा और पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र में जन्म का फल—

बहुभृत्यधनो भोगी सुरपितृभक्तो महोद्यमः पित्र्ये ।
प्रियवाग्दाता द्युतिमानटनो नृपसेवको भाग्ये ॥ ६ ॥

मघा नक्षत्र में उत्पन्न जातक बहुत भृत्य और धन से युक्त, भोगी, देवता तथा पितर में भक्ति करने वाला और अत्यन्त उद्यमी होता है ।

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न जातक प्रिय वचन बोलने वाला, दानी, कान्ति से युक्त, भ्रमण करने वाला और राजाओं का सेवक होता है ॥ ६ ॥

उत्तराफाल्गुनी और हस्त में जन्म का फल—

सुभगो विद्याप्तधनो भोगी सुखभाग्द्वितीयफाल्गुन्याम् ।
उत्साही धृष्टः पानपोऽघृणी तस्करो हस्ते ॥ ७ ॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न जातक सबों का प्रिय, विद्या से धनोपार्जन करने वाला, भोगी और सुखी होता है ।

हस्त नक्षत्र में उत्पन्न जातक उत्साही, प्रतिभा से युत वा निर्लज्ज, मद्यपान करने वाला, अघृणी (निर्दयी) और तस्कर (चोर) होता है ॥ ७ ॥

चित्रा और स्वाती नक्षत्र का फल—

चित्राम्बरमाल्यधरः सुलोचनाङ्गश्च भवति चित्रायाम् ।
दान्तो वणिक्कृपालुः प्रियवाग्धर्माश्रितः स्वातौ ॥ ८ ॥

चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न जातक अनेक रंग के वस्त्र और माला को धारण करने वाला, सुन्दर नेत्र और सुन्दर शरीर वाला होता है ।

स्वाती नक्षत्र में उत्पन्न जातक इन्द्रियों को वश में रखने वाला, व्यापार करने वाला, दयालु, प्रिय वचन बोलने वाला, धर्म के आश्रय में रहने वाला होता है ॥८॥

विशाखा और अनुराधा नक्षत्र में जन्म का फल—

ईर्ष्युर्लुब्धो द्युतिमान्वचनपटुः कलहकृद्विशाखासु ।
आढ्यो विदेशवासी क्षुधालुरटनोऽनुराधासु ॥ ९ ॥

विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न जातक दूसरे की उन्नति में मत्सर, कान्तिमान्, बोलने में चतुर और झगड़ालू होता है ।

अनुराधा नक्षत्र में उत्पन्न जातक धनवान्, परदेश में रहने वाला, अधिक क्षुधा से पीड़ित और भ्रमण करने वाला होता है ॥ ९ ॥

ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में उत्पन्न का फल—

ज्येष्ठासु न बहुमित्रः सन्तुष्टो धर्मकृत्प्रचुरकोपः ।
मूले मानी धनवान्सुखी न हिंस्रः स्थिरो भोगी ॥ १० ॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न जातक अधिक मित्रों से रहित, सन्तुष्ट, धर्म करने वाला और अधिक क्रोध करने वाला होता है।

मूल नक्षत्र में उत्पन्न जातक मानी, धनवान्, सुखी, हिंसा कर्म से रहित, स्थिर बुद्धि वाला और भोगी होता है ॥ १० ॥

पूर्वाषाढ और उत्तराषाढ में उत्पन्न का फल—

इष्टानन्दकलत्रो मानी दृढसौहृदश्च जलदैवे।
वैश्वे विनीतधार्मिकबहुमित्रकृतज्ञसुभगश्च ॥ ११ ॥

पूर्वाषाढ़ नक्षत्र में उत्पन्न जातक अपने अभीष्ट आनन्द देने वाली स्त्री से युत, अभिमानी और अच्छे मित्रों से युक्त होता है।

उत्तराषाढ़ नक्षत्र में उत्पन्न जातक विशेष नम्र स्वभाव वाला, धार्मिक, बहुत मित्रों से युत, दूसरे से किये हुये उपकार को मानने वाला और सबों का प्रिय होता है ॥ ११ ॥

श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न का फल—

श्रीमाञ्छ्रवणे श्रुतवानुदारदारो धनान्वितः ख्यातः।
दाताढ्यशूरगीतप्रियो धनिष्ठासु धनलुब्धः ॥ १२ ॥

श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न जातक श्रीमान्, पण्डित, उदार स्त्री से युक्त, धनी और विख्यात होता है।

धनिष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न जातक दानी, धनी, गीत-वाद्यादि का प्रेमी और लोभी होता है ॥ १२ ॥

शतभिषा और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में उत्पन्न का फल—

स्फुटवाग्व्यसनी रिपुहा साहसिकः शतभिषजि दुर्ग्राह्यः।
भाद्रपदासूद्विग्नः स्त्रीजितधनी पटुरदाता च ॥ १३ ॥

शतभिषा नक्षत्र में उत्पन्न जातक स्पष्ट बोलने वाला, अनेक व्यसन में आसक्त, शत्रुओं को नाश करने वाला, साहसी और कष्ट से किसी के साध्य में आने वाला होता है।

पूर्वाभाद्रपदा में उत्पन्न जातक दुःखित चित्त वाला, स्त्री के वश में रहने वाला, धनी, पण्डित और कृपण होता है ॥ १३ ॥

उत्तराभाद्रपदा और रेवती में उत्पन्न का फल—

वक्ता सुखी प्रजावाञ्जितशत्रुर्धार्मिको द्वितीयासु।
सम्पूर्णाङ्गः सुभगः शूरः शुचिरर्थवान् पौष्णे ॥ १४ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके ऋक्षशीलाध्यायः षोडशः ॥ १६ ॥

उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र में उत्पन्न जातक वक्ता, सुखी, सन्तति से युक्त, शत्रुओं को जीतने वाला और धर्माचरण करने वाला होता है।

रेवती नक्षत्र में उत्पन्न जातक सम्पूर्ण अङ्गों से युक्त, सबों का प्रिय, शूर, पवित्र और धनवान् होता है ॥ १३ ॥

ग्रन्थान्तर में नक्षत्रों का फल—

अश्विन्यामतिबुद्धिवित्तविनयप्रज्ञायशस्वी सुखी
याम्यर्क्षे विकलोऽन्यदारनिरतः क्रूरः कृतघ्नो धनी ।
तेजस्वी बहुलोद्भवः प्रभुसमो मूर्खश्च विद्याधनी
रोहिण्यां पररन्ध्रवित् कृशतनुर्बोधी परस्त्रीरतः ॥
चान्द्रे सौम्यमनोऽटनः कुटिलदृक् कामातुरो रोगवान्
आर्द्रायामधनश्चलोऽधिकबलः क्षुद्रक्रियाशीलवान् ।
मूढात्मा च पुनर्वसौ धनबलख्यातः कविः कामुक-
स्तिष्ये विप्रसुरप्रियः सधनधी राजप्रियो बन्धुमान् ॥
सार्पे गूढमतिः कृतघ्नवचनः कोपी कृताचारवान्
गर्वी पुण्यरतः कलत्रवशगो मानी मघायां धनी ।
फल्गुन्यां चपलः कुकर्मचरितस्त्यागी दृढः कामुको
भोगी चोत्तरफाल्गुनीभजनितो मानी कृतज्ञः सुधीः ॥
हस्तर्क्षे यदि कर्मधर्मनिरतः प्राज्ञोपकर्ता धनी
चित्रायामतिगुप्तशीलनिरतो मानी परस्त्रीरतः ।
स्वात्यां देवमहीसुरप्रियकरो भोगी धनी मन्दधी-
र्गर्वी दारवशो जितारिरधिकक्रोधी विशाखोद्भवः ॥
मैत्रे सुप्रियवाग् धनी सुखरतः पूज्यो यशस्वी विभु-
र्ज्येष्ठायामतिकोपवान् परवधूसक्तो विभुर्धार्मिकः ।
मूलर्क्षे पटुवाग्विधूतकुशलो धूर्तः कृतघ्नो धनी
पूर्वाषाढभवो विचाररचितो मानी सुखी शान्तधीः ॥
मान्यः शान्तगुणः सुखी च धनवान् विश्वर्क्षजः पण्डितः
श्रोणायां द्विजदेवभक्तिनिरतो राजा धनी धर्मवान् ।
आशालुर्वसुमान् वसूद्भुजनितः पीनोरुकण्ठः सुखी
कालज्ञः शततारकोद्भवनरः शान्तोऽल्पभुक् साहसी ॥
पूर्वप्रौष्ठपदि प्रगल्भवचनो धूर्तो भयार्तो मृदु-
श्चाहिर्बुध्न्यजमानवो मृदुगुणस्त्यागी धनी पण्डितः ।
रेवत्यामुरुलाञ्छनोपगततनुः कामातुरः सुन्दरो
मन्त्री पुत्रकलत्रमित्रसहितो जातः स्थिरः श्रीरतः ॥

ग्रन्थान्तर में प्रत्येकनक्षत्रचरणों का फल—

चौरोल्पकर्मा सुभगो दीर्घायुर्दास्रभांघ्रिषु ।

त्यागी धनी क्रूरकर्मा दरिद्रो याम्यभांघ्रिषु ॥
तेजस्वी शास्त्रविच्छूरो बह्वपत्योऽग्निभांघ्रिषु ।
सौभाग्यपीडाभीरुत्वसत्यताः कांघ्रिषु क्रमात् ॥
नृपतिस्तस्करो भोगी सधनान्नो मृगांघ्रिषु ।
व्ययी दरिद्रः स्वल्पायुश्चोर आर्द्रांघ्रिषु क्रमात् ॥
सुखी विद्वान् सरुक् मिथ्यावादी नाऽदितिभांघ्रिषु ।
दीर्घायुस्तस्करो भोगी धनी पुष्यांघ्रिषु क्रमात् ॥
अग्रजः परकार्यश्च रोगी त्वशुभगोऽहिभे ।
असुतः ससुतो रोगी पण्डितः पितृभांघ्रिषु ॥
समर्थो धार्मिको राजा रोगाल्पायुर्भगांघ्रिषु ।
बुधो नृपो जयी धर्मी नाऽर्यमांघ्रिचतुष्टये ॥
शूरो वादी सरुक् श्रीमान् करभे प्रथमांघ्रितः ।
त्वाष्ट्रे चौरश्चित्रकर्ताऽन्यस्त्रीष्टः पीडितोंघ्रिषु ॥
चौरोऽल्पायुर्धर्मवान् भू-पतिः स्वात्यंघ्रिषु क्रमात् ।
नीतिविच्छास्त्रविद्वादी दीर्घायुर्द्वीशभांघ्रिषु ॥

भोगी त्यागी सत्सुहृत्क्ष्मेट् च मूले तोये श्रेष्ठः क्ष्मेट्प्रियो वाद्यनिष्ठः ।
वैश्वे राजा दुःसुहृद्गर्वयुक् स धर्मी विष्णोर्भे चतुःष्वेव सत्स्यात् ॥
शूरश्चौरः सन्मतिर्भोग्यजांघ्रौ राजा चौरः पुत्रदुःखी हि बुध्न्ये ।
ज्ञानी चौरो जयी युद्धे क्लेशभाक् पौष्णभांघ्रिषु ॥

अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो चोर, द्वितीय में थोड़ा काम करने वाला, तृतीय में सबों का प्रिय और चतुर्थ में दीर्घायु होता है।

भरणी के प्रथम चरण में जन्म हो तो त्यागी, द्वितीय में भोगी, तृतीय में पाप-कर्म करने वाला और चतुर्थ में दरिद्र होता है।

कृत्तिका नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो तेजस्वी, द्वितीय में शास्त्र का ज्ञाता, तृतीय में शूर और चतुर्थ में बहुत सन्तान युक्त होता है।

रोहिणी नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो सौभाग्य से युक्त, द्वितीय में पीड़ा युक्त, तृतीय में भय युक्त और चतुर्थ में सत्यवक्ता होता है।

मृगशिरा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो राजा, द्वितीय में चोर, तृतीय में भोगी और चतुर्थ में अन्न, धन से युक्त होता है।

आर्द्रा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो व्यय करने वाला, द्वितीय में हो तो दरिद्र, तृतीय में हो तो अल्पायु और चतुर्थ में हो तो चोर होता है।

पुनर्वसु नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो सुखी, द्वितीय चरण में विद्वान्, तृतीय चरण में रोगी और चतुर्थ चरण में मिथ्यावादी होता है।

पुष्य नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो दीर्घायु, द्वितीय में चोर, तृतीय में भोगी और चतुर्थ में धनी होता है।

अश्लेषा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो सन्तान से रहित, द्वितीय में भृत्य कर्म करने वाला, तृतीय में रोगी और चतुर्थ में दुर्भाग्य होता है।

मघा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो पुत्र से रहित, द्वितीय में पुत्र से युत, तृतीय में रोगी और चतुर्थ में पण्डित होता है।

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो समर्थ, द्वितीय में धार्मिक, तृतीय में राजा वा राजतुल्य और चतुर्थ में अल्पायु होता है।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो पण्डित, द्वितीय में राजा, तृतीय में विजयी और चतुर्थ में धर्मात्मा होता है।

हस्त नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो शूर, द्वितीय में वक्ता, तृतीय में रोगी और चतुर्थ में श्रीमान् होता है।

चित्रा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो चोर, द्वितीय में चित्र बनाने वाला, तृतीय में हो तो परस्त्री के साथ गमन करने वाला और चतुर्थ में हो तो पांव में पीड़ा से युक्त होता है।

स्वाती नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो चोर, द्वितीय में अल्पायु, तृतीय में धर्मात्मा और चतुर्थ में राजा या राजतुल्य होता है।

विशाखा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो नीति को जानने वाला, द्वितीय में शास्त्र को जानने वाला, तृतीय में बोलने वाला और चतुर्थ में दीर्घायु होता है।

मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो भोगी, द्वितीय में त्याग करने वाला, तृतीय में अच्छे मित्र वाला और चतुर्थ में राजा या राजतुल्य होता है।

पूर्वाषाढ नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो श्रेष्ठ विचार वाला, द्वितीय में राजा या राजतुल्य, तृतीय में सबों का प्रिय और चतुर्थ में बाजा बजाने वाला होता है।

उत्तराषाढ नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो राजा या राजा के तुल्य, द्वितीय में दुर्मित्र, तृतीय में अभिमानी और चतुर्थ में धर्मात्मा होता है।

श्रवण नक्षत्र के सब चरणों का फल शुभ है।

पूर्वाभाद्रपदा के प्रथम चरण में जन्म हो तो शूर, द्वितीय में चोर, तृतीय में सन्मति वाला और चतुर्थ में भोगी होता है।

उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो राजा या राजा के तुल्य, द्वितीय में चोर, तृतीय, में पुत्रवान् और चतुर्थ में दुःख से रहित होता है।

रेवती नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो ज्ञानी, द्वितीय में चोर, तृतीय में विजयी और चतुर्थ में युद्ध के स्थान में कष्ट पाने वाला होता है।

जिस ग्रन्थ का यह प्रमाण मैंने लिखा है, उस में अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा शतभिषा इन चार नक्षत्रों का फल नहीं है, अतः मैंने भी नहीं लिखा।

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' नामक भाषाटीकायामृक्षशीलाध्यायः षोडशः।

अथ राशिशीलाध्यायः सप्तदशः

मेष राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

वृत्ताताम्रदृगुष्णशाकलघुभुक् क्षिप्रप्रसादोऽटनः
कामी दुर्बलजानुरस्थिरधनः शूरोऽङ्गनावल्लभः।
सेवाज्ञः कुनखी व्रणाङ्कितशिरा मानी सहोत्थाग्रजः
शक्त्या पाणितलेऽङ्कितोऽतिचपलस्तोये च भीरुः क्रिये ॥१॥

जिस जातक के जन्म काल में मेष राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह गोल और लाल नेत्रों से युक्त, उष्ण वस्तु, शाक तथा थोड़ा खाने वाला, जल्दी प्रसन्न होने वाला, भ्रमण करने वाला, कामी, दुर्बल जानु वाला, अस्थिर धन वाला (कभी धनी कभी धन रहित), शूर, स्त्रियों का प्रिय, भृत्य कर्म को जानने वाला, बुरे नखों से युक्त, व्रण से युक्त मस्तक वाला, अभिमानी, सब भाइयों में श्रेष्ठ, हाथ में शक्ति नामक हथियार के चिह्न वाला, बहुत चञ्चल प्रकृति वाला और जल से भय करने वाला होता है ॥ १ ॥

कान्तः खेलगतिः पृथूरुवदनः पृष्ठास्यपार्श्वोऽङ्कित-
स्त्यागी क्लेशसहः प्रभुः ककुद्वान्कन्याप्रजः श्लेष्मलः।
पूर्वैर्बन्धुधनात्मजैर्विरहितः सौभाग्ययुक्तः क्षमी
दीप्ताग्निः प्रमदाप्रियः स्थिरसुहृन्मध्यान्त्यसौख्यो गवि ॥२॥

जिस जातक के जन्म काल में वृष राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह सुन्दर रूप वाला, क्रीड़ा को जानने वाला, मोटी जांघ तथा मोटा मुख वाला, पीठ, मुख तथा पांजर में किसी चिह्न से युक्त, दाता, क्लेश सहन करने वाला, सब को उपदेश करने वाला, भारी गर्दन वाला, बहुत कन्या पैदा करने वाला, कफ प्रकृति वाला, पहले के बन्धु, धन और पुत्र से वियुक्त, सबों का प्रिय, क्षमा करने वाला, बहुत भोजन करने वाला, स्त्रियों का प्रिय, स्थिर मित्र से युक्त और मध्य तथा अन्त्य अवस्था में सुखी होता है ॥ २ ॥

मिथुन राशि स्थित चन्द्रमा का फल—

स्त्रीलोलः सुरतोपचारकुशलस्ताम्रेक्षणः शास्त्रविद्-
दूतः कुञ्चितमूर्द्धजः पटुमतिर्हास्येङ्गितद्यूतवित्।

चार्वङ्गः प्रियवाक् प्रभक्षणरुचिर्गीतप्रियो नृत्यवित्
क्लीबैर्याति रतिं समुन्नतनसश्चन्द्रे तृतीयर्क्षगे ॥ ३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मिथुन राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह स्त्रियों में चञ्चल, काम शास्त्र में कुशल, लाल नेत्रों से युक्त, शास्त्र का ज्ञाता, दूत कर्म करने वाला, कुटिल केशों से युक्त, चतुर, दूसरे के व्यङ्ग्य को जानने वाला, जुवारी, सुन्दर देह वाला, प्रिय बोलने वाला, बहुत भोजन करने वाला, गीत-वाद्य में प्रेम करने वाला, नाच जानने वाला, हिजरों के साथ प्रेम करने वाला और ऊँची नाक वाला होता है ॥ ३ ॥

कर्क राशि में स्थित चन्द्रमा का फल

आवक्रद्रुतगः समुन्नतकटिः स्त्रीनिर्जितः सत्सुहृद्
दैवज्ञः प्रचुरालयः क्षयधनैः संयुज्यते चन्द्रवत् ।
ह्रस्वः पीनगलः समेति च वशं साम्ना सुहृद्वत्सल-
स्तोयोद्यानरतिः स्ववेश्मसहिते जातः शशाङ्के नरः ॥ ४ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में कर्क राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह कुटिल तथा शीघ्र चलने वाला, ऊँचा जघन वाला, प्रेमवश स्त्रियों के अधीन, अच्छे मित्रों से युक्त, ज्यौतिष शास्त्र को जानने वाला, बहुत घरों से युक्त, चन्द्रमा के ऐसे क्षय धन से युक्त (जिस तरह चन्द्रमा कभी पूर्ण और कभी क्षीण रहते हैं उसी तरह उस का धन कभी क्षीण और कभी पूर्ण होता है), छोटा शरीर वाला, मोटे गले वाला, स्नेह से वश में आने वाला, मित्रों का प्रिय और जलाशय तथा बगीचे में प्रेम रखने वाला होता है ॥ ४ ॥

सिंह राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

तीक्ष्णः स्थूलहनुर्विशालवदनः पिङ्गेक्षणोऽल्पात्मजः
स्त्रीद्वेषी प्रियमांसकाननगः कुप्यत्यकार्ये चिरम् ।
क्षुत्तृष्णोदरदन्तमानसरुजा संपीडितस्त्यागवान्
विक्रान्तः स्थिरधीः सुगर्वितमना मातुर्विधेयोऽर्कभे ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में सिंह राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह तीक्ष्ण स्वभाव से युक्त, मोटी ठोढ़ी वाला, बड़ा मुख वाला, पीले नेत्रों से युक्त, थोड़ी सन्तान वाला, स्त्री से द्वेष करने वाला, मांस, वन, पर्वत इन तीनों में प्रीति करने वाला, अधिक काल तक बेमतलब क्रोध करने वाला, भूख, प्यास, पेट, दांत और अन्तःकरण के रोगों से पीड़ित, दानी, पराक्रमी, स्थिर मति वाला, अभिमानी और माता का भक्त होता है ॥ ५ ॥

कन्या राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

व्रीडामन्थरचारुवीक्षणगतिः स्रस्तांसबाहुः सुखी
श्लक्ष्णः सत्यरतः कलासु निपुणः शास्त्रार्थविद्धार्मिकः।
मेधावी सुरतप्रियः परगृहैर्वित्तैश्च संयुज्यते
कन्यायां परदेशगः प्रियवचाः कन्याप्रजोऽल्पात्मजः ॥ ६ ॥

जिस जातक के जन्म काल में कन्या राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह लज्जा से आलस युक्त, मनोहर दृष्टि वाला तथा लज्जा से मन्द मन्द सुन्दर गमन करने वाला, झुके हुये स्कन्ध तथा भुजा वाला, सुखी, देखने में सुन्दर, सत्य बोलने वाला, सब कलाओं (नृत्य, गीत, वादित्र, पुस्तक, चित्रकर्म) में निपुण, शास्त्रार्थ जानने वाला, धर्मात्मा, बुद्धिमान्, रति में प्रेम रखने वाला, दूसरे के घर और धन से युक्त, पर देश में रहने वाला, कोमल वचन बोलने वाला, बहुत कन्या और थोड़े पुत्र वाला होता है ॥ ६ ॥

तुला राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

देवब्राह्मणसाधुपूजनरतः प्राज्ञः शुचिः स्त्रीजितः
प्रांशुश्चोन्नतनासिकः कृशचलद्गात्रोऽटनोऽर्थान्वितः।
हीनाङ्गः क्रयविक्रयेषु कुशलो देवद्विनामा सरुग्
बन्धूनामुपकारकृद्विरुषितस्त्यक्तस्तु तैः सप्तमे ॥ ७ ॥

जिस जातक के जन्म काल में तुला राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह देवता, ब्राह्मण और साधुओं के पूजन में तत्पर, पण्डित, पवित्र मन वाला, स्त्रियों के वश में रहने वाला, उच्च शरीर वाला, ऊँची नाक वाला, पतला और चञ्चल शरीर वाला, भ्रमण करने वाला, धन से युक्त, किसी अङ्ग से हीन, क्रय और विक्रय में चतुर, देवता के पर्य्यायवाची द्वितीय नाम से युक्त, रोग युक्त, बन्धुओं का उपकारी, तथापि उन से अनादृत और त्यक्त होता है ॥ ७ ॥

वृश्चिक राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

पृथुलनयनवक्षा वृत्तजङ्घोरुजानु-
र्जनकगुरुवियुक्तः शैशवे व्याधितश्च।
नरपतिकुलपूज्यः पिङ्गलः क्रूरचेष्टो
झषकुलिशखगाङ्कश्छन्नपापोऽलिजातः ॥ ८ ॥

जिस जातक के जन्म काल में वृश्चिक राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह बड़े नेत्र और बड़ी छाती वाला, गोला जंघा, ऊरु तथा जानु वाला, पिता और गुरु से रहित, बाल्यावस्था में व्याधि से युक्त, राजा के कुल से पूजित, पीतवर्ण से युक्त, क्रूर

स्वभाव वाला, मछली, वज्र और पक्षी इन से चिह्नित पांव या हाथ वाला और छिप कर पापकर्म करने वाला होता है ॥ ८ ॥

धनु राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

व्यादीर्घास्यशिरोधरः पितृधनस्त्यागी कविर्वीर्यवान्
वक्ता स्थूलरदश्रवाधरनसः कर्मोद्यतः शिल्पवित् ।
कुब्जांसः कुनखी समांसलभुजः प्रागल्भ्यवान् धर्मविद्
बन्धुद्विड् न बलात्समेति च वशं साम्नैकसाध्योऽश्वजः ॥ ९ ॥

जिस जातक के जन्म काल में धनु राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह लम्बे मुख और ग्रीवा से युक्त, पिता के उपार्जित धन से युक्त, दानी, कवि, बलवान्, वक्ता, मोटे दांत वाला, बड़े कान वाला, स्थूल ओष्ठ वाला, मोटी नाक वाला, कार्यों को करने वाला, शिल्प शास्त्र में पण्डित, छोटा स्कन्ध वाला, खराब नख से युक्त, मोटी भुजा वाला, प्रगल्भ, धर्म को जानने वाला, बन्धुओं का शत्रु, हठ से वश में न आने योग्य, केवल शान्ति भाव से वश में आने वाला होता है ॥ ९ ॥

मकर राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

नित्यं लालयति स्वदारतनयान्धर्मध्वजोऽधः कृशः
स्वक्षः क्षामकटिर्गृहीतवचनः सौभाग्ययुक्तोऽलसः ।
शीतालुर्मनुजोऽटनश्च मकरे सत्त्वाधिकः काव्यकृ-
ल्लुब्धोऽगम्यजराङ्गनासु निरतः सन्त्यक्तलज्जोऽघृणः ॥ १० ॥

जिस जातक के जन्म काल में मकर राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह सदा अपनी स्त्री और पुत्रों को प्यार करने वाला, मिथ्या धर्म करने वाला, कमर से नीचे दुर्बल, सुन्दर नेत्रों से युक्त, पतली कमर वाला, बड़ों का उपदेश मानने वाला, सौभाग्य से युक्त, आलसी, सरदी को न सहने वाला, भ्रमण करने वाला, बलवान्, काव्य-कर्ता, लोभी, अगम्य और वृद्धा स्त्री के साथ गमन करने वाला, निर्लज्ज और निर्दयी होता है ॥ १० ॥

कुम्भ राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

करभगलः शिरालुखररोमशदीर्घतनुः
पृथुचरणोरुपृष्ठजघनास्यकटिर्जठरः ।
परवनितार्थपापनिरतः क्षयवृद्धियुतः
प्रियकुसुमानुलेपनसुहृद्घटजोऽध्वसहः ॥ ११ ॥

जिस जातक के जन्म काल में कुम्भ राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह ऊँट के सदृश गले वाला, सम्पूर्ण शरीर में प्रकट नस वाला, रूखे तथा अधिक रोमयुक्त लम्बे शरीर

वाला, स्थूल पांव, पांव के जोड़, पीठ, जंघा, मुख, कमर और पेट वाला, पराये की स्त्री, पराये का धन और पाप कर्म में आसक्त रहने वाला, किसी समय हानि और किसी समय वृद्धि से युत, फूल, चन्दन और मित्र से प्यार करने वाला, भ्रमण शील होता है ॥ ११ ॥

मीन राशि में स्थित चन्द्रमा का फल—

जलपरधनभोक्ता दारवासोऽनुरक्तः
समरुचिरशरीरस्तुङ्गनासो बृहत्कः ।
अभिभवति सपत्नान्स्त्रीजितश्चारुदृष्टि-
र्द्युतिनिधिधनभोगी पण्डितश्चान्त्यराशौ ॥ १२ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मीन राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह जल से निकले हुए धन (मोती···आदि) और दूसरे के धन को भोग करने वाला, स्त्री, वस्त्र इन दोनों में प्रीति करने वाला, समान तथा सुन्दर शरीर वाला, ऊँची नाक वाला, बड़ा शिर वाला, शत्रुओं का पराजय करने वाला, स्त्री के वश में रहने वाला, सुन्दर नेत्रों से युक्त, कान्ति से युक्त, किसी के गड़े हुए धन को भोग करने वाला और पण्डित होता है ॥ १२ ॥

पूर्वोक्त राशिफलों में तारतम्य—

बलवति राशौ तदधिपतौ च स्वबलयुतः स्याद्यदि तुहिनांशुः ।
कथितफलानामविकलदाता शशिवदतोऽन्येऽप्यनुपरिचिन्त्याः॥ १३ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके चन्द्रराशिशीलं नाम
सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

जन्म काल में जिस राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह राशि और उसका स्वामी बली हो तथा चन्द्रमा पूर्णबली हो तो पूर्वोक्त मेषादि द्वादश राशियों का फल सम्पूर्ण होता है। अगर चन्द्राधिष्ठित राशि, उसका स्वामी और चन्द्रमा इन तीनों में दो बलवान् हों तो मध्यम रूप से फल होता है। उन में एक ही बलवान् हो तो हीन रूप से फल कहना चाहिए। अगर कोई बलवान् न हो तो उक्त फल कुछ नहीं होता है। इसी तरह सूर्य और मङ्गलादि पञ्चग्रहों का भी फल विचार करना चाहिए॥१३॥

अन्य ग्रन्थोक्त मेषादि राशियों का फल—

मेषस्थे यदि शीतगौ च लघुभुक् कामी सहोत्थाग्रजो
दाता कान्तयशोधनोरुचरणः कन्याप्रजो गोगते ।
दीर्घायुः सुरतोपचारकुशलो हास्यप्रियो युग्मके
कामासक्तमनोऽटनः सुवचनश्चन्द्रे कुलीरस्थिते ॥

सिंहस्थे पृथुलोचनः सुवदनो गम्भीरदृष्टिः सुखी
कन्यास्थे विषयातुरो ललितवाग्विद्याधिको भोगवान्।
तौलिस्थोऽमरविप्रभक्तिनिरतो बन्धुप्रियो वित्तवान्
कीटस्थे शशिनि प्रमत्तहृदयो रोगी च लुब्धोऽटनः॥
सौम्याङ्गो रुचिरेक्षणः कुलवरः शिल्पी धनुःस्थे विधौ
गीतज्ञः पृथुमस्तको मृगगते शास्त्री परस्त्रीरतः।
कुम्भस्थे गतशीलवान् बुधजनद्वेषी च विद्याधिको
मीनस्थे मृगलाञ्छने वरतनुर्विद्वान् बहुस्त्रीपतिः॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां राशिशीलाध्यायः सप्तदशः।

अथ ग्रहराशिशीलाध्यायोऽष्टादशः

इस में पहले मेष और वृष राशि में स्थित सूर्य का फल—

प्रथितश्चतुरोऽटनोऽल्पवित्तः
क्रियगे त्वायुधभृद्वितुङ्गभागे।
गवि वस्त्रसुगन्धपण्यजीवी
वनिताद्विट् कुशलश्च गेयवाद्ये॥ १॥

जस जातक के जन्म काल में उच्चांश को छोड़ कर मेष राशि में सूर्य बैठा हो वह विख्यात, चतुर, भ्रमण करने वाला, थोड़े धन से युक्त और शस्त्र धारण करने वाला होता है।

अगर सूर्य उच्चांश में हो तो उक्त खराब फल के विरुद्ध फल और उक्त अच्छा फल सब वैसे ही होता है। अर्थात् विख्यात, चतुर, भ्रमण नहीं करने वाला, बहुत धन वाला, और शस्त्र धारण नहीं करने वाला होता है।

अगर वृष राशि में सूर्य हो तो वस्त्र, सुगन्धिद्रव्य और क्रय, विक्रय से जीविका करने वाला, स्त्रियों से शत्रुता रखने वाला और गाने बजाने में कुशल होता है॥ १॥

मिथुन, कर्क, सिंह और कन्या राशि में स्थित सूर्य का फल—

विद्याज्यौतिषवित्तवान्मिथुनगे भानौ कुलीरे स्थिते
तीक्ष्णोऽस्वः परकार्यकृच्छ्रमपथक्लेशैश्च संयुज्यते।
सिंहस्थे वनशैलगोकुलरतिर्वीर्यान्वितो ज्ञः पुमान्
कन्यास्थे लिपिलेख्यकाव्यगणितज्ञानान्वितः स्त्रीवपुः॥ २॥

जिस जातक के जन्म काल में मिथुन में सूर्य बैठा हो वह ज्यौतिष शास्त्र के अतिरिक्त विद्या और ज्यौतिष शास्त्र का भी ज्ञाता तथा धनवान् होता है।

यदि कर्क राशि में स्थित सूर्य हो तो तीक्ष्ण स्वभाव वाला, दरिद्र, दूसरे के कार्यों को करने वाला, अनेक कार्य और रास्ता चलने से जो क्लेश उस से युक्त होता है।

यदि सिंह राशि में सूर्य बैठा हो तो वन, पर्वत और गोकुल (गोठ) में प्रीति करने वाला, बलवान् और मूर्ख होता है।

यदि कन्या राशि में सूर्य बैठा हो तो लेख का कार्य करने वाला, चित्र बनाने वाला, काव्य जानने वाला और गणितज्ञ होता है ॥ २ ॥

तुला, वृश्चिक, धन और मकर राशि में स्थित सूर्य का फल—

जातस्तौलिनि शौण्डिकोऽध्वनिरतो हैरण्यको नीचकृ-
त्क्रूरः साहसिको विषाजितधनः शस्त्रान्तगोऽलिस्थिते।
सत्पूज्यो धनवान् धनुर्द्धरगते तीक्ष्णो भिषक्कारुको
नीचोऽज्ञः कुवणिङ् मृगेल्पधनवाँल्लुब्धोऽन्यभाग्ये रतः ॥ ३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में तुला राशि में सूर्य बैठा हो वह मद्यविक्रेता अथवा मद्य बनाने वाला, भ्रमण करने वाला, सोने के काम करने वाला और नीच कर्म करने वाला होता है।

यदि वृश्चिक राशि में सूर्य बैठा हो तो क्रूरस्वभाव युक्त, साहसी, विष के सम्बन्ध से धन कमाने वाला अथवा व्यर्थ धन कमाने वाला और शस्त्र चलाने में निपुण होता है।

यदि धन राशि में सूर्य बैठा हो तो सज्जनों से पूजित, धनवान्, तीक्ष्ण स्वभाव वाला, आयुर्वेद शास्त्र का ज्ञाता और कारुक (शिल्प विद्या का ज्ञाता) होता है।

यदि मकर राशि में सूर्य बैठा हो तो नीच कर्म करने वाला, मूर्ख, निन्द्य व्यापार करने वाला, थोड़े धन वाला, लोभी और दूसरे के भाग्य से अपनी जीवन-यात्रा चलाने वाला होता है ॥ ३ ॥

कुम्भ और मीन राशि में स्थित सूर्य का फल—

नीचो घटे तनयभाग्यपरिच्युतोऽस्व-
स्तोयोत्थपण्यविभवो वनिताऽऽदृतोऽन्त्ये।
नक्षत्रमानवतनुप्रतिमे विभागे
लक्ष्मादिशेत्तुहिनरश्मिदिनेशयुक्ते ॥ ४ ॥

जिस जातक के जन्म काल में कुम्भ राशि में सूर्य बैठा हो वह नीच कर्म करने वाला, पुत्र और भाग्य से हीन तथा निर्धन होता है।

यदि मीन राशि में स्थित सूर्य हो तो जल से उत्पन्न वस्तुओं के क्रय विक्रय से धन युक्त, स्त्रियों से पूजित होता है।

जिस जातकके जन्म काल में सूर्य चन्द्रमा दोनों एक राशि में बैठे हों वह राशि कालपुरुष के जिस अङ्ग में पड़े जातक के उस अङ्ग में मशक, तिल········इत्यादि का चिह्न कहना चाहिए।

यह द्वादश राशि में स्थित सूर्य का फल हुआ। चन्द्र का फल पूर्व में कह चुके हैं॥

अब मङ्गल का फल—

उसमें पहले मेष, वृश्चिक, वृष और तुला राशि में स्थित मङ्गल का फल—

नरपतिसत्कृतोऽटनश्चमूपवणिक्सधनान्
क्षततनुश्चौरभूरिविषयांश्च कुजः स्वगृहे ।
युवतिजितान्सुहृत्सु विषमान्परदाररतान्
कुहकसुवेषभीरुपरुषान् सितभे जनयेत् ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल स्वगृह (मेष अथवा वृश्चिक) में हो तो वह राजाओं से पूजित, भ्रमण करने वाला, सेनापति, व्यापार करने वाला और धन से युक्त होता है।

यदि शुक्र के घर (वृष अथवा तुला) में स्थित हो तो स्त्री के वश में रहने वाला, मित्रों से विरुद्ध रहने वाला, दूसरे की स्त्रियों में गमन करने वाला, इन्द्रजाल विद्या जानने वाला, अनेक अलङ्करणों से शोभित शरीर वाला, भय युक्त और कठोर होता है ॥ ५ ॥

मिथुन, कन्या और कर्क राशि में स्थित मङ्गल का फल—

बौधेऽसहस्तनयवान् विसुहृत्कृतज्ञो
गान्धर्वयुद्धकुशलः कृपणोऽभयोऽर्थी ।
चान्द्रेऽर्थवान् सलिलयानसमर्जितस्वः
प्राज्ञश्च भूमितनये विकलः खलश्च ॥ ६ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल बुध की राशि (मिथुन अथवा कन्या) में स्थित हो वह तेजस्वी, पुत्रवान्, मित्र से हीन, दूसरे से किये हुये उपकार को जानने वाला, गान विद्या और युद्ध में कुशल, कृपण, भय रहित, याचक होता है।

यदि कर्क राशि में मङ्गल बैठा हो तो धनवान्, नौका से धन उपार्जन करने वाला, पण्डित, किसी अङ्ग से हीन और दुष्ट होता है ॥ ६ ॥

सिंह, धन, मीन, मकर, और कुम्भ में स्थितमङ्गल का फल—

निःस्वः क्लेशसहो वनान्तरचरः सिंहेऽल्पदारात्मजो
जैवे नैकरिपुर्नरेन्द्रसचिवः ख्यातोऽभयोऽल्पात्मजः ।

दुःखार्तो विधनोऽटनोऽनृतरतस्तीक्ष्णश्च कुम्भस्थिते
भौमे भूरिधनात्मजो मृगगते भूपोऽथवा तत्समः ॥ ७ ॥

जिस जातक के जन्म काल में सिंह राशि में मङ्गल बैठा हो वह निर्धन, क्लेशों को सहने वाला, कारणवश वन के मध्य में घूमने वाला, थोड़ी स्त्री और थोड़े सन्तान वाला होता है।

यदि बृहस्पति के घर (धन या मीन) में मङ्गल बैठा हो तो बहुत शत्रुओं से युक्त, राजा का मन्त्री, प्रसिद्ध, निर्भय और थोड़े सन्तान वाला होता है।

यदि कुम्भ राशि में मङ्गल बैठा हो तो दुःखों से पीड़ित, धन से हीन, भ्रमण करने वाला, झूठ बोलने वाला और तीक्ष्ण स्वभाव वाला होता है।

यदि मकर राशि में मङ्गल बैठा हो तो बहुत धन और सन्तान से युक्त, राजा के समान होता है ॥ ७ ॥

यह द्वादश राशि में स्थित मङ्गल का फल हुआ।

अब बुध का फल—

उस में मेष, वृश्चिक, वृष और तुला में स्थित बुध का फल—

द्यूतर्णपानरतनास्तिकचौरनिःस्वाः
कुस्त्रीककूटकृदसत्यरताः कुजर्क्षे।
आचार्यभूरिसुतदारधनार्जनेष्टाः
शौक्रे वदान्यगुरुभक्तिरताश्च सौम्ये ॥ ८ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल के गृह (मेष अथवा वृश्चिक) में स्थित बुध हो वह जुवारी, ऋणी, मद्यादि पान करने वाला, नास्तिक, चोर, दरिद्र, दूषित स्त्री से युक्त, दाम्भिक, असत्य बोलने वाला होता है।

यदि शुक्र की राशि (वृष अथवा तुला) में बुध बैठा हो तो लोगों को उपदेश करने वाला, बहुत पुत्र और स्त्री वाला, धन के उपार्जन में तत्पर, दाता और गुरुजनों में भक्ति करने वाला होता है ॥ ८ ॥

मिथुन और कर्क राशि में स्थित बुध का फल—

विकत्थनः शास्त्रकलाविदग्धः प्रियंवदः सौख्यरतस्तृतीये।
जलार्जितस्वः स्वजनस्य शत्रुः शशाङ्कजे शीतकरर्क्षयुक्ते ॥ ९ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में मिथुन राशि में बुध बैठा हो तो वह असत्य बोलने वाला, शास्त्र (ज्यौतिष आदि) और कला (गीत-वाद्य आदि) में चतुर, प्रिय बोलने वाला और सुखी होता है।

यदि चन्द्रमा के घर (कर्क) में बुध बैठा हो तो जल के सम्बन्ध से धन कमाने वाला और अपने बन्धुजनों का शत्रु होता है ॥ ९ ॥

सिंह और कन्या राशि में स्थित बुध का फल—

स्त्रीद्वेष्यो विधनसुखात्मजोऽटनोज्ञः
स्त्रीलोलः स्वपरिभवोऽर्कराशिगे ज्ञे।
त्यागी ज्ञः प्रचुरगुणः सुखी क्षमावान्
युक्तिज्ञो विगतभयश्च षष्ठराशौ ॥ १० ॥

जिस जातक के जन्म काल में रवि की राशि (सिंह) में बुध बैठा हो वह स्त्री का अप्रिय, निर्धन, सुख से हीन, सन्तान से हीन, भ्रमण करने वाला, मूर्ख, स्वयं स्त्रियों का अभिलाषा करने वाला और स्वजनों से तिरस्कृत होता है।

यदि षष्ठ राशि (कन्या) में बुध बैठा हो तो दाता, पण्डित, बहुत गुणों से युक्त, सुखी, क्षमा करने वाला, स्वकार्यादि साधन के लिये अनेक युक्तियों को जानने वाला और निर्भय होता है ॥ १० ॥

मकर, कुम्भ, धन और मीन में स्थित बुध का फल—

परकर्मकृदस्वशिल्पबुद्धि-
र्ऋणवान्विष्टिकरो बुधेऽर्कजर्क्षे।
नृपसत्कृतपण्डिताप्तवाक्यो
नवमेऽन्त्ये जितसेवकोऽन्त्यशिल्पः ॥ ११ ॥

जिस जातक के जन्म काल में शनैश्चर के गृह (मकर या कुम्भ) में बुध बैठा हो वह दूसरे का काम करने वाला, निर्धन, चित्र बनाने की बुद्धि वाला, ऋणी और गुरुजनों की आज्ञा का पालन करने वाला होता है।

यदि धन राशि में बुध बैठा हो तो वह जातक राजाओं से पूजित, पण्डित और यथार्थवक्ता होता है।

यदि मीन राशि में बुध बैठा हो तो वह जातक भृत्यों को वश में रखने वाला, वृद्धावस्था में शिल्प विद्या का ज्ञान प्राप्त करने वाला होता है ॥ ११ ॥

यह द्वादश राशि में स्थित बुध का फल हुआ।

अब गुरु का फल—

उस में मेष, वृश्चिक, वृष, तुला, मिथुन और कन्या में स्थित बृहस्पति का फल—

सेनानीर्बहुवित्तदारतनयो दाता सुभृत्यः क्षमी
तेजोदारगुणान्वितः सुरगुरौ ख्यातः पुमान् कौजभे।
कल्पाङ्गः ससुखार्थमित्रतनयस्त्यागी प्रियः शौक्रभे
बौधे भूरिपरिच्छदात्मजसुहृत्साचिव्ययुक्तः सुखी ॥ १२ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल के घर (मेष अथवा वृश्चिक) में बृहस्पति

बैठा हो वह सेनापति, बहुत धन, स्त्री और सन्तान से युक्त, दानी, सुन्दर भृत्यों से युक्त, क्षमा करने वाला, तेजस्वी, उदार गुण से युक्त और प्रसिद्ध होता है।

यदि शुक्र की राशि (वृष, तुला) में स्थित हो तो स्वस्थ शरीर वाला, सुख, धन, मित्र और पुत्रों से संयुक्त, दाता तथा सबों का प्रिय होता है।

यदि बुध के घर (मिथुन अथवा कन्या) में स्थित बृहस्पति हो तो बहुत वस्त्रादि गृहसामग्री, बहुत सन्तान और बहुत मित्रों से युक्त, मन्त्री तथा सुखी होता है॥

कर्क, सिंह, धन, मीन, कुम्भ और मकर राशियों में स्थित बृहस्पति का फल—

चान्द्रे रत्नसुतस्वदारविभवप्रज्ञासुखैरन्वितः
सिंहे स्याद् बलनायकः सुरगुरौ प्रोक्तं च यच्चन्द्रभे।
स्वर्क्षे माण्डलिको नरेन्द्रसचिवः सेनापतिर्वा धनी
कुम्भे कर्कटवत्फलानि मकरे नीचोऽल्पवित्तोऽसुखी॥ १३॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्र राशि (कर्क) में बृहस्पति बैठा हो वह रत्न, पुत्र, धन, स्त्री, अनेक तरह के विभव, उत्कृष्ट बुद्धि और सुख इन सब से युक्त होता है।

जिस के सिंह राशि में बृहस्पति बैठा हो वह सेनापति और पूर्वोक्त कर्कराशि में स्थित बृहस्पति के सब फलों से युक्त होता है।

यदि अपनी राशि (धन अथवा मीन) में बृहस्पति बैठा हो तो वह जातक मण्डलेश्वर, राजा का मन्त्री, सेनापति अथवा धनवान् होता है।

जिस के कुम्भ राशि में बृहस्पति बैठा हो वह जातक भी कर्कराशिस्थ बृहस्पति के सब फलों से युक्त होता है।

यदि मकर राशि में बृहस्पति बैठा हो तो वह जातक नीचकर्म करने वाला, अल्प धन वाला और सुखहीन होता है॥ १३॥

यह मेषादि द्वादश राशियों में स्थित बृहस्पति का फल हुआ।

अब शुक्र का फल—

उस में पहले मेष, वृश्चिक, वृष और तुला राशि में स्थित शुक्र का फल—

परयुवतिरतस्तदर्थवादैर्हृतविभवः कुलपांसनः कुजर्क्षे।
स्वबलमतिधनो नरेन्द्रपूज्यः स्वजनविभुः प्रथितोऽभयः सिते स्वे॥१४॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल के गृह (मेष अथवा वृश्चिक) में शुक्र बैठा हो वह परस्त्रीगामी, उन्हीं परस्त्रियों के सम्बन्ध में व्यय करने से निर्धन और कुल में कलंक लगाने वाला होता है।

जिस जातक के जन्म काल में अपने घर (वृष अथवा तुला) में शुक्र बैठा हो वह अपने बल और बुद्धि से धन पैदा करने वाला, राजाओं से पूजित, अपने स्वजनों में श्रेष्ठ, विख्यात और भयरहित होता है॥ १४॥

मिथुन, कन्या, मकर और कुम्भ राशियों में स्थित शुक्र का फल—

नृपकृत्यकरोऽर्थवान् कलाविन्मिथुने षष्ठगते च नीचकर्म्मा ।
रविजर्क्षगतेऽमरारिपूज्ये सुभगः स्त्रीविजितो रतः कुनार्याम् ॥ १५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मिथुन राशि में शुक्र बैठा हो वह राजकार्य कर्ता, धनवान् और कलाओं (गीत, वाद्य आदि) का ज्ञाता होता है ।

जिस के कन्या राशि में शुक्र बैठा हो वह जातक अतिशय नीच कर्म करने वाला होता है ।

जिस के जन्म काल में शनि के राशि (मकर अथवा कुम्भ) में शुक्र बैठा हो वह सर्वों का प्रिय, स्त्री के वश में रहने वाला और दूषित स्त्रियों में आसक्त होता है ॥१५॥

कर्क, सिंह, धन और मीन राशि में स्थित शुक्र का फल—

द्विभार्योऽर्थी भीरुः प्रबलमदशोकश्च शशिभे
हरौ योषाप्तार्थः प्रवरयुवतिर्मन्दतनयः ।
गुणैः पूज्यः सस्वस्तुरगसहिते दानवगुरौ
झषे विद्वानाढ्यो नृपजनितपूजोऽतिसुभगः ॥ १६ ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा की राशि (कर्क) में शुक्र बैठा हो वह दो स्त्रियों से युक्त, याचक, भययुक्त, प्रबल मद (अभिमानी) और कारणवश सदा शोक से युक्त रहता है ।

जिस के सिंह राशि में शुक्र बैठा हो वह स्त्री के सम्बन्ध से धन पाने वाला, उत्तम स्त्री से युक्त और थोड़ी सन्तान वाला होता है ।

यदि धन राशि में शुक्र बैठा हो तो वह अपने उत्तम गुणों से पूजित और धनी होता है ।

जिस के मीन राशि में शुक्र बैठा हो वह विद्वान्, धनवान्, राजाओं के द्वारा पूजित और सर्वों का प्रिय होता है ॥ १६ ॥

यह मेषादि द्वादश राशियों में स्थित शुक्र का फल हुआ ।

अब शनि का फल—

उस में पहले मेष, वृश्चिक, मिथुन और कन्या राशि में स्थित शनि का फल—

मूर्खोऽटनः कपटवान्विसुहृद्यमेऽजे
कीटे तु बन्धवधभाक् चपलोऽघृणश्च ।
निर्ह्रीसुखार्थतनयः स्खलितश्च लेख्ये
रक्षापतिर्भवति मुख्यपतिश्च बौधे ॥ १७ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मेष राशि में शनैश्चर बैठा हो वह भ्रमण करने वाला, छली, मित्र से रहित होता है ।

जिस के वृश्चिक राशि में शनि बैठा हो वह कालवश बन्धन और वध से युक्त, चञ्चल तथा निर्दयी होता है।

जिस के जन्म काल में बृहस्पति बुध की राशि (मिथुन अथवा कन्या) में बैठा हो वह लज्जा, सुख, धन और सन्तान इन सबों से हीन, चित्र बनाने की इच्छा वाला किन्तु उस में मूर्ख, रत्तक तथा प्रधान होता है ॥ १७ ॥

वृष, तुला, कर्क और सिंह राशि में स्थित शनि का फल—

वर्ज्यस्त्रीष्टो न बहुविभवो भूरिभार्यो वृषस्थे
ख्यातः स्वोच्चे गणपुरबलग्रामपूज्योऽर्थवांश्च ।
कर्किण्यस्वो विकलदशनो मातृहीनोऽसुतोऽज्ञः
सिंहेऽनार्यो विसुखतनयो विष्टिकृत्सूर्यपुत्रे ॥ १८ ॥

जिस जातक के जन्म काल में वृष राशि में शनि बैठा हो वह अगम्य स्त्रियों में प्रीति करने वाला, थोड़े विभव वाला और बहुत विवाहिता स्त्रियों से युक्त होता है।

जिस के जन्म काल में शनि अपने उच्च (तुला) में स्थित हो वह जातक प्रसिद्ध, अपने ग्राम के बहुत लोगों से, अन्य ग्राम से और बल (सेनाओं) से पूजित तथा धनवान् होता है।

जिस के शनैश्चर कर्क में स्थित हो वह निर्धन, थोड़े दाँतों से युक्त, माता और पुत्र से वियुक्त होता है।

जिस के सिंह राशि में शनैश्चर बैठा हो वह मूर्ख, सुख और पुत्र से हीन तथा दूसरे का भार ढोने वाला होता है ॥ १८ ॥

धन, मीन, मकर और कुम्भ राशियों में स्थित शनि का फल—

स्वन्तः प्रत्ययितो नरेन्द्रभवने सत्पुत्रजायाधनो
जीवक्षेत्रगतेऽर्कजे पुरबलग्रामाग्रनेताऽथवा ।
अन्यस्त्रीधनसंवृतः पुरबलग्रामाग्रणीर्मन्ददृक्
स्वक्षेत्रे मलिनः स्थिरार्थविभवो भोक्ता च जातः पुमान् ॥१९॥

जिस जातक के जन्म काल में बृहस्पति के घर (धन अथवा मीन) में शनैश्चर बैठा हो तो वह स्वन्तः (सुख पूर्वक मृत्यु पाने वाला अथवा वृद्धावस्था में सुख पाने वाला), राजाओं के घर में विश्वासपात्र, सुन्दर पुत्र, सुन्दरी स्त्री और सुन्दर धन वाला अथवा नगर, सेना, ग्राम इन तीनों का श्रेष्ठ नायक होता है।

जिस के स्वक्षेत्र (मकर अथवा कुम्भ) में शनैश्चर बैठा हो तो वह परस्त्री से युक्त, दूसरे के धन से युक्त, नगर, सेना, ग्राम इनमें अग्रगण्य, मन्द दृष्टि से युक्त, मलिन, स्थिर धन और विभव वाला तथा भोगी होता है ॥ १९ ॥

मेषादि लग्न फल का निर्णय—

शिशिरकरसमागमेक्षणानां सदृशफलं प्रवदन्ति लग्नजातम् ।
फलमधिकमिदं यदत्र भावाद्भवनभनाथगुणैर्विचिन्तनीयाः ॥ २० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके ग्रहराशिशीलाध्यायोऽष्टादशः ।१८।

जन्म काल में मेषादि द्वादश राशियों में स्थित चन्द्रमा का जो फल (वृत्ताताम्रदृगित्यादि से) कहा गया है, और मेषादि द्वादश राशियों में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों की दृष्टि के वश से जो फल (चन्द्रे भूपबुधौ नृपोपमेत्यादि से) कहा जायगा वही फल मेषादि द्वादश राशियों में स्थित लग्न का और मेषादि राशियों में स्थित लग्न पर कुजादि की दृष्टि का फल जानना चाहिए। अर्थात् मेष राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही मेष लग्न का फल, वृष राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही वृष लग्न का फल, मिथुन राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही मिथुन लग्न का फल, कर्क राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही कर्क लग्न का फल, सिंह राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही सिंह लग्न का फल, कन्या राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही कन्या लग्न का फल, तुला राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही तुला लग्न का फल, वृश्चिक राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही वृश्चिक लग्न का फल, धनु राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही धनु लग्न का फल, मकर राशि में स्थित चन्द्रमा जो फल वही मकर लग्न का फल, कुम्भ राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही कुम्भ लग्न का फल, मीन राशि में स्थित चन्द्रमा का जो फल वही मीन लग्न का फल जानना चाहिए।

एवं मेष राशि में स्थित चन्द्रमा पर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही मेष लग्न पर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, वृष राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही वृष लग्न के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, मिथुन राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही मिथुन लग्न के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, कर्क राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही कर्क लग्न के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, सिंह राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही सिंह लग्न का दृष्टि फल, कन्या राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही कन्या लग्न पर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, तुला राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही तुला लग्न के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, वृश्चिक राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही वृश्चिक लग्न पर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, धन राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही धन लग्न पर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, मकर राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही मकर लग्न के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल,

कुम्भ राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही कुम्भ लग्न पर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल, मीन राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टि फल वही मीन लग्न के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टि फल जानना चाहिए।

चन्द्र राशि फल से लग्नादि द्वादश भावों के फल में यही विशेषता है कि भाव और भाव के स्वामी के बलानुसार सब फल उत्तम, मध्यम और अधम रूप से होते हैं। जैसे भाव और भाव के स्वामी बलवान् हो तो पूर्वोक्त फल उत्तम रूप से घटते हैं, उन दोनों में एक बली हो तो उक्त फल मध्यम रूप से घटते हैं। दोनों में कोई भी बली नहीं हो तो उक्त फल अधम रूप से घटते हैं। अर्थात् जिस तरह चन्द्र राशि का फल चन्द्राधिष्ठित राशि उस के स्वामी और चन्द्रमा इन तीनों के बल के वश 'बलवति राशौ तदधिपतौ च' इत्यादि श्लोक से उत्तमादि कहा गया है उसी तरह मेषादि द्वादश लग्नों का फल भी भाव और भावस्वामी के बल वश कहना चाहिए। अथवा मेषादि राशिस्थ चन्द्रमा का जो फल वही क्रम से मेषादि लग्न का फल होता है। परन्तु इस से विशेष मेषादि भावों का फल यह है कि भाव और भावस्वामी बली हो तो उन उन भावों से विचारणीय विषय का उत्तम, एक बली हो तो मध्यम और कोई नहीं बली हो तो अधम कहना चाहिए। जैसे लग्न से शरीर का विचार किया जाता है। अतः लग्न और लग्नस्वामी दोनों बली हों तो शरीर पुष्ट, एक बली हो तो समान, कोई नहीं बली हो तो दुर्बल शरीर कहना चाहिए। इसी तरह सब भावों पर से विचारणीय विषय का उत्तमादि फल जानना चाहिए। परन्तु षष्ठ, अष्टम और द्वादश भावों का फल विपरीत होता है, जैसे षष्ठ स्थान से शत्रु का विचार किया जाता है अतः षष्ठ स्थान और षष्ठेश दोनों निर्बल हों तो शत्रुओं का नाश, एक बली हो तो मध्यमरूप, दोनों बली हों तो शत्रुओं की वृद्धि कहनी चाहिए। अतः सिद्ध हुआ कि भाव और भावस्वामी दोनों बली हों तो खराब फल, एक बली हो तो अधम फल, दोनों बली हों तो मध्यम फल देते हैं। इसी तरह अष्टम और द्वादश में भी जानना चाहिये॥ २०॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां ग्रहराशिशीलाध्यायोऽष्टादशः॥

अथ दृष्टिफलाध्याय एकोनविंशः

मेषादि चार राशियों में स्थित चन्द्रमा पर भौमादि ग्रहों का दृष्टिफल—

चन्द्रे भूपबुधौ नृपोपमगुणी स्तेनोऽधनश्चाजगे
निस्वः स्तेननृमान्यभूपधनिनः प्रेष्यः कुजाद्यैर्गवि।
नृस्थेऽयोव्यवहारिपार्थिवबुधाभीस्तन्तुवायोऽधनः
स्वर्क्षे योद्धृकविज्ञभूमिपतयोऽयोजीविदृग्रोगिणौ॥ १॥

जिस जातक के जन्म काल में मेष राशि में स्थित चन्द्रमा पर मङ्गल की दृष्टि हो तो वह राजा, बुध की दृष्टि हो तो पण्डित, बृहस्पति की दृष्टि हो तो राजा के समान, शुक्र की दृष्टि हो तो गुणवान्, शनैश्चर की दृष्टि हो तो स्तेन (चोर) और सूर्य की दृष्टि हो तो निर्धन होता है।

बृष राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर मङ्गल की दृष्टि हो तो निर्धन, बुध की दृष्टि हो तो चोर, बृहस्पति की दृष्टि हो तो लोगों में माननीय, शुक्र की दृष्टि हो तो राजा, शनैश्चर की दृष्टि हो तो धनवान् और सूर्य की दृष्टि हो तो प्रेष्य (दास) होता है।

मिथुन राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर मङ्गल की दृष्टि हो तो लोहा-सम्बन्धि चीजों का व्यापार करने वाला, बुध की दृष्टि हो तो राजा, बृहस्पति की दृष्टि हो तो पण्डित, शुक्र की दृष्टि हो तो निर्भय, शनैश्चर की दृष्टि हो तो तन्तुवाय (कपड़ा बुनने वाला) और सूर्य की दृष्टि हो तो निर्धन होता है।

कर्क राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर मङ्गल की दृष्टि हो तो युद्ध करने वाला, बुध की दृष्टि हो तो काव्यकर्ता, बृहस्पति की दृष्टि हो तो पण्डित, शुक्र की दृष्टि हो तो राजा, शनि की दृष्टि हो तो लोहा-सम्बन्धि व्यापार करने वाला और सूर्य की दृष्टि हो तो नेत्ररोगी होता है ॥ १ ॥

सिंहादि चार राशियों में स्थित चन्द्रमा पर बुधादि के दृष्टिफल—

ज्योतिर्ज्ञाढ्यनरेन्द्रनापितनृपक्ष्मेशा बुधाद्यैर्हरौ
तद्वद्भूपचमूपनैपुणयुताः षष्ठेऽशुभे स्त्र्याश्रयः ।
जूके भूपसुवर्णकारवणिजः शेषेक्षिते नैकृती
कीटे युग्मपिता नतश्च रजको व्यङ्गोऽधनो भूपतिः ॥ २ ॥

जिस जातक के जन्म काल में सिंह राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो वह ज्यौतिष शास्त्र का ज्ञाता, बृहस्पति की दृष्टि हो तो धनवान्, शुक्र की दृष्टि हो तो राजा, शनि की दृष्टि हो तो हजाम अथवा उसका काम करने वाला, रवि की दृष्टि हो तो राजा होता है।

कन्या राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो राजा, बृहस्पति की दृष्टि हो तो सेनापति, शुक्र की दृष्टि हो तो सब कामों में निपुण, अशुभ ग्रह (शनैश्चर, सूर्य, मङ्गल) की दृष्टि हो तो स्त्री के आश्रय में रह कर जीवन निर्वाह करने वाला होता है।

तुला राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो राजा, बृहस्पति की दृष्टि हो तो सुवर्ण-सम्बन्धी काम करने वाला, शुक्र की दृष्टि हो तो बनियाँ और शेषग्रह (शनैश्चर, सूर्य, मङ्गल) की दृष्टि हो तो जीवों का नाश करने वाला होता है।

बृश्चिक राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो दो सन्तानों का पिता अथवा दो पिता वाला (एक के वीर्य से जन्म और दूसरे का दत्तक पुत्र), बृहस्पति की दृष्टि हो तो नम्र स्वभाव वाला, शुक्र की दृष्टि हो तो धोबी अथवा

धोबी का काम करने वाला, शनि की दृष्टि हो तो किसी अंग से हीन, सूर्य की दृष्टि हो तो निर्धन और मङ्गल की दृष्टि हो तो राजा होता है ॥ २ ॥

धन आदि चार राशियों में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुधादि की दृष्टि का फल—

ज्ञात्युर्वीशजनाश्रयश्च तुरगे पापैः सदम्भः शठ-
श्चात्युर्वीशनरेन्द्रपण्डितधनी द्रव्योनभूपो मृगे ।
भूपो भूपसमोऽन्यदारनिरतः शेषैश्च कुम्भस्थिते
हास्यज्ञो नृपतिर्बुधश्च झषगे पापाश्च पापेक्षिते ॥ ३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में धन राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो वह बन्धुओं में श्रेष्ठ, बृहस्पति की दृष्टि हो तो राजा, शुक्र की दृष्टि हो तो बहुत लोगों का आश्रय और पापग्रहों (शनैश्चर, सूर्य, मङ्गल) की दृष्टि हो तो दाम्भिक (पाखण्डी) तथा शठ (धूर्त) होता है ।

मकर राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो राजाधिराज, बृहस्पति की दृष्टि हो तो राजा, शुक्र की दृष्टि हो तो पण्डित, शनैश्चर की दृष्टि हो तो धनवान्, सूर्य की दृष्टि हो तो निर्धन और मंगल की दृष्टि हो तो राजा होता है ।

कुम्भ-राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो राजा, बृहस्पति की दृष्टि हो तो राजा के समान, शुक्र की दृष्टि हो तो परस्त्रीगामी और शेष ग्रह (शनैश्चर, सूर्य, मंगल) की दृष्टि हो तो भी परस्त्रीगामी होता है ।

मीन राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर बुध की दृष्टि हो तो हँसी-दिल्लगी में चतुर, बृहस्पति की दृष्टि हो तो राजा, शुक्र की दृष्टि हो तो पण्डित और पापग्रहों (शनैश्चर, सूर्य, मंगल) की दृष्टि हो तो पापकर्म करने वाला होता है ॥ ३ ॥

होरा, द्रेष्काण और द्वादशांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर ग्रहदृष्टि का फल—

होरेशार्क्षदलाश्रितैः शुभकरो दृष्टः शशी तद्गत-
स्त्र्यंशे तत्पतिभिः सुहृद्भवनगैर्वा वीक्षितः शस्यते ।
यत्प्रोक्तं प्रतिराशिवीक्षणफलं तद्द्वादशांशे स्मृतं
सूर्याद्यैरवलोकितेऽपि शशिनि ज्ञेयं नवांशेष्वतः ॥ ४ ॥

चन्द्रमा जिस होरा में बैठा हो उस होरा-स्वामी के होरा में स्थित होकर जहाँ कहीं बैठे हुए ग्रहों से चन्द्रमा देखा जाता हो तो शुभ करने वाला होता है । जैसे सूर्य के होरा में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य होरा में स्थित ग्रहों की दृष्टि हो तो शुभ करने वाला होता है । एवं चन्द्र होरा में स्थित चन्द्रमा के ऊपर चन्द्र होरा में स्थित अन्य ग्रहों की दृष्टि हो तो शुभ करने वाला होता है । इस के विरुद्ध स्थित होने पर अशुभ करता है । इसी तरह लग्न में भी शुभ और अशुभ फल का ज्ञान करना चाहिए ।

द्रेष्काण का फल—

चन्द्रमा जिस द्रेष्काण में बैठा हो उसके स्वामी से जहां कहीं बैठा हुआ चन्द्रमा देखा जाता हो तो शुभ करने वाला होता है, अथवा चन्द्रमा के ऊपर मित्र ग्रहों की राशि में स्थित ग्रहों की दृष्टि हो तो शुभ करने वाला होता है।

मेषादि द्वादश राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर प्रत्येक ग्रहों की दृष्टिवश जो फल कहा गया है वही उस राशि के द्वादशांश में कहना चाहिए, अर्थात् मेष राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का जो दृष्टिफल कहा गया है वही मेष राशि के द्वादशांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर कुजादि ग्रहों का दृष्टिफल जानना चाहिए, इसी तरह वृषादि राशि में भी जानना चाहिए। अब मेषादि नवांशों में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्यादि ग्रहों का दृष्टिफल कहते हैं ॥ ४ ॥

सूर्यादि ग्रहों का दृष्टिफल—

आरक्षिको वधरुचिः कुशलो नियुद्धे
भूपोऽर्थवान् कलहकृत् क्षितिजांशसंस्थे।
मूर्खोऽन्यदारनिरतः सुकविः सितांशे
सत्काव्यकृत्सुखपरोऽन्यकलत्रगश्च ॥ ५ ॥

मङ्गल के नवांश (मेष और वृश्चिक राशि के नवांश) में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो नगर की रक्षा करने वाला, मङ्गल की दृष्टि हो तो जीवघाती, बुध की दृष्टि हो तो मल्ल युद्ध में निपुण, बृहस्पति की दृष्टि हो तो राजा, शुक्र की दृष्टि हो तो धनवान् और शनि की दृष्टि हो तो झगड़ा करने वाला होता है।

शुक्र के नवांश (वृष और तुला राशि के नवांश) में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो मूर्ख, मङ्गल की दृष्टि हो तो परस्त्रीगामी, बुध की दृष्टि हो तो सुन्दर कवि, बृहस्पति की दृष्टि हो तो सुन्दर काव्य करने वाला, शुक्र की दृष्टि हो तो सुखी और शनैश्चर की दृष्टि हो तो परस्त्रीगामी होता है ॥ ५ ॥

मिथुन, कन्या और कर्क राशि में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्यादि ग्रहों का दृष्टिफल—

बौधे हि रङ्गचरचौरकवीन्द्रमन्त्री
गेयज्ञशिल्पनिपुणः शशिनि स्थितेंऽशे।
स्वांशेऽल्पगात्रधनलुब्धतपस्विमुख्यः
स्त्रीपोष्यकृत्यनिरतश्च निरीक्ष्यमाणे ॥ ६ ॥

बुध के नवांश (मिथुन और कन्या राशि के नवांश) में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो मल्ल युद्ध करने वाला, मङ्गल की दृष्टि हो तो चोर, बुध की दृष्टि हो तो कवियों में श्रेष्ठ, बृहस्पति की दृष्टि हो तो मन्त्री, शुक्र की दृष्टि हो तो गान विद्या जानने वाला, शनैश्चर की दृष्टि हो हो शिल्पविद्या में निपुण होता है।

कर्क राशि के नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो दुर्बल देह-वाला, मङ्गल की दृष्टि हो तो धन का लोभी, बुध की दृष्टि हो तो तपस्वी, बृहस्पति की दृष्टि हो तो प्रधान, शुक्र की दृष्टि हो तो स्त्रियों से पालित, शनैश्चर की दृष्टि हो तो कामों को करने में निरत होता है ॥ ६ ॥

सिंह, धनु और मीन राशि के नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्यादि ग्रहों का दृष्टिफल—

सक्रोधो नरपतिसम्मतो निधीशः सिंहांशे प्रभुरसुतोऽतिहिंस्रकर्मा ।
जीवांशे प्रथितबलो रणोपदेष्टा हास्यज्ञः सचिवविकामवृद्धशीलः ॥७॥

सिंह राशि के नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो क्रोधी, मङ्गल की दृष्टि हो तो राजप्रिय, बुध की दृष्टि हो तो गाड़े हुए धन का स्वामी, बृहस्पति की दृष्टि हो तो उपदेशकर्ता, शुक्र की दृष्टि हो तो पुत्र से रहित, शनैश्चर की दृष्टि हो तो जीवों को नाश करने वाला होता है ।

बृहस्पति के नवांश (धन या मीन राशि के नवांश) में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो विख्यात बल वाला, मङ्गल की दृष्टि हो तो युद्धविद्या जानने वाला, बुध की दृष्टि हो तो हास्यरसप्रिय, बृहस्पति की दृष्टि हो तो मन्त्री, शुक्र की दृष्टि हो तो कामरहित (नपुंसक) और शनैश्चर की दृष्टि हो तो वृद्धशील (धर्मशील) होता है ॥ ७ ॥

मकर और कुम्भ राशि के नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्यादि ग्रहों का दृष्टि फल—

अल्पापत्यो दुःखितः सत्यपि स्वे मानासक्तः कर्मणि स्वेऽनुरक्तः ।
दुष्टस्त्रीकः कृपणश्चार्किभागे चन्द्रे भानौ तद्वदिन्द्वादिदृष्टे ॥ ८ ॥

शनि के नवांश (मकर या कुम्भ राशि के नवांश) में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि हो तो थोड़ी सन्तान वाला, मङ्गल की दृष्टि हो तो धन रहते हुए भी दुःख पाने वाला, बुध की दृष्टि हो तो अभिमानी, बृहस्पति की दृष्टि हो तो अपने कुल के अनुकूल कर्म करने वाला, शुक्र की दृष्टि हो तो दुष्ट स्त्रियों में आसक्त, शनि की दृष्टि हो तो कृपण होता है ।

इसी तरह जन्मकालिक नवांश के वश ग्रहों की दृष्टि से लग्न में भी फल जानना चाहिए, परन्तु वहां पर कर्क के नवांश को छोड़ कर चन्द्रमा की दृष्टि अशुभ होती है । पूर्वोक्त फलवत् चन्द्रमादि से दृष्ट सूर्य का फल जानना चाहिए । अर्थात् मेष के नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर भौमादि ग्रहों का जो दृष्टिफल कहा गया है वही मेष के नवांश में स्थित सूर्य के ऊपर भौमादि ग्रहों का दृष्टिफल जानना चाहिए । किन्तु मेष के नवांश में स्थित चन्द्रमा के ऊपर सूर्य की दृष्टि का जो फल कहा गया है, वही फल मेष के नवांश में स्थित सूर्य के ऊपर चन्द्रमा का दृष्टिफल जानना

चाहिए, इसी तरह प्रत्येक राशि के नवांश में स्थित सूर्य के ऊपर प्रत्येक ग्रहों का दृष्टिफल कहना चाहिए ॥ ८ ॥

पूर्वोक्त नवांश का दृष्टिफल में विशेष—

वर्गोत्तमस्वपरगेषु शुभं यदुक्तं तत्पुष्टमध्यलघुताऽशुभमुत्क्रमेण ।
वीर्यान्वितोंशकपतिर्निरुणद्धि पूर्वं राशीक्षणस्य फलमंशफलं ददाति ॥९॥
इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके दृष्टिफलाऽध्याय एकोनविंशः॥१९॥

अगर पूर्वोक्त नवांश में स्थित चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश का हो तो उक्त शुभ फलों को पुष्ट करता है। उक्त नवांश में स्थित चन्द्रमा अपने नवांश का हो तो उक्त सब शुभ फल मध्यम रूप से होता है। उक्त नवांश में स्थित चन्द्रमा दूसरे के नवांश में हो तो उक्त सब शुभ फल लघु रूप से देता है। और अशुभ फल उक्त प्रकार से उलटा देता है, जैसे वर्गोत्तम नवांश में स्थित चन्द्रमा उक्त सब अशुभ फल लघुरूप से देता है। अपने नवांश में स्थित हो तो उक्त सब अशुभ फल मध्यम रूप से देता है। पर नवांश में स्थित हो तो उक्त सब अशुभ फल पुष्ट कर के देता है।

यदि नवांश का स्वामी बली हो तो पहले राशि के दृष्टिफल को रोक कर नवांश के दृष्टिफल को देता है। अगर नवांश का स्वामी बलहीन हो तो नवांश का दृष्टिफल और राशि का दृष्टिफल दोनों समान रूप से देता है। इस तरह चन्द्रमा और लग्न का फल समझना चाहिए। सूर्य का केवल नवांश का दृष्टिफल सदा कहना चाहिए। क्योंकि उस की राशि का दृष्टिफल नहीं कहा गया है ॥ ९ ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' नामकभाषाटीकायां
दृष्टिफलाध्याय एकोनविंशः ।

अथ भावफलाध्यायो विंशः

तत्र सूर्यभावफलम्—

लग्न और द्वितीय भाव में स्थित सूर्य का फल—

शूरः स्तब्धो विकलनयनो निर्घृणोऽर्क तनुस्थे
मेषे सस्वस्तिमिरनयनः सिंहसंस्थे निशान्धः ।
नीचेऽन्धोऽस्वः शशिगृहगते बुद्बुदाक्षः पतङ्गे
भूरिद्रव्यो नृपहृतधनो वक्त्ररोगी द्वितीये ॥ १ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में लग्न में सूर्य बैठा हो वह शूर, स्तब्ध (दीर्घसूत्री विलम्ब से कार्य समाप्त करने वाला), नेत्ररोगी और निर्दयी होता है।

अगर लग्न का सूर्य मेष राशि में हो तो धनवान् और नेत्रहीन होता है।

यदि लग्न में स्थित सूर्य सिंह राशि का हो तो राज्यन्ध (रतौंधी वाला) होता है। यदि लग्न का रवि तुला राशि में स्थित हो तो अन्धा और निर्धन होता है। यदि चन्द्रमा के घर (कर्क) में स्थित हो तो बुद्बुदाक्ष (फूलीयुक्त नेत्र वाला) होता है।

यदि द्वितीय भाव में सूर्य स्थित हो तो बहुत धनी, राजा के कोप से धन का नाश वाला और मुख में रोगयुक्त होता है ॥ १ ॥

तृतीय से षष्ठभाव तक में स्थित सूर्य का फल—

मतिविक्रमवांस्तृतीयगेऽर्के विसुखः पीडितमानसश्चतुर्थे ।
ससुतो धनवर्जितस्त्रिकोणे बलवाञ्छत्रुजितश्च शत्रुयाते ॥ २ ॥

जिस जातक के जन्म काल में तृतीय स्थान में सूर्य बैठा हो वह बुद्धिमान् और पराक्रमी होता है।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य बैठा हो तो सुख से हीन और पीड़ित चित्त वाला होता है।

यदि पञ्चम भाव में सूर्य बैठा हो तो पुत्र से हीन और धन से हीन होता है।
यदि छठे भाव में सूर्य बैठा हो तो बलवान् और शत्रु को जीतने वाला होता है ॥

सप्तम भाव से द्वादश भाव तक में स्थित सूर्य का फल—

स्त्रीभिर्गतः परिभवं मदगे पतङ्गे
स्वल्पात्मजो निधनगे विकलेक्षणश्च ।
धर्मे सुतार्थसुखभाक् सुखशौर्यभाक् खे
लाभे प्रभूतधनवान् पतितश्च रिःफे ॥ ३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में सप्तम भाव में सूर्य बैठा हो वह स्त्रियों से अनादृत होता है।

यदि अष्टम भाव में सूर्य बैठा हो तो थोड़ी सन्तान वाला और थोड़ी दृष्टि वाला होता है।

यदि नवम भाव में सूर्य बैठा हो तो पुत्रवान्, धनवान् और सुख भोगने वाला होता है।

यदि दशम भाव में सूर्य बैठा हो तो सुख भोगने वाला और बलवान् होता है।
यदि एकादश भाव में सूर्य बैठा हो तो बहुत धनी होता है।
यदि द्वादश भाव में सूर्य बैठा हो तो पतित (भ्रष्ट) होता है ॥ ३ ॥

इति रविभावफलम्

अथ चन्द्रभावफलम् ।

लग्न से षष्ठ भाव तक में स्थित चन्द्र का फल—

मूकोन्मत्तजडान्धहीनबधिरप्रेष्याः शशाङ्कोदये
स्वर्क्षाऽजोच्चगते धनी बहुसुतः सस्वः कुटुम्बी धने ।
हिंस्रो भ्रातृगते सुखे सतनये तत्प्रोक्तभावान्वितो
नैकारिर्मृदुकायवह्निमदनस्तीक्ष्णोऽलसश्चारिगे ॥ ४ ॥

जिस जातक के जन्म काल में लग्न में चन्द्रमा बैठा हो वह मूक (गूंगा), मूर्ख, अन्धा, निन्दित कार्य करने वाला, बहिरा और भृत्य कार्य करने वाला होता है ।

यदि लग्न में स्थित होकर चन्द्रमा कर्क राशि का हो तो धनवान्, मेष का हो तो बहुत पुत्रों से युक्त तथा अपने उच्च (वृष) का हो तो धनयुक्त होता है ।

यदि द्वितीय भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो बहुत परिवारों से युक्त होता है ।
यदि तृतीय भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो हिंस्र (निर्दयी) होता है ।
यदि चतुर्थ भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो सुखी होता है ।
यदि पञ्चम भाव में बैठा हो तो पुत्रवान् होता है ।

यदि षष्ठ भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो बहुत शत्रुओं से युक्त, कोमल शरीर वाला, मन्दाग्नि वाला, अल्प कामी, उग्र स्वभाव वाला और आलसी होता है ॥४॥

सप्तम भाव से द्वादश भाव तक में स्थित चन्द्रमा का फल—

ईर्ष्युस्तीव्रमदो मदे बहुमतिर्व्याध्यर्दितश्चाष्टमे
सौभाग्यात्मजमित्रबन्धुधनभाग्धर्मस्थिते शीतगौ ।
निष्पत्तिं समुपैति धर्मधनधीशौर्यैर्युतः कर्मगे
ख्यातो भावगुणान्वितो भवगते क्षुद्रोऽङ्गहीनो व्यये ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा सप्तम स्थान में बैठा हो वह ईर्ष्यु (दूसरे के ऊपर हर तरह से कोप करने वाला) और अतिशय कामी होता है ।

यदि अष्टम भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो चञ्चल बुद्धि से युक्त और व्याधि से पीड़ित होता है ।

यदि दशम भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो सब कामों को सम्पादन करने वाला, धर्मवान्, धनवान् और पराक्रमवान् होता है ।

यदि एकादश भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो प्रख्यात और भव (एकादश) स्थान के गुण (लाभ) से युक्त (अर्थात् लाभ करने वाला) होता है ।

यदि द्वादश भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो क्षुद्र (निन्दित स्वभाव वाला) और किसी अङ्ग से रहित होता है ॥ ५ ॥

अथ कुजभावफलम्—

लग्नादि द्वादश भाव में स्थित मङ्गल और बुध का फल—

लग्ने कुजे क्षततनुर्धनगे कदन्नो
धर्मेऽघवान् दिनकरप्रतिमोऽन्यसंस्थः ।
विद्वान् धनी प्रखलपण्डितमन्त्र्यशत्रु-
धर्मज्ञविश्रुतगुणः परतोऽर्कवज्ज्ञे ॥ ६ ॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल लग्न में बैठा हो वह क्षततनु (शस्त्रादि के प्रहार से घाव युक्त शरीर वाला), द्वितीय भाव में स्थित हो तो कदन्न (मडुआ आदि अन्न) खाने वाला, नवम भाव में स्थित हो तो पाप करने वाला होता है। शेष स्थानों (तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, दशम, एकादश और द्वादश) में स्थित मङ्गल का फल सूर्य के सदृश जानना चाहिए।

जैसे तृतीय भाव में मङ्गल स्थित हो तो बुद्धिमान् और पराक्रमी होता है।

चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो सुख से हीन और पीड़ित चित्त वाला होता है।

पञ्चम भाव में स्थित हो तो पुत्र से हीन और धन से हीन होता है।

षष्ठ भाव में स्थित हो तो बलवान् और शत्रु को जीतने वाला होता है।

सप्तम भाव में स्थित हो तो स्त्रियों से अनादृत होता है।

अष्टम भाव में स्थित हो तो थोड़ी सन्तान और थोड़ी दृष्टि वाला होता है।
दशम भाव में स्थित हो तो बलवान् और सुख भोगने वाला होता है।

एकादश भाव में स्थित हो तो बहुत धनी होता है।

द्वादश भाव में मङ्गल बैठा हो तो पतित होता है।

जिस जातक के जन्म काल में बुध लग्न में बैठा हो तो वह विद्वान्, द्वितीय में स्थित हो तो धनवान्, तृतीय में स्थित हो तो बहुत दुर्जन, चतुर्थ में स्थित हो तो पण्डित, पञ्चम में स्थित हो तो मन्त्री, षष्ठ में स्थित हो तो शत्रुरहित, सप्तम में स्थित हो तो धर्म को जानने वाला, अष्टम में स्थित हो तो प्रख्यात गुण वाला, होता है।

अन्य भावों (नवम, दशम, एकादश और द्वादश) में स्थित हो तो सूर्य के सदृश फल जानना चाहिये। जैसे नवम भाव में बुध बैठा हो तो पुत्रवान्, धन-वान् और सुख भोगने वाला होता है। दशम भाव में बुध बैठा हो तो सुख भोगने वाला और बलवान् होता है।

एकादश भाव में बुध बैठा हो तो बहुत धनी होता है ।

द्वादश भाव में बुध बैठा हो तो पतित होता है ॥ ६ ॥

अथ गुरुभावफलम्—

लग्नादि द्वादश भावों में स्थित गुरु का फल—

विद्वान् सुवाक्यः कृपणः सुखी च धीमानशत्रुः पितृतोऽधिकश्च ।
नीचस्तपस्वी सधनः सलाभः खलश्च जीवे क्रमशो विलग्नात् ॥ ७ ॥

जिस जातक के जन्म काल में लग्न में बृहस्पति बैठा हो वह विद्वान्, द्वितीय में हो तो सुन्दर वाणी से युक्त, तृतीय में हो तो कृपण, चतुर्थ में हो तो सुखी, पञ्चम में हो तो बुद्धिमान्, षष्ठ में हो तो शत्रु रहित, सप्तम में हो तो पिता से अधिक गुणयुक्त, अष्टम में हो तो नीच कर्म कर्ता, नवम में हो तो तपस्वी, दशम में हो तो धनवान्, एकादश में हो तो लाभ करने वाला और द्वादश में हो तो दुष्ट होता है ॥ ७ ॥

स्मरनिपुणः सुखवांश्च विलग्ने प्रियकलहोऽस्तगते सुरतेप्सुः ।
तनयगते सुखितो भृगुपुत्रे गुरुवदतोऽन्यगृहे सधनोऽन्त्ये ॥ ८ ॥

जिस जातक के जन्म काल में शुक्र लग्न में बैठा हो वह काम क्रीडा में चतुर और सुखी होता है ।

यदि सप्तम भाव में शुक्र बैठा हो तो झगड़े का प्रेमी और सतत काम क्रीडा का इच्छुक होता है ।

पञ्चम भाव में स्थित हो तो सुखी होता है । इन से अतिरिक्त भावों (द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम , नवम, दशम, एकादश और द्वादश) में सूर्य बैठा हो तो गुरु के सदृश फल कहना चाहिए । जैसे द्वितीय में शुक्र बैठा हो तो सुन्दर वाणी से युक्त, तृतीय में हो तो कृपण, चतुर्थ में हो तो सुखी, षष्ठ में हो तो शत्रुरहित, अष्टम में हो तो नीच कर्म कर्ता, नवम में हो तो तपस्वी, दशम में हो तो धनवान्, एकादश में हो तो लाभ करने वाला और द्वादश में हो तो दुष्ट होता है । जिस किसी भाव में स्थित शुक्र मीन (अपने उच्च) का हो तो वह जातक को धनवान् करता है ॥

अथ शनिभावफलम्—

लग्नादि द्वादश भावों में स्थित शनि का फल—

अदृष्टार्थो रोगी मदनवशगोऽत्यन्तमलिनः
शिशुत्वे पीडार्तः सवितृसुतलग्नेऽत्यलसवाक् ।
गुरुस्वर्क्षोच्चस्थे नृपतिसदृशो ग्रामपुरपः
सुविद्वांश्चार्वङ्गो दिनकरसमोऽन्यत्र कथितः ॥ ९ ॥

जिस जातक के जन्म काल में शनैश्चर लग्न में बैठा हो वह नित्य निर्धन, रोगी, अतिशय कामी, अतिशय मलिन, बाल्य अवस्था में पीड़ा युक्त और बोलने में आलसी होता है।

यदि लग्न में स्थित होकर शनैश्चर धन, मीन, मकर, कुम्भ और तुला इन पाँच राशियों में से किसी राशि में स्थित हो तो राजा के सदृश, गाँव और नगर का मालिक, सुन्दर विद्वान् और सुन्दर शरीर युक्त होता है।

और अन्य स्थानों (द्वितीयादि द्वादश पर्यन्त भावों) में स्थित हो तो सूर्य के समान फल को देता है।

जैसे द्वितीय भाव में शनैश्चर बैठा हो तो बहुत धनी, राजा के कोप से धन की हानि पाने वाला और मुखरोगी होता है।

तृतीय भाव में शनैश्चर बैठा हो तो बुद्धिमान् और पराक्रमी, चतुर्थ भाव में सुख से हीन और चञ्चल चित्त से युक्त, पञ्चम भाव में पुत्र और धन से रहित, षष्ठ भाव में हो तो बलवान् और शत्रु को जीतने वाला, सप्तम भाव में स्त्रियों से अनादृत, अष्टम भाव में थोड़ी सन्तान और दृष्टि से युक्त नवम में पुत्रवान्, धनवान् और सुखी, दशम में सुखी और बलवान्, एकादश में बहुत धनी तथा द्वादश में पतित होता है॥ ९॥

लग्नादि द्वादश भावों में स्थित सब ग्रहों का विशेष फल—

सुहृदरिपरकीयस्वर्क्षतुङ्गस्थितानां फलमनुपरिचिन्त्यं लग्नदेहादिभावैः।
समुपचयविपत्ती सौम्यपापेषु सत्यः कथयति विपरीतं रिष्फषष्ठाष्टमेषु॥

लग्न को शरीर, द्वितीय भाव को धन इत्यादि कल्पना कर उन उन भावों में स्थित हो कर ग्रह मित्रगृही, शत्रुगृही, उदासीन राशि, अपनी राशि, अपने उच्च में स्थित हो तो स्थान के सदृश फल को देते हैं। जैसे जिस भाव में स्थित हो कर ग्रह मित्रगृह में स्थित हो उस भाव की वृद्धि करता है। तथा जिस भाव में स्थित हो कर ग्रह शत्रु के घर में बैठा हो उस भाव की हानि करता है। एवं जिस भाव में स्थित हो कर ग्रह उदासीन ग्रह (न मित्र न शत्रु) के राशिमें बैठा हो उस भाव की न वृद्धि न हानि करता है इसी तरह जिस भाव में स्थित हो कर ग्रह अपनी राशि में स्थित हो वह उस भाव की वृद्धि करता है, तथा जिस भाव में स्थित हो कर ग्रह उच्च राशि में बैठा हो उस भाव की वृद्धि करता है।

जिस भाव की वृद्धि होती है वह शुभ फल और जिस भाव की हानि होती है वह अशुभ फल को देता है। यहाँ पर सत्याचार्य का मत है कि जिस भावमें शुभग्रह बैठा हो उस भाव की वृद्धि और जिस भाव में पापग्रह बैठा हो उस भाव की हानि करता है। परन्तु षष्ठ, अष्टम और द्वादश भाव में उक्त फल के विपरीत फल

जानना चाहिए। जैसे उक्त तीनों स्थानों में पापग्रह हो तो भाव की वृद्धि और शुभ ग्रह हो तो भाव की हानि करता है ॥ १० ॥

कुण्डली में ग्रहों का विशेष शुभाशुभ फल—

उच्चत्रिकोणस्वसुहृच्छत्रुनीचगृहार्कगैः ।
शुभं सम्पूर्णपादोनदलपादाल्पनिष्फलम् ॥ ११ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके भावाध्यायो विंशः ॥ २० ॥

फल दो तरह के होते हैं, एक अशुभ दूसरा शुभ, शुभ स्थान में स्थित ग्रह शुभ फल और अशुभ स्थान में स्थित ग्रह अशुभ फल देता है। किस स्थान में शुभदायित्व और अशुभदायित्व कितना है उसको दिखाते हैं। जैसे जो ग्रह अपने उच्च स्थान में, अपने मूलत्रिकोण में, अपने गृह में, अपने मित्र के गृह में, अपने शत्रु गृह में, अपने नीचस्थान में और अस्त में स्थित हो तो वह क्रम से सम्पूर्ण, चतुर्थांशोन, आधा, चतुर्थांश, चतुर्थांशाल्प और बिलकुल नहीं शुभ फल देता है। जैसे अपने उच्च स्थान में स्थित ग्रह सम्पूर्ण शुभ फल देता है, तथा अपने मूल त्रिकोण में चतुर्थांशोन, अपने घर में आधा, अपने मित्र के घर में चतुर्थांश, शत्रु गृह में चतुर्थांश से भी अल्प और नीच तथा अस्त में स्थित ग्रह शून्य शुभ फल देता है।

इसके उलटा अशुभ फल कहना चाहिए। जैसे नीच और अस्त गत ग्रह संपूर्ण अशुभ फल, शत्रुगृह में गत ग्रह चतुर्थांशोन, मित्र गृह में गत चतुर्थांश, अपने गृह में स्थित ग्रह आधा, अपने मूल त्रिकोण में स्थित ग्रह चतुर्थांश से भी अल्प और अपने उच्च में स्थित ग्रह कुछ नहीं अशुभ फल देता है ॥ ११ ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां भावफलाध्यायो विंशः ।

अथाश्रययोगाध्याय एकविंशः

स्वगृह और मित्रगृह में स्थित ग्रहों का फल—

कुलसमकुलमुख्यबन्धुपूज्या धनिसुखिभोगिनृपाः स्वभैकवृद्ध्या ।
परविभवसुहृत्स्वबन्धुपोष्या गणपबलेशनृपाश्च मित्रभेषु ॥ १ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में एक ग्रह अपने घर में बैठा हो वह अपने कुल के समान विभवादि पाता है। यदि दो ग्रह स्वगृह में हों तो अपने कुल में मुख्य, तीन ग्रह हों तो अपने बन्धुओं से पूज्य, चार ग्रह हों तो धनी, पांच ग्रह हों तो सुखी, छै ग्रह हों तो भोगी और सात ग्रह अपने स्वगृह में हों तो राजा होता है।

जिस जातक के जन्म काल में एक ग्रह अपने मित्र क्षेत्र में बैठा हो तो दूसरे के

विभव से जीवन यात्रा चलाने वाला होता है, दो ग्रह अपने मित्र क्षेत्र में स्थित हों तो मित्रों से, तीन हों तो अपने जाति वालों से, चार हों तो अपने बन्धुओं से जीवन यात्रा चलाता है। पांच ग्रह हों तो लोगों का स्वामी, छै ग्रह हों तो सेनापति और सात ग्रह मित्रक्षेत्र में बैठे हों तो राजा होता है ॥ १ ॥

अन्यजातकोक्त स्वगृहस्थग्रहों का फल—

स्वगृहस्थे रवौ लोके महोग्रश्च सदोद्यमी।
चन्द्रे कर्मरतः साधुर्मनस्वी रूपवानपि ॥
स्वगृहस्थे कुजे चापि चपलो धनवानपि।
बुधे नानाकलाभिज्ञः पण्डितो धनवानपि ॥
धनी काव्यश्रुतिज्ञश्च स्वचेष्टः स्वगृहे गुरौ।
स्फीतः कृषीबलःशुक्रे शनौ मान्यःसुलोचनः॥

जिस जातक के जन्मकाल में सूर्य अपने घर में बैठा हो वह बड़े उग्र स्वभाव वाला और सदा उद्यम करने वाला होता है।

चन्द्र अपने गृह में बैठा हो तो सज्जन, मनस्वी और रूपवान् होता है।

मङ्गल अपने घर में बैठा हो तो चञ्चल और धनवान् होता है।

बुध अपने घर में बैठा हो तो अनेक कला-कौशलों का ज्ञाता, पण्डित और धनवान् होता है।

बृहस्पति अपने घर में बैठा हो तो धनवान्, काव्य का ज्ञाता और वेद का ज्ञाता होता है।

शुक्र अपने घर में बैठा हो तो बड़ा सुन्दर और कृषि कर्म करने वाला होता है।

शनैश्चर अपने घर में बैठा हो तो माननीय और सुन्दर नेत्र वाला होता है।

अन्यजातकोक्त मित्रक्षेत्रस्थग्रहों का फल—

सूर्ये मित्रगृहे ख्यातः शास्त्रज्ञः स्वस्थसौहृदः।
चन्द्रे नरो भाग्ययुक्तश्चतुरो धनवानपि ॥
भौमे शस्त्रोपजीवी च बुधे रूपधनान्वितः।
गुरौ मित्रगृहे पूज्यः सतां सत्कर्मसंयुतः ॥
शुक्रे मित्रगृहे लोके धनी बन्धुजनप्रियः।
शनौ रुजाकुलो। देहे कुकर्मनिरतो भवेत् ॥

जिस जातक के जन्मकाल में सूर्य मित्र के घर में बैठा हो वह प्रसिद्ध, शास्त्र का ज्ञाता और स्वस्थ मित्रों से युक्त होता है। चन्द्रमा हो तो भाग्ययुक्त, चतुर और धनवान् होता है। मङ्गल मित्र गृह में बैठा हो तो शास्त्रों से जीविका करने वाला, बुध हो तो रूपवान् और धनवान् तथा बृहस्पति मित्र के गृह में बैठा हो तो सज्जनों का पूज्य और सत्कर्म करने वाला होता है।

शुक्र मित्र के घर में बैठा हो तो धनी और बन्धुओं का प्यारा होता है। शनि हो तो व्याकुल शरीर वाला और कुकर्म करने वाला होता है।

उच्चस्थ—मित्रयुक्तदृष्ट–शत्रुक्षेत्रस्थ ग्रहों का फल—

जनयति नृपमेकोऽप्युच्चगो मित्रदृष्टः
प्रचुरधनसमेतं मित्रयोगाच्च सिद्धम्।
विधनविसुखमूढव्याधितो बन्धतप्तो
वधदुरितसमेतः शत्रुनीचर्क्षगेषु ॥ २ ॥

जिस जातक के जन्म काल में एक भी ग्रह अपने उच्च गृह में स्थित हो कर अपने मित्र से देखा जाता हो तो राजा होता है। तथा एक भी ग्रह अपने उच्च स्थान में स्थित हो कर अपने मित्र से युक्त हो तो बहुत धन को भोगते हुए सिद्ध होता है।

एवं जिस जातक के जन्म काल में एक भी ग्रह शत्रु स्थान अथवा अपने नीच स्थान में स्थित हो तो वह निर्धन होता है, दो ग्रह शत्रु अथवा नीच के हों तो वह सुख रहित, तीन हों तो मूढ, चार हों तो व्याधियुक्त, पाँच हो तो बन्धन से युक्त, छै ग्रह हों तो संताप से युक्त, सात ग्रह अपने शत्रु के घर अथवा नीच में बैठे हों तो वध और पाप से युक्त होता है ॥ २ ॥

उच्चगत पापग्रहों का विशेष फल—

पापैरुच्चगतैर्जाता न भवन्ति नराधिपाः।
किन्तु वित्तान्वितास्ते स्युः क्रोधनाः कलहप्रियाः ॥

जिस के जन्म काल में उच्चगत पापग्रह हो तो वह राजा नहीं होता है, किन्तु धन वान् और कलहप्रिय होता है।

उच्चाभिलाषी ग्रहों का फल—

उच्चाभिलाषिणः खेटा भवन्ति यस्य जन्मनि।
स नरो भूपपूज्यः स्याद्वंशस्य नायको भवेत् ॥
रविर्मीने शशी मेषे धने भौमस्तथैव च।
कन्यायां सूर्यपुत्रश्च ग्रहा उच्चाभिलाषिणः ॥

जिस जातक के जन्म समय में उच्चाभिलाषी ग्रह हो वह राजमान्य और अपने कुल में श्रेष्ठ होता है।

मीन का सूर्य, मेष का चन्द्रमा, धन का मंगल, सिंह का बुध, मिथुन का बृहस्पति, कुम्भ का शुक्र और कन्या का शनि उच्चाभिलाषी होता है।

शत्रु राशि में स्थित ग्रहों का फल—

सूर्ये रिपुगृहे निःस्वो विषयैः पीडितो नरः।
चन्द्रे हृदयरोगी च भौमे जायाजडोऽधनः ॥

बुधे रिपुगृहे मूर्खो वाग्घीनो दुःखपीडितः ।
जीवेऽरिभे नरः क्लीबो नाशवृत्तिर्बुभुक्षितः ॥
शुक्रे शत्रुगृहे भृत्यः कुबुद्धिर्दुःखितो नरः ।
शनौ व्याध्यर्थशोकेन सन्तप्तो मलिनो भवेत् ॥

जिस के जन्म काल में सूर्य शत्रु के गृह में बैठा हो वह मनुष्य निर्धन और विषयी होता है। चन्द्रमा हो तो हृदय रोगी, मंगल हो तो मूर्ख स्त्री वाला, बुध हो तो मूर्ख, गूँगा और दुःख से पीडित होता है। बृहस्पति अपने शत्रु गृह में बैठा हो तो नपुंसक, वृत्ति से हीन और बुभुक्षित होता है। शुक्र हो तो भृत्य का काम करने वाला, दुर्बुद्धि और दुःखित होता है। तथा शनि अपने शत्रु गृह में बैठा हो तो व्याधि, धन और शोक से सन्तप्त एवं मलिन होता है।

अन्य जातकोक्त उच्चस्थ ग्रहों का फल—

महाधनी बलाढ्यश्च तुङ्गस्थे भास्करे नरः ।
सुभूषणो महाभोगी धनी तुङ्गे निशाकरे ॥
उच्चे भौमे सुपुत्रश्च तेजस्वी गर्वितो नरः ।
मेधावी दृढवाक्यश्च बलाढ्यश्च बुधे भवेत् ॥
राजपूज्यश्च विख्यातो विद्वानार्यो गुरौ नरः ।
स्वोच्चे शुक्रे विलासी च हास्यगीतादिसंयुतः ॥
स्वोच्चगे रविपुत्रे च चक्रवर्ती धनी भवेत् ।
राजलब्धनियोगश्च राहुः शनिसमो मतः ॥

जिस जातक के जन्म काल में सूर्य उच्च का हो वह बहुत धनवान् और अतिशय उग्र स्वभाव वाला होता है।

यदि चन्द्रमा उच्च का हो तो सुन्दर भूषण से युक्त, महान् भोगी और धनी होता है।

जिस के जन्म काल में मंगल अपने उच्च का हो वह सुन्दर पुत्र वाला, तेजस्वी और अभिमानी होता है।

यदि बुध उच्च का हो तो बुद्धिमान्, सत्यवक्ता और बलवान् होता है।

जिस के जन्म काल में बृहस्पति अपने उच्च का हो वह राजाओं से पूजित, प्रसिद्ध, पण्डित और श्रेष्ठ होता है।

यदि शुक्र अपने उच्च का हो तो विलास करने वाला, हास्य रस प्रिय और गान विद्या जानने वाला होता है।

जिसके जन्म काल में शनैश्चर अपने उच्च का हो वह चक्रवर्ती, धनवान् और राजाओं से नियोग का लाभ करने वाला होता है।

राहु का फल शनि के समान कहना चाहिए।

नीचस्थ ग्रहों का फल—

नीचे सूर्ये भवेत्प्रेष्यो बन्धुभिर्वर्जितो नरः।
चन्द्रे रोगी स्वल्पपुण्यो दुर्भगो नीचराशिगे ॥
नीचे भौमे भवेन्नीचः कुत्सितो व्यसनातुरः।
बुधे क्षुद्रो बन्धुवैरी गुरौ दीनो मलान्वितः ॥
शुक्रे नीचे नष्टदारः स्वतन्त्रः शीलवर्जितः।
शनौ काणो दरिद्रश्च नीचराशिगतो यदि ॥

जिस जातक के जन्म काल में सूर्य नीच में बैठा हो वह दास और बन्धुओं से त्यक्त होता है।

यदि चन्द्रमा नीच में बैठा हो तो रोगी, धनहीन और भाग्य रहित होता है।

यदि मङ्गल नीच में बैठा हो तो नीच कर्म करने वाला, निन्दित और व्यसनी होता है।

यदि बुध नीच में बैठा हो तो क्षुद्र बुद्धि वाला और वन्धुओं से वैर करने वाला होता है।

यदि बृहस्पति नीच में बैठा हो तो दुःखी और मलिन होता है।

यदि शुक्र नीच में बैठा हो तो स्त्री रहित स्वतन्त्र और शील रहित होता है।

यदि शनि नीच में बैठा हो तो काना और दरिद्र होता है ॥ २ ॥

कुम्भ लग्न में जन्म काल का फल—

न कुम्भलग्नं शुभमाह सत्यो न भागभेदाद्यवना वदन्ति।
कस्यांशभेदो न तथाऽस्ति राशेरतिप्रसङ्गस्त्विति विष्णुगुप्तः ॥ ३॥

सत्याचार्य का मत है कि यदि कुम्भ लग्न में जातक पैदा हो तो उस को शुभ नहीं होता है।

तथा यवनाचार्य का मत है कि यदि कुम्भ राशि के द्वादशांश में जातक पैदा हो तो उस को शुभ नहीं होता है। यहां पर विष्णुगुप्त का मत है कि कौन ऐसी राशि है जिस में कुम्भ राशि का द्वादशांश नहीं है। अतः यवनाचार्य के मत से कुम्भराशि के द्वादशांश अशुभ होने के कारण सब राशियों का फल अशुभ हो जायगा, ऐसा होने से सम्पूर्ण लग्नादि द्वादश भावों का फल निरर्थक हो जायगा, अतः सत्याचार्य का कहना ही ठीक है। अर्थात् कुम्भ लग्न ही अशुभ है कुम्भ राशि का द्वादशांश नहीं ॥

सत्याचार्य—

कुम्भविलग्ने जातो भवति नरो दुःखशोकसंतप्तः।

यवनाचार्य का मत—

सर्वस्मिल्लग्नगते कुम्भद्विरसांशको यदा भवति।
राशौ न तदा सुखितः परान्नभोजी भवेत्पुरुषः।

विष्णुगुप्त—

कुम्भद्वादशभागो लग्नगतो न प्रशस्यते यवनैः ।
यद्येवं सर्वेषां लग्नगतानामनिष्टफलता स्यात् ॥
घटयोगाद्राशीनां न मतं सत्सर्वशास्त्रकाराणाम् ।
तस्मात्कुम्भविलग्नो जन्मन्यशुभो न तद्भागः ॥ ३ ॥

होरा में स्थित ग्रहों का फल—

यातेष्वसत्स्वसमभेषु दिनेशहोरां
ख्यातो महोद्यमबलार्थयुतोऽतितेजाः ।
चान्द्रीं शुभेषु युजि मार्दवकान्तिसौख्य-
सौभाग्यधीमधुरवाक्ययुतः प्रजातः ॥ ४ ॥

जिस जातक के जन्म काल में विषम राशि सम्बन्धी सूर्य की होरा में पापग्रह बैठा हो वह प्रसिद्ध, बड़ा उद्यमी, बलवान् , धनवान् और अतिशय प्रतापी होता है ।

यदि सम राशि सम्बन्धी चन्द्रमा के होरा में शुभ ग्रह बैठा हो तो कोमल स्वभाव वाला, कान्तिमान् , सुखी, सबों का प्रिय, बुद्धिमान् और मधुर बचन बोलने वाला होता है ॥ ४ ॥

पूर्वोक्त स्थिति के विरुद्ध में फल—

तास्वेव होरास्वपरर्क्षगासु ज्ञेया नराः पूर्वगुणेषु मध्याः ।
व्यत्यस्तहोराभवनस्थितेषु मर्त्या भवन्त्युक्तगुणैर्विहीनाः ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में सम राशि सम्बन्धी सूर्य की होरा में पापग्रह बैठा हो तो उसको पूर्वोक्त सब फल मध्यम रूप से होता है अर्थात् मध्यम रूप से प्रसिद्ध, मध्यम उद्यमी, मध्यम बलवान् , मध्यम धनवान् और मध्यम रूप से प्रतापी होता है ।

इसी तरह विषम राशि सम्बन्धी चन्द्रमा की होरा में शुभग्रह हो तो पूर्वोक्त सब फल मध्यम रूप से होता है, अर्थात् मध्यम स्वभाव वाला, न उतना कान्तिमान् न उतना कान्तिहीन, मध्यम सुखी, न अधिक न अल्प लोगों का प्रिय, मध्यम रूप से बुद्धि युत और मध्यम रूप से बोलने वाला होता है ।

इसके उलटा हो तो पूर्वोक्त सब फल विपरीत होते हैं । जैसे विषम राशि सम्बन्धी सूर्य की होरा में शुभग्रह बैठा हो तो पूर्वोक्त मार्दवादि गुणों से रहित होता है । तथा सम राशि सम्बन्धी चन्द्रमा की होरा में पापग्रह बैठा हो तो पूर्वोक्त ख्यात आदि गुणों से रहित होता है । और जिस होरा में ग्रह अधिक हों उसका फल अधिक और जिसमें अल्प हो उसका फल अल्प होता है ॥ ५ ॥

द्रेष्काण में स्थित चन्द्र का फल—

कल्याणरूपगुणमात्मसुहृद्दृकाणे चन्द्रोऽन्यगस्तदधिनाथगुणं करोति ।

व्यालोद्यतायुधचतुश्चरणाण्डजेषु तीक्ष्णोऽतिहिंस्रगुरुतल्परतोऽटनश्च ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा अपने द्रेष्काण अथवा मित्र के द्रेष्काण में स्थित हो वह बड़े भव्य रूप वाला और गुणवान् होता है। यदि इन दोनों द्रेष्काणों से भिन्न द्रेष्काण में स्थित हो तो उस द्रेष्काण-स्वामी के सदृश गुण वाला होता है। जैसे जिस द्रेष्काण में चन्द्रमा स्थित हो उसका स्वामी चन्द्रमा का सम हो तो मध्यम रूप वाला और समान गुण वाला होता है। यदि उस द्रेष्काण का स्वामी चन्द्रमा का शत्रु हो तो गुणहीन और रूपहीन होता है।

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा व्याल संज्ञक द्रेष्काण (कर्क का तृतीय, वृश्चिक का प्रथम और मीन का द्वितीय) में बैठा हो तो वह उग्र स्वभाव से युक्त होता है। तथा उद्यतायुध संज्ञक द्रेष्काण (मेष का प्रथम, मिथुन का द्वितीय, सिंह का प्रथम, तुला का द्वितीय और कुम्भ का प्रथम) में बैठा हो तो प्राणियों का नाश करने वाला, चतुष्पद राशि के द्रेष्काण में चन्द्रमा बैठा हो तो गुरुस्त्रीगामी और पक्षी राशि के द्रेष्काण में चन्द्रमा स्थित हो तो भ्रमण करने वाला होता है ॥ ६ ॥

नवांश का फल—

स्तेनो भोक्ता पण्डिताढ्यो नरेन्द्रः क्लीबः शूरो विष्टिकृद्दासवृत्तिः।
पापो हिंस्रोऽभीश्च वर्गोत्तमांशेष्वेषामीशा राशिवद् द्वादशांशैः ॥ ७ ॥

जिस जातक का मेष राशि में मेष के नवांश को छोड़ कर अन्य किसी राशियों में स्थित मेष नवांश में जन्म हो तो चोर होता है।

वृष राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित वृष नवांश में जन्म हो तो भोगी होता है।

मिथुन राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित मिथुन के नवांश में जन्म हो तो पण्डित होता है।

कर्क राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित कर्क के नवांश में जन्म हो तो धनवान् होता है।

सिंह राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित सिंह के नवांश में जन्म हो तो राजा होता है।

कन्या राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित कन्या के नवांश में जन्म हो तो नपुंसक होता है।

तुला राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित तुला के नवांश में जन्म हो तो शूर होता है।

वृश्चिक राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित वृश्चिक के नवांश में जन्म हो तो भार ढोने वाला होता है।

धनु राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित धनु के नवांश में जन्म हो तो दास वृत्ति करने वाला होता है ।

मकर राशि को छोड़ कर अण्य राशियों में स्थित मकर के नवांश में जन्म हो तो पापी होता है ।

कुम्भ राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित कुम्भ के नवांश में जन्म हो तो दुष्ट होता है ।

मीन राशि को छोड़ कर अन्य राशियों में स्थित मीन के नवांश में जन्म हो तो निर्भय होता है ।

जिस जातक का वर्गोत्तमांश में जन्म हो वह पूर्वोक्त फल का स्वामी होता है ।

जैसे मेष लग्न स्थित मेष के नवांश में जन्म हो तो चोर का स्वामी होता है । एवं वृष लग्न में स्थित वृष के नवांश में जन्म हो तो भोगियों का स्वामी होता है, इत्यादि ।

द्वादशांश फल चन्द्रमा के समान जानना चाहिये ॥ ७ ॥

मङ्गल और शनि का त्रिंशांश फल—

जायान्वितो बलविभूषणसत्त्वयुक्तस्तेजोऽतिसाहसयुतश्च कुजे स्वभागे ।
रोगी मृतस्वयुवतिर्विषमोऽन्यदारो दुःखी परिच्छदयुतोमलिनोऽर्कपुत्रे ॥८॥

जिस जातक के जन्म काल में मङ्गल त्रिंशांश में बैठा हो वह स्त्री से युक्त, बल, विभूषण और उदारता से युक्त, तेजस्वी और अतिशय साहसी होता है ।

यदि शनैश्चर अपने त्रिंशांश में बैठा हो तो रोगी, मृतभार्य (स्त्री को नाश करने वाला) क्रूर स्वभाव युक्त, परस्त्रीगामी, दुःखी, गृह, वस्त्र, परिवार से युक्त और मलिन होता है ॥ ८ ॥

बृहस्पति और बुध का त्रिंशांश फल—

स्वांशे गुरौ धनयशःसुखबुद्धियुक्ता-
स्तेजस्विपूज्यनिरुगुद्यमभोगवन्तः ।
मेधाकलाकपटकाव्यविवादशिल्प-
शास्त्रार्थसाहसयुताः शशिजेऽतिमान्याः ॥ ९ ॥

जिस जातक के जन्म काल में बृहस्पति अपने त्रिंशांश में स्थित हो वह धन, यश, सुख और बुद्धि इन सबों से युक्त, तेजस्वी, पूजनीय, नीरोग, उद्यमी और भोगी होता है । यदि बुध अपने त्रिंशांश में स्थित हो तो बुद्धिमान्, गीत, नृत्य आदि जानने वाला, कपटी, काव्यकर्ता, विवादी, शिल्प शास्त्र को जानने वाला, धनवान्, साहसी और अतिशय माननीय होता है ॥ ९ ॥

शुक्र का त्रिंशांश फल—

स्वे त्रिंशांशे बहुसुतसुखारोग्यभाग्यार्थरूपः

शुक्रे तीक्ष्णः सुललिततनुः सुप्रकीर्णेन्द्रियश्च
शूरस्तब्धौ विषमवधकौ सद्गुणाढ्यौ सुखिज्ञौ
चार्वङ्गेष्टौ रविशशियुतेष्वारपूर्वांशकेषु ॥ १० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके आश्रयाध्याय एकविंशः ॥ २१ ॥

जिस जातक के जन्म काल में शुक्र अपने त्रिंशांश में बैठा हो वह बहुत पुत्रों से युक्त, सुखी, नीरोग, ऐश्वर्य युक्त, धन युक्त, रूपवान्, तीक्ष्ण स्वभाव से युक्त, सुन्दर शरीर युक्त और बहुत स्त्रियों का भोग करने वाला होता है।

यदि मङ्गल के त्रिंशांश में सूर्य बैठा हो तो शूर होता है। चन्द्रमा हो तो स्तब्ध (शिथिल) होता है।

यदि शनैश्चर के त्रिंशांश में सूर्य बैठा हो तो विषम स्वभाव युक्त होता है। चन्द्रमा हो तो वधक (प्राणियों को नाश करने वाला) होता है।

तथा बृहस्पति के त्रिंशांश में सूर्य बैठा हो तो अच्छे गुणों से युक्त, चन्द्रमा हो तो धनवान् होता है।

इसी तरह बुध के त्रिंशांश में सूर्य बैठा हो तो सुखी होता है। चन्द्रमा हो तो पण्डित होता है। एवं शुक्र के त्रिंशांश में सूर्य बैठा हो तो सुन्दर अङ्ग वाला होता है। चन्द्रमा हो तो सबों का प्रिय होता है।

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायामाश्रययोगाध्याय एकविंशः।

अथ प्रकीर्णाध्यायो द्वाविंशः।

ग्रहों की परस्पर कारक संज्ञा—

स्वर्क्षतुङ्गमूलत्रिकोणगाः कण्टकेषु यावन्त आश्रिताः।
सर्व एव तेऽन्योऽन्यकारकाः कर्मगस्तु तेषां विशेषतः ॥ १ ॥

जो ग्रह अपने गृह, उच्च, या मूल त्रिकोण में स्थित हो कर केन्द्र (लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम) में स्थित हो और दूसरा कोई ग्रह ऐसा ही हो तो वे दोनों ग्रह परस्पर कारक संज्ञक होते हैं। ऐसे जितने ग्रह बैठे हों वे परस्पर कारक संज्ञक होते हैं। तथा इस में जिस पूर्वोक्त कारक लक्षण युक्त ग्रह से दशम स्थान में जो ग्रह बैठा हो वह विशेष कर के कारक संज्ञक होता है ॥ १ ॥

कारक संज्ञक ग्रह के लिये उदाहरण—

कर्कटोदयगते यथोडुपे स्वोच्चगाः कुजयमार्कसूरयः।
कारका निगदिताः परस्परं लग्नगस्य सकलोऽम्बराम्बुगः ॥ २ ॥

जैसे चन्द्रमा स्वगृह (कर्क) का हो कर जन्म लग्न में बैठा है तथा मङ्गल, शनै-

श्चर, सूर्य और बृहस्पति अपने २ उच्च में बैठे हैं अतः ये सब ग्रह परस्पर कारक संज्ञक सिद्ध हुए। परञ्च लग्नगत होकर ग्रह स्वक्षेत्र, उच्च या मूलत्रिकोण में बैठा हो तो भी उस से दशम अथवा चतुर्थ स्थान स्थित हो कर ग्रह स्वक्षेत्र, उच्च या मूलत्रिकोण में बैठा हो तो लग्न गत ग्रह का वह कारकसंज्ञक होता है किन्तु उस का लग्नगत ग्रह कारक संज्ञक होता है।

उदाहरण कुण्डली—

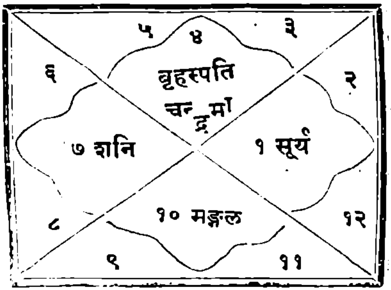

कारकान्तर कथन—

स्वत्रिकोणोच्चगो हेतुरन्योन्यं यदि कर्मगः।
सुहृत्सद्गुणसम्पन्नः कारकश्चापि स स्मृतः ॥ ३ ॥

अपना गृह, मूलत्रिकोण या उच्च में स्थित ग्रह कारक के हेतु होते हैं। किन्तु केवल लग्न केन्द्र में स्थित ग्रह कारक नहीं होते हैं। तथा लग्न केन्द्र को छोड़ कर कोई ग्रह दशम स्थान में स्थित होकर अपने गृह, मूलत्रिकोण या उच्च में स्थित हो और वह ग्रह जिस ग्रह से दशम स्थान में स्थित हो उस का अधिमित्र हो तो परस्पर कारकसंज्ञक होता है। इस का प्रयोजन यात्रा में होता है।

कहा भी है—

रिक्तोपहतदशायां जन्मोदयनाथशत्रुपाके च।
स्वदशेशकारकदशा संश्रयणीयो नरेन्द्रपतिः ॥ २ ॥

कारक संज्ञा करने का प्रयोजन—

शुभं वर्गोत्तमे जन्म वेशिस्थाने च सद्ग्रहे।
अशून्येषु च केन्द्रेषु कारकाख्यग्रहेषु च ॥ ४ ॥

जिस जातक का जन्म वर्गोत्तम नवांश में हो उस का जन्म शुभ होता है, अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश में बैठा हो तो भी जन्म शुभ होता है। तथा जिस जातक के जन्म काल में शुभग्रह वेशिस्थान (सूर्य जिस भाव में स्थित हो उस से द्वितीय भाव) में बैठा हो उसका जन्म शुभ होता है। एवं जिस के चारो केन्द्र स्थानों में ग्रह हों उस का भी जन्म शुभ होता है। तथा जिस के जन्मकाल में कारक संज्ञक ग्रह हो उस का जन्म भी शुभ होता है।

अगर केन्द्र स्थान में कोई शुभग्रह हो तो विशेष करके जन्म शुभ होता है।

कहा भी है—

एकस्मिन्नपि केन्द्रे यदि सौम्यो न ग्रहोऽस्ति यात्रायाम्।

जन्मन्यथवा कर्मणि न तच्छुभं प्राहुराचार्याः ॥ ४ ॥

युवा अवस्था में सुख का योग—

मध्ये वयसः सुखप्रदाः केन्द्रस्था गुरुजन्मलग्नपाः ।
पृष्ठोभयकोदयर्क्षगास्त्वन्तेऽन्तः प्रथमेषु पाकदाः ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में बृहस्पति, जन्म राशि का स्वामी और लग्न स्वामी ये तीनों केन्द्र में बैठे हों तो वह मनुष्य का मध्य वयस (युवा अवस्था) सुखप्रद होता है ।

यथा यवनेश्वर—

जन्माधिपो लग्नपतिश्च येषां चतुष्टये स्याद्बलवान् गुरुर्वा ।
चतुर्षु होरादिषु संगतः स्याच्चतुर्वयःकालफलप्रदः स्यात् ॥

तथा जिस जातक के दशाप्रवेश काल में दशापति पृष्ठोदय, उभयोदय या शीर्षोदय राशि में बैठा हो तो क्रम से दशा के अन्त भाग, मध्य भाग और प्रथम भाग में फलप्रद होता है । अर्थात् दशाप्रवेश काल में दशापति पृष्ठोदय राशियों (मेष, वृष, धनु और मकर) में से किसी में स्थित हो तो अपनी दशा के अन्त्य भाग (अन्तिम तृतीयांश) में फल देता है । अगर उभयोदय राशि (मीन) में स्थित हो तो मध्य भाग (मध्य के तृतीयांश) में फल देता है । यदि शीर्षोदय राशियों (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ) में से किसी में स्थित हो तो प्रथम भाग (प्रारम्भ के तृतीयांश) में दशा फल देता है ।

तथा गार्गि—

आद्यन्तमध्यफलदः　शिरःपृष्ठोभयोदये ।
दशाप्रवेशसमये तिष्ठन् वाच्यो दशापतिः ॥ ५ ॥

अष्टवर्गफलकालज्ञान—

दिनकररुधिरौ प्रवेशकाले गुरुभृगुजौ भवनस्य मध्ययातौ ।
रविसुतशशिनौ विनिर्गमस्थौ शशितनयः फलदस्तु सर्वकालम् ॥६॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके प्रकीर्णकाध्यायो द्वाविंशः ।

गोचरवश सूर्य और मङ्गल राशि के प्रथम भाग में रहते हुए उस राशि सम्बन्धी शुभ या अशुभ अष्टवर्ग फल को देते हैं तथा बृहस्पति और शुक्र राशि के मध्य भाग में उस राशिसम्बन्धी शुभ या अशुभ अष्टवर्ग फल को देते हैं । एवं शनैश्चर और चन्द्रमा राशि के अन्त्य भाग में उस राशिसम्बन्धी शुभ या अशुभ अष्टवर्ग फल को देते हैं तथा बुध जिस राशि में हो उस राशिसम्बन्धी शुभ या अशुभ फल सर्वदा देता है ॥ ६ ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां प्रकीर्णाध्यायो द्वाविंशः ।

अथानिष्टाध्यायस्त्रयोविंशः

पुत्र और स्त्री भावाभाव योग—

लग्नात्पुत्रकलत्रभे शुभपतिप्राप्तेऽथवाऽऽलोकिते
चन्द्राद्वा यदि संपदस्ति हि तयोर्ज्ञेयोऽन्यथा सम्भवः।
पाथोनोदयगे रवौ रविसुतो मीनस्थितो दारहा
पुत्रस्थानगतश्च पुत्रमरणं पुत्रोऽवनेर्यच्छति ॥ १ ॥

जिस जातक के जन्म काल में लग्न या चन्द्रमा से पञ्चम स्थान शुभग्रह अथवा अपने स्वामी से युत या दृष्ट हो तो उस को पुत्र सम्पत्ति होती है। इस के उलटा रहने से पुत्र सम्पत्ति नहीं होती है, अर्थात् पञ्चम स्थान शुभग्रह या अपने स्वामी से युत दृष्ट न हो तो पुत्र सम्पत्ति नहीं होती।

किसी का मत है कि पुत्र सम्पत्ति बारह तरह से होती है, जैसे औरस, क्षेत्रज, दत्तक, कृत्रिम, अधमप्रभव, गूढोत्पन्न, अपविद्ध, पौनर्भव, कानीन, सहोढ, क्रीतक और दासीप्रभव होते हैं।

इसी तरह लग्न या चन्द्रमा से सप्तम स्थान शुभग्रह अथवा अपने स्वामी से युत या दृष्ट हो तो स्त्री रूप सम्पत्ति होती है इस के विपरीत हो तो नहीं।

अगर सूर्य लग्न में स्थित हो कर कन्या राशि में बैठा हो और मीन राशि में शनैश्चर स्थित हो तो दारहा योग होता है, अर्थात् अपने जीवित ही में उस की स्त्री मर जाती है। एवं लग्न में स्थित हो कर सूर्य कन्या राशि में बैठा हो और मकर राशि में मङ्गल हो तो पुत्रहा योग होता है ॥ १ ॥

स्त्रीमरण योगत्रय—

उग्रग्रहैः सितचतुरस्रसंस्थितैर्मध्यस्थिते भृगुतनयेऽथवोग्रयोः।
सौम्यग्रहैरसहितसंनिरीक्षिते जायावधो दहननिपातपाशजः ॥२॥

जिस जातक के जन्म काल में शुक्र से चतुर्थ और अष्टम स्थान में उग्रग्रह (सूर्य, मङ्गल और शनैश्चर) बैठे हों तो उस की स्त्री अग्नि में जल कर मर जाती है। यदि शुक्र पापग्रहों के मध्य में स्थित हो तो उस की स्त्री ऊँचे स्थान से गिर कर मर जाती है। एवं शुक्र किसी शुभग्रह से युत या दृष्ट न हो तो उस की स्त्री स्वयं फाँसी आदि बन्धन से मर जाती है ॥ २ ॥

स्त्री पुरुष का काण और अङ्गहीन योग—

लग्नाद्व्ययारिगतयोः शशितिग्मरश्म्योः
पत्न्या सहैकनयनस्य वदन्ति जन्म।
द्यूनस्थयोर्नवमपञ्चमसंस्थयोर्वा
शुक्रार्कयोर्विकलदारमुशन्ति जातम् ॥ ३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा, सूर्य लग्न से द्वादश और षष्ठ स्थान में स्थित हों तो वह और उस की स्त्री दोनों काने होते हैं। तथा सूर्य सहित शुक्र सप्तम, नवम और पञ्चम इन तीनों स्थानों में से किसी स्थान में बैठा हो तो उस की स्त्री अङ्गहीन होती है ॥ ३ ॥

तथा गार्गि—

पञ्चमे नवमे द्यूने समेतौ सितभास्करौ । यस्य स्यातां भवेद्भार्या तस्यैकाङ्गविवर्जिता ॥

अपुत्रकलत्र वन्ध्यापति योग—

कोणोदये भृगुतनयेऽस्तचक्रसन्धौ
वन्ध्यापतिर्यदि न सुतर्क्षमिष्टयुक्तम् ।
पापग्रहैर्व्ययमदलग्नराशिसंस्थैः
क्षीणे शशिन्यसुतकलत्रजन्मधीस्थे ॥ ४ ॥

जिस जातक के जन्म काल में शनैश्चर लग्न में और लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हो कर शुक्र कर्क, वृश्चिक या मीन के अन्तिम नवांश में स्थित हो तथा लग्न से पञ्चम स्थान किसी शुभग्रह से युक्त न हो तो उस की स्त्री वन्ध्या होती है।

एवं पापग्रह द्वादश, सप्तम या लग्न में स्थित हो और लग्न से पञ्चम स्थान में क्षीण चन्द्रमा बैठा हो तो वह जातक पुत्र और स्त्री से रहित होता है।

यहां पर प्रश्न उठता है कि जिस को स्त्री नहीं है उस को पुत्र नहीं हो सकता अतः केवल स्त्री रहित (अकलत्र) कहने से ही पुत्र रहित (अपुत्र) भी आ जाता व्यर्थ पुत्र और स्त्री रहित (अपुत्रकलत्रजन्म) क्यों कहा। इस का समाधान यह है कि स्त्री के विना भी पूर्व कथित बारह प्रकार के पुत्रों में से दत्तक आदि कितने पुत्र होते हैं। परञ्च जिस का जन्म ऐसे योग में हो उस को दत्तक आदि पुत्र भी नहीं होते हैं ॥ ४ ॥

परस्त्रीगमन आदि योग—

असितकुजयोर्वर्गेऽस्तस्थे सिते तदवेक्षिते
परयुवतिगस्तौ चेत्सेन्दू स्त्रिया सह पुंश्चलः ।
भृगुजशशिनोरस्तेऽभार्यो नरो विसुतोऽपि वा
परिणततनू नृस्त्र्योर्दृष्टौ शुभैः प्रमदापतौ ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में शुक्र सप्तम भाव में स्थित हो कर शनैश्चर या मङ्गल के वर्ग में स्थित हो और शनैश्चर या मङ्गल से दृष्ट हो तो वह जातक परस्त्रियों में गमन करने वाला होता है।

तथा पूर्वोक्त योग में शनैश्चर और मङ्गल दोनों एकत्र स्थित हो कर चन्द्रमा से युक्त हो तो वह पुरुष अपनी स्त्री के साथ पुंश्चल होता है अर्थात् वह पुरुष परस्त्री-

गामी और उस की स्त्री परपुरुषगामिनी होती है। एवं जिस के जन्म काल में शुक्र और चन्द्रमा किसी एक राशि में स्थित हो और उस से सप्तम स्थान में शनैश्चर और मङ्गल बैठा हो तो वह स्त्रीरहित अथवा पुत्ररहित होता है। तथा पुरुष और स्त्रीसंज्ञक ग्रह किसी एक राशि में स्थित हों तथा उन से सप्तम स्थान में स्थित शनैश्चर और मङ्गल पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो वृद्धावस्था में वृद्धा स्त्री को पाता है ॥ ५ ॥

वंशच्छेद आदि योग—

वंशच्छेत्ता खमदसुखगैश्चन्द्रदैत्येज्यपापैः
शिल्पी त्र्यंशे शशिसुतयुते केन्द्रसंस्थार्किदृष्टे।
दास्यां जातो दितिसुतगुरौ रिष्फगे सौरभागे
नीचेऽर्केन्द्वोर्मदनगतयोर्दृष्टयोः सूर्यजेन ॥ ६ ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा, शुक्र और पापग्रह (सूर्य, मङ्गल और शनैश्चर) क्रम से दशम, सप्तम और चतुर्थ में स्थित हों जैसे चन्द्रमा दशम में, शुक्र सप्तम में और पापग्रह चतुर्थ में स्थित हो तो वह जातक अपने वंश का नाश करने वाला होता है।

तथा बुध जिस राशि के द्रेष्काण में बैठा हो वह राशि केन्द्र स्थान (१, ४, ७, १०) में स्थित हो कर शनैश्चर से देखा जाता हो तो शिल्पी (चित्र आदि बनाने वाला) होता है।

एवं शनैश्चर के नवांश में स्थित हो कर शुक्र लग्न से द्वादश स्थान में स्थित हो तो वह जातक दासीपुत्र होता है।

इसी तरह जिस के जन्म काल में सूर्य, चन्द्रमा दोनों लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हों और शनैश्चर से देखे जाते हों तो वह जातक नीचकर्म करने वाला होता है।

वातरोग आदि अनिष्ट योग—

पापालोकितयोः सितावनिजयोरस्तस्थयोर्वातरुक्
चन्द्रे कर्कटवृश्चिकांशकगते पापैर्युते गुह्यरुक्।
श्वित्री रिष्फधनस्थयोरशुभयोश्चन्द्रोदयेऽस्ते रवौ
चन्द्रे खेऽवनिजेऽस्तगे च विकलो यद्यर्कजोवे शिगः ॥७॥

जिस जातक के जन्मकाल में शुक्र और मङ्गल लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हो कर पापग्रह से देखे जाते हों तो जातक वात आदि रोग से युक्त होता है।

तथा जिसके जन्म काल में चन्द्रमा वृश्चिक अथवा कर्क के नवांश में स्थित हो कर पापग्रह से युक्त हो तो वह जातक गुह्यरोग युक्त होता है।

एवं जिस के जन्म काल में शनैश्चर और मङ्गल लग्न से द्वादश या द्वितीय

स्थान में, चन्द्रमा लग्न में और सूर्य लग्न से सप्तम में स्थित हो तो वह जातक श्वित्री (श्वेतकुष्ठी) होता है ।

इसी तरह जिस के जन्म काल में दशम स्थान में चन्द्रमा, सप्तम में मङ्गल और सूर्य से द्वितीय स्थान में शनैश्चर बैठा हो तो वह जातक अङ्गहीन होता है ॥ ७ ॥

श्वास, क्षय आदि रोग योग—

अन्तः शशिन्यशुभयोर्मृगगे पतङ्गे श्वासक्षयप्लिहकविद्रधिगुल्मभाजः । शोषी परस्परगृहांशगयो रवीन्द्वोः क्षेत्रेऽथवा युगपदेकगयोः कृशो वा ८

जिस जातक के जन्म काल में शनैश्चर और मङ्गल के मध्य में चन्द्रमा बैठा हो और मकर राशि में सूर्य बैठा हो तो वह जातक कास, श्वास, क्षय, पिलही, विद्रधि या गुल्म रोग से युक्त होता है ।

तथा सूर्य और चन्द्रमा परस्पर एक दूसरे के गृह और नवांश में स्थित हों जैसे सूर्य कर्क राशि के नवांश में स्थित हो कर कर्क राशि में बैठा हो, चन्द्रमा सिंह राशि के नवांश में स्थित हो कर सिंह राशि में बैठा हो तो वह जातक क्षय रोग युक्त होता है ।

अथवा सूर्य और चन्द्रमा दोनो सिंह राशि और सिंह के नवांश में वा कर्क राशि और कर्क के नवांश में स्थित हों तो क्षय रोग युक्त या दुर्बल शरीर वाला होता है ।

तथा गार्गि—

परस्परगृहे यातौ यदि वापि तदंशगौ । भवेतामर्कशीतांशू तदा शोषी प्रजायते ॥८॥

कुष्ठी योग—

चन्द्रेऽश्विमध्यभपकर्किमृगाजभागे
कुष्ठी समन्दरुधिरे तदवेक्षिते वा ।
यातैस्त्रिकोणमलिकर्किवृषैर्मृगे च
कुष्ठी च पापसहितैरवलोकितैर्वा ॥ ९ ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा धन राशि के मध्य नवांश (पञ्चम नवांश) में स्थित हो कर शनैश्चर और मङ्गल से युत या दृष्ट हो तो वह जातक कुष्ठी होता है

यथा चन्द्रमा किसी राशि में स्थित हो कर मीन, कर्क, मकर या मेष के नवांश में स्थित हो और शनैश्चर, मङ्गल इन दोनों से युत वा दृष्ट हो तो जातक कुष्ठी होता है।

इस पूर्वोक्त योग में अगर चन्द्रमा के ऊपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो कुष्ठी नहीं होता है किन्तु खुजली, दाद आदि रोग वाला होता है ।

यथा यवनेश्वर—

मीनांशके मेषमृगांशके वा चन्द्रस्थितोऽत्रैव हि पापदृष्टः ।
किलासकुष्ठादिविनष्टदेहमिष्टेक्षितः कण्डुविकारिणं च ॥

तथा जिस के जन्म काल में लग्न से पञ्चम या नवम स्थान में वृश्चिक, कर्क, वृष

और मकर राशियों में से कोई राशि हो और वह राशि पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो भी जातक कुष्ठ रोग युक्त होता है ॥ ९ ॥

नेत्रहीन योग—

निधनारिधनव्ययस्थिता रविचन्द्रारयमा यथा तथा।
बलवद्ग्रहदोषकारणैर्मनुजानां जनयन्त्यनेत्रताम् ॥ १० ॥

जिस जातक के जन्म काल में सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल और शनैश्चर जिस किसी तरह जन्म लग्न से अष्टम, षष्ठ, द्वितीय और द्वादश में स्थित हों अर्थात् उक्त चारो स्थानों में से किसी एक स्थान में सूर्य, द्वितीय में चन्द्रमा, तृतीय में मङ्गल, चतुर्थ में शनैश्चर बैठा हो तो इन चारो ग्रहों में जो बली हो उस का जो धातु उस के कोप से जातक नेत्रहीन होता है ॥ १० ॥

बधिर आदि योग—

नवमायतृतीयधीयुता न च सौम्यैरशुभा निरीक्षिताः।
नियमाच्छ्रवणोपघातदा रदवैकृत्यकराश्च सप्तमे ॥ ११ ॥

जिस जातक के जन्म काल में नवम, एकादश, तृतीय, पञ्चम इन स्थानों में स्थित पापग्रहों (सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल, शनैश्चर) के ऊपर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो इन में जो बली ग्रह हो उस के धातु कोप से जातक बहिरा होता है।

तथा पापग्रह लग्न से सप्तम स्थान में बैठे हों तो जातक को दन्तरोग करने वाले होते हैं ॥ ११ ॥

पिशाच और अन्ध योग—

उदयत्युडुपे सुरास्यगे सपिशाचोऽशुभयोस्त्रिकोणयोः।
सोपप्लवमण्डले रवावुदयस्थे नयनापवर्जितः ॥ १२ ॥

जिस जातक के जन्म काल में राहुग्रस्त हो कर चन्द्रमा लग्न में और मङ्गल, शनि लग्न से नवम, पञ्चम स्थान में स्थित हों तो वह जातक पिशाच (पिशाच उस के देह पर लगा रहे अथवा पिशाच का पूजक) होता है।

तथा जिस के जन्म काल में सूर्य राहुग्रस्त हो कर लग्न में बैठा हो और शनैश्चर, मङ्गल लग्न से नवम और पञ्चम स्थान में स्थित हों तो जातक अन्धा होता है ॥ १२ ॥

वातरोग और उन्माद योग—

संस्पृष्टः पवनेन मन्दगयुते द्यूने विलग्ने गुरौ
सोन्मादोऽवनिजे स्थितेऽस्तभवने जीवे विलग्नाश्रिते।
तद्वत्सूर्यसुतोदयेऽवनिसुते धर्मात्मजद्यूनगे
जातो वा ससहस्ररश्मितनये क्षीणे व्यये शीतगौ ॥ १३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में लग्न से सप्तम स्थान में शनैश्चर और लग्न में बृहस्पति स्थित हो तो वह जातक वातरोगी होता है।

तथा जिस के जन्म काल में सप्तम स्थान में मङ्गल और लग्न में बृहस्पति बैठा हो तो वह जातक उन्माद युक्त होता है।

एवं शनैश्चर लग्न में और मङ्गल नवम, पञ्चम या सप्तम स्थान में स्थित हो तो भी जातक उन्माद युक्त होता है।

इसी तरह शनैश्चर से युत क्षीण चन्द्रमा द्वादश स्थान में स्थित हो तो भी जातक उन्माद युक्त होता है ॥ १३ ॥

दास योग—

राश्यंशपोष्णकरशीतकरामरेज्यैर्नीचाधिपांशकगतैररिभागगैर्वा ।
एभ्योऽल्पमध्यबहुभिः क्रमशः प्रसूता ज्ञेयाः स्युरभ्युपगमक्रयगर्भदासाः ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में बैठा हो उस के स्वामी, सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति अपने नीच राशि के स्वामी के नवांश में या शत्रु राशि के नवांश में स्थित हों तो वह जातक भृत्यकर्म करने वाला होता है। यहाँ पर विशेष विचार यह है कि इन पूर्वोक्त चारो ग्रहों में एक ग्रह नीचाधिपांश या शत्रुनवांश में स्थित हो, तो अपनी जीविका चलाने के लिए दासकर्म करने वाला होता है, दो ग्रह हों तो बिका हुआ दास होता है और तीन, चार ग्रह ऐसे हों तो गर्भदास (दास ही का पुत्र) हो कर दासकर्म करने वाला होता है ॥ १४ ॥

विकृतदशन, खल्वाट आदि योग—

विकृतदशनः पापैर्दृष्टे वृषाजहयोदये
खलतिरशुभक्षेत्रे लग्ने हये वृषभेऽपि वा ।
नवमसुतगे पापैर्दृष्टे रवावदृढेक्षणो
दिनकरसुते नैकव्याधिः कुजे विकलः पुमान् ॥ १५ ॥

जिस जातक के जन्म काल में वृष, मेष और धन इन तीन राशियों में से कोई राशि लग्न में हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक दन्तरोगी होता है।

तथा जिस के जन्म काल में मेष, सिंह, वृश्चिक, मकर, कुम्भ, वृष और धन इन सात राशियों में से कोई लग्न में हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो खल्वाट होता है।

एवं जिस के जन्म काल में लग्न से नवम या पञ्चम स्थान में स्थित सूर्य के ऊपर पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक अदृढ नेत्र वाला (सदा मन्द दृष्टि युक्त) होता है।

इसी तरह शनैश्चर लग्न से नवम या पञ्चम स्थान में स्थित हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक अनेक व्याधि से युक्त होता है।

अगर मङ्गल लग्न से नवम या पञ्चम में स्थित हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो वह जातक अङ्गहीन होता है ॥ १५ ॥

अनेक प्रकार के बन्धन योग—

व्ययसुतधनधर्मगैरसौम्यैर्भवनसमाननिबन्धनं विकल्प्यम् ।
भुजगनिगडपाशभृद्दृकाणैर्बलवदसौम्यनिरीक्षितैश्च तद्वत् ॥ १६ ॥

जिस जातक के जन्म काल में पापग्रह जन्म लग्न से द्वादश, पञ्चम, द्वितीय और नवम इन स्थानों में स्थित हों तो वह जातक लग्न राशि के समान बन्धन से बाँधा जाता है । जैसे चतुष्पद राशियों (मेष, वृष, धन) में से कोई लग्न में हो तो रस्सी से बाँधा जाता है ।

तथा मनुष्य राशियों (मिथुन, कन्या, तुला, कुम्भ) में से कोई राशि लग्न में हो तो निगड़ (बेड़ी इत्यादि) से बन्धन युक्त होता है ।

एवं कर्क, मकर और मीन राशियों में से कोई राशि लग्न में हो तो कठघड़े आदि में बन्द रहना होता है ।

इसी तरह वृश्चिक राशि लग्न में हो तो जातक को मिट्टी के घर आदि में बन्द रहना होता है ।

अगर जन्मसमय में भुजगपाशभृत् या निगडपाशभृत् संज्ञक द्रेष्काण हो और द्रेष्काण राशि बली पापग्रह से दृष्ट हो तो उस राशि के समान बन्धन युक्त होता है । भुजगपाशभृत् संज्ञक द्रेष्काण (कर्क के द्वितीय और तृतीय, वृश्चिक के प्रथम और द्वितीय, मीन के तृतीय द्रेष्काण हैं) । निगडपाशभृत् संज्ञक मकर का प्रथम द्रेष्काण है । यहाँ पर कोई भुजग, निगड और पाशभृत् ये तीन द्रेष्काण व्याख्या किया है लेकिन पाशभृत् द्रेष्काण यहाँ नहीं पठित होने के कारण पूर्वोक्त अर्थ ही यथार्थ है ॥ १६ ॥

परुष वचन आदि योग—

परुषवचनोऽपस्मारार्तः क्षयी च निशापतौ
सरवितनये वक्रालोकं गते परिवेषगे ।
रवियमकुजैः सौम्यादृष्टैर्नभस्तलमाश्रितै-
र्भृतकमनुजः पूर्वोद्दिष्टैर्वराधममध्यमाः ॥ १७ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातकेऽनिष्टाध्यायस्त्रयोविंशः ॥ २३ ॥

जिस जातक के जन्म काल में चन्द्रमा शनैश्चर से युक्त हो और उस पर मङ्गल की दृष्टि तथा परिवेष युक्त हो तो क्रम से कठोर वचन बोलने वाला, अपस्मार रोग (मृगी) युक्त और क्षय रोग युक्त होता है ।

जैसे शनैश्चर से युक्त चन्द्रमा हो तो कठोर वचन बोलने वाला एवं शनैश्चर से युक्त चन्द्रमा मङ्गल से दृष्ट हो तो मृगी रोग युक्त और शनैश्चर से युक्त चन्द्रमा मङ्गल से दृष्ट परिवेष युक्त हो तो क्षयरोग युक्त होता है, ऐसे पृथक्-पृथक् तीन योग होते हैं ।

तथा जिस के जन्म काल में शनैश्चर, मंगल दोनों एक साथ हों तथा लग्न से दशम स्थान में स्थित हों और इस पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तो जातक भृत्यकर्म करने वाला होता है। इन में से एक योग हो तो श्रेष्ठ, दो हों तो मध्यम और तीनों योग हों तो अधम भृत्य होता है।

जैसे शनैश्चर और मंगल दोनों एक साथ हों तो श्रेष्ठ तथा शनैश्चर से युक्त मंगल शुभ ग्रह से नहीं देखा जाता हो तो मध्यम एवं शनैश्चर से मंगल युक्त हो तथा उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो और लग्न से दशम स्थान में स्थित हो तो अधम भृत्य होता है॥ १७॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायामनिष्टाध्यायस्त्रयोविंशः॥

अथ स्त्रीजातकाध्यायश्चतुर्विंशः

स्त्री जन्म में फल कथन की व्यवस्था—

यद्यत्फलं नरभवेऽक्षममङ्गनानां तत्तद्वदेत्पतिषु वा सकलं विधेयम्।
तासां तु भर्तृमरणं निधने वपुस्तु लग्नेन्दुगं सुभगतास्तमये पतिश्च॥१॥

पूर्व में पुरुषों के जन्म में जितने फल कहे गये हैं वे सब उसी तरह स्त्रियों को भी कहना चाहिए। किन्तु उनमें जो फल स्त्रियों के लिये असम्भव हो वह उनके स्वामियों को कहना चाहिए।

जैसे स्त्रियों की कुण्डली में राजयोग हो तो वह उनके पति को कहना चाहिए।

तथा 'वृत्ताताम्रदृगुष्णशाकलघुभुक्' इत्यादि फल स्त्रियों को ही कहना चाहिए।

अष्टम स्थान से स्त्रियों के स्वामियों का मरण विचार, लग्न और चन्द्र राशि से शरीर का विचार तथा सप्तम स्थान से सौभाग्य और पति का विचार करना चाहिए॥१॥

स्त्रियों के आकार और स्वभाव का ज्ञान—

युग्मेषु लग्नशशिनोः प्रकृतिस्थिता स्त्री
सच्छीलभूषणयुता शुभदृष्टयोश्च।
ओजस्थयोश्च मनुजाकृतिशीलयुक्ता
पापा च पापयुतवीक्षितयोर्गुणोना॥ २॥

जिस स्त्री के जन्म काल में लग्न और चन्द्रमा समराशियों (वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन) में से किसी भी राशि में बैठे हों तो वह स्त्री के स्वभाव और आकार वाली होती है।

तथा लग्न और चन्द्रमा दोनों शुभग्रहों से युत दृष्ट हो तो अच्छे स्वभाव और अनेक भूषणों से युत होती है।

जिस स्त्री के जन्म काल में लग्न, चन्द्रमा दोनों विषम राशियों (मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन, कुम्भ) में से किसी भी राशि में स्थित हों तो वह स्त्री पुरुष के आकार और स्वभाव वाली होती है।

तथा लग्न और चन्द्रमा पापग्रह से युत दृष्ट हों तो पाप स्वभाव वाली और अच्छे गुण से रहित होती है।

इससे यह सिद्ध होता है कि लग्न और चन्द्रमा इन दोनों में से कोई एक विषम राशि में दूसरा सम राशि में बैठा हो तो मध्यम स्वभाव और आकार वाली स्त्री होती है। तथा लग्न, चन्द्रमा इन दोनों में से कोई एक पापग्रह से युत दृष्ट हो और दूसरा शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो मध्यम गुण से युक्त होता है ॥ २ ॥

भौमर्क्षगतलग्न और चन्द्रमा का त्रिंशांश फल—

कन्यैव दुष्टा व्रजतीह दास्यं साध्वी समाया कुचरित्रयुक्ता।
भूम्यात्मजर्क्षे क्रमशोऽशकेषु वक्रार्किजीवेन्दुजभार्गवानाम् ॥ ३ ॥

जिस स्त्री के जन्म काल में लग्न, चन्द्रमा दोनों मंगल का राशि (मेष, वृश्चिक) में स्थित हो कर मंगल के त्रिंशांश में हों तो वह कन्या विना विवाही ही पुरुष संयोग से दूषित होती है। तथा लग्न, चन्द्रमा दोनों भौम के राशि में स्थित हो कर शनैश्चर के त्रिंशांश में हों तो दासी होती है, बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो पतिव्रता, बुध के त्रिंशांश में हों तो माया करने वाली और शुक्र के त्रिंशांश में हों तो निन्दित चरित्र से युक्त होती है ॥ ३ ॥

शुक्र राशि गत लग्न और चन्द्रमा का त्रिंशांश फल—

दुष्टा पुनर्भूः सगुणा कलाज्ञा ख्याता गुणैश्चासुरपूजितर्क्षे।
स्यात् कापटी क्लीवसमा सती च बौधे गुणाढ्या प्रविकीर्णकामा ॥४॥

जिस स्त्री के जन्म काल में लग्न, चन्द्रमा दोनों शुक्र के राशियों (वृष, तुला) में से किसी में स्थित हो कर मंगल के त्रिंशांश में बैठे हों तो दुष्टा (दुष्ट प्रकृति वाली) होती है। तथा शनैश्चर के त्रिंशांश में हों तो पुनर्भू (पाणिग्रहण करने वाले पति के जीते ही दूसरे की स्त्री) होती है।

यदि बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो सुन्दर गुणों से युत होती है। एवं बुध के त्रिंशांश में हों तो कलाओं (गीत-वाद्य आदि) की जानने वाली होती है। यदि शुक्र के त्रिंशांश में हों तो अनेक सद्गुणों से प्रसिद्ध होती है।

एवं जिस स्त्री के जन्म काल में लग्न, चन्द्रमा दोनों बुध के गृहों (मिथुन, कन्या) में से किसी में स्थित हो कर मङ्गल के त्रिंशांश में बैठे हों तो छली, शनैश्चर के त्रिंशांश में हों तो नपुंसक के बरावर, बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो पतिव्रता, बुध के त्रिंशांश में हों तो अनेक गुणों से युत और शुक्र के त्रिंशांश में हों तो व्यभिचारिणी होती है ॥ ४ ॥

कर्क में स्थित लग्न और चन्द्रमा का त्रिंशांश फल—

स्वच्छन्दा पतिघातिनी बहुगुणा शिल्पिन्यसाध्वीन्दुभे

त्राचारा कुलटाऽर्कभे नृपवधूः पुंश्चेष्टिताऽगम्यगा ।
जैवे नैकगुणाऽल्परत्यतिगुणा विज्ञानयुक्ताऽसती
दासी नीचरताऽऽर्किभे पतिरता दुष्टाऽप्रजा स्वांशकैः ॥ ५ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न और चन्द्रमा चन्द्रराशि (कर्क) में स्थित हो कर मङ्गल के त्रिंशांश में बैठे हों तो स्वच्छन्दा (स्वतन्त्रा), शनि के त्रिंशांश में हों तो पति को नाश करने वाली, बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो अनेक गुणों से युत, बुध के त्रिंशांश में हों तो दुष्ट प्रकृति वाली होती है ।

तथा जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न, चन्द्रमा दोनों रवि के राशि (सिंह) में स्थित हो कर मङ्गल के त्रिंशांश में बैठे हों तो पुरुष के समान आचार करने वाली, शनैश्चर के त्रिंशांश में हों ता व्यभिचारिणी, बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो राजा की स्त्री, बुध के त्रिंशांश में हों तो पुरुष के समान स्वभाव वाली और शुक्र के त्रिंशांश में हों तो अगम्य पुरुषों के साथ रमण करने वाली होती है ।

एवं जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न, चन्द्रमा दोनों बृहस्पति के राशियों (धनु, मीन) में से किसी में स्थित हो कर मङ्गल के त्रिंशांश में बैठे हों तो अनेक गुणों से युत, शनैश्चर के त्रिंशांश में हों तो थोड़ा सम्भोग करने वाली, बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो अनेक गुणों से युत, बुध के त्रिंशांश में हों तो विशेष बुद्धिमती और शुक्र के त्रिंशांश में हों तो व्यभिचारिणी होती है ।

इसी तरह जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न, चन्द्रमा दोनों शनि के गृहों (मकर, कुम्भ) में से किसी में स्थित हो कर मङ्गल के त्रिंशाश में बैठे हों तो दासी, शनैश्चर के त्रिंशांश में हों तो नीचकर्म करने वालों के साथ रमण करने वाली, बृहस्पति के त्रिंशांश में हों तो पति में प्रेम करने वाली, बुध के त्रिंशांश में हों तो दुष्ट स्वभाव वाली और शुक्र के त्रिंशांश में हों तो वन्ध्या होती है ॥ ५ ॥

पूर्वोक्तफलों का निर्णय—

शशिलग्नसमायुक्तैः फलं त्रिंशांशकैरिदम् ।
बलाबलविकल्पेन तयोरुक्तं विचिन्तयेत् ॥ ६ ॥

पहले जो लग्न और चन्द्रमा से युत त्रिंशांशों का फल कह आये हैं । उस में लग्न और चन्द्रमा का बल निर्णय करके फलादेश कहना चाहिए ।

इस का आशय यह है कि लग्न और चन्द्रमा दोनों एक राशि में स्थित होकर एक ही ग्रह के त्रिंशांश में बैठे हों तो पूर्व कथित रीति से फलादेश कहना चाहिए। अगर दोनों भिन्न राशि में स्थित हो कर भिन्न ग्रह के त्रिंशांश में बैठे हों तो उन दोनों में जो बली हो उसी का फलादेश कहना चाहिए निर्बल का नहीं ॥ ६ ॥

स्त्री के साथ स्त्री के मैथुन करने का दो योग—

दृक्संस्थावसितसितौ परस्परांशे शौक्रे वा यदि घटराशिसम्भवोंशः ।

स्त्रीभिः स्त्री मदनविषानलं प्रदीप्तं संशान्तिं नयति नराकृतिस्थिताभिः॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में शुक्र और शनैश्चर दोनों परस्पर नवांश में हों और परस्पर एक दूसरे से दृष्ट हों जैसे शुक्र शनैश्चर के नवांश में स्थित हो कर शनैश्चर से देखा जाता हो तो और शुक्र के नवांश में स्थित हो कर शनैश्चर शुक्र से देखा जाता हो तो वह स्त्री लोहा, वस्त्र या रबर आदि से लिङ्ग के आकार बना उस को किसी स्त्री के भग स्थान में बांध कर उस के साथ मैथुन कर के काम की शान्ति कराती है।

अथवा शुक्र के राशियों (वृष और तुला) में से कोई राशि लग्न में स्थित हो और उस में कुम्भ राशि के नवांश का उदय हो तो भी स्त्री-स्त्री के साथ पूर्वोक्त युक्ति से सम्भोग कर के काम शान्ति कराती है ॥ ७ ॥

पति का कापुरुषादि योग—

शून्ये कापुरुषोऽबलेऽस्तभवने सौम्यग्रहावीक्षिते
क्लीबोऽस्ते बुधमन्दयोश्चरगृहे नित्यं प्रवासान्वितः।
उत्सृष्टा तरणौ कुजे तु विधवा बाल्येऽस्तराशिस्थिते
कन्यैवाशुभवीक्षितेऽर्कतनये द्यूने जराङ्गच्छति ॥ ८ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न अथवा चन्द्रमा से सप्तम स्थान ग्रह से रहित हो अथवा किसी शुभग्रह से न देखा जाता हो तो उस स्त्री का स्वामी कापुरुष (निन्दित कर्म करने वाला) होता है।

तथा उक्त सप्तम स्थान में बुध या शनैश्चर स्थित हो तो उस स्त्री का स्वामी नपुंसक (पुरुषत्वहीन) होता है।

यदि उक्त सप्तम स्थान में चर राशियों (मेष, कर्क, तुला और मकर) में से कोई हो तो उस स्त्री का स्वामी परदेश में निवास करने वाला होता है।

एवं उक्त सप्तम स्थान में सूर्य बैठा हो तो वह स्त्री पति से त्यागी जाती है।

यदि उक्त सप्तम स्थान में मङ्गल हो तो बाल्य अवस्था में ही विधवा होती है।

यदि वा उक्त सप्तम स्थान में शनैश्चर स्थित हो कर पापग्रहों से देखा जाता हो तो वह स्त्री कुमारी रहती हुई वृद्धा हो जाती है, अर्थात् विवाह नहीं करती है। यहां पर भी लग्न और चन्द्रमा दोनों में जो बलवान् हो उस से फलादेश कहना चाहिए ॥ ८ ॥

वैधव्य आदि योग—

आग्नेयैर्विधवास्तराशिसहितैर्मिश्रैः पुनर्भूर्भवेत्
क्रूरे हीनबलेऽस्तगे स्वपतिना सौम्येक्षिते प्रोज्झिता।
अन्योन्यांशगयोः सितावनिजयोरन्यप्रसक्ताङ्गना
द्यूने तौ यदि शीतरश्मिसहितौ भर्तुस्तदानुज्ञया ॥ ९ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न से या चन्द्रमा से सप्तम स्थान में पापग्रह स्थित हों तो वह स्त्री विधवा होती है।

यदि उक्त सप्तम स्थान में मिश्रग्रह (पापग्रह और शुभग्रह दोनों) स्थित हों तो पुनर्भू (पाणिग्रहण जो किया हो उस को छोड़ कर दूसरे की स्त्री) होती है।

यदि उक्त सप्तम स्थान में पापग्रहों (सूर्य, मङ्गल और शनि) में से कोई एक निर्बल हो कर बैठा हो और उस पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो वह स्त्री पति कर के वर्जिता होती है।

तथा किसी राशि में स्थित हो कर शुक्र और मङ्गल परस्पर नवांश में स्थित हों अर्थात् शुक्र मङ्गल के नवांश में और मङ्गल शुक्र के नवांश में बैठा हो तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होती है।

यदि वा लग्न या चन्द्रमा से सप्तम स्थान में शुक्र, मङ्गल चन्द्रमा से युक्त बैठे हों तो वह स्त्री अपने स्वामी की आज्ञा ही से परपुरुषगामिनी होती है ॥ ९ ॥

अपनी माता के साथ व्यभिचारिणी आदि योग—

सौरारर्क्षे लग्नगे सेन्दुशुक्रे मात्रा सार्द्धं बन्धकी पापदृष्टे।
कौजेऽस्तांशे सौरिणा व्याधियोनिश्चारुश्रोणी वल्लभा सद्ग्रहांशे ॥१०॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में शनि की राशियों (मकर, कुम्भ) में से या मङ्गल की राशियों (मेष, वृश्चिक) में से किसी राशि में स्थित हो कर चन्द्रमा से युक्त शुक्र लग्न में बैठे हों और उन पर पापग्रह की दृष्टि हो तो वह स्त्री अपनी माता के साथ व्यभिचार कराने वाली होती है।

तथा लग्न से सप्तम स्थानमें मङ्गल की राशि (मेष, वृश्चिक) सम्बन्धी नवांश का उदय हो और उस पर शनैश्चर की दृष्टि हो तो व्याधियोनि (भग में सुजाक आदिरोग वाली) होती है।

अगर उक्त सप्तम स्थान में शुभग्रहों की राशियों में से किसी राशि सम्बन्धी नवांश का उदय हो तो वह स्त्री सुन्दर योनि वाली और वल्लभा (अपने स्वामी की स्नेहपात्र) होती है ॥ १० ॥

वृद्ध आदि स्वामी का योग—

वृद्धो मूर्खः सूर्यजर्क्षांशके वा स्त्रीलोलः स्यात् क्रोधनश्चावनेये।
शौक्रे कान्तोऽतीवसौभाग्ययुक्तो विद्वान् भर्ता नैपुणश्चैव बौधे ॥ ११ ॥

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न से सप्तम स्थान में शनि की राशियों (मकर, कुम्भ) में से कोई राशि या उस राशि सम्बन्धी नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी वृद्ध और मूर्ख होता है।

तथा उक्त सप्तम स्थान में मङ्गल की राशियों (मेष, वृश्चिक) में से कोई राशि

या उस राशि सम्बन्धी नवांश होतो उस स्त्री का स्वामी दूसरे की स्त्रियों को चाहने वाला और क्रोधयुक्त होता है ।

एवं उक्त सप्तम स्थान में शुक्र की राशियों (वृष, तुला) में से कोई राशि या उस राशि सम्बन्धी नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी अतिशय सुन्दर और सबों का अतिशय प्रिय होता है ।

इसी तरह उक्त सप्तम स्थान में बुध की राशियों (मिथुन, कन्या) में से कोई राशि या उस राशि सम्बन्धी नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी विद्वान् और कामों को करने में चतुर होता है ॥ ११ ॥

अन्य विशेष योग—

मदनवशगतो मृदुश्च चान्द्रे त्रिदशगुरौ गुणवाञ्जितेन्द्रियश्च ।
अतिमृदुरतिकर्मकृच्च सौर्ये भवति गृहेऽस्तमयस्थितेंऽशके वा ॥१२॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न या चन्द्रमा से सप्तम स्थान में चन्द्रमा की राशि (कर्क) या उस का नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी अतिशय कामी और मृदु (कोमल स्वभाव वाला) होता है ।

यदि उक्त सप्तम स्थान में वृहस्पति की राशि (धनु या मीन) या उस का नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी गुणवान् और जितेन्द्रिय होता है ।

यदि वा उक्त सप्तम स्थान में सूर्य की राशि (सिंह) या उस का नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी अतिशय कोमल स्वभाव वाला और बहुत काम करने वाला होता है ॥ १२ ॥

लग्न में स्थित ग्रहों का फल—

ईर्ष्यान्विता सुखपरा शशिशुक्रलग्ने
ज्ञेन्द्वोः कलासु निपुणा सुखिता गुणाढ्या ।
शुक्रज्ञयोस्तु सुभगा रुचिरा कलाज्ञा
त्रिष्वप्यनेकवसुसौख्यगुणा शुभेषु ॥ १३ ॥

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न में चन्द्रमा, शुक्र ये दोनों बैठे हों तो वह स्त्री ईर्ष्या युक्त (दूसरे की बात न सहने वाली) और सर्वदा सुख युक्त होती है । तथा बुध, चन्द्रमा ये दोनों स्थित हों तो वह स्त्री कलाओं (गीत-वाद्य आदि) में चतुर, सुख करने वाली और गुणों से युत होती है ।

एवं शुक्र, बुध ये दोनों स्थित हों तो सब की प्यारी, सुन्दरी और कलाओं को जानने वाली होती है ।

इसी तरह बुध, वृहस्पति और शुक्र ये तीनों शुभग्रह लग्न में बैठे हों तो वह स्त्री अनेक प्रकार के धनों से सुख करने वाली और अनेक प्रकार के गुणों से युक्त होती है ॥ १३ ॥

पुनः वैधव्य आदि योग—

क्रूरेऽष्टमे विधवता निधनेश्वरोंऽशे यस्य स्थितो वयसि तस्य समे प्रदिष्टा।
सत्स्वर्थगेषु मरणं स्वयमेव तस्याःकन्याऽलिगोहरिषु चाल्पसुतत्वमिन्दौ॥

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न से अष्टम स्थान में पापग्रह बैठा हो तो अष्टम स्थान के स्वामी जिस ग्रह के नवांश में बैठा हो उस ग्रह की दशा या अन्तर्दशा में वह स्त्री विधवा होती है। यहां पर कोई आचार्य वय शब्द से 'एकं द्वौ नवविंशतिरित्यादि' से प्रतिपादित वय का ग्रहण करते हैं परञ्च ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं है यतः अष्टमेश चन्द्रमा या मङ्गल के नवांश में स्थित हो तो वहां चन्द्रमा और मङ्गल का वय तीन वर्ष आता है, अतः उन के मत से वह स्त्री तीसरे वर्ष में विधवा होगी परन्तु तीसरे वर्ष में स्त्रियों की शादी भी नहीं होती है अतः ऐसा अर्थ करना बिल्कुल असम्भव है।

जिस स्त्री के जन्मकाल में पापग्रह अष्टम स्थान में और शुभग्रह द्वितीय स्थान में बैठे हों तो उस स्त्री का मरण उसके स्वामी से पहले कहना चाहिए।

तथा जिस स्त्री के जन्मकाल में चन्द्रमा, कन्या, वृश्चिक, वृष और सिंह इन राशियों में से किसी में बैठा हो तो उस स्त्री को थोड़े लड़के होते है ॥ १४ ॥

सौरे मध्यवले बलेन रहितैः शीतांशुशुक्रेन्दुजैः
शेषैर्वीर्यसमन्वितैः पुरुषिणी यद्योजराश्युद्गमः।
जीवारास्फुजिदैन्दवेषु बलिषु प्राग्लग्नराशौ समे।
विख्याता भुवि नैकशास्त्रकुशला स्त्री ब्रह्मवादिन्यपि ॥ १५ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में शनैश्चर मध्यबली हो, चन्द्रमा, शुक्र और बुध निर्बल हों, सूर्य मङ्गल और बृहस्पति बली हों तथा विषम राशियों (मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन और कुम्भ) में से कोई राशि लग्न में हो तो वह स्त्री बहुत पुरुषों के साथ सम्भोग करने वाली होती है।

इसी तरह जिसके जन्मकाल में बृहस्पति, मङ्गल, शुक्र और बुध बली हों और सम राशियों (वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन) में से कोई राशि लग्न में हो तो वह स्त्री पृथ्वी पर प्रसिद्ध अनेक शास्त्रों में कुशल और ब्रह्मशास्त्र की वादिनी (वेदान्त में निपुण) होती है ॥ १५ ॥

प्रव्रज्या योग—

पापेऽस्ते नवमगतग्रहस्य तुल्यां प्रव्रज्यां युवतिरुपैत्यसंशयेन।
उद्वाहे वरणविधौ प्रदानकाले पृच्छायामपि सकलं विधेयमेतत् ॥१६॥
इति श्री वराहमिहिरकृते बृहज्जातकाध्यायश्चतुर्विंशोध्यायः ॥ २४ ॥

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न से सप्तम स्थान में पापग्रह हो और यदि कोई ग्रह लग्न से नवम में स्थित हो तो वह स्त्री निःसन्देह पूर्वोक्त फल नहीं पाकर उस नवम स्थान स्थित ग्रह के समान पूर्व प्रव्रज्याध्याय में कथित प्रव्रज्या को पाती है।

इस अध्याय में जितने फल कहे गये हैं उन सब को स्त्री के विवाह काल में, वरण काल में, दान काल में और प्रश्न काल में विचार करना चाहिए ॥ १६ ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां स्त्रीजातकाध्यायश्चतुर्विंशः ।

अथ नैर्याणिकाऽध्यायः पञ्चविंशः

उस में पहले अष्टम स्थान के वश मृत्यु का विचार—

मृत्पुर्मृत्युगृहेक्षणेन बलिभिस्तद्धातुकोपोद्भव-
स्तत्संयुक्तभगात्रजो बहुभवो वीर्यान्वितैर्भूरिभिः ।
अग्न्यम्ब्वायुधजो ज्वरामयकृतस्तृट्क्षुत्कृतश्चाष्टमे
सूर्याद्यैर्निधने चरादिषु परस्वाध्वप्रदेशेष्वपि ॥ १ ॥

जिस जातक के जन्मकालिक लग्न से अष्टम स्थान ग्रह वर्जित हो और उस पर किसी बली ग्रह की दृष्टि हो तो उस ग्रह के धातु कोप से अर्थात् सूर्य हो तो पित्त के कोप से, चन्द्रमा हो तो वात और कफ के कोप से, मङ्गल हो तो पित्त के कोप से, बुध हो तो वात, पित्त और कफ के कोप से, बृहस्पति हो तो कफ के कोप से, शुक्र हो तो वात और पित्त के कोप से और शनि हो तो वात के कोप से उस जातक का मरण होता है।

तथा उक्त अष्टम स्थान में जो राशि हो वह काल पुरुष के जिस अङ्ग में स्थित हो विशेष करके उसी अङ्ग में पूर्वोक्त धातु कोप से उस जातक का मरण कहना चाहिए।

अगर बलवान् हो कर बहुत ग्रह ग्रहवर्जित अष्टम स्थान को देखते हों तो बहुत रोग मिश्रण हो कर उस के कोप से उस जातक का नाश कहना चाहिए।

अगर उक्त अष्टम स्थान में सूर्य स्थित हो तो अग्नि से, चन्द्रमा हो तो जल से, मङ्गल हो तो शस्त्र से, बुध हो तो ज्वर से, बृहस्पति हो तो अज्ञात रोग से, शुक्र हो तो प्यास से और शनैश्चर हो तो भूख से मरण होता है।

यहां पर भी इतना विशेष है कि वे अष्टम स्थान में स्थित सूर्यादि ग्रह बली हों तो शुभकर्म से निर्बल हों तो अशुभ कर्म से मरण कहना चाहिए।

अब मरण प्रदेश ज्ञान के लिये कहते हैं कि अगर उक्त अष्टम स्थान में चर राशि हो तो परदेश में, स्थिर राशि हो तो स्वदेश में और द्विस्वभाव राशि हो तो रास्ते में मरण कहना चाहिए ॥ १ ॥

अन्य मरण योग—

शैलाग्राभिहतस्य सूर्यकुजयोर्मृत्युः खबन्धुस्थयोः
कूपे मन्दशशाङ्कभूमितनयै ... कर्मस्थितैः ।
कन्यायां स्वजनाद्विमोषणकरयोः पापग्रहैर्दृष्टयोः
स्यातां यद्युभयोदयेऽर्कशशिनौ तोये तदा मज्जितः ॥ २ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में लग्न से चतुर्थ और दशम में किसी एक में सूर्य और दूसरे में मङ्गल हो तो उस जातक का पत्थर के चोट से मरण कहना चाहिए।

तथा शनि, चन्द्रमा और मङ्गल क्रम से चतुर्थ, सप्तम और दशम में स्थित हों तो उस जातक का कूप में गिर कर मरण होता है।

एवं सूर्य और चन्द्रमा दोनों कन्या राशि में स्थित हो कर पापग्रह से देखे जाते हों तो उस जातक का अपने बन्धुजनों के साथ मरण होता है।

यदि द्विस्वभाव राशियों (मिथुन, कन्या, धनु और मीन) में से कोई राशि लग्न में हो और उस लग्न में सूर्य, चन्द्रमा दोनों बैठे हों तो जल में डूब कर उस जातक का मरण होता है ॥ २ ॥

अन्य मरण योग—

मन्दे कर्कटगे जलोदरकृतो मृत्युर्मृगाङ्के मृगे
शस्त्राग्निप्रभवः शशिन्यशुभयोर्मध्ये कुजर्क्षे स्थिते ।
कन्यायां रुधिरोत्थशोषजनितस्तद्वत्स्थिते शीतगौ
सौरर्क्षे यदि तद्वदेव हिमगौ रज्ज्वग्निपातैः कृतः ॥ ३ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में शनैश्चर कर्क में और चन्द्रमा मकर में बैठा हो तो उस जातक का जलोदर रोग से मरण होता है।

तथा मङ्गल के गृहों (मेष और वृश्चिक) में से किसी राशि में स्थित हो कर चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य में स्थित हो तो शस्त्र या अग्नि से उस जातक का मरण होता है। यदि कन्या में स्थित हो कर चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य में स्थित हो तो रुधिर के विकार या शोषरोग (क्षय रोग) से उस जातक का मरण होता है।

यदि वा शनि के गृहों (मकर और कुम्भ) में से किसी में स्थित हो कर चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य में स्थित हो तो रस्सी (फांसी) या अग्नि से उस जातक का मरण होता है ॥ ३ ॥

बन्धाद्धीनवमस्थयोरशुभयोः सौम्यग्रहादृष्टयो-
र्द्रेष्काणैश्च ससर्पपाशनिगडैश्छिद्रस्थितैर्बन्धनात् ।
कन्यायामशुभान्वितेऽस्तमयगे चन्द्रे सिते मेषगे
सूर्ये लग्नगते च विद्धि मरणं स्त्रीहेतुकं मन्दिरे ॥ ४ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में लग्न से पञ्चम और नवम स्थान में पापग्रह स्थित हों और उन दोनों के ऊपर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो उस जातक का बन्धन से मरण होता है।

तथा लग्न से अष्टम स्थान में सर्पपाश और निगड संज्ञक द्रेष्काणों में से कोई द्रेष्काण हो तो भी बन्धन से उस जातक का मरण होता है।

कर्क का द्वितीय, तृतीय, वृश्चिक का प्रथम, द्वितीय और मीन का तृतीय सर्प पाश संज्ञक द्रेष्काण होता है। एवं मकर का प्रथम द्रेष्काण निगड संज्ञक होता है।

तथा जिस जातक के जन्मकाल में पापग्रह से युक्त चन्द्रमा कन्या राशि में स्थित हो कर लग्न से सप्तम स्थान में शुक्र मेष में और सूर्य लग्न में स्थित हो तो अपने गृह में स्त्री के कारण उस जातक की मृत्यु होती है ॥ ४ ॥

अन्य मरण योग—

शूलोद्भिन्नतनुः सुखेऽवनिसुते सूर्येऽपि वा खे यमे
सप्रक्षीणहिमांशुभिश्च युगपत्पापैस्त्रिकोणाद्यगैः।
बन्धुस्थे च रवौ वियत्यवनिजे क्षीणेन्दुसंवीक्षिते
काष्ठेनाभिहतः प्रयाति मरणं सूर्यात्मजेनेक्षिते ॥ ५ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में लग्न से चतुर्थ स्थान में सूर्य या मङ्गल और दशम में शनैश्चर हो तो उस जातक का शूल से मरण होता है।

तथा क्षीणचन्द्रमा युक्त पापग्रह पञ्चम, नवम और लग्न में बैठे हों तो भी शूल से मरण होता है।

इसी प्रकार चतुर्थ में सूर्य और दशम में मङ्गल स्थित हो तथा उन पर क्षीण चन्द्रमा की दृष्टि हो तो भी शूल से मरण होता है।

यदि चतुर्थ में सूर्य और दशम में मङ्गल स्थित हो और उन पर शनैश्चर की दृष्टि हो तो उस जातक की लकड़ी के प्रहार से मरण होता है ॥ ५ ॥

अन्य मरण योग—

रन्ध्रास्पदाङ्गहिबुकैर्लगुडाहताङ्गः प्रक्षीणचन्द्ररुधिरार्किदिनेशयुक्तैः।
तैरेव कर्मनवमोदयपुत्रसंस्थैर्धूमाग्निबन्धनशरीरनिकुट्टनान्तः ॥ ६ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में अष्टम स्थान में क्षीण चन्द्रमा, दशम स्थान में मङ्गल, लग्न में शनैश्चर और चतुर्थ स्थान में सूर्य बैठा हो तो उस जातक का लाठी के प्रहार से मरण होता है।

तथा दशम में क्षीण चन्द्रमा, नवम में मङ्गल, लग्न में शनि और पञ्चम में सूर्य हो तो धूआं, अग्नि, बन्धन या काष्ठादि प्रहार से उस जातक की मृत्यु होती है ॥ ६ ॥

अन्य मरण योग—

बन्धवस्तकर्मसहितैः कुजसूर्यमन्दैर्निर्याणमायुधशिखिक्षितिपालकोपैः ।
सौरेन्दुभूमितनयैश्च सुखास्पदस्थैर्ज्ञेयः कृमिक्षतकृतश्च शरीरपातः ॥ ७ ॥

जिस जातक के जन्मकालिक लग्न से चतुर्थ में मङ्गल, सप्तम में सूर्य और दशम में शनैश्चर स्थित हो तो उस जातक का शस्त्र, अग्नि या राजा के कोष से मरण होता है ।

तथा शनैश्चर द्वितीय में, चन्द्रमा चतुर्थ में और मङ्गल दशम में स्थित हो तो उस जातक के शरीर में कीड़े पड़ने से मरण होता है ॥ ७ ॥

अन्य मरण योग—

खस्थेऽर्केऽवनिजे रसातलगते यानप्रपाताद्वधो
यन्त्रोत्पीडनजः कुजेऽस्तमयगे सौरेन्द्विनेष्वुद्गमे ।
विण्मध्ये रुधिरार्किशीतकिरणैर्जूकाजसौरर्क्षगै-
र्यातैर्वा गलितेन्दुसूर्यरुधिरैर्व्योमास्तबन्ध्वाह्वयान् ॥ ८ ॥

जिस जातक के जन्मकालिक लग्न से दशम स्थान में सूर्य, चतुर्थ स्थान में मङ्गल बैठे हों तो उस जातक का सवारी से गिर कर मरण होता है ।

तथा लग्न से सप्तम स्थान में मङ्गल और लग्न में शनैश्चर, चन्द्रमा, सूर्य ये तीनों स्थित हों तो उस जातक का यन्त्र (ऐजन, कोल्हू आदि) से मरण होता है ।

एवं मङ्गल, शनैश्चर और चन्द्रमा क्रम से तुला, मेष और शनि के गृहों (मकर, कुम्भ) में से किसी में स्थित हों जैसे मङ्गल तुला में, शनैश्चर मेष में और चन्द्रमा मकर या कुम्भ में स्थित हो तो उस जातक का विष्ठा में गिर कर मरण होता है । इसी तरह क्षीणचन्द्रमा दशम में, सूर्य सप्तम में और मङ्गल चतुर्थ में स्थित हो तो उस जातक का भी विष्ठा में गिर कर मरण होता है ॥ ८ ॥

अन्य मरण योग—

वीर्यान्वितवक्रवीक्षिते क्षीणेन्दौ निधनस्थितेऽर्कजे ।
गुह्योद्भवरोगपीडया मृत्युः स्यात्कृमिशस्त्रदाहजः ॥ ९ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में क्षीण चन्द्रमा बलवान् मङ्गल से देखा जाता हो और शनैश्चर लग्न से अष्टम स्थान में स्थित हो तो उस जातक का गुदमार्ग में उत्पन्न रोग की पीडा से, शरीर में कीड़े पड़ने से, शस्त्र से या अग्नि में जलने से मरण होता है ॥ ९ ॥

अन्य मरण योग—

अस्ते रवौ सरुधिरे निधनेऽर्कपुत्रे
क्षीणे रसातलगते हिमगौ खगान्तः ।

लग्नात्मजाष्टमतपःस्विनभौममन्द-
चन्द्रैस्तु शैलशिखराशनिकुड्यपातैः ॥ १० ॥

जिस जातक के जन्मकाल में मङ्गल के सहित सूर्य सप्तम स्थान में, शनैश्चर अष्टम स्थान में और क्षीणचन्द्रमा चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो उस जातक का मरण पक्षी से होता है।

तथा लग्न में सूर्य, पञ्चम स्थान में मङ्गल, अष्टम स्थान में शनैश्चर और नवम स्थान में क्षीणचन्द्रमा हो तो उस जातक का पर्वत के शिखर पर से गिर कर, वज्रपात या दीवाल के गिरने से मरण होता है ॥ १० ॥

पूर्वोक्त योग के अभाव में मरण योग—

द्वाविंशः कथितस्तु कारणं द्रेष्काणो निधनस्य सूरिभिः ।
तस्याधिपतिर्भवोऽपि वा निर्याणं स्वगुणैः प्रयच्छति ॥ ११ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में पूर्व कथित मरण योगों में से कोई भी योग न हो तो जन्मकाल में जो द्रेष्काण हो उससे बाईसवां द्रेष्काण मृत्यु का कारण होता है ऐसा पण्डितों ने कहा है। किस तरह मरण का कारण होता है इसको स्पष्ट करते हैं, जैसे उस बाईसवें द्रेष्काण का जो स्वामी हो उसका जो गुण (अग्न्यम्बवायुध इत्यादि) उसके द्वारा मरण का कारण होता है। अथवा वह बाईसवां द्रेष्काण जिस राशि में पड़े उस राशि का जो स्वामी उसके गुण द्वारा मरण होता है।

वह बाईसवां द्रेष्काण लग्न से अष्टम राशि में होता है, जैसे लग्न में प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो उससे अष्टम राशि का प्रथम द्रेष्काण, लग्न में द्वितीय द्रेष्काण का उदय हो तो उससे अष्टम राशि का द्वितीय द्रेष्काण, लग्न में तृतीय द्रेष्काण का उदय हो तो उससे अष्टम राशि का तृतीय द्रेष्काण बाईसवां द्रेष्काण होता है।

अतः यहां पर यह सिद्ध हुआ कि पूर्वोक्त योगों में कोई योग जन्मकाल में नहीं हो और न अष्टम स्थान किसी भी ग्रह से युत दृष्ट हो तो बाईसवां द्रेष्काण का स्वामी और अष्टम राशि का स्वामी इन दोनों में जो बलवान् हो उसी के दोष से जातक का मरण होता है ॥ ११ ॥

किस तरह के भूमि में मरेगा इसका ज्ञान—

होरानवांशकपयुक्तसमानभूमौ
योगेक्षणादिभिरतः परिकल्प्यमेतत् ।
मोहस्तु मृत्युसमयेऽनुदितांशतुल्यः
स्वेशेक्षिते द्विगुणितस्त्रिगुणः शुभैश्च ॥ १२ ॥

जातक के जन्मकालिक लग्न में जिस राशि का नवांश हो उस राशि का स्वामी

जिस राशि में बैठा हो उस राशि के सदृश भूमि में जातक की मृत्यु होती है। यथा नवांश स्वामी मेष राशि में हो तो भेड़, बकड़ी के रहने की जगह में, वृष में हो तो गौ, बैल, भैंस आदि चतुष्पद के रहने की जगह में, मिथुन में हो तो घर में, कर्क में स्थित हो तो कूप में, सिंह में स्थित हो तो वन में, कन्या में स्थित हो तो कूप में, तुला में स्थित हो तो बाजार में, वृश्चिक में स्थित हो तो किसी छिद्र में, धनु में स्थित हो तो घोड़े के रहने की जगह में, मकर में स्थित हो तो जलप्राय देश में (जल प्रायमनूपं स्यादित्यमरः), कुम्भ में स्थित हो तो घर में और मीन में स्थित हो तो भी जलप्राय देश में मरण होता है।

यहां पर इतना विशेष ध्यान रखना चाहिए कि पूर्वोक्त मृत्यु योग में जिस जातक का मरण जलादि में कहा गया है उस को वहीं पर कहना चाहिए। राशि के वश प्रतिपादित भूप्रदेश में नहीं। अथवा वह नवांश स्वामी जिस राशि में स्थित हो उस में और अन्य कोई ग्रह स्थित हो तो उस की भूमि में जातक का मरण कहना चाहिए। अथवा नवांश स्वामी जिस ग्रह को देखता हो उस की भूमि में मरण कहना चाहिए। अथवा नवांश स्वामी जिस राशि के नवांश में स्थित हो उस के स्वामी के सदृश भूमि में मरण कहना चाहिए।

इस तरह से यदि बहुत तरह की मरण भूमि की प्राप्ति हो तो उन में जो सब से बली ग्रह हो उसी को भूमि में मरण कहना चाहिए।

यहां पर शङ्का होती है कि पूर्वोक्त राशि सम्बन्धी भूमि जो कहा गया है वह उस राशि के स्वामी का भी भूमि जानना चाहिए। परन्तु जिस ग्रह की दो राशियां हैं उस की भूमि का निश्चय किस तरह किया जायगा, इस का उत्तर यह है कि जो ग्रह दो राशियों का स्वामी है त्रिकोण राशि सम्बन्धी भूमि उस ग्रह की भूमि जाननी चाहिए।

जैसे रवि की सिंह राशि सम्बन्धी भूमि वन, चन्द्रमा के कर्क राशि सम्बन्धी जलप्रायदेश, मङ्गल की मेष राशि सम्बन्धी भेड़, बकरी के रहने की जगह, बुध की कन्या राशि सम्बन्धी जलप्रायदेश, बृहस्पति की धनु राशि सम्बन्धी बाजार, शनैश्चर की कुम्भ राशि सम्बन्धी गृह भूमि है। किसी का मत है कि रव्यादि ग्रह की 'देवाम्ब्वग्निविहारकोशशयन' इत्यादि से प्रतिपादित भूमि है।

मरण काल में मोह का ज्ञान—जन्मकालिक लग्न में जितने नवांश भोगने को बाकी रहे, उस भोग्य नवांश सम्बन्धी जितना समय हो उतने समय तक मरण समय में मोह (बेहोशी) रहती है।

अगर लग्न के ऊपर लग्नेश की दृष्टि हो तो उक्त समय से द्विगुणित समय तक बेहोशी कहनी चाहिए।

यदि लग्न के ऊपर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो उक्त समय से त्रिगुणित समय तक मोह कहना चाहिए।

एवं यदि लग्न के ऊपर लग्न स्वामी और शुभग्रह दोनों की दृष्टि हो तो उक्त समय से षड्गुणित समय तक मोह कहना चाहिए ॥ १२ ॥

मृतक के देह के परिणाम का ज्ञान—

दहनजलविमिश्रैर्भस्मसंक्लेदशोषै-
र्निधनभवनसंस्थैर्व्यालवर्गैर्विडम्बः ।
इति शवपरिणामश्चिन्तनीयो यथोक्तः
पृथुविरचितशास्त्राद्गत्यनूकादि चिन्त्यम् ॥ १३ ॥

जन्मकालिक लग्न से अष्टम स्थान में वर्तमान द्रेष्काण (लग्न के उदित द्रेष्काण से बाईसवाँ द्रेष्काण) अग्निसंज्ञक हो तो मृतक की लाश जलाई जाती है, जलसंज्ञक हो तो जल में बहाई जाती है, मिश्रसंज्ञक (शुभग्रह के द्रेष्काण पापग्रह युक्त या पापग्रह के द्रेष्काण शुभयुक्त) हो तो कहीं पर सूख जाती है, सर्पसंज्ञक हो तो विष्टा (कुत्ता, शृगाल, काक आदि के भक्षण से विष्टा) हो जाती है।

अब द्रेष्काण की संज्ञा को कहते हैं—

पापग्रहों के द्रेष्काण की अग्नि संज्ञा, शुभग्रहों के द्रेष्काण की जल संज्ञा तथा शुभग्रह के द्रेष्काण पापग्रह युक्त और पापग्रह के द्रेष्काण शुभग्रह युक्त की मिश्रसंज्ञा है।

तथा कर्क के द्वितीय, तृतीय वृश्चिक के द्वितीय और मीन के तृतीय सर्पसंज्ञक द्रेष्काण हैं।

कहा भी है—

शशिगृहपूर्वापरगः कीटस्य च मीनपश्चिमोपगतः।
निधने यस्य भवन्ति द्रेष्काणास्तस्य च मृतस्य ॥
भुञ्जन्ति वायसाद्याः प्राणिसमूहा न चास्ति सन्देहः।
पापग्रहद्रेष्काणो यस्याष्टमराशिसंस्थितो भवति ॥
दहनं प्राप्नोति नरो मृतमात्रो निश्चयात्प्रवदेत्।
एवं सौम्यद्रेष्काणो जलमध्ये क्षिप्यते नरोऽत्र मृतः ॥
सौम्यद्रेष्काणः पापैः पापद्रेष्काणोऽपि सौम्यसंयुक्तः।
यस्याष्टमभवनगतः शोषं प्राप्नोति सोऽपि मृतः ॥

तथा ज्यौतिष शास्त्र रूपी समुद्र में अनेक ग्रन्थों को देख कर मृतक की क्या गति होगी, जातक किस लोक से आया है और जन्मान्तर में किस योनि में कहाँ था इत्यादि कहना चाहिए ॥ १३ ॥

पूर्वजन्म-परिज्ञान—

गुरुरुडुपतिशुक्रौ सूर्यभौमौ यमज्ञौ विबुधपितृतिरश्चो नारकीयांश्च कुर्युः ।
दिनकरशशिवीर्याधिष्ठितास्त्र्यंशनाथाः प्रवरसमकनिष्ठास्तुङ्गह्रासादनूके ॥

सूर्य और चन्द्रमा के वश बृहस्पति, चन्द्रमा-शुक्र, सूर्य-मङ्गल और शनैश्चर-बुध क्रम से देवलोक, पितृलोक, तिर्यग्लोक और नरकलोक से आये हुए मनुष्यों को बताते हैं। जैसे सूर्य और चन्द्रमा इन दोनों में जो बलवान् हो वह बृहस्पति के द्रेष्काण में हो तो देवलोक से आये हुए को बताते हैं। अगर वह चन्द्रमा या शुक्र के द्रेष्काण का हो तो पितृलोक से, सूर्य या मङ्गल के द्रेष्काण का हो तो तिर्यग्लोक से और शनैश्चर या बुध के द्रेष्काण का हो तो नरकलोक से आये हुए मनुष्यों को बताते हैं। तथा उक्त ग्रहों के वश उक्त लोकों में किस तरह रहता था इस का ज्ञान—जैसे उक्त ग्रह अपने उच्च का हो तो उक्त लोक में श्रेष्ठ था ऐसा कहना चाहिए। अगर उच्च और नीच दोनों के मध्य में हो तो मध्यम और नीच में हो तो नीच कर्म करने वाला था ऐसा कहना चाहिए ॥ १४ ॥

भविष्य में गम्य लोक का ज्ञान—

गतिरपि रिपुरन्ध्रत्र्यंशपोऽस्तस्थितो वा
गुरुरथ रिपुकेन्द्रच्छिद्रगः स्वोच्चसंस्थः ।
उदयति भवनेऽन्त्ये सौम्यभागे च मोक्षो
भवति यदि बलेन प्रोज्झितास्तत्र शेषाः ॥ १५ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके नैर्याणिकाध्यायः पञ्चविंशः ॥ २५ ॥

जिस जातक के जन्मकाल में षष्ठ, सप्तम और अष्टम स्थान ग्रह से रहित हों तो षष्ठ और अष्टम स्थानों में जिन राशियों का द्रेष्काण हो उन दोनों में जो बली हो उस का जो पूर्वोक्त लोक उस में जातक का गमन होता है। यदि षष्ठ, सप्तम और अष्टम इन तीनों स्थानों में से किसी एक स्थान में ग्रह हो तो उस का जो पूर्वकथित लोक वह तथा दो या तीनों में ग्रह बैठे हों तो उन में जो बली हो उस का जो पूर्व प्रतिपादित लोक वह जातक को मिलता है।

मोक्ष का योग—जिस के जन्मकाल में अपने उच्च (कर्क) में स्थित हो कर बृहस्पति षष्ठ, केन्द्र या अष्टम में बैठा हो तो वह जातक मुक्त होता है।

तथा मीन में स्थित हो कर बृहस्पति लग्न में बैठा हो और शुभग्रह के अंश में हो तथा अवशिष्ट ग्रह (रवि, चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, शुक्र और शनि) बलरहित हो तो वह जातक मुक्त होता है ॥ १५ ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां नैर्याणिकाध्यायः पञ्चविंशः ।

अथ नष्टजातकाध्यायः षड्विंशः

उस में पहले अयन का ज्ञान—

आधानजन्मापरिबोधकाले सम्पृच्छतो जन्म वदेद्विलग्नात्।
पूर्वापरार्धे भवनस्य विन्द्याद्भानावुदग्दक्षिणगे प्रसूतिम्॥ १॥

जिस को अपने जन्म समय का ज्ञान नहीं है किन्तु गर्भाधान समय का ज्ञान है उस का निषेकाध्याय में कथित 'तत्कालमिन्दुसहितो द्विरसांशको यः' इत्यादि प्रकार से जन्म समय का सुख पूर्वक ज्ञान हो सकता है।

किन्तु जिस का जन्मकाल और गर्भाधानकाल दोनों में से किसी का ज्ञान नहीं है उस के जन्मकाल का ज्ञान किस तरह करना चाहिए इस को बताते हैं।

जैसे जिस समय प्रश्नकर्ता प्रश्न करे उस समय तात्कालिक स्पष्ट रवि बना कर लग्न साधन करना, उस लग्न के अंश पंद्रह से अल्प हों तो उत्तरायण सूर्य में और पन्द्रह से ज्यादा हो तो दक्षिणायन सूर्य में जन्म कहना चाहिए॥ १॥

वर्ष और ऋतु का ज्ञान—

लग्नत्रिकोणेषु गुरुस्त्रिभागैर्विकल्प्य वर्षाणि वयोऽनुमानात्।
ग्रीष्मोऽर्कलग्ने कथितास्तु शेषैरन्यायनर्तावृतुरर्कचारात्॥ २॥

प्रश्नकालिक लग्न में वर्तमान द्रेष्काण से बृहस्पति की स्थिति जाननी चाहिए।

जैसे प्रश्न लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो उसी राशि के बृहस्पति रहने पर जन्म कहना चाहिए।

यदि प्रश्न लग्न में दूसरा द्रेष्काण हो तो लग्न से पञ्चम राशि में स्थित बृहस्पति में जन्म कहना चाहिए।

अथवा प्रश्न लग्न में तीसरा द्रेष्काण हो तो लग्न से नवम राशि में स्थित बृहस्पति में जन्म कहना चाहिए।

किसी का मत है कि प्रश्न लग्न में प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्न काल में प्रश्न लग्न से जितनी संख्या वाली राशि में बृहस्पति वर्तमान हो उतने वर्ष प्रश्नकर्ता का कहना चाहिए।

तथा प्रश्न लग्न में द्वितीय द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्न लग्न से पांचवें स्थान की राशि से जितनी संख्या वाली राशि में बृहस्पति हो उतने वर्ष प्रश्नकर्ता का कहना चाहिए।

एवं प्रश्न लग्न में तृतीय द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्न लग्न से नवें स्थान की राशि से जितनी संख्या वाली राशि में बृहस्पति वर्तमान हो उतने वर्ष प्रश्नकर्ता का कहना चाहिए।

परञ्च एतादृश अर्थ करना ठीक नहीं है पहला अर्थ ही सर्वसम्मत है।

यथा यवनाचार्य—

द्रेष्काणलग्नक्रमतस्तु राशौ गुरुर्विलग्नादित्रिकोणगोऽभूत् ।
समुद्गते तद्भवनक्रमेण स्वाचारभादब्दगतिः प्रगण्यात् ॥

इस तरह सामान्य रूप से बृहस्पति की स्थिति प्रकार कहा गया है ।

पर विशेष तो यहां पर यह है कि प्रश्नकालिक लग्न में प्रथम द्वादशांश का उदय हो तो लग्न में बृहस्पति के रहने पर जन्म कहना चाहिए ।

दूसरे द्वादशांश का उदय हो तो प्रश्न लग्न से दूसरे स्थान में स्थित गुरु में जन्म कहना चाहिए ।

तीसरे द्वादशांश का उदय हो तो प्रश्न लग्न से तीसरे स्थान में स्थित बृहस्पति में जन्म कहना चाहिए । और चतुर्थ द्वादशांश का उदय हो तो प्रश्न लग्न से चतुर्थ स्थान में स्थित बृहस्पति में जन्म कहना चाहिए ।

एवं पञ्चमादि द्वादशांश के वश पञ्चमादि स्थान में स्थित गुरु में जन्म कहना चाहिए ।

वय के अनुमान से वर्ष कहना चाहिये । जैसे पूर्वोक्त प्रकार से लाये हुए बृहस्पति से प्रश्नकालिक बृहस्पति पर्य्यन्त गिने यदि १२ वर्ष से अल्प हो तो उतनी ही प्रश्न कर्ता की अवस्था जाननी चाहिये, यदि बारह वर्ष से ज्यादा हो तो १२ में पूर्वोक्त संख्या को जोड़ कर अवस्था कहनी चाहिए ।

अगर २४ वर्ष से ज्यादा मालूम पड़े तो चौबीस में पूर्वोक्त संख्या को जोड़ कर अवस्था कहनी चाहिए इसी तरह आगे भी विचार करे ।

जब इस तरह से आनीत अवस्था में सन्देह हो तो पुरुष लक्षण से अवस्था जाननी चाहिए ।

यथा पुरुष लक्षण में कहा है—

पादौ सगुल्फौ प्रथमं प्रदिष्टं जङ्घे द्वितीये तु सजानुवक्त्रे ।
मेढ्रोरुमुष्काश्च ततस्तृतीयं नाभिं कटिं चेति चतुर्थमाहुः ॥
उदरं कथयन्ति पञ्चमं हृदयं षष्ठमथ स्तनान्वितः ।
अथ सप्तममंसजत्रुणी कथयन्त्यष्टममोष्ठकन्धरे ॥
नवमं नयने च सभ्रुणी सललाटं दशमं शिरस्तथा ।
अशुभेष्वशुभं दशाफलं चरणाद्येषु शुभेषु शोभनम् ॥

प्रश्न कर्ता प्रश्नकाल में जिस अङ्ग को हाथ से स्पर्श करते हुए प्रश्न करे उसके अनुसार वय कल्पना करके कहना चाहिए ।

जैसे पांव स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो एक वर्ष, जङ्घा को स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो दो वर्ष इत्यादि प्रकार से अवस्था जाननी चाहिये ।

जिस की उमर १२० वर्ष से ज्यादा हो उसकी नष्ट कुण्डली नहीं बनती है।

अब जन्मकालिक ऋतु का ज्ञान। प्रश्नसमय में लग्न में सूर्य हो या सूर्य का द्रेष्काण हो तो ग्रीष्म ऋतु में जन्म कहना चाहिए। शेष चन्द्रादि ग्रह हो तो पूर्वोक्त (द्रेष्काणैः शिशिरादयः शशुरुचज्ञ०) प्रकार से ऋतु का ज्ञान करना चाहिए।

जैसे प्रश्नकालिक लग्न में शनि या शनि का द्रेष्काण हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसन्त, मङ्गल हो तो ग्रीष्म, चन्द्रमा हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद, गुरु हो तो हेमन्त ऋतु में जन्म कहना चाहिए।

यदि लग्न में बहुत ग्रह हों तो बली ग्रह के वश आई हुई ऋतु कहनी चाहिए। अगर कोई भी ग्रह लग्न में न हो तो द्रेष्काण के वश आई ऋतु में जन्म कहना चाहिए।

अयन और ऋतु के विपरीत होने पर ऋतु, मास और तिथि का ज्ञान—

चन्द्रज्ञजीवाः परिवर्तनीयाः शुक्रारमन्दैरयने विलोमे।
द्रेष्काणभागे प्रथमे तु पूर्वो मासोऽनुपाताच्च तिथिर्विकल्प्यः॥ ३॥

जहां पर ऋतु, अयन इन दोनों में फरक हो वहां चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति इन को क्रम से शुक्र, मङ्गल, शनैश्चर इन तीनों के साथ परिवर्तन कर के ऋतु कहनी चाहिए। जैसे वर्षा से वसन्त, शरद से ग्रीष्म और हेमन्त से शिशिर ऋतु जाननी चाहिए। जैसे किसी प्रश्नकर्त्ता के जन्मकाल निर्णय करने में उत्तरायण में वर्षा ऋतु आई हो तो वहां पर वसन्त, शरद ऋतु आई हो तो उस के जगह ग्रीष्म ऋतु और हेमन्त के स्थान में शिशिर ऋतु कहनी चाहिए।

एवं यदि दक्षिणायन में वसन्त का ज्ञान हो तो वसन्त के स्थान में वर्षा, ग्रीष्म के स्थान में शरद और शिशिर के स्थान में हेमन्त ऋतु कहनी चाहिए।

अब मास का ज्ञान करते हैं।

प्रश्नकालिक लग्न में पहला द्रेष्काण पड़े तो पूर्वोक्त प्रकार से आई हुई ऋतु का पहला मास, दूसरा द्रेष्काण पड़े तो उक्त ऋतु का दूसरा मास जानना चाहिए।

प्रश्न लग्न में तीसरा द्रेष्काण पड़े तो उस द्रेष्काण को दो भाग करने से लग्न के अंश पहले भाग में पड़े तो पहला मास और दूसरे में पड़े तो दूसरा मास जानना चाहिए।

अब तिथि का ज्ञान करते हैं। द्रेष्काण के द्वारा अनुपात से तिथि का ज्ञान करना चाहिए।

जैसे एक द्रेष्काण में १० अंश और ६०० कला होती है, इस से ऋतु (दो मास) का ज्ञान होता है तो अनुपात किये कि ६०० कला में दो मास (६० दिन) पाते

है तो वर्तमान द्रेष्काण सम्बन्धी कला में क्या आया तिथि मान = $\frac{२ \text{ द्रे० सं० क०}}{६००}$ = $\frac{\text{द्रे० सं० क०}}{३००}$, आया, अर्थात् लब्धि तुल्य सूर्य के अंश पूर्वागत वर्तमान में बीतने पर जन्म कहना चाहिए।

यह सौर मान से तिथि जांचने का प्रकार है।

चान्द्रतिथि, दिवा, रात्रि और जन्मकाल का ज्ञान प्रकार—

अत्रापि होरापटवो द्विजेन्द्राः सूर्यांशतुल्यां तिथिमुद्दिशन्ति।
रात्रिद्युसंज्ञेषु विलोमजन्म भागैश्च वेलाः क्रमशो विकल्प्याः॥ ४॥

होरा शास्त्र के जानने वाले पटु पण्डित ब्राह्मणों में श्रेष्ठ लोग सूर्यांश के समान शुक्लादि तिथि कहते हैं, मकरादि राशि में स्थित सूर्य से माघ आदि चान्द्र मास लेना चाहिए।

अब दिन रात्रि का ज्ञान—

प्रश्नकालिक लग्न 'गोजाश्विकर्किमिथुना' इत्यादि पूर्वोक्त प्रकार से दिन संज्ञक हो तो रात्रि और रात्रि संज्ञक हो तो दिन में जन्म कहना चाहिए।

अब समय का ज्ञान करते हैं। पूर्वोक्त प्रकार से निकले हुए सूर्य के द्वारा दिन मान और रात्रिमान बना कर रख ले बाद दिन में जन्म हो तो दिनमान से और रात्रि में जन्म हो तो रात्रिमान से प्रश्न कालिक लग्न के स्वदेशीय भुक्त पलों को गुणा कर लग्न के स्वदेशीयोदय मान से भाग देने पर जो लब्धि हो वही इष्टघटी आदि समझनी चाहिए॥ ४॥

अन्य के मत से मास और जन्म राशि का ज्ञान—

केचिच्छशाङ्काध्युषितान्नवांशाच्छुक्लान्त्यसंज्ञं कथयन्ति मासम्।
लग्नत्रिकोणोत्तमवीर्ययुक्तं भं प्रोच्यतेऽङ्गालभनादिभिर्वा॥ ५॥

किसी आचार्य का मत है कि चन्द्रमा के नवांश में जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र में जिस महीने में पूर्णवली चन्द्र हो उस महीने में जन्म कहना चाहिए। जैसे नवांश सम्बन्धी नक्षत्र कृत्तिका हो तो कार्तिक में, मृगशिरा हो तो अग्रहण में पुष्य हो तो पौष में, मघा हो तो माघ में, पूर्वाफाल्गुनी हो तो फाल्गुन में, चित्रा हो तो चैत्र में, विशाखा हो तो वैशाख में, ज्येष्ठा हो तो ज्येष्ठ में, उत्तराषाढ हो तो आषाढ में, श्रवण हो तो श्रावण में, पूर्वभाद्र हो तो भाद्र में और अश्विनी हो तो आश्विन में जन्म कहना चाहिए।

परञ्च जिस नक्षत्र का शुक्लान्त संज्ञक मास नहीं है वहां पर बृहस्पति के चार के समान शुक्लान्त संज्ञक मास जानना चाहिए। यहां कहा है कि,

'नक्षत्रेण सहोदयमुपगच्छति येन देवपतिमन्त्री ।
तत्संज्ञं वक्तव्यं वर्षं मासक्रमेणैव ॥
वर्षाणि कार्तिकादीन्याग्नेयाद्भद्वयानि योज्यानि ।
क्रमशस्त्रिभं च पञ्चममुपान्त्यमन्त्यं च यद्वर्षम् ॥

अर्थ—बृहस्पति का उदय जिस मास के जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र के अनुसार मास तुल्य सञ्ज्ञा वर्ष की होती है। मास बारह होने के कारण कुल वर्ष भी बारह होंगे, वहां कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ कर दो दो नक्षत्रों के कार्तिकादि वर्ष होंगे। केवल पञ्चम, एकादश और द्वादश वर्ष तीन २ नक्षत्र के होते हैं। अतः यहां पर सिद्ध हुआ कि मेष के अष्टम नवांश से ऊपर वृष के सप्तम नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो कार्तिक, वृष के सप्तम नवांश से ऊपर मिथुन के षष्ठ नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो अग्रहण (मार्गशीर्ष), मिथुन के षष्ठ नवांश से ऊपर कर्क के पञ्चम नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो पौष, कर्क के पञ्चम नवांश से ऊपर सिंह के चतुर्थ नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो माघ, सिंह के चतुर्थ नवांश के ऊपर कन्या के सप्तम नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो फाल्गुन, कन्या के सप्तम नवांश से ऊपर तुला के षष्ठ नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो चैत्र, तुला के षष्ठ नवांश से ऊपर वृश्चिक के पञ्चम नवांश के भीतर चन्द्रमा हो तो वैशाख, वृश्चिक के पञ्चम नवांश के ऊपर धन के चतुर्थ नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो ता ज्येष्ठ, धन के चतुर्थ नवांश के ऊपर मकर के तृतीय नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो आषाढ, मकर के तृतीय नवांश से ऊपर कुम्भ के द्वितीय नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो श्रावण, कुम्भ के द्वितीय नवांश से ऊपर मीन के पञ्चम नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो भाद्रपद और मीन के पञ्चम नवांश से ऊपर मेष के अष्टम नवांश पर्य्यन्त चन्द्रमा हो तो आश्विन महीने में जन्म कहना चाहिए।

अर्थात् चन्द्रमा के नवांश में कृत्तिका या रोहिणी नक्षत्र हो तो कार्तिक, मृगशिरा या आर्द्रा हो तो मार्गशीर्ष, पुनर्वसु या पुष्य हो तो पौष, अश्लेषा या मघा हो तो माघ, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी या हस्त हो तो फाल्गुन, चित्रा या स्वाती हो तो चैत्र, विशाखा या अनुराधा हो तो वैशाख, ज्येष्ठा या मूल हो तो ज्येष्ठ, पूर्वाषाढ या उत्तराषाढ हो तो आषाढ, श्रवण या धनिष्ठा हो तो श्रावण, शतभिषा, पूर्वाभाद्र, या उत्तरा भाद्र हो तो भाद्रपद, रेवती, अश्विनी या भरणी हो तो आश्विन मास जानना चाहिए।

यहां पर यवनेश्वर का वचन—

मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्ते पूर्वे शशी मध्यबलो दशाहे ।
यद्राशिसंज्ञे शीतांशुः प्रश्नकाले नवांशके ॥
स्थितस्तद्राशिगः पूर्णो यस्मिन् भवति चन्द्रमाः ।

जन्ममासः स निर्दिष्टः पुरुषस्य तु पृच्छतः ।
कृष्णपक्षान्तिको मासो ज्ञेयोऽत्र तु विपश्चिता ॥

अब जन्म राशि का ज्ञान करते हैं।

जैसे प्रश्नकालिक लग्न, पञ्चम, नवम इन तीनों राशियों में जो सब से अधिक बलवान् राशि हो उस में जन्म कहना चाहिए।

अथवा प्रश्न पूछने के समय में प्रश्न कर्ता का हाथ जिस अङ्ग को स्पर्श करता हो उस अङ्ग में जिस राशि का 'कालाङ्गानि वराङ्गमित्यादि' प्रकार से स्थिति हो उस राशि में जन्म कहना चाहिए।

अथवा प्रश्न समय में जो जीव देख पड़े या जिस जीव का बोलना श्रवण हो उस के अनुसार राशि की कल्पना करे,

यहां पर यवनेश्वर—

होरादिवीर्याधिकलग्नभाजि स्थानं त्रिकोणे शशिनोऽवधार्यम् ॥ ५ ॥

प्रकारान्तर से जन्म राशि का ज्ञान—

यावान् गतः शीतकरो विलग्नाच्चन्द्राद्वदेत्तावति जन्मराशिः ।
मीनोदये मीनयुगं प्रदिष्टं भक्ष्याहृताकाररुतैश्च चिन्त्यम् ॥ ६ ॥

प्रश्नकालिक लग्न से जितने संख्यक स्थान में चन्द्रमा स्थित हो चन्द्रमा से उतने संख्यक स्थान में जो राशि हो उसी राशि में जन्म कहना चाहिये।

यदि प्रश्न लग्न मीन हो तो मीन राशि में ही जन्म कहना चाहिये। इन अनेक प्रकारों से जन्म राशि एक ही आवे तो निर्विवाद उसी राशि में जन्म कहना चाहिये। अगर भिन्न २ राशि आवे तो वहां प्रश्न काल में आई हुई खाने की चीज के स्वरूप से या पशु-पक्षी आदि के दर्शन या उनके शब्द श्रवण से मेष, बैल, महिष आदि से वृष इत्यादि जन्म राशि कहना चाहिए ॥ ६ ॥

जन्म लग्न का ज्ञान—

होरानवांशप्रतिमं विलग्नं लग्नाद्रविर्यावति वा दृकाणे ।
तस्माद्वदेत्तावति वा विलग्नं प्रष्टुः प्रसूताविति शास्त्रमाह ॥ ७ ॥

प्रश्नकालिक लग्न में जिस राशि का नवांश हो वही राशि जन्म लग्न में कहना चाहिए।

अथवा प्रश्न लग्न में जो द्रेष्काण वर्तमान हो उस से जितने संख्यक द्रेष्काण में सूर्य हो प्रश्न लग्न से उतनी संख्यक राशि को जन्म लग्न कहना चाहिये ॥ ७ ॥

प्रकारान्तर से लग्न का ज्ञान—

जन्मादिशेल्लग्नगवीर्ययोगे वा छायाङ्गुलघ्नेऽर्कहतेऽवशिष्टम् ।

आसीनसुप्तोत्थिततिष्ठता भं जायासुखाज्ञोदयगं प्रदिष्टम् ॥ ८ ॥

प्रश्नकालिक लग्न में जो ग्रह हो उस को तात्कालिक बनाकर लिप्ता पिण्ड बनावे। अगर लग्न में बहुत ग्रह हों तो उन में जो बली हो उस को तात्कालिक कर के लिप्ता पिण्ड बनावे। तथा प्रश्न समय में द्वादश अङ्गुल शङ्कुकी छाया अङ्गुलात्मक जितनी हो उस से लिप्ता पिण्ड को गुणा कर द्वादश का भाग देने से जो शेष रहे वह जन्म लग्न जानना चाहिए।

जैसे अगर प्रश्न कर्ता बैठ कर प्रश्न करे तो प्रश्नकालिक लग्न से सप्तम स्थान में जो राशि पड़े उसी राशि का जन्मलग्न जानना चाहिए।

अगर पड़े २ प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न से जो चतुर्थ राशि हो वही जन्मलग्न समझना चाहिए।

यदि बिछौने या किसी अन्य स्थान से उठते हुए प्रश्न करे तो प्रश्नकालिक लग्न से जो दशम राशि हो वही जन्मलग्न की राशि होती है। यदि खड़े हो कर प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न ही जन्मलग्न समझना चाहिए।

कहा भी है—

उत्तिष्ठतो विलग्नात्प्रष्टुः सुप्तस्य बन्धुलग्नाच्च।
उपविष्टस्यास्तमये व्रजतो मेषूरणस्थानात्॥ ८॥

प्रकारान्तर से नष्ट जातक का ज्ञान—

गोसिंहौ जितुमाष्टमौ क्रियतुले कन्यामृगौ च क्रमा-
त्संवर्ग्या दशकाष्टसप्तविषयैः शेषाः स्वसंख्यागुणाः।
जीवारास्फुजिदैन्दवाः प्रथमवच्छेषा ग्रहाः सौम्यव-
द्राशीनां नियतो विधिर्ग्रहयुतैः कार्याश्च तद्वर्गणाः ॥ ९ ॥

प्रश्न लग्न का कलापिण्ड कर उसके गुणकाङ्क से गुणा करे। अगर लग्न में कोई ग्रह हो तो उसके गुणकाङ्क से भी पूर्व गुणनफल को गुणा करे।

राशि के गुणकाङ्क क्रम से ये हैं, वृष और सिंह का दश, मिथुन और वृश्चिक का आठ, मेष और तुला का सात, कन्या और मकर का पांच और शेष राशियों के राशि संख्या तुल्य गुणक होते हैं। जसे कर्क का चार, धन का नव, कुम्भ का एग्यारह और मीन का बारह गुणक होता है।

तथा ग्रह का गुणकाङ्क क्रम से सूर्य का पांच, चन्द्र का पांच, मङ्गल का आठ, बुध का पांच, बृहस्पति का दश, शुक्र का सात, शनैश्चर का पांच और राहु, केतु का कुछ भी नहीं है ॥ ९ ॥

स्फुटार्थ गुणकाङ्क चक्र—

राशि	मेष	वृष	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
राशिके गुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रह	र.	च.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.					
ग्रहके गुणक	५	५	५	५	१०	७	५					

नक्षत्र का ज्ञान—

सप्ताहतं त्रिघनभाजितशेषमृक्षं दत्त्वाऽथवा नवविशोध्य न वाऽथवास्यात्
एवं कलत्रसहजात्मजशत्रुभेभ्यः प्रष्टुर्वदेदुदयराशिवशेन तेषाम् ॥१०॥

पूर्वानीत कला पिण्ड को सात से गुणा कर उसमें लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो नव जोड़ देवे, दूसरा द्रेष्काण हो तो वैसा ही रहने देवे (न कुछ जोड़े न कुछ घटावे) तीसरा द्रेष्काण हो तो नव हीन करे, उसमें सत्ताईस का भाग देने से जो शेष रहे वह प्रश्नकर्ता के अश्विनी आदि से जन्म नक्षत्र जानना चाहिये ।

यहाँ पर किसी आचार्य का मत है कि पूर्वानीत कला पिण्ड को सात से गुणा कर यदि प्रश्न लग्न चर राशि में हो तो उसमें नव जोड़ देवे, स्थिर राशि में हो तो वैसा ही रहने देवे, द्विस्वभाव राशि में हो तो नव घटा देवे, शेष में सत्ताईस का भाग देने से जो शेष बचे वही अश्विन्यादि क्रम से जन्म नक्षत्र जानना ।

इसी तरह यदि कोई अपनी स्त्री का नक्षत्र पूछे तो प्रश्न कालिक लग्न से सप्तम राशि द्वारा पूर्वोक्त क्रिया करके नक्षत्र ज्ञान करे उसे उसकी स्त्री का जन्म नक्षत्र कहना चाहिए ।

यदि भाई का नक्षत्र पूछे तो प्रश्न लग्न से तृतीय स्थान द्वारा और शत्रु का जन्म नक्षत्र पूछे तो प्रश्न लग्न से षष्ठ स्थान द्वारा पूर्वोक्त क्रिया करके जन्म नक्षत्र कहना चाहिए ॥ १० ॥

प्रकारान्तर से वर्षादि का ज्ञान—

वर्षर्तुमासतिथयो द्युनिशं ह्युडूनि
वेलोदयर्क्षनवभागविकल्पनाः स्युः ।
भूयो दशादिगुणिताः स्वविकल्पभक्ता
वर्षादयो नवकदानविशोधनाभ्याम् ॥ ११ ॥

पूर्वोक्त प्रकार से तात्कालिक लग्न के कला पिण्ड को राशि के गुणकाङ्क से गुणा कर ग्रह के गुणकाङ्क से गुणा करे । फिर उसको चार स्थान में स्थापित करके

एक स्थान में दश से, दूसरे स्थान में आठ से, तीसरे स्थान में सात से और चौथे स्थान में पाँच से गुणा कर उन सबों में पूर्वोक्त प्रकार से जैसा जहाँ योग्य हो उस तरह नव जोड़ कर, न जोड़ कर न घटाकर या घटाकर अपने-अपने विकल्पों से भाग देने से वर्ष आदि (वर्ष, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, दिन, रात, नक्षत्र, वेला, लग्न, नवांश आदि) का ज्ञान होता है। इसको आगे स्पष्ट करते हैं ॥ ११ ॥

पूर्वोक्त वर्ष आदि का स्पष्ट ज्ञान—

विज्ञेया दशकेष्वब्दा ऋतुमासास्तथैव च।
अष्टकेष्वपि मासार्द्धौं तिथयश्च तथा स्मृताः ॥ १२ ॥

पूर्व में आनीत दश गुणित कलापिण्ड में एक सौ वीस का भाग देने से जो शेष रहे वह गत वर्ष होता है। उसी अङ्क में छै का भाग देने से शेष शिशिर आदि ऋतु (एक शेष वचे तो शिशिर, दो शेष वचे तो वसन्त, तीन शेष वचे तो ग्रीष्म, चार शेष वचे तो वर्षा, पाँच शेष वचे तो शरद् और छै शेष वचे तो हेमन्तऋतु) होती हैं।

तथा उसी दश गुणित अङ्क में दो का भाग देने से एक शेष वचे तो उक्त ऋतु के प्रथम मास और शून्य शेष वचे तो दूसरा मास जन्ममास होता है।

इसी तरह दूसरे स्थान में आठ से गुणे हुए अङ्क में दो का भाग देने से एक शेष वचे तो शुक्लपक्ष और शून्य शेष वचे तो कृष्णपक्ष जन्म का पक्ष होता है।

फिर उसी अङ्क में पन्द्रह का भाग देने से जो शेष वचे वह जन्मतिथि होती है ॥

दिन, रात्रि आदि ज्ञान के प्रकार—

दिवारात्रिप्रसूतिं च नक्षत्रानयनं तथा।
सप्तकेष्वपि वर्गेषु नित्यमेवोपलक्षयेत् ॥ १४ ॥

तीसरे स्थान में सात से गुणे हुए पूर्व कथित अङ्कों में दो का भाग देने से एक शेष वचे तो दिन में और शून्य शेष वचे तो रात्रि में जन्म कहना चाहिए। तथा उसी में सत्ताईस का भाग देने से जो शेष वचे वह अश्विनी आदि क्रम से जन्म नक्षत्र होता है ॥ १३ ॥

इष्टकाल जानने का प्रकार—

वेलामथ विलग्नं च होरामंशकमेव च।
पञ्चकेषु विजानीयान्नष्टजातकसिद्धये ॥ १५ ॥

चौथे स्थान में पाँच से गुणे हुए अङ्कों में जन्म हो तो दिनमान से, रात्रि में जन्म हो तो रात्रिमान से भाग देने पर जो शेष वचे वह दिन या रात्रि में गत इष्टघटी होती है।

अब इष्टकाल का ज्ञान हो जाने से राश्यादि लग्न का ज्ञान करके उसके होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश और त्रिंशांश का ज्ञान करना चाहिए।

एवं उस समय में तात्कालिक ग्रहों का ज्ञान करना चाहिए। बाद में पूर्वकथित प्रकार से दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग आदि से फलादेश कहना चाहिए ॥ १४ ॥

प्रकारान्तर से पुनः जन्म नक्षत्र का ज्ञान—

संस्कारनाममात्रा द्विगुणा छायाङ्गुलैः समायुक्ता ।
शेषं त्रिनवकभक्ता नक्षत्रं तद्धनिष्ठादि ॥ १५ ॥

प्रश्नकर्ता के पुकारने का जो नाम हो उसमें जितनी मात्राएँ हों उस को दो से गुण कर उसमें उस समय १२ अङ्गुल शङ्कु की छाया माप कर मिलावे। उसमें २७ का भाग देने से जो शेष बचे वह धनिष्ठा आदि क्रम से जन्म नक्षत्र जानना चाहिए।

मात्रा जानने का पद्य—

एकमात्रो भवेद्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते ।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनञ्चार्द्धमात्रकम् ॥ १५ ॥

पुनः प्रकारान्तर से जन्म नक्षत्र का ज्ञान—

द्वित्रिचतुर्दशदशतिथिसप्तत्रिगुणा नवाष्टचैन्द्राद्याः ।
पञ्चदशघ्नास्तद्दिङ्मुखान्विता भं धनिष्ठादि ॥ १६ ॥

प्रश्नकर्ता का मुख जिस दिशा की तरफ हो उस दिशा के अङ्क को पन्द्रह से गुण कर फिर उसमें प्रश्न करने के समय उस स्थान पर जितने मनुष्य जिस २ दिशा की तरफ मुख करके बैठे हों उन दिशाओं का अङ्क जोड़ देवे, उसमें सत्ताइस का भाग देने से जो शेष बचे वह धनिष्ठा आदि क्रम से जन्म नक्षत्र होता है।

पूर्व आदि दिशाओं का अङ्क 'पूर्व दिशा का दो, अग्नि कोण का तीन, दक्षिण का चौदह, नैर्ऋत्य कोण का दश, पश्चिम का पन्द्रह, वायव्य कोण का इक्कीस, उत्तर का नव और ईशान कोण का आठ' ये हैं ॥ १६ ॥

नष्टजातक का उपसंहार—

इति नष्टजातकमिदं बहुप्रकारं मया विनिर्दिष्टम् ।
ग्राह्यमतः सच्छिष्यैः परीक्ष्य यत्नाद्यथा भवति ॥ १७ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके नष्टजातकाध्यायः षड्विंशः ॥२६॥

वराहमिहिराचार्य कहते हैं कि इस तरह बहुत प्रकार से मैंने नष्टजातक कहा है। किन्तु इसमें बुद्धिमान् छात्र लोग यत्नपूर्वक परीक्षा करके जो यथार्थ घटे उसको ग्रहण करें ॥ १६ ॥

इति बृहज्जातके 'विमला' नामकहिन्दीटीकायां नष्टजातकाध्यायः षड्विंशः ।

अथ द्रेष्काणाध्यायः सप्तविंशः

मेष के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

कट्यां सितवस्त्रवेष्टितः कृष्णः शक्त इवाभिरक्षितुम्।
रौद्रः परशुं समुद्यतं धत्ते रक्तविलोचनः पुमान्॥ १॥

कमर में सफेद वस्त्र लपेटा हुआ, काला वर्ण, रक्षा करने में समर्थ, भयानक स्वरूप, फरसा को धारण किया हुआ, लाल नेत्रवाला और पुरुष संज्ञक, यह मेष के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है॥ १॥

मेष के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

रक्ताम्बरा भूषणभक्ष्यचिन्ता कुम्भाकृतिर्वाजिमुखी तृषार्ता।
एकेन पादेन च मेषमध्ये द्रेष्काणरूपं यवनोपदिष्टम्॥ २॥

लाल वस्त्र, भूषण और भोजन के लिये चिन्तित, घड़े के समान स्वरूप, घोड़े के समान मुख, प्यास से पीड़ित और एक पैर से युक्त, यह मेष के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप यवनाचार्यों ने कहा है।

किसी आचार्य का मत है कि घोड़े के समान मुख होने के कारण यह चतुष्पद द्रेष्काण है। तथा स्त्रीसंज्ञक द्रेष्काण और खगमुखद्रेष्काण है॥ २॥

मेष के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

क्रूरः कलाज्ञः कपिलः क्रियार्थी भग्नव्रतोऽभ्युद्यतदण्डहस्तः।
रक्तानि वस्त्राणि बिभर्ति चण्डो मेषे तृतीयः कथितस्त्रिभागः॥ ३॥

क्रूर स्वभाव, कलाओं का ज्ञाता, पिङ्गल वर्ण, क्रियाओं का अभिलाषी, नियम के पालन से रहित, लाठी धारण करने वाला, रक्त वस्त्र वाला और क्रोधी, यह मेष के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप है।

कोई आचार्य इसको नरद्रेष्काण, शस्त्र से युक्त और जीवों में आसक्त कहते है।

वृष के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

कुञ्चितलूनकचा घटदेहा दग्धपटा तृषिताशनचित्ता।
आभरणान्यभिवाञ्छति नारी रूपमिदं वृषभे प्रथमस्य॥ ४॥

कुटिल और कतरे हुए केश वाली, घड़े के समान शरीर तथा जले हुये कपड़े वाली, प्यास से दुःखी, भोजन को चाहने वाली, भूषणों को चाहने वाली तथा स्त्री संज्ञक, यह वृष राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है।

कोई आचार्य साग्निक और शुक्र सक्त भी कहते हैं॥ ४॥

वृष के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

क्षेत्रधान्यगृहधेनुकलाज्ञो लाङ्गले सशकटे कुशलश्च।

स्कन्धमुद्वहति गोपतितुल्यं क्षुत्परोऽजवदनो मलवासाः ॥५॥

खेती, अन्न, गृह, गौ, कला (गीत, वाद्य, नृत्य, लेख) इन को जानने वाला, हल जोतने तथा गाड़ी चलाने में कुशल, बैल के समान गर्दन वाला, भूख से दुःखी, बकरे के सदृश मुख वाला और मलिन वस्त्र धारण करने वाला, यह वृष के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है ।

इस को नरद्रेष्काण अथवा चतुष्पद द्रेष्काण और बुधसक्त कहते हैं ॥ ५ ॥

वृष के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

द्विपसमकायः पाण्डुरदंष्ट्रः शरभसमाङ्घ्रिः पिङ्गलमूर्तिः ।
अविमृगलोभव्याकुलचित्तो वृषभवनस्य प्रान्तगतोऽयम् ॥ ६ ॥

हाथी के समान शरीर वाला, सफेद दांत वाला, ऊँट के समान पांव वाला, पीले वर्ण के शरीर वाला और भेड़ तथा हरिण के लिये व्याकुल चित्तवाला, यह वृष राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है ।

कोई नरसंज्ञक, कोई चतुष्पद संज्ञक कहते हैं । इस का स्वामी शनि है ॥ ६ ॥

मिथुन के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

सूच्याश्रयं समभिवाञ्छति कर्म नारी रूपान्विताभरणकार्यकृतादरा च ।
हीनप्रजोच्छ्रितभुजर्तुमती त्रिभागमाद्यंतृतीयभवनस्य वदन्ति तज्ज्ञाः ।७।

सूई के काम को चाहने वाली, स्त्री, रूपवती, भूषणों में विशेष कर आदर रखने वाली, सन्तान से रहित, दोनों भुजा उठाये हुई और रजस्वला, यह मिथुन के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है । इस का स्वामी बुध है ॥ ७ ॥

मिथुन के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

उद्यानसंस्थः कवची धनुष्मान्शूरोऽस्त्रधारी गरुडाननश्च ।
क्रीडात्मजाऽलङ्करणार्थचिन्तां करोति मध्ये मिथुनस्य राशेः ॥ ८ ॥

बगीचे में रहने वाला, कवच, धनुष तथा अस्त्र धारण करने वाला, गरुड़ पक्षी के सदृश मुख वाला और खेल, सन्तान, भूषण तथा धन की चिन्ता करने वाला, यह मिथुन के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप है ।

यह मनुष्यसंज्ञक या पक्षीसंज्ञक द्रेष्काण है, इस का स्वामी शुक्र है ॥ ८ ॥

मिथुन के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

भूषितो वरुणवद्बहुरत्नो बद्धतूणकवचः सधनुष्कः ।
नृत्यवादितकलासु च विद्वान् काव्यकृन्मिथुनराश्यवसाने ॥९॥

भूषणों से युत, वरुण के समान अनेक रत्नों से युत, तूणीर तथा कवच को धारण करने वाला, धनुष रखने वाला, नृत्य, वाद्य तथा कलाओं में पण्डित और काव्य बनाने वाला, यह मिथुन राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है ।

यह नरसंज्ञक द्रेष्काण है, इस का स्वामी शनि है ॥ ९ ॥

कर्क राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

पत्रमूलफलभृद्द्विपकायः कानने मलयगः शरभाङ्घ्रिः ।

क्रोडतुल्यवदनो हयकण्ठः कर्कटे प्रथमरूपमुशन्ति ॥ १० ॥

पत्र-मूल-फलों को धारण करने वाला, हाथी के समान शरीर वाला, वन में चन्दन वृक्ष के नीचे रहने वाला, ऊँट के समान पाँव वाला, सूकर के समान मुख वाला और घोड़े के समान गर्दन वाला यह कर्क के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है। यह चतुष्पद संज्ञक है और इस का स्वामी चन्द्रमा है ॥ १० ॥

कर्क के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

पद्मार्चिता मूर्द्धनि भोगियुक्ता स्त्रीकर्कशाऽरण्यगता विरौति ।

शाखां पलाशस्य समाश्रिता च मध्ये स्थिता कर्कटकस्य राशेः ॥११॥

कमल के फूलों से शोभित शिर वाली, सर्प से युक्त शरीर वाली, स्त्री, कठोर हृदय वाली, वन में रहने वाली, रोने वाली, पलाश वृक्ष की शाखाओं पर रहने वाली-यह कर्क राशि के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है। इस का स्वामी मङ्गल है ॥ ११ ॥

कर्क राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

भार्याभरणार्थमर्णवं नौस्थो गच्छति सर्पवेष्टितः ।

हैमैश्च युतो विभूषणैश्चिपिटास्योऽन्त्यगतश्च कर्कटे ॥ १२ ॥

स्त्री के भूषणों के लिये नौका पर बैठ कर समुद्र में गमन करने वाला, सर्प से वेष्टित शरीर वाला, स्वयं सुवर्ण के भूषणों से युत, चिपटे मुख वाला—यह कर्क राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह नरसंज्ञक और सर्पसंज्ञक द्रेष्काण है, इस का स्वामी बृहस्पति है ॥ ११ ॥

सिंह के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

शाल्मलेरुपरि गृध्रजम्बुकौ श्वा नरश्च मलिनाम्बरान्वितः ।

रौति मातृपितृविप्रयोजितः सिंहरूपमिदमाद्यमुच्यते ॥ १३ ॥

सेमर के वृक्ष के ऊपर गीध और सियार बैठे हुए के समान तथा कुत्ता, मनुष्य ये दोनों मलिन वस्त्र पहिने हुए माता पिता के वियोग से दुःखी हो कर रोते हुए के समान सिंह राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है।

इस को मनुष्य संज्ञक, चतुष्पद संज्ञक तथा पक्षी संज्ञक कहते हैं। इस का स्वामी सूर्य है ॥ १३ ॥

सिंह के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

हयाकृतिः पाण्डुरमाल्यशेखरो बिभर्ति कृष्णाजिनकम्बलं नरः ।

दुरासदः सिंह इवात्तकार्मुको नताग्रनासो मृगराजमध्यमः ॥ १४ ॥

घोड़े के समान स्वरूप वाला, शिर पर सफेद पुष्प की माला धारण करने वाला, काले मृग का चर्म तथा कम्बल को धारण करने वाला, मनुष्य संज्ञक, सिंह के समान दुःसाध्य, धनुर्धारी, नाक का अग्रभाग झुका हुआ—यह सिंह के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह मनुष्य संज्ञक और चतुष्पद संज्ञक है। इसका स्वामी बृहस्पति है॥ १४॥

सिंह के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

ऋक्षाननो वानरतुल्यचेष्टो बिभर्ति दण्डं फलमामिषं च।
कूर्ची मनुष्यः कुटिलैश्च केशैर्मृगेश्वरस्यान्तगतस्त्रिभागः॥ १५॥

भालू के समान मुख वाला, वानर के समान चेष्टा करने वाला, दण्ड, फल तथा मांस धारण करने वाला, लम्बी दाढ़ी वाला, कुटिल शिर के बालों से युत और पुरुष संज्ञक, यह सिंह के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप है।

इसको चतुष्पद संज्ञक भी कहते हैं। इसका स्वामी मङ्गल है॥ १५॥

कन्या राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

पुष्पप्रपूर्णेन घटेन कन्या मलप्रदिग्धाम्बरसंवृताङ्गी।
वस्त्रार्थसंयोगमभीप्समाना गुरोः कुलं वाञ्छति कन्यकाद्यः॥१६॥

फूलों से भरे हुये घड़े को धारण करने वाली, कन्या, मैले कपड़े से ढके हुये शरीर वाली, कपड़ा तथा धन को चाहने वाली, गुरु के कुल की इच्छा करने वाली—यह कन्या के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है।

यह स्त्रीसंज्ञक द्रेष्काण है और इसका स्वामी बुध है॥ १६॥

कन्या के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

पुरुषः प्रगृहीतलेखनिः श्यामो वस्त्रशिरा व्ययायकृत्।
विपुलं च बिभर्ति कार्मुकं रोमव्याप्ततनुश्च मध्यमः॥ १७॥

पुरुष, हाथ में कलम धारण किया हुआ, श्याम वर्ण, वस्त्र से वेष्टित शिर, खर्च और आमदनी का विचार करने वाला, बड़े धनु को धारण करने वाला और रोम युत शरीर वाला—यह कन्या के द्वितीय द्रेष्काण का रूप है।

इसका स्वामी शनि है॥ १७॥

कन्या राशि के तृतीय द्रेष्काण का रूप—

गौरी सुधौताग्रदुकूलगुप्ता समुच्छ्रिता कुम्भकरच्छुहस्ता।
देवालयं स्त्री प्रयता प्रवृत्ता वदन्ति कन्यान्त्यगतं त्रिभागम्॥ १८॥

गोरी, अच्छे वस्त्र से ढका शरीर, लम्बा शरीर, एक हाथ में घड़ा दूसरे में करछूल को धारण करने वाली, पवित्र, देवता के स्थान में जाने की इच्छा करने वाली और स्त्री, यह कन्या राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है।

इसका स्वामी शुक्र है ॥ १८ ॥

तुला राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

वीथ्यान्तरापणगतः पुरुषस्तुलावा-
नुन्मानमानकुशलः प्रतिमानहस्तः ।
भाण्डं विचिन्तयति तस्य च मूल्यमेत-
द्रूपं वदन्ति यवनाः प्रथमं तुलायाः ॥ १९ ॥

रास्ते के दुकानों पर बैठने वाला, पुरुष, तराजू हाथ में धारण किया हुआ, उन्मान (जोखना) और मान (नापना) इन दोनों में कुशल, प्रतिमान (सुवर्ण-रत्नादि काटने वाले अस्त्र) को हाथ में लिया हुआ और वर्तन तथा उसके मूल्य को विचार करने वाला—यह तुला के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है ।

इसका स्वामी शुक्र है ॥ १९ ॥

तुला के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

कलशं परिगृह्य विनिष्पतितुं समभीप्सति गृध्रमुखः पुरुषः ।
क्षुधितस्तृषितश्च कलत्रसुतान् मनसैति तुलाधरमध्यगतः ॥ २० ॥

कलश (घड़े) को हाथ में लेकर गिरने की इच्छा करने वाला, गीध के समान मुख वाला, पुरुष, भूख-प्यास से दुःखी, स्त्री-पुत्रों को मन से चाहने वाला, यह तुला राशि के मध्य द्रेष्काण का स्वरूप है । यह पक्षीसंज्ञक भी है ।

इस का स्वामी शनैश्चर है ॥ २० ॥

तुला के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

विभीषयंस्तिष्ठति रत्नचित्रितो वने मृगान् काञ्चनतूर्णवर्मभृत् ।
फलामिषं वानररूपभृन्नरस्तुलावसाने यवनैरुदाहृतः ॥ २१ ॥

वन में हरिणों को भय देते हुए रहना, नाना रत्नों को धारण किया हुआ सुवर्ण का तूणीर तथा कवच को धारण करने वाला, फल-मांस को धारण करने वाला, वानर का रूप धारण करने वाला और पुरुष—यह तुला राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है । यह चतुष्पदसंज्ञक है, तथा इसका स्वामी बुध है ॥ २१ ॥

वृश्चिक राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

वस्त्रैर्विहीनाभरणैश्च नारी महासमुद्रात्समुपैति कूलम् ।
स्थानच्युता सर्पनिबद्धपादा मनोरमा वृश्चिकराशिपूर्वः ॥ २२ ॥

वस्त्र भूषणों से रहित, स्त्री, महासमुद्र से तट पर आई हुई, अपने स्थान से भ्रष्ट, सर्प से लिपटे पाँव वाली और रूपवती—यह वृश्चिक के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है । इसको सर्प द्रेष्काण भी कहते हैं, तथा इसका स्वामी मङ्गल है ॥ २२ ॥

वृश्चिक के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

स्थानसुखान्यभिवाञ्छति नारी भर्तृकृते भुजगावृतदेहा ।
कच्छपकुम्भसमानशरीरा वृश्चिकमध्यमरूपमुशन्ति ॥ २३ ॥

पति के लिये स्थान तथा सुख को चाहने वाली, स्त्री, सर्प से वेष्टित शरीरवाली और कछुआ तथा घड़े के समान शरीरवाली यह वृश्चिक के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है ॥ २३ ॥

वृश्चिक के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

पृथुलचिपिटकूर्मतुल्यवक्त्रः श्वमृगवराहशृगालभीतिकारी ।
अवति च मलयाकरप्रदेशं मृगपतिरन्त्यगतस्य वृश्चिकस्य ॥ २४ ॥

बड़ा, चिपटा कछुआ के समान मुख, कुत्ता, हरिण, सूकर, सियार इन को डरवानें वाला, चन्दनों के उत्पत्ति स्थान की रक्षा करने वाला और सिंह संज्ञक-यह वृश्चिक के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह चतुष्पद द्रेष्काण है, इस का स्वामी चन्द्र है ॥२४॥

धनु राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

मनुष्यवक्त्रोऽश्वसमानकायो धनुर्विगृह्यायतमाश्रमस्थः ।
क्रतूपयोज्यानि तपस्विनश्च रक्षत्यथाद्यो धनुषस्त्रिभागः ॥ २५ ॥

मनुष्य के समान मुख तथा घोड़े के समान शरीरवाला, बहुत बड़ा धनुष लेकर आश्रम में बैठा और यज्ञ के उपकरण तथा तपस्वियों का रक्षक, यह धनु के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है। यह मनुष्य और चतुष्पद संज्ञक द्रेष्काण है। इसका स्वामी बृहस्पति है ॥ २५ ॥

धनु के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

मनोरमा चम्पकहेमवर्णा भद्रासने तिष्ठति मध्यरूपा ।
समुद्ररत्नानि विघट्टयन्ती मध्यत्रिभागो धनुषः प्रदिष्टः ॥ २६ ॥

चित्त प्रसन्न करने वाली, चम्पा पुष्प तथा सुवर्ण के समान वर्ण वाली, अच्छे आसन पर बैठी हुई, मध्यम रूपवाली (न उतनी सुन्दरी न कुरूपा) और समुद्र के रत्नों की उलट-पुलट करती हुई—यह धनु के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह — स्त्री द्रेष्काण और इस का स्वामी मङ्गल है ॥ २६ ॥

धनु के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

कूर्ची नरो हाटकचम्पकाभो वरासने दण्डधरो निषण्णः ।
कौशेयकान्युद्वहतेऽजिनं च तृतीयरूपं नवमस्य राशेः ॥ २७ ॥

बड़ी दाढ़ी वाला, मनुष्य, सुवर्ण तथा चम्पा के समान वर्णवाला, दण्ड लेकर अच्छे आसन पर बैठा हुआ और रेशमी कपड़ा तथा मृगचर्म को धारण करने वाला,

यह धनु राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह मनुष्यसंज्ञक द्रेष्काण है तथा रवि इस का स्वामी है ॥ २७ ॥

मकर राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

रोमचितो मकरोपमदंष्ट्रः सूकरकायसमानशरीरः।
योत्रकजालकबन्धनधारी रौद्रमुखो मकरप्रथमस्तु ॥ २८ ॥

रोमयुत शरीर, मकर के समान दाँत तथा सूकर के शरीर के समान शरीरवाला, योत्रक (पशुओं के जोड़ने की रस्सी), जालक (पक्षियों के फँसाने का जाल), बन्धन (मनुष्यों के बाँधने की रस्सी आदि) इन को धारण करने वाला और भयानक मुखवाला—यह मकर के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है। इस को पुरुषद्रेष्काण, सायुध और चतुष्पद द्रेष्काण भी कहते हैं। इस का स्वामी शनैश्चर है ॥ २८ ॥

मकर के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

कलास्वभिज्ञाब्जदलायताक्षी श्यामा विचित्राणि च मार्गमाणा।
विभूषणालङ्कृतलोहकर्णा योषा प्रदिष्टा मकरस्य मध्ये ॥ २९ ॥

कलाओं को जानने वाली, कमल-पत्र के समान दीर्घ नेत्र वाली, काले वर्ण की, नाना प्रकार की चीजों को खोजने वाली, विभूषणों तथा लोहे के कर्ण भूषण से युत और स्त्री—यह मकर के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह स्त्रीसंज्ञक द्रेष्काण है और इसका स्वामी शुक्र है ॥ २९ ॥

मकर के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

किन्नरोपमतनुः सकम्बलस्तूणचापकवचैः समन्वितः।
कुम्भमुद्वहति रत्नचित्रितं स्कन्धगं मकरराशिपश्चिमः ॥ ३० ॥

किन्नरों के समान शरीर वाला, कम्बल, तूणीर, धनुष, कवच इन को धारण करने वाला और कंधे पर रत्नयुत घड़े को धारण करने वाला, यह मकर राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह पुरुष संज्ञक तथा सायुध द्रेष्काण है। इसका स्वामी बुध है॥

कुम्भ राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

स्नेहमद्यजलभोजनागमव्याकुलीकृतमनाः सकम्बलः।
कोशकारवसनोऽजिनान्वितो गृध्रतुल्यवदनो घटादिगः ॥ ३१ ॥

तेल, मदिरा, जल तथा भोजन-सामग्री से व्याकुल मन वाला, कम्बल से युत, रेशमी वस्त्र तथा कृष्ण चर्म से युत और गीध के समान मुख वाला—यह कुम्भ राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है ॥ ३१ ॥

कुम्भ राशि के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

दग्धे शकटे सशाल्मले लोहान्याहरतेऽङ्गना वने।
मलिनेन पटेन संवृता भाण्डैर्मूर्ध्नि गतैश्च मध्यमः ॥ ३२ ॥

वन में सेमर के वृक्ष से युत जली हुई गाड़ी पर बैठ कर लोहे को धारण करती

हुई, स्त्री, मलिन वस्त्र से ढकी हुई और शिर पर बरतन को धारण किये हुई के समान कुम्भ राशि के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है ॥ ३२ ॥

कुम्भ राशि के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

श्यामः सरोमश्रवणः किरीटी त्वक्पत्रनिर्यासफलैर्बिभर्ति ।
भाण्डानि लोहव्यतिमिश्रितानि सञ्चारयन्त्यन्तगतो घटस्य ॥ ३३ ॥

श्याम वर्ण तथा रोम से युत कान वाली, मुकुट धारण करने वाली, छाल, पत्ता, गोंद, फल इनसे युत लोहे के पात्र को धारण कर घुमाती हुई स्त्री के समान कुम्भ के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह मनुष्य संज्ञक द्रेष्काण है और इसका स्वामी शुक्र है ॥ ३३ ॥

मीन राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप—

स्रुग्भाण्डमुक्तामणिशंखमिश्रैर्व्याक्षिप्तहस्तः सविभूषणश्च ।
भार्याविभूषार्थमपां निधानं नावा प्लवत्यादिगतो झषस्य ॥ ३४ ॥

स्रुग् (यज्ञके बरतन), मोती, मणि, शंख इन सबों को धारण करने में आकुल हाथ वाला, भूषण से युत, स्त्री के भूषणों के लिए नौका से समुद्र पार होने वाला— यह मीन राशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है। यह मनुष्य द्रेष्काण है तथा इसका स्वामी बृहस्पति है ॥ ३४ ॥

मीन के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप—

अत्युच्छ्रितध्वजपताकमुपैति पोतं कूलं प्रयाति जलधेः परिवारयुक्ता ।
वर्णेन चम्पकमुखी प्रमदा त्रिभागो मीनस्य चैष कथितो मुनिभिर्द्वितीयः ॥

अपने परिवार से युत बड़े ऊँचे ध्वजा-पताका वाली नाव पर बैठ कर समुद्र के तट को प्राप्त करती हुई, चंपा पुष्प के सदृश मुख की कान्ति वाली और स्त्री —ऐसा मीन के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह स्त्री द्रेष्काण है तथा चन्द्रमा इसका स्वामी है ॥३५॥

मीन के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप—

श्वभ्रान्तिके सर्पनिवेष्टिताङ्गो वस्त्रैर्विहीनः पुरुषस्त्वटव्याम् ।
चौरानलव्याकुलितान्तरात्मा विक्रोशतेऽन्त्योपगतो झषस्य ॥ ३६ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके द्रेष्काणाध्यायः सप्तविंशः ॥ २७ ॥

वन में गड्ढे के समीप सर्प से लिपटे शरीर वाला, नग्न पुरुष, चोर तथा अग्नि से व्याकुल आत्मा होकर रोते हुए के समान, मीन के तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप है। यह सर्पसंज्ञक द्रेष्काण है तथा इसका स्वामी मङ्गल है ॥ ३६ ॥

यात्रा में द्रेष्काण का प्रयोजन—

द्रेष्काणाकारचेष्टां गुणसदृशफलं योजयेद् वृद्धिहेतो-
र्द्रेष्काणे सौम्यदृष्टे कुसुमफलयुते रत्नभाण्डान्विते च ।

सौम्यैर्दृष्टे जयः स्यात्प्रहरणसदृशे पापदृष्टे च भङ्गः
सम्मोहो वाथ बन्धः सभुजगनिगडे पापयुक्ते पिपासुः ॥

और भी—अंशकाज्ज्ञायते द्रव्यं द्रेष्काणैस्तस्कराः स्मृताः ।
राशिभ्यः कालदिग्देशा वयोज्ञानञ्च लग्नपात् ॥

यात्रा काल में जिस स्वरूप का द्रेष्काण हो उसी तरह यात्रा करने वाले की चेष्टा होती है। जिस गुण से युत हो उसके समान फल, सौम्य रूप, कुसुमफल युत, रत्नभाण्डान्वित द्रेष्काण में वृद्धि होती है ।

अगर शुभग्रह से दृष्ट हो तो जय होता है । प्रहरणसदृश और पापग्रह से दृष्ट हो तो भङ्ग, सम्मोह और बन्धन होता है । भुजग-निगड द्रेष्काण पापयुत हो तो पानी पीने की इच्छा वाला होता है । लग्न के नवांशवश द्रव्य (धातु, मूल, जीव) जानना चाहिए । द्रेष्काण पर से चोरों का ज्ञान करना चाहिए । राशि से दिशा, और देश जानना चाहिए तथा लग्न के स्वामी के वश अवस्था का ज्ञान करना चाहिए ॥

द्रेष्काणेश का फल—

चरलग्नगता दृकाणपाः क्रमशः स्युः शुभमध्यमाशुभाः ।
द्वितनौ विपरीतगाः स्थिरे त्वशुभाभीप्सितमध्यमा मताः ॥

द्रेष्काण पर से नष्ट वस्तु की स्थिति का ज्ञान—

आद्ये हृतं निपतितं तदनु द्वितीये द्रव्यं च विस्मृतमथो यदि वा तृतीये ॥

इति बृहज्जातके सोदाहरण 'विमला' भाषाटीकायां द्रेष्काणाध्यायः सप्तविंशः ।

अथोपसंहाराध्यायोऽष्टाविंशः

ग्रन्थ में आये हुए अध्यायों का संग्रह—

राशिप्रभेदो ग्रहयोनिभेदो वियोनिजन्माऽथ निषेककालः ।
जन्माऽथ सद्यो मरणं अथाऽऽयुर्दशाविपाकोऽष्टकवर्गसंज्ञः ॥ १ ॥
कर्माजीवो राजयोगाः खयोगाश्चान्द्रा योगा द्विग्रहाद्याश्च योगाः ।
प्रव्रज्याऽथो राशिशीलानि दृष्टिर्भावस्तस्मादाश्रयोऽथ प्रकीर्णः ॥ २ ॥
नेष्टा योगा जातकं कामिनीनां निर्याणं स्यान्नष्टजन्मा दृकाणः ।
अध्यायानां विंशतिः पञ्चयुक्ता जन्मन्येतद्यात्रिकं चाभिधास्ये ॥ ३ ॥
प्रश्नास्तिथिर्भं दिवसः क्षणश्च चन्द्रो विलग्नं त्वथ लग्नभेदः ।
शुद्धिर्ग्रहाणामथवापवादो विमिश्रकाख्यं तनुवेपनं च ॥ ४ ॥
अतः परं गुह्यकपूजनं स्यात् स्वप्नं ततः स्नानविधिः प्रदिष्टः ।
यज्ञो ग्रहाणामथ निर्गमश्च क्रमाच्च दिष्टः शकुनोपदेशः ॥ ५ ॥
विवाहकालः करणं ग्रहाणां प्रोक्तं पृथक् तद्विपुला च शाखा ।
स्कन्धैस्त्रिभिर्ज्यौतिषसंग्रहोऽयं मया कृतो दैवविदां हिताय ॥ ६ ॥

पृथुविरचितमन्यैः शास्त्रमेतत्समस्तं तदनु लघु मयेदं तत्प्रदेशार्थमेव।
कृतमिह हि समर्थं धीविषाणामलत्वे मम यदसदुक्तं सज्जनैः क्षम्यतां तत्

राशिप्रभेदाध्याय १, ग्रहयोनिभेदाध्याय २, वियोनिजन्माध्याय ३, निषेकाध्याय ४, जन्मविधिनामाध्याय ५, अरिष्टाध्याय ६, आयुर्दायाध्याय ७, दशान्तर्दशाध्याय ८, अष्टकवर्गाध्याय ९, ॥ १ ॥

कर्माजीवाध्याय १०, राजयोगाध्याय ११, नाभसयोगाध्याय १२, चन्द्रयोगाध्याय १३, द्विग्रहयोगाध्याय १४, प्रवज्यायोगाध्याय १५, राशिशीलाध्याय १६, (ऋक्षशीलाध्याय १, राशिशीलाध्याय २, चन्द्रराशिशीलाध्याय ३), दृष्टिफलाध्याय १७, भावफलाध्याय १८, आश्रययोगाध्याय १९, प्रकीर्णकाध्याय २० ॥ २ ॥

अनिष्टयोगाध्याय २१, स्त्रीजातकाध्याय २२, निर्य्याणाध्याय २३, नष्टजातकाध्याय २४, द्रेष्काणाध्याय २५, ये पच्चीस अध्याय जातक के प्रकार में कहे हैं।

इस के बाद यात्रा के विषय में आये हुए अध्यायों का संग्रह कहते हैं ॥ ३ ॥

प्रश्नभेदाध्याय १, तिथिवलाध्याय २, नक्षत्रवलाध्याय ३, वारवलाध्याय ४, मुहूर्तनिर्देशाध्याय ५, चन्द्रवलाध्याय ६, लग्ननिश्चयाध्याय ७, लग्नभेद ८, (होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिंशांश), ग्रहशुद्धि ९, अपवादाध्याय १० मिश्रकाध्याय ११, देहकम्पनाध्याय १२ ॥ ४ ॥

इसके बाद गुह्यकपूजनविधि १३, स्वप्नाध्याय १४, स्नानविधिनिरूपणाध्याय १५, ग्रहयज्ञविधि १६, प्रस्थानविधि १७, शकुनोपदेश १८, ॥ ५ ॥

विवाहकाल (विवाहपटल) १९, अनेकशाखा से युत ग्रहकरण (पञ्चसिद्धन्तिका) २०, मैंने (वराहमिहिराचार्य) फलित, गणित, सिद्धान्त इन तीन स्कन्धों से ज्योतिषियों के हित के लिए ज्योतिष शास्त्र का संग्रह किया है ॥ ६ ॥

यवन आदि ज्योतिष शास्त्र के आचार्यों ने जिस विषय को बहुत विस्तार करके कहा है उसी को मैंने बहुत स्वल्प में कहा है।

स्वल्प में कहने के कारण स्वल्प विषय है ऐसी शङ्का न करनी चाहिए, क्यों कि इस शास्त्र में जो कुछ मैंने किया है सब पाठको की बुद्धि रूप श्रृङ्ग को मल रहित करने में समर्थ है। अब आचार्य सज्जनों से प्रार्थना करते हैं कि इस संग्रह में जो कुछ गलती हम से हुई हो उस को सज्जन लोग क्षमा करें ॥ ७ ॥

सज्जनों से प्रार्थना—

ग्रन्थस्य यत्प्रचरतोऽस्य विनाशमेति
लेख्याद् बहुश्रुतमुखाधिगमक्रमेण।
यद्वा मया कुकृतमल्पमिहाकृतं वा
कार्यं तदत्र विदुषा परिहृत्य रागम् ॥ ८ ॥

फैलते हुए इस ग्रन्थ में लेखन-दोष से जो कुछ त्रुटी आगई हो उस को पाठक लोग अच्छे पण्डितों के मुख से जानकर शुद्ध कर लें।

अथवा मुझ से ही कहीं अनुचित कहा गया हो या जो नहीं कहा गया हो उस को भी मात्सर्य्य त्यागकर पण्डित लोग शुद्ध कर लें ॥ ८ ॥

ग्रन्थकर्ता का परिचय—

आदित्यदासतनयस्तदवाप्तबोधः
कापित्थके सवितृलब्धवरप्रसादः।
आवन्तिको मुनिमतान्यवलोक्य सम्य-
ग्घोरां वराहमिहिरो रुचिरां चकार ॥ ९ ॥

उज्जैन के पास कपित्थ नामक ग्राम में रहने वाले आदित्य दास के पुत्र, उन्हीं से (आदित्य दास ही से) विद्या को पढ़े हुए, सूर्य के वर को पाये हुए, वराहमिहिर ने पूर्व में हुए अनेक मुनियों के मत को अच्छी तरह देखकर इस सुन्दर होरा ग्रन्थ (बृहज्जातक) को बनाया ॥ ९ ॥

आचार्य सूर्यादि को प्रणाम करते हुए ग्रन्थ समाप्त करते हैं—

दिनकरमुनिगुरुचरणप्रणिपातकृतप्रसादमतिनेदम्।
शास्त्रमुपसंगृहीतं नमोऽस्तु पूर्वप्रणेतृभ्यः ॥ १० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके उपसंहाराध्यायोऽष्टाविंशः ॥ २८ ॥

सूर्य आदि ग्रह, वशिष्ठ आदि मुनि, और गुरु (आदित्यदास) इन सबों के साष्टाङ्ग प्रणाम से कृपापूर्वक जो लब्ध हुआ ज्ञान उस के अनुसार जिन पूर्व आचार्यों के मत को देख कर इस शास्त्र का संग्रह किया, उन को मेरा प्रणाम होवे ॥ १० ॥

इति वराहमिहिराचार्यविरचित 'बृहज्जातके' ज्यौतिषाचार्य-पौरोहित्याचार्य-साहित्याचार्यादि-पदवीकेन प्राप्त'रौप्य' स्वर्णपदकेन **'दरभङ्गा'** मण्डलान्तर्गत **'बहेड़ा'** पत्रालयान्तर्गत **'जरिसो'** ग्राम निवासिना श्री **'अच्युतानन्द'** झा शर्म्मणा मैथिलेन विरचितायां सोदाहरण 'विमला' नामकहिन्दीटीकायामुपसंहाराध्यायोऽष्टाविंशः।

समाप्तश्चायं ग्रन्थः।

अथ समाहितम्

श्री सीताजन्मपूतोऽतिविदितविषयो नित्यमभ्यासलग्नैः
शान्तैस्त्रैकालिकज्ञैर्मुनिजननिकरैर्याज्ञवल्क्यप्रमुख्यैः ।
संवेत्यात्यन्तसारं सकलसुविषयेभ्योऽनिशं सेव्यमानः
सोऽयं भूदेवदेवो विलसति मिथिलानामधेयो विशेषः ॥ १ ॥
तस्मिञ्छ्री 'देवना' ख्यः समजनि महिदेवाग्रणीः काश्यपीयो
झोपाख्यः ख्यातकीर्तिर्नरपतिमुकुटस्पृष्टपादारविन्दः ।
तस्माज्जाताः प्रसिद्धा 'भवि' 'रुदि' 'जयदत्ता' ऽभिधानैः क्रमेण
पुत्राः पुत्रेषु मान्याः खचरसमुदयेष्वोषधीशास्त्रयोऽमी ॥ २ ॥
त्रिष्वेतेषु महोद्यमोऽयमभवत्कीर्तिप्रतापान्वितः
स्वच्छः श्री 'जयदत्त' संज्ञकबुधो विज्ञातविद्यः सताम् ।
तज्जातः कृतलक्षणो भरतभूदीपोऽभिरूपो महान्
सोऽयं मत्प्रपितामहोऽतिसरलः श्री 'भ्रातृनाथा' ऽभिधः ॥ ३ ॥
श्री 'गोस्वामि' समाह्वयोऽतिहृदयालुः कर्मठस्तत्सुतः
गम्भीरे सरितां पतिः शमगुणादर्शः सतामग्रणीः ।
सोऽयं देवनिकेतनातिथिमतः सीतासमां मातरं
दृष्ट्वात्यन्तमकाण्डके निजगृहे चिन्ताकुलोऽभूत्क्षणम् ॥ ४ ॥
स्नेहेनेत्थममुं निभाल्य हि समानीयात्मनः सन्निधौ
'ठाढी' संज्ञक सौम्यतातनिगमान्मातामहेन द्रुतम् ।
'गूना' ख्येन महात्मना स्वसुतवज्झोपाह्वयेनैधितः
स्वग्रामेऽसमये स्वमातृरहितोऽसौ 'चौगमा' ख्ये विदा ॥ ५ ॥
तेनैवास्य समाप्तवात्यवयसः सम्प्राप्तविद्यस्य वै
स्वीयग्रामसमीपवर्ति 'जरिसो' ग्रामे सतां धामनि ।
झोपाख्यस्य धनान्वितस्य सुतया श्री 'वेदमण्या' ह्वय-
स्याभिज्ञस्य बहुप्रदस्य विधिना पाणिग्रहोऽकार्य्यरम् ॥ ६ ॥
तत्रैवायमतीत्य मातृजनने कालं कियन्तं ततः
सप्रेम्णा श्वशुरेण नैजनिकटे चानीय सम्वर्धितः ।
तस्मात्तत्समयात्स्वकीयवसतिं तत्रैव निर्माय च
छात्राध्यापनतो नयन्स्वसमयं दैवज्ञचूडामणिः ॥ ७ ॥
तज्जातेषु सुतेषु पञ्चसु महामान्यो वदान्योऽनुजो
दान्तोऽत्यन्तमनन्तपादभजकः शान्तो नितान्तः सताम् ।
जातः श्री 'बलदेव' संज्ञकबुधः सौजन्यवारां निधिः
ख्यातो मज्जनकोऽतिवित्तगणकः स्वीयान्वयानन्दकः ॥ ८ ॥

तज्जातेषु नगेषु सुनूषु कुलालङ्कारभूतेष्वहं
ज्येष्ठाच्छ्री 'रघुवंश' कादवरजो विद्वज्जनानां सताम् ।
वाञ्छन् प्रेमसुधारसार्द्रहृदयानां सन्ततं सत्कृपां
श्रीकालीपदपद्मसेवनकृती श्री 'अच्युतानन्द' झा ॥ ९ ॥
सुविदित 'दरभंगा'ख्ये प्रान्ते पत्रालये 'वहेड़ा'ख्ये ।
'जरिसो' नाम्नाख्यातं नगरं भूदेवावलिसम्वलितम् ॥ १० ॥
अकरोत्तत्र निवासी श्रीमद् 'वलदेव' शर्मणस्तनयः ।
श्रीला 'च्युतादिनन्द'ष्टीकामिह जातके बृहति ॥ ११ ॥
ज्यौतिषशास्त्रे काशीस्थायामुत्तीर्य राजकीयायाम् ।
प्रतिखण्ड प्रथमायां श्रेण्यामाचार्यपश्चिमं खण्डम् ॥ १२ ॥
सर्वप्रथमायां तल्लब्धो 'रीपन्' सुहेमपदकञ्च ।
अथ लब्धश्च विहारे ज्यौतिषसाहित्यशास्त्रयोर्मध्ये ॥ १३ ॥
आचार्यस्य च पदवीं पोष्टाचार्याभिधानिकां काश्याम् ।
साम्प्रतमन्ते वसतोऽमुष्यामेवानुशास्मि भूयिष्ठम् ॥ १४ ॥
'श्री राम साधु संस्कृत' संज्ञकविद्यालये विद्वन् ।
इत्येवास्त्यस्माकं संस्तवज्ञानोत्क संस्तवः कश्चित् ॥ १५ ॥
'चलनकलन' नाम्नि ग्रन्थरत्ने ह्यकार्षं विवरणमतिसूक्ष्मं सर्वप्रश्नोत्तराणाम् ।
तदनुरुचिरटीकायुग्मकं 'चोड्डदाये' तदनु च रुचिरं तद् 'वास्तुरत्नावलीके' ॥१६॥
तदनु च सकलानां मानवानां नितान्तमुपकृतिकरणार्थं 'पद्धतीनां प्रकाशम्' ।
तदनु विबुधवर्य्याः 'जैमिनेः सूत्रके' च रुचिरयुगलटीकां पञ्चमे पुस्तकेऽस्मिन् ॥१७॥
अथ 'भावफलाध्यायो' लोमशोक्तोऽतिमञ्जुलः ।
मया विमलया हिन्दीटीकया विमलीकृतः ॥ १८ ॥
'चापत्रिकोणगणिते' ह्यथ सप्तमेऽस्मिन् नीलाम्बरेण रचिते गणकाग्रगेन ।
युक्तिः कृतातिललिता विवृताऽवदाता छात्रोपकारजनिका मयका पुलाका ॥ १९ ॥
कृता 'बृहज्जातक' संज्ञकेऽष्टमे ग्रन्थे प्रसिद्धे 'विमला'ऽभिधाना ।
टीका मया वासनया समेता सोदाहृतिः सर्वजनप्रियेयम् ॥ २० ॥

प्राप्तिस्थानम्—
चौखम्बा-संस्कृत-पुस्तकालय,
पो०. बा. ८, बनारस-१